* सूचना *

हमारे पास सर्व प्रकार और सर्व जगह के छपे जैनग्रन्थ हर समय तैयार रहते हैं आवश्यक्ता पूर्वक मंगाईये

पता :—

लाला मोतीलाल जैन.

मुक़ाम, कुटेसरा, पोष्ट चरथावल

ज़िला मुज़फ़्फ़रनगर

श्री आराधनासार कथाकोषकी विषय सूची।

श्री वीतरागाय नमः

श्री आराधनासार कथाकोष प्रारम्भः



॥ मंगलाचरण ॥ सवैया तेईसा ॥

श्री अरिहंत जिनेश्वर जी, इस ग्रंथ की आदि सु मंगल दाई।
लोक अलोक प्रकाशक देव, समोशृत आदिक ऋधि लहाई ॥
ज्ञान सुभान उद्योत कियो, भवि बारिज वृंद दिए बिकसाई ॥
ऐसे प्रभु जग तारण हार, नमूं कर जोरके हूजे सहाई ॥ १ ॥

श्री सारदा स्तुति । छप्पय छंद

प्रभु आननते खिरी प्रथम गणधर ने धारी । कीने तत्व प्रकाश भविक जन आनंद कारी ॥ ज्ञान उदधि के पार भए जेतेजग मांही । ते तुमरे परसाद और कोऊ हूजो नाहीं ॥ ऐसी माता सरस्वती, दुरनय सकल बिनाशनी । मैं नमन करूं कर जोड़ कर, जिन हिरदे की वासनी ॥ २ ॥

श्री गुरु स्तुति । सवैया इकतीसा ।

तपके करैया मुनि नाथजे नगन काय, ज्ञान के समुद्र बुध आकर अपार हैं । सम्यक दरश ज्ञान चारित उद्योतवान, ताकर पवित्र भए जग मांही सार हैं ॥ बाइस परीषह जोर तासके सहनहार, ध्यान में सुमेरुसम करम निवार हैं । ऐसे गुरु पाय नमुं बार बार सीस नाय, हुजिये सहाय आप दयाके भंडार हैं ॥ ३ ॥

दोहा

आप्त शास्त्र गुरु तीन यह, सुख कारन दुख हर्न ।
तातैं इनही को करूं, प्रथम मंगलाचर्न ॥ ४ ॥
ग्रंथ सार अराधना, कथाकोष सुख दाय ।

ताको भाषा करतहूं, तुच्छ बुद्धि को पाय ॥ ५ ॥
देव धर्म गुरु तीन यह, दें मन बांछित दान ।
ग्रंथ कथा शोभित करूं, मंदिर कलश समान ॥ ६ ॥

चौपाई

मूल संघ में भए महान । गछ सरस्वती तिन को जान ॥
गण बलातकारे रमणीस । कुंद कुंद आचारज ईस ॥ ७ ॥
तिन के बंश बिषय वे भए । प्रभाचंद्र आचारज कहे ॥
इंद्र चंद्र रवि नितप्रति आय । तिनके चरणकमल नितधाय ॥८॥
ऐसे प्रभाचद्र गुण लीन । तिन भाषी यह कथा प्रवीन ॥
तिसही के अनुसारपुराण । श्री मलभूषण के शिष जान ॥ ९ ॥
ब्रम्ह नेमदत नाम मुनिंद । श्लोकन में कियो प्रबंद ॥
जैसे सूरज करत प्रकाश । तब सब बिचरत सहितहुलास ॥ १० ॥
श्री जिन सूत्र तनेअनुसार । आराधन को कथन अपार ॥
भाषो भविजन के हितहेत । अथवा मोक्ष महाफल देत ॥ ११ ॥
पूरब आचारजबड़ भाग । कहते आए धर अनुराग ॥
सो अराधना इह बरणाइ । ताकी महिमा सुनिये सही ॥ १२ ॥
सम्यक दर्शन ज्ञानचरित्र । तप मिल चारों महा पवित्र ॥
एही आराधन गुण रास । जगत भ्रमण को करताबिनाश ॥१३॥
इनको कीजे नित्य उद्योत । उद्यम निरबाहन जग पोत ॥
साधन और समापत कर्न । इनके हेतु सुनो दुख हर्न ॥ १४ ॥

दोहा

दर्शन ज्ञान चरित्र तप, इनको करत उद्योत ।
सोई उज्जवणं कहो, निश्चय कर यह होय ॥१५॥
निश्चय कर आराधना, कर सो अंगीकार ।
आलश बर्जित होयके, सो मुझ बर्णन धार ॥१६॥

इन आराधन के विषय, कारन विघन-मिलाय।
बाधा सहकर थिर रहे, निव्वहणां सुकहाय ॥१७॥

पद्धड़ी छन्द

तत्वारथ शास्त्र पढ़े महान। बर्जन सुराग सम्यक्त वान।
तामें चितकी थिरता गहंत। सोई साधन भाषो महंत ॥१८॥
जब लग जीवे जगके मझार। चारों आराधन रतन सार॥
निर्विघ्न सुपाले शुद्ध योग। परग्मण नाम यह है मनोग ॥१९॥
ऐसे यह पंच प्रकार भेद। जिन पालो तिन जगकोउछेद॥
भाषत आए श्रीगुरु दयाल। ताही क्रमकर बरणो रशाल ॥२०॥

अथ सम्यक उद्योत में श्री पात्रकेशरी की

कथा प्रारम्भः नं० १

दोहा

पात्र केशरी जी भए, विप्र महा बुधिधार।
दर्शन को उद्योत जिन, कीनो जगत मझार ॥२१॥
तिनकी कथा सुहावनी, सम्यक दर्शन हेत।
पहिले ही बर्णन करूं, भव दधि तारन सेत ॥२२॥

चौपाई

यहही भरत क्षेत्र शुभ जान। तामधि देश अनेक महान॥
तिन मधि सम्पतिको भंडार। मागध नामा देश निहार ॥२३॥
श्रीजिनवर के पंच कल्याण। अतिशय कर शोभित तिहथान॥
भव जीवनके सुख को योग। अहच्छत नामा नगर मनोग ।२४।
तिस नगरी को है भूपाल। अवनिपाल नामा अरशाल॥
राज कलामें निपुण उदार। देत दान सो विविध प्रकार ॥२५॥
विप्र पांचसै नित प्रति आय। तिनसे गोष्टि करै नर राय॥

कैसे हैं वह विप्र सुजान । बेद तनो बहु करैं बखान ॥ २६ ॥
अरु कुल गर्भ धरैं अधिकाय । पंडित ताको मद बहु भाय ॥
प्रात समय अरु संध्या काल । हरष धारकर विप्र रसाल ॥२७॥
जगत पूज्य श्रीजिनवर धाम । ता नगरी में है अभिराम ॥
श्री पारश परमेश्वर तनी । प्रतिमा तहँ राजत छवि घनी ॥२८॥
तहां विप्र यह नितप्रति जाय । ताहि देख फिर निजग्रहआय ॥
अपने अपने कर्म संभार । सबही तिष्ठत आनन्द धार ॥२६॥
इक दिन विप्रन को समुदाय । सन्ध्या बन्दन को हरषाय ॥
आये श्रीपारश के धाम । मनमें कौतुक धरैं ललाम ॥ ३० ॥
तहां प्रभु के दर्शन हेत । आए हूते मुनि जग सेत ॥
चारित भूषण नाम सुजान । जिनवर आगे स्तुति ठान ॥३१॥
देवागम स्तोत्र मनोग । पढ़ो सुमुनिवर ने धर जोग ॥
तिनको पढ़ते लख तिथबार । सब विप्रन मैं है सिरदार ॥३२॥
ऐसो पात्रकेशरी सोय । पूछत चित में हरषित होय ॥
हो स्वामिन इह पाठ अपार । तुम जानत हो अर्थ विचार ॥३३॥
तब मुनिवर बोले गुण खान । मैं नहिं जानूं अर्थ बखान ॥
फिर वह विप्र महा बड़भाग । कहत भयो सोधर अनुराग ॥३४॥
हो मुनि नायक किरपा धार । फेर पढ़ो याको इकबार ॥
तब वे श्रीगुरु दीन दयाल । सत पुरुषनको करत निहाल ॥३५॥
शुद्ध पाठ को करो उचार । पात्र केशरी हिरदे धार ॥
इक संधी इक विप्र महंत । चितमें अर्थ बिचार करंत ॥३६॥
करत करत ताही छिन सोय । दर्शन मोह क्षयोपशम होय ॥
तातें यह विचार मन ठयो । श्रीजिनवर ने जो बरनयो ॥३७॥
जीवाजीव आदि जे तत्व । तेही निश्चय हैं जग सत्व ॥
और प्रकार कदापि न होय । ऐसी सरधा आई सोय ॥ ३८ ॥

दोहा

ऐसे करत विचार बहु, पात्रकेशरी नाम ।
बुद्धिवान बहु चतुर सो, आयो अपने धाम ॥३६॥
रात्रि विषय चिंता भई, अर्थ विषय चित ठान ।
जिनवर सासन में कही, तत्वादिक परमान ॥४०॥
जो लक्षण अनुमान को, सो ऐसी विधि होय ॥
ऐसी संशय मनभयो, तिष्ठत तामें सोय ॥ ४१ ॥

कुसुमलता छन्द

तबही निज आसन कंपनते, पद्मावत देवी तहँ आय ।
आनंद सहित बचन इम भाषै, सुनो विप्र तुम चित्त लगाय ॥
तू बुधि आकर है निश्चय कर, प्रातकाल जिन मंदिर धाय ।
प्रभु की मूरत के देखनते, तेरो संशय सब मिटजाय ॥४२॥

दोहा

ऐसा कह देवी तबै, जिन मंदिर में आय ॥
पारस प्रभु के फण विषै, लिखत भई यह भाय ॥४३॥

श्लोक

अन्यथानुप पन्नत्वं यत्र यत्र त्रयेणकिं ।
नान्यथानुप पन्नत्वं यत्र यत्र त्रयेणकिं ॥४४॥

दोहा

यह लक्षण अनुमान को, संशय मेटन हार ॥
श्लोक एक में लिख गई, अपने धाम मझार ॥४५॥

पद्धड़ी छन्द

देवी दर्शन करके महान । बहु भयो विप्र के हर्ष आन ॥
प्रभु के मतमें तब चित लगाय । सरधान करो अति हर्ष पाय ४६
एही मत जगते करत पार । एही सुख दाता जग मझार ॥

ऐसे इन रैन व्यतीत कीन। फिर प्रातकाल उठयो प्रवीन ॥४७॥
श्रीपारस धाम गयो तुरंत। फण मंडप देखो हरषवंत ॥
ताते अनुमान तनो विचार। देखतही संशय सब प्रहार ॥४८॥
जैसे जब भानु उद्योत होय। तमको तब लेस रहै न कोय।
ऐसे इस हिरदे बीच आन। उपजो सम्यक्त महा निधान ॥५०॥
तब यह दुज उत्तम धर्म लीन। रोमांचित तन अतिही प्रवीन।
मन मांहि एम कीनो विचार। निर्दोष देव अरिहंतसार ॥५०॥
संसार जलध ते तार देत। इनहीको नमिये मोच्छ हेत ॥
इन कथित धर्म सोई पवित्र। दोउ लोक विषै सुख दे विचित्र ॥५१॥

दोहा

बारहि बार बिचार इम, तत्वन में चित लाय ॥
हर्ष सहित परसन्न मुख, तिष्ठो बहु सुख थाय ॥५२॥

चौपाई

और विप्र आए इस पाश। कहत भए इम बचन प्रकाश ॥
हो दुज उत्तम तुम बुद्धिवान। तज मीमांसक मत किम जान ॥
धर्म में दीखत लीन। को कारण तुम कहो प्रवीन ॥
२ बच बेद गरभ युत सुने। पात्रकेशरी उत्तर भने ॥५४॥
हे विप्रो तुम सुनो पुरान। सो सबही मिथ्या कर जान ॥
जैन धर्म उत्तम यह सार। मिथ्या डूबे जगत मझार ॥ ४५ ॥
इसही कारण ते तुम बीर। गहो धर्म जिनवर को धीर ॥
और कुमारग तजो तुरंत। जो देवै है कष्ट अनंत ॥ ५६ ॥
फेर गए राजा के पास पात्रकेशरी धर हुल्लास ॥
जितने विप्र सुमद युत वहां। तिनते बाद कियो तिन तहां ॥५७॥
अनेकांत मतके अनुसार। सबही जीते छनक मझार ॥
भगवत धर्म जो सुख की रास। तास अरथ को कियो प्रकाश ५८

सम्यक रत्न जगत में सार। ताके गुण हैं बहु विस्तार ॥
अरु जो मिथ्यामत बहुभाय। तिसका नाश कियो हरषाय ॥५६॥

दोहा

अब निपाल नरनाथ जो, पंडित आदि महान।
पात्रकेशरी के निकट, करत भए सरधान ॥ ६० ॥
मिथ्यामत सब ही तजो, जिनमत में चित लाय।
शुध सम्यक हिरदे धरो, सुरग मुकति सुख दाय ॥ ६२ ॥

सोरठा

जिनवर धर्म महान, बहु जीवन हिरदे गह्यो ।
ऐसे स्तुति ठान, पात्रकेशरी विप्र की ॥ ६३ ॥

चौपाई

भो दुज उत्तम तुम जगसार। जैन धर्म में निपुण उदार ॥
तुमही सब तत्वन को भेद। जानत हो सब कर्म उछेद ॥ ६३ ॥
तुम ही जिनपद कंज महान। तिन को सेवत भ्रमर समान ॥
इस प्रकार स्तुति बच ठए। फेर भक्ततें पूछत भए ॥ ६४ ॥
ऐसे पात्र केशरी सोय। राजादिक कर पूजित होय ॥
दर्शन को उद्योत कराय। ताकर महिमा जग में पाय ॥ ६५ ॥
सो कैसो सम्यक परधान। अति पवित्र सुर शिव सुख दान ॥
और भव्य जेहैं जगमांहि। ते सम्यक उद्योत करांहि ॥ ६६ ॥
तिनके निर्मल जसबहुभाय। जगत मांहि फैलै अधिकाय ॥
सुरग मुकत की प्रापति होय। यामें संशय नाही कोय ॥ ६७ ॥

सवैया इकतीसा

ग्रंथ के करन हार श्रावक कवि मांहि सार, ब्रम्हनेमिदत्त नाम जान सुख दाई है। इंद कुंद चीरसम कीरत उजास जाकी, कुंद कुंद बंश मांहि कीराति बढ़ाई है ॥ नाम मल्लभूषण आचारज

गुरुमहान, ताके श्रुतसागर जो भए गुरु भाई है। तिनके आदेशते पवित्र सिंह नंदनाथ, मुनिके निकट कथा जोड़के बनाईहै।६८।

सोरठा

तिसही के अनुसार, अर्थ लेय ताको अबै।
कीने छन्द उचार, बखतावर अरु रतन ने ॥ ६६ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषै सम्यक्त उद्योत में पात्रकेशरी की कथा समाप्तः ॥

श्री अकलंक देवकी कथा

न० २ मंगलाचरण काव्य

नमूं देव अरिहंत सर्व जीवन सुखदायक। भव दधि तारन पोत प्रगट तिनके हैं नायक॥ ज्ञान उद्योत जिन कियो कथा तिनकी रस मंडन। बरनूं श्री अकलंक भए जग परमत खंडन॥ १॥

चौपाई

एही भरत क्षेत्र सुखदाय। तामें नगर बसैं बहु भाय॥
तिन नगरन में सेठ बखान। मान्यखेट इक नगर महान॥२॥
ताको नरपति है शुभ तुंग। जाकी कीरति प्रगट उतंग॥
तिस मंत्री पुरुषोत्तम नाम। पदमावति नारी तिस धाम॥३॥
तिनके जुत सुत प्रगटे आय। सब जन प्यारे गुण अधिकाय॥
श्री अकंलक प्रथम बरनयो। दूजो निःकलंक सुत थयो॥ ४॥
एक दिना नन्दीश्वर पर्व। उत्सव जिन ग्रह कीनो सर्व॥
तहँ मुनिवर रवि गुप्त उदार। आप विराजे भव हितकार॥५॥
हर्ष सहित मंत्री तहँ आय। भक्ति धार बहु नमन कराय॥
अष्ट दिनन को धारो वृत्त। ब्रह्मचर्य नामा सुपवित्त॥ ६॥
फिर कौतुहल चित में धार। मुनिवर निकट सुएम उचार।
तुम भी पुत्र शील वृत गहो। तब उन आरैं कर सुख लहो॥७॥

कितने दिन बीते सुख लीन । फिर मंत्री उद्यम यह कीन ॥
सुत विवाह करनो चितधार । आरम्भ कीनो बिविध प्रकार ॥८॥
इम लखकर दोनों सुत एह । बोले इम बच सुन्दर देह ॥
अहो तात इह आरम्भ सबै । किस कारन तुम कीनो अबै ॥९॥
ऐसे बच सुन बोले तात । तुम विवाह करनो अब दात ॥
फिर दोनो भाषे गुणवान । इस विवाहकर क्या बुधवान ॥१०॥
तुमने तो श्रीगुरु ढिग कही । ब्रह्मचर्य धारो सुत सही ॥
तब हम धारो शील महान । तुम संदेह न चित में आन ॥११॥

दोहा

ऐसे बच सुन सुतन के, बोले तब इन तात ।
क्रीड़ा करके शील की, भाषीथी में बात ॥ १२ ॥
फिर दोनो यह चतुर अति, बोले मधुरी बान ।
धर्म काजमें तातजी, क्रीड़ा कैसी जान ॥ १३ ॥

चौपाई

तब मंत्री बोलो इम बान । अहो पुत्र तुमहो बुधिवान ।
मैं जो बृत दिलवायो सार । अष्ट दिननके नेम बिचार ॥ १४ ॥
फिर दोनो बोले इम चई । हमसे तुममरजाद नकही ।
तुमने अरु श्रीगुरुने जोय । बृत दीनो हम पाले सोय ॥ १५ ॥
इस भवमें बिवाहको नेम । शील बृत्त पालें धरप्रेम ।
ऐसो कह ग्रह कारज त्याग । बौद्ध शास्त्र पढ़ियो बड़भाग ॥ १६ ॥
मान्याखेट नगरमें सोय । बौद्ध तनो पंडित नहि कोय ।
तब विद्या जाननको संत । मूरखसिखवे चले तुरंत ॥ १७ ॥
चलत चलत यह पहुंचे तहां । बौद्ध मतनके मठहैं जहां ।
बंधक गुरु तहँ है परधान । धर्माचारज नाम कहान ॥ १८ ॥
ताढिग तिष्टे यह जुग जाय । बौद्ध मार्ग जानन चित चाय ।

धर्माचारज मन इमठान। इनको तवै विजाती जान ॥ १९ ॥
उतरन हेत दियो सुख खान। ऊंची भूम विषै अस्थान।
इन दोनो को नित प्रतिसार। शास्त्र पढ़ावै बारम्बार ॥ २० ॥
यहतो जैनधर्म चितआन। मूरख बनकर पढ़ैं अजान।
गुरु इनको जाने बुधहीन। अंतरंग यह महा प्रवीन ॥ २१ ॥

दोहा

इक संधी अकलंकजी, पढ़कर भए प्रवीन।
द्वै संधी निःकलंकजी, भए सुविद्या लीन ॥ २२ ॥

अडिल्ल

धर्माचारज एकदिना पढ़तो सही। सप्तभंग वानी जैसी जिनवर-कही ताको अर्थ विचारत मन संशय भयो। गूढ़ शब्दको अर्थ न चितमें तिन लियो ॥ २३ ॥ तिह थानक प्रस्ताव राख तवही गयो। रात्र समय अकलंक अर्थ सव लिख दियो ॥ बौद्ध गुरू तव आय सु पुस्तक देखियो। अर्थ शुद्ध तिस मांहि लिखो सो पेखियो ॥ २४ ॥

दोहा

बौध गुरू चित चिंतवै, निश्चयकर यां होय।
जैन उदधिको चंद्रसम, इन शिष्यनमें कोय ॥ २५ ॥
हम मत विध्वंसी जुनर, बौध भेष इस ठान।
मायाकरके पढ़तहै, हतनो ताहि ललाम ॥ २६ ॥

चौपाई

धर्माचारज मन इम ठान। सोधे सव शिष्यन के थान।
तिनमें जैन शिष्य नाहि पाय। फिर मनमें इम कियो उपाय ॥ २७ ॥
श्री जिनेंद्रके बिम्ब मंगाय। निश्चय हेत धरो तिहठाय।
सव शिष्यन को आज्ञादई। याहि उलंघो तुम अवसही ॥ २८ ॥

तब अकलंक देव गुण राश । अपनी चतुराई परकाश ।
भले सूत्रके जानन हार । ऐसे मनमें करत बिचार ॥ २९ ॥
डोरो एक सूतको लियो । प्रतिमाके मस्तक धर दियो ।
तास उलंघन कीनो जहां । इनको भेद न जानो तहां ॥ ३० ॥
धर्माचारज चिंता लही । फिर उपाय इम कीनो सही ।
कांशी के भाजन मंगवाय । गूनन मध्य धरे अधिकाय ॥ ३१ ॥
अर इक इक चाकर बुधिवान । एक एक शिष्यनके थान ।
राखे जैनी जानन हेत । रैन समय वह रहे सुचेत ॥ ३२ ॥
धर्माचारज गून मंगाय । अर्ध रात्रि पटकी दुखदाय ॥
ज्यों नभमें विद्युतको सोर । त्योंही शब्द भयो अतिजोर ॥ ३३ ॥
तब सब शिष्य भए भयवान । बौद्ध गुरू को कीनोध्यान ॥
अर यह दोनो बीर उदार । नमोकार मुखते उच्चार ॥ ३४ ॥
जै चाकरथे इन ढिगरात । तिनने पकड़ लिए दोउ भ्रात ।
धर्माचारजके ढिग लाय । ऐसे बैन कहे उमगाय ॥ ३५ ॥
अहो देव यह जैनी दोय । दग़ाबाज़ अति लंपट सोय ।
जो अब आज्ञा हम को होय । सोई करैं ढील नहि कोय ॥ ३६ ॥

दोहा

ऐसेसुनकर दुष्ट गुरु, कहत भयो समझाय ।
महलतने खन सातवें, इनको दो बैठाय ॥ ३७ ॥
बीते आधी रात जब, तब इमको दोमार ।
ऐसी सुन चर लेगयो, तिसही थान मझार ॥ ३८ ॥

चाल छन्द

तिस थानक तिष्टे जाई । मन संशय बहुत कराई ॥
निकलंक देव लघु भाई । तब ऐसे बचनकहाई ॥ ३९ ॥
मो भ्रातातुम सुनलीजे । मो बचन बिषै चितदीजे ॥

हम दोनो गुण उपजायो। सो कोई काम न आयो ॥ ४० ॥
दर्शन उद्योत प्रवीना। हम अवनीपै नहि कीना।
अब वृथा मरण सो होई। यामें संशय नहि कोई ॥४१॥
ऐसे बच सुन तिहवारा। बोले अकलंक उदारा
भो बुद्धिमान सुन भ्राता। मत सोच करो दुखदाता।४२।
अब कोई जतन विचारैं। तातें यह दुख निरवारैं ॥
यह छत्र धरो इस ठाई। तामें तिष्ठे दोउ भाई ॥४३॥
पृथ्वी थल पै गिरजावैं। फिर और थान उठ धावैं॥
ऐसे बिचार चित ठानो। वाही विधि कियो पयानो।४४।

दोहा

छत्र बैठ दोउ भ्रात तब, गिरे जु अवनि मझार।
तिस थानक को छोड़कर, चलत भए तिहबार ॥ ४५ ॥
तबही मारन हेत नर, अति पापिष्ट सुआय।
ते थानक देखे नहीं, तब ढूंडे बहु भाय ॥ ४६ ॥
नगर कूप बन वापिका, हेरो सकल वजार।
कहीं न पाये भ्रात जुग, तब यह करो बिचार ॥ ४७ ॥
वे पापिष्ट अयान अति, ह्वै बाजी असवार।
दशों दिशा हेरत चले, इन पीछे ततकार ॥ ४८ ॥

सोरठा

जैसे दया सुबेल, दाहन को जिमि क्रोधनल ॥
तैंसे करले सेल, ते पापी पीछे लगे ॥ ४९ ॥

पद्धड़ी छन्द

तब निःकलंक उर धार एम। बच भाषे भ्राता ते सो जेम।
पीछेते चर आवत सुधाय। तिन घोटककी रज हम लखाय ॥५०॥
यह पापी हमरे हतन हेत। आवतहैं जलदी जिम परेत ॥

तातें तुम पंडित चतुर सार। इक संधी बुद्ध धरो अपार ॥५१॥
अरु सम्यक दर्शन को उद्योत। तुमही ते इस जगमें सुहोत ॥
तातें यह कमलन जुत तड़ाग। तामें छिपजावो आप भाग ॥५२॥
अरु मैं जावत हूं मग मझार। मो मारैंगे निश्चय अबार ॥
ऐसे बच सुन अकलंक देव। हिरदे दुख धारो बहुत भेव ॥५३॥
पीछे सरवर में आप जाय। शिर कमल पत्र नीचे छिपाय ॥
मानोजिनवर की सरन लीन। चित सम्यकदर्श धरो प्रवीन ।५४।
तब निःकलंक भागो सुबीर। इक धोवै कपड़े रजक नीर ॥
इनको भागत देखो तुरंत। पीछे ते रज उठती लखंत ॥५५॥
तब धोबी चित मांही डरात। पूछी इन सूं क्या है सुभ्रात ॥
तब निःकलंक इम बच सुनाय। यह शत्रु सैन पहुंची सुआय ॥५६॥
जिसको मगमें देखे अयान। तिसही जनके यह हनत प्रान ॥
तातें मैं शीघ्र चलो अबार। तब धोबी भागो इन सुलार ॥५७॥

दोहा

तब यह पापी आन कर, हनत भए इन प्रान ॥
दोनों के सिर काटले, गए सो अपने थान॥ ५८ ॥
जे नर हैं इस लोक में, पाप विषै अति दक्ष ॥
क्या क्या अघ नहिं करत हैं; सबही करैं प्रत्यक्ष ।५९।

चौपाई

कैसे हैं पापी मत हीन। जैन धर्म कर रहित मलीन ॥
मिथ्या विष कर सहित कुचील। लोभी हिरदे धरैं न शील ॥६०॥
जिनवर धर्म सदा सुखकार। तिष्ठत जिनके चित नलगार ॥
तिनके दया कहां ते होय, लेश मात्र जानो नहि कोय ॥६१॥
ता पीछे अकलंक सुदेव। तज सरवर चाले स्वयमेव ॥
दृढ़ चित धारैं तत्व मझार। जो जिनवर भाषो हितकार ॥६२॥

चलत चलत केते दिन भए। देश कलिंग मांहि तब गए॥
तहां रतन संचयपुर नाम। नगर बसत है अति अभिराम ॥६३॥
हिम शीतल तहँ नाम नरिंद। सब परजा को आनंद कंद॥
मदन सुंदरी ताके नार। रूप शील गुण धरै अपार॥६४॥
जिनपद कमल जगत में सार। भौरा सम सेवैं हितकार॥
निरमापो जिनवर को धाम। उसही नगर विषै अभिराम ॥६५॥

दोहा

फागुण की अष्टान्हिका, ताको आयो पर्व।
प्रारम्भो उत्साह अति, जिन मन्दिर में सर्व॥६६॥
कीजे श्री जिनचन्द्र की, रथ यात्रा सुखकार॥
संपत युत अति हर्ष कर, रानी चित में धार ॥६७॥
रथ यात्रा उद्यम लिखो, संघश्री तिस नाम।
बोधमती पापिष्ट अति, विद्यामद युत काम ॥६८॥
सो राजा पै आयकर, कहत भयो इम बैन।
रथ यात्रा कीजे नहीं, यह है बहु दुख दैन ॥६९॥

काव्य छन्द

ऐसा कहकर बौद्ध तबै चित मांहि बिचारी। बाद पत्र इक लिखो तासमें येम उचारी॥ करो बाद कोई जैनमती हम सेती अबही। ऐसे कह मुनि निकट पत्र भेजो उन तबही॥७०॥ तब नरपति वच चये सुनो रानी सुखकारी। जिनमतकी सामर्थ दिखावो हमको प्यारी ॥७१॥ तो रथयात्रा करो अन्यथा होवे नाही। ऐसे वच सुनहो उदास गई जिनग्रह माही॥७१॥ नमन कियो तहँ जाय वहुर मुनिवर ढिग आई। कहत भई इम बैन सुनो गुरु चित लगाई ॥७२॥ हमरे जिनमत मांहि कोई नरहै इस लायक। बौद्धन देय हटाय बाद करके शुभ दायक ॥७३॥

दोहा

बौद्ध गुरू को जीतकर, मेरी बांछा सार ।
पूरे रथयात्रा करै, इसही नगर मझार ॥ ७३ ॥
इस लायक नर कौन है, सो कहिये भगवान ।
तब मुनिवर कहते भए, सुन पुत्री गुणखान ॥७४॥

चौपाई

मान्याखेट नगर शुभ जान । तामें पंडित है बुधवान ॥
इसको जीतन समरथ होय । यामे संशय नाही कोय ॥७५॥
मदन सुन्दरी वच सुन तेह । कहत भई सुनये गुरु येह ॥
कोप सहित जो सर्प कराल । डसन हेत आयो तत्काल ॥७६॥
दूर देश में गारुड़ होय । तो वह नर जीवै किम सोय ॥
ऐसा कह प्रभु पूजन करी । जिन ग्रहू में परतिज्ञा धरी ॥७७॥
संघश्री पापी है सोय । उसको मत बिध्वंसे कोय ॥
पूरववत रथ यात्रा करूं । जिन प्रभावना वहु बिस्तरूं ॥७८॥
तो मैं भोजन करूं ललाम । नातर प्राण तजूं इसठाम ॥
ऐसी विध परतिज्ञा धार । कायोत्सर्ग खडी तिहवार ॥७९॥
श्रीजिन प्रतिमा आगे सार । नमोकार शुभ मंत्र उचार ॥
मेरु चूलका वत अति धीर । निश्चल ऊभी भई गंभीर ॥ ८० ॥
पीछे अर्ध रात्रि जब गई । याके पुन्य प्रभावै सही ॥
देवी चक्रेस्वरी उदार । तिस आसन कम्पो तिहवार ॥८१॥
अवध ज्ञान ते जान तुरन्त । तबही आई हर्षित वंत ॥
कहत भई ऐसे बच ताम । मदन सुन्दरी सुन अभिराम ॥८२॥
तेरो मन जिन चरन मझार । तातें किंचित भय नाहि धार ॥
होत प्रभात समय इस थान । आवैगा अकलंक महान ॥ ८३ ॥
संघश्री मद मर्दन करै । जैनधर्म बहु बिधि बिस्तरै ।

रथ प्रभावना कर हैसार। तेरी वांछा पूरनहार ॥ ८४ ॥
आननादिव्य धरै बहवीर। जिनमत मांही साहस धीर।
एसा कह देवी ततकार। जात भई सो जिन आगार ॥ ८५ ॥
देवीके बच सुन तिह बार। रानी आनंद धरो अपार।
फिर जिनवरकी स्तुति करी। बहु प्रकार मुखते उच्चरी ॥ ८६ ॥
भयो प्रभात समय सुखदाय। तब प्रभूको अभिषेक कराय।
पूजनकीनी चित्त लगाय। अष्ट प्रकार द्रव्य शुभलाय ॥ ८७ ॥
जे चर कारजमें परवीन। चारोंदिश भेजे गुणलीन।
कहत भई ऐसे समझाय। जावो बेग नढील कराय ॥ ८८ ॥
जहँ देखो अकलंक महान। लावो बेग सही बुधवान ॥
ऐसे सुन चाले तत्काल। ढूंडन हेत सबै गुणमाल ॥ ८९ ॥
पूरब दिश जो गए प्रवीन। तरु अशोकनीचै तिनचीन ॥
केइयक शिष्यन को समुदाय। तिष्ठतहैं तादिग हरषाय ॥ ९० ॥
सर्व शास्त्र के जाननहार। पोढत देखे बाग मझार ॥
एक शिष्य से पूंछ तुरंत। रानी से आकहो व्रतंत ॥९१॥
सुनतेही रानी तिहबार। बड़ी बिभूति लई निजलार ॥
सब परजन युत चढ़ झंपान। प्रीत सहित पहुंची तहँआन ।९२।
वातसल्य गुण धर अधिकाय। बन्दन कीनी सीस नवाय ॥
स्तुति कीनी विविध प्रकार। श्रीअकलंक देवकी सार ॥९३॥

दोहा:

जैसे रवि उद्योत में, खिलै कमलनी सोय।
अथवा गुण आतम लखै, त्यों रानी सुख जोय ।९४।
चंदन अगर कपूर शुभ, अरु बहु बिध के चीर।
धर्मराग रानी गहो, पूजे अकलंक धीर ॥ ९५ ॥

पद्धड़ी

आतम पवित्र अकलंक देव । पंडित बुध आकर कहत ऐव ॥
तुमरे अरु सब संघ के मंझार । बरतत है कुशल अनंतकार ।६६।
ऐसे सुन रानी हो उदास । आसूं जुत नैन किये प्रकाश ॥
हो स्वामी सुनिये धर्म लीन । ऐसेतो कुशल सबहै प्रवीन ॥९७॥
पण सबही संग अपमान थाय । यह तिष्ठत हैं बहु दुःखपाय ॥
संघश्री नामा बौद्ध थाय । ताको सब भेद कहो सुनाय ॥९८॥
रानी बच सुन अकलंक देव । बहु क्रोध सहित बोले सुयेव ॥
क्या संघश्री है दीन रंक । मद कर उद्धत जैसे पतंग ॥ ९९ ॥
मोसूं समरथ नाहि बाद बीच । वह बौद्धन को गुरुहै सुनीच ॥
ऐसे कह बहु संतोष कीन । बुध धारक वे पंडित प्रवीन ॥१००॥
तबही लिखबाद सुपत्र संत । संघश्री पै भेजो तुरंत ॥
अरु आप चित्त उच्छाह ठान । जिन भवन गए रंजाय मान ॥१॥

दोहा

बाद पत्रको देखकर, बौद्ध गुरू तिहवार ॥
और पराक्रम बहु सुनो, बाद करो तत्कार ॥ २ ॥
अपनी शक्ति प्रकाशयो, अकलंक देव उदार ॥
नाना विधि उत्तर दिये, जैन बचन अनुसार ॥३॥

चौपाई

संघश्री तब चित्त बिचार । मैं इन से नहि जीतन हार ॥
जेते बौद्धन के समुदाय । सब देशन ते लिए बुलाय ॥ ४ ॥
पहिले सिद्ध करी थी जोय । तारा नामा देवी सोय ॥
ताके आह्वानन विधि ठान । तहां बुलाई बहु करमान ॥५॥
तासों कहत भयो इम बैन । सुन देवी तू है सुख दैन ॥
या नरते इस बाद मझार । मैं तो जीत सकूं नलगार ॥६॥

तातें सुंदर तुम इस धाम । बाद ठान जीतो सु ललाम ॥
ऐसे सुनकर देवी सोय । कहत भई ऐसेही होय ॥ ७ ॥
राज सभाके बीच सुजाय । आड़ो पट तुम खड़ो कराय ।
माटी को इक घट मंगवाय । ता मांही मो दे बैठाय ॥ ८ ॥
पीछै बाद तनो बिस्तार । कीजो तू इस सभा मंझार ।
ऐसे वच सुन बौध मलीन । वाही भांति कपट तिन कीन ॥ ९ ॥
इम कहकर तिष्ठो तहँ सोय । मेरो मुख मत देखो कोय ।
बहु प्रकार पूजाकर भाय । देवी कुंभ मांहि पधराय ॥ १० ॥
जबही बाद करन यह लगो । अच्चर शब्द अर्थमें पगो ।
तबही श्री अकलंक सुआय । तिसको खंडन कियो पलाय ॥ ११ ॥
अनेकांत मतके अनुसार । बौद्ध पत्त खंडो तिहबार ।
अपने मतकी जगमग जोत । कीनी भव वर्जित उद्योत ॥ १२ ॥

दोहा

या प्रकार षटमासलों, भयो बाद विख्यात ।
कोई तहँ हारो नही, यह अचरज की बात ॥ १३ ॥

सवैया इकतीसा

तब अकलंक देव रैनके समय मझार, करत विचार ऐसे चित्त मांही आई है । याही मोह बौधर्दीन शब्द में नही प्रवीन, एते दिन बाद करो कारन न पाई है ॥ ऐसे मन संशय धार छिन एक तिष्टे एह, एते तहँ आई देवी चक्रवती माई है । कहो तु उदारचित तेरी बुद्ध है पवित्र, ससतत्व जानवे को तूही सुखदाई है।

दोहा

अहो बाद तोसो करन, समरथ नाही देव ।
यहतो बंधक दीन है, पै है यहां कछु भेव ॥ १५ ॥
बाद कियो षटमासलों, तोसो बुद्धि निधान ।

तारादेवी ने सही, यह निश्चय कर जान ॥ १६ ॥

चौपाई

देवी चक्रेस्वरी महान । ऐसे बच भाषे हित ठान ।
अहो पुत्र तू है बुध लीन । विद्यावर पूरन परवीन ॥ १७ ॥
होत प्रभात समय सुखदाय । पहले प्रश्न कीजियो जाय ।
मान भंग ताको तत्कार । होवैगो नृप सभा मंझार ॥ १८ ॥
तवही तारा देवी जोय । निश्चयकर भागेगी सोय ।
जैसे भानु उद्योत मंझार । भागे तिमर असंख्य अपार ॥ १९ ॥
तेरी जीत होयगी सही । ऐसे कह देवी तब गई ।
देवी दर्शनते सुख पाय । अरु वह बचन सुने हितदाय ॥ २० ॥
खिले कमल सम आनन जान । होत भयो तिह वार महान ।
प्रातकाल उठयो हरपाय । दिव्य मूर्ति जिन मंदिर जाय ॥ २१ ॥
दर्शन कीनो आनंद लीन । वहुप्रकार वंदन सो कीन ।
फिर नरपति की सभामझार । कहत भयो ऐसे तिहवार ॥ २२ ॥
एते दिन मैंने इस ठाम । वाद कियो वहु विध अभिराम ।
क्रीड़ा मात्र जानियो सोय । तथा प्रभावन कारन जोय ॥ २३ ॥
आज जीतकर भोजन करूं । यह निश्चय परतिज्ञा धरूं ।
ऐसे कहकर लगो तुरंत । बादहेत वच कहे महंत ॥ २४ ॥
पहिले दिना प्रश्न जोकरो । सोकिस बिध हमको उच्चरो ।
इस प्रकार इनपूछनकरी । तवदेवी मन चिंता धरी ॥ २५ ॥
इनके वच वहु वज्र समान । हृदय विषै लागे दुखदान ।
कहने कोअसमर्थ हि होय । मान भंग है भागी सोय ॥ २६ ॥
जैसे रवि उद्योत मंझार । भागै रैन रहै नलगार ।
तवही अकलंक देव महंत । क्रोध धार उठे गुणवंत ॥ २७ ॥
अंतरपट कर भेद सुसंत । लातमार घट फोड़ तुरंत ।

बौद्ध मूर्ति को हतातिहवार । मान भंग कीनो तत्कार ॥ २८ ॥
भव्य जीव जैनी जन जेह । तिनके आगे सहित सनेह ।
मदनसुंदरी नरपति नार । कीनो आनंद सहित अपार ॥ २९ ॥
फेर गर्जना सहित सुबैन । भाषत भए महा सुख दैन ॥
धर्म रहित संघश्री दीन । बौद्ध मती यह महा मलीन ॥३०॥
पहलेही दिन करके बाद । हरतो याको सब उनमाद ॥
पर श्री जिनवर चंद मनोग । तिनके मत उद्योतन जोग ॥३१॥
बहु प्रभावना जगमें होय । ज्ञान उद्योत लखै सब कोय ॥
याते में देवी के संग । बाद कियो षटमास अभंग ॥
ऐसे कह यक काव्य महान । सबही आगे पढ़ो सुजान ॥

काव्य

नाहंकार वशीकृतेन मनसा न द्वेषिणा केवलं ।
नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यतिजने कारुणय बुध्या मया ॥
राज्ञः श्रीहिमशीतलस्य सदसि प्रायो विदग्धात्मनम् ।
बौद्धौघान् सकलान् विजत्यस घटः पादेनाविष्फालितः ३३

अर्थ कवित्त ॥ छन्द

अहंकार वशि नाहि बाद मैंने यह कीनो । अथवा केवल दोष चित्तमैं नाहि धरीनो ॥ समझो मनमें एम जीव भोले जगमांही । बौद्ध धर्म में लीन होय तो नाश लहांही ॥ ३४ ॥ ताते दया सुज्ञान कियो में वाद प्रचारी । हिम शीतल नरनाथ तासकी सभा मझारी ॥ आए थे बहु बौद्ध तिनोंकी मति हरलीनी । कीनो जैन उद्योत और घट लात सुदीनी ॥ ३५ ॥ ऐसे बैन महान कहे अकलंक सुस्वामी । नृपने दिए निकास बौद्ध जो थे बहुनामी ॥ दशों दिशा को छाड़ तबै वे गए पलाई । ज्यों रविके उद्योत होत षग द्योत नशाई ॥ ३६ ॥ ऐसे श्री अरिहंत देवको ज्ञान

प्रभावन। देखो अपनी दृष्टि राय आदिक जे पावन ॥ भक्ति चित्त निज आन तजो मिथ्यामत भारी। जैनधर्म में राग धार भए सम्यक धारी ॥३७॥ नाना बिधके रतन हेम बहु बिध ले आए। पंडित श्री अकलंक तने तत्र चर्न चढ़ाए ॥ बहु स्तुति उच्चरी धन्य तुम जन्म लियो है। जैन धर्म परकाश बौद्ध मत नाश कियो है ॥ ३८ ॥

दोहा

मत अरिहंत जिनेश को, जिन उद्योतहि कीन।
पूज्य पुरुष या जगतमें, क्यों नहि होंय प्रवीन ॥३९॥

पद्धड़ी

फिर मदन सुन्दरी जो प्रवीन। रथयात्रा को उद्यम सुकीन ॥
नाना प्रकार रचना समेत। रथ ऊपर लहकत है सुकेत ॥४०॥
रेशम फुंदे दई दीप्यमान। अरु क्षुद्र घंटका शोर ठान ॥
जहँ चमर सुलटकत हैं अपार। बहु छत्र फिरैं रथके मझार ॥४१॥
अरु रतनदाम मोती सुमाल। लटकत हैं तहँ झालर रसाल।
ऐसो रथ सजयो अति विचित्र। सिंहासन तामध है पवित्र ॥४२॥
तामध श्रीजिनवर चंद्रराय। अस्थापन कीने हरष पाय ॥
तब भव्यनके समुदाय जेह। मुख बोलत जैजैकार तेह ॥४३॥
तहँ पुष्पन की बरषा अपार। रथ ऊपर करत सुबार बार ॥
झालर मृदंग कंसाल ताल। भंभा फेरी पटहा विशाल ॥४४॥
बाजत बहुविध सुर ताल लीन। पंडितजन जिनगुण गानकीन ॥
बंदीजन चारण आदि जेह। जिनबृद्ध बखानत आनतेह ॥४५॥
अरु गीत नृत्य करती अपार। नारी चाली रथकी सुलार ॥
मानौं यह पुन्य तनो सुमेर। चजतो सो है सबजन सुहेर ॥४६॥
जे भव्यन के समुदाय आय। रानी बहु बिध आदर कराय ॥

षट भूषण नाना भांति जेह । तंबोल दिए बहुधार नेह ॥४७॥
रथको देखो बहु हरषवंत । मानों चलतो सुर तरु दिपंत ॥
जाकी शोभा बरनी न जाय । जन देखन सम्यक लब्ध पाय ॥४८॥
नाना विध सम्पत जास लार । भवजीव मनोहर पूर्ण हार ॥
मानो जसर्ह।का पुंज थाय । ऐसो रथ चालो समंदाय ॥४९॥
सो आचारज भाषे दयाल । सोई रथ हम ध्यावैं त्रिकाल ॥
अर भव्य जीव जे हैं उदार । तेभी भावो जगके मझार ॥५०॥

सोरठा

ऐसे संभावन कियो, जिनमत को उद्योत ।
सो सबको प्रापत करो, सम्यक लक्ष्मी जोत ॥५१॥
या बिध अकलंक देवने, ज्ञान प्रभावन कीन ॥
और भव्यजे जग विषैं, नितप्रति करो प्रवीन ॥५२॥

गीता छन्द

इस ग्रन्थ के करता कवीश्वर ब्रह्म नेमीदत कही ।
श्री प्रभाचंद्र मुनिन्द्र मुझको सुःख बहु विध दोसही ॥
कैसे हुते मुनिराज जगमें ज्ञान के अंबुध भले ।
गुण रतन उद्यम हृदय मांही कर्म शत्रुन को दले ॥ ५३ ॥
अरिहंत बरनो ज्ञान उत्तम तास रहस सुपाइयो ।
इनदीप सम परकाश कीनो जगत को दिखलाइयो ॥
अरु देव इंद्र नरिंद्र करके बंदनीक महान हैं ।
ऐसे जिनेन्द्र सुचंद्र जगमें करत सब कल्यान हैं ॥५४॥

सोरठा

अर्थ यथारथ पाय, अरु शुभ कारन को लखो ।
तब यह छन्द रचाय, बखतावर अरु रतन ने ॥ ५५ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषै ज्ञान उद्योत कृत श्री अकलंक देव जीकी कथा सम्पूर्णम् ॥

अथ श्री सनतकुमार चक्रवर्ति की कथा

प्रारम्भः ॥ नं० ३

मंगलाचरण छप्पय

स्वर्ग मोक्ष सुख देन पंच परमेष्ठी जानो। तिनकी भक्ति सुधार नमन बहु विधमें ठानो ॥ चारित को उद्योत कियो चक्री गुण धारी। सनतकुमार महान भए चौथे हितकारी ॥ तिनकी कथा बखानहूं, सुनो भव्य चित लाइये। तासुनत महा दृढ़ता बढ़ै, बहुविध आनंद पाइये ॥ १ ॥

कथारम्भ चौपाई

एही भरत क्षेत्र सोभाय। तामें बीतशोकपुर थाय ॥
ताको स्वामी बहु गुण पाय। अनंतवीर्य तिस नाम सुथाय ॥२॥
पटदेवी सीता तसु गेह। नृपको तासों अधिक सनेह।
तिनके पुन्य उदयते सार। उपजो पुत्र जुसनत कुमार ॥ ३ ॥
चौथो चक्रवर्ति बरवीर। सम्यक्त्वंत शिरोमणि धीर।
षट खंड साधे भुज बलधार। नवनिध चौदह रतन भंडार ॥ ४ ॥
अरु चौरासी लाख करिंद। नब्वै सहस बतीस नरिंद।
सहस चौरासी रथ शुभजान। कोड अठारह घोटक मान ॥ ५ ॥
सुवरणके गहनन करजोय। दिसै मनोहर बहुविध सोय ॥
कोट चौरासी अति बलवंत। शस्त्र साहित प्यादे शोभंत ॥ ६ ॥
धानन के समूह करभरे। कोड़ छानवै ग्राम सुखरे।
सहस छानवे बनितागेह। तिनते राखत अधिक सनेह ॥ ७ ॥
इत्यादिक संपाति भंडार। चक्र वार्तिपद धरै उदार।
देव खगेश्वर नितप्रति आय। सेव करैं तिसकी हरषाय ॥ ८ ॥
धरै रूप लावन्य अपार। महाभाग बुध आकर सार।

श्री जिनचंद्र तने सो दास । धर्म कर्म धारै गुण रास ॥ ९ ॥

दोहा

यह विध बहुशोभा धरै, तिष्टत जिन आगार ।
प्रथम इंद्र जिन सभामें, इह विध वचन उचार ॥१०॥
रूप अरु गुण बरणान कियो, पुरुषन को अधिकान ।
तब इकदेव विनय सहित, प्रश्न कियो तिह थान ॥११॥
जैसो वरणान तुम कियो, अहो नाथ गुणगेह ।
भरत क्षेत्र में नर कोई, है अक नाही तेह ॥ १२ ॥

अडिल्ल

तबै इंद्र महाराज बचन इम उच्चरै । चक्री सनतकुमार रूप इह विध धरै ॥ तैसो रूप महान सुरनको भी नही । औरनकी कहा वात जो शोभा उन लही ॥१३॥ ऐसे सुनके वैन तबै सुर युगमिले मणिमाली अरु रतनचूल जबही चले ॥ १४ ॥ रूप देखने काज न्हौन थानक गयो । छिपकर देखो और महा आनंद लयो ।१४। वस्त्राभूषण रहित नगन तन धारहै । तो पण तीन जगतको मोहन हार है ॥ जबही अमरन चितमें विस्मय आनियो । सिरहलाय कर इंद्र बचन सत जानियो ॥१५॥

दोहा

हरष धार द्वारे गए, अपनो रूप प्रकास ।
द्वारपाल सो इम कहो जावो चक्री पास ॥ १६ ॥
ऐसे बचन वखानियो, तुम देखन को एव ।
स्वर्ग लोक ते आन कर, तिष्टत द्वारे देव ॥ १७ ॥

पद्धड़ी

तब द्वारपाल सुन बच प्रवीन । पृथ्वी पति के ढिग गमनकीन ॥
जाकर सबही भाषो ब्रतंत । सुन नरपति हूवे हरषवंत ॥१८॥

तनको बहुविध शृंगार कीन । पट भूषण बहु पहरे नवीन ॥
बहु शोभावत तिष्ठो महंत । युग त्रिदश बुलाय लिये तुरंत ॥१९॥
तब सभा विषै युगदेव आय । इन रूप देख इम बच कहाय ।
है कष्ट पड़ो इस जग मझार । छिन भंगुर मानुष रूप धार ॥२०॥
जैसे हम देखो न्हौन थान । तन लेप सहित दैदीप्य मान ॥
सो अब दीखत नाही लगार । तातैं यह सब जगहै असार ॥२१॥
नृप हुते सभाके बीच जेह । तिन कहो सुनो बच देव येह ।
जैसो मंजन थानक मझार । नृप रूप हुतो तैसो अवार ॥२२॥
ऐसे बच सुन निरजर प्रवीन । जल भरो कुंभ मंगवाय लीन ॥
सबको दिखाय घट पूर्ण बार । फिर बाहर जन दीने निकार ॥२३॥
तब चक्रवर्ति देखत दयाल । तृणांत इक बूंद दई निकाल ॥
सबही जन फिर लीने बुलाय । जल भरो कुंभ उनको दिखाय २४
युग सुर तिनसे पूछन सुकीन । इसमें जल पूरण है किहीन ॥
जैसे पहिले हमने निहार । उतनोही है कम नाहि लगार ॥२५॥

दोहा

तबै देव कहते भये, सुन चक्री बुधिवान ।
रूप तिहारो इम घटो, जिम जल बूंद न जान ॥२६॥
ऐसो कहकर देव युग, गए सुनिज आगार ।
चमत्कार चक्री लखो, मनमें करै बिचार ॥ २७ ॥

छन्द जोगीरासा

पुत्र मित्र नारी परियन जन चपलावत नशिजावै । इह शरीर अपवित्र घिनावन नितप्रति ताप बढ़ावै ॥ बिनशजाय क्षण मांही दीखत पंडित नेह न लावें । पंचेंद्री के भोग चोर तिनसे यह जीव ठगावैं ॥२८॥ इन भोगन कर ठगे जीव बहु ह्वै पिशाच सग नाचैं । अमृत सम जिन बैन मनोहर मिथ्याकर नाहि राचैं ॥ यह

जड़ बुद्धी ज्ञान बिना सट निजरस मे नहि पागै । जैसे ज्वर वाले को मिश्री दूध जहर सम लागै ॥२९॥

दोहा

चक्रवर्ति इम चिंतवै, अबही मोह जंजाल ।
तजकर आतम हित करूं, लूं दीक्षा दरहाल ॥३०॥
तत्पर हो वैराग में, जिन पूजन बहु कीन ।
करुणा भाव उदार कर, दान बहुत जब दीन ॥३१॥

चौपाई

देव कुमार नाम सुत जास । ताको राज दियो सुखरास ॥
बुद्धि रूप धनको आवास । आप गयो श्री मुनिवर पास ॥३२॥
नाम त्रिगुप्त दिगम्बर धीर । तिनको नमन कियो बरवीर ॥
हितकारी जो जगत मझार । बड़ी भक्ति ते दीक्षा धार ॥३३॥
नग्न उग्र तप करत महान । पाले पंच महाव्रत जान ॥
ऐसो चक्रवर्ति जोगिंद । करै तपस्या अति गुण वृंद ॥३४॥
प्रकृति विरुद्ध अहार पसाय । सब शरीर में रोग लहाय ॥
खुजली आदिक बहु दुखदाय । तौ पण चिंता कछु नकराय ।३५।
तनसे निस्प्रेही मुनिराय । उत्तम तपको बहुत तपाय ॥
तिस अवसर में प्रथम सुरिंद । सभा विषै तिष्टे गुणब्रिंद ॥३६॥
धर्म रागते करो बखान । पंच प्रकार चरित्र महान ॥
पालैं जे धन जगत मझार । हरष सहित ऐसे उच्चार ॥३७॥
मदन केतु इक देव महान । मघवाते पूछो तिहथान ॥
जो प्रभु तुम चारित्र बखान । सो हम निश्चय उरमें आन ।३८।
पर इस भरतक्षेत्र इस काल । सम्यक दृष्टी नर गुण माल ।
चारित्र धारी हैं इक नही । सो तुम नाथ कहो अब सही ॥ ३९ ॥
तबै पाकसासन उच्चार । चक्रवर्ति जो सनत कुमार ।

तृणवत् जान राज तजदीन । सो निस्नेही चारित्र लीन ॥ ४० ॥
सुनाशीर ऐसे उच्चरी । सब अमरन ने शरधा करी ।
मदनकेत अचरज चितलाय । देखनको आयो उमगाय ॥ ४१ ॥
बनमें देख मुनि गुण माल । सब जीवनके हैं रिछपाल ।
रोग अनेक रहे वपुछाय । पर सुमेर सम ध्यान लगाय ॥ ४२॥
सुर अरु असुरन मैंनितचर्ण । चारित धारी मुनि दुखहर्ण ।
प्रथ्वी तल पवित्र कर सोय । ठाड़े आतमको अवलोय ॥ ४३ ॥

दोहा

ध्यान लीन ऐसे लखे, श्रीगुरु दीनदयाल ।
वैद्य रूप सुर धारकर, बोले बचन रशाल ॥ ४४ ॥
मैं सब वैद्यन को पती, खोवूं व्याधि तुरंत ।
दिव्यरूप अबही करूं, इहविध शब्द कहंत ॥ ४५ ॥

सवैया

ऐसे वच बार बार कहत पुकार सार, आगे पीछे मुनिके समीप वह जायके । तब गुरु दीनन के नाथ बैन इमकहे, कारनहै कौन फिरै वनमें तू आयके ॥ जब सुरकहै मोह वैद्यनको पतिजान, जेते रोग सब देहुं छिनमें भगायके । कंचन समान छवि तन की बनाऊंवेग, देवो जोहुकम मोहि आप हरषाय के ॥ ४६ ॥

दोहा

इम बोले तब शिवधनी, जोतू वैद्य निधान ।
जन्म मर्ण की व्याधिको, करो दूर बुधिवान ॥ ४७ ॥
वैद्यरूप सुर इम कहो, सुन मुनिवर जगदीश ।
दूर करन इम व्याधिको, में समरथ नाहि इश ॥ ४८ ॥

सोरठा

जन्म मरण जो व्याध, तास हरण समरथ प्रभु ।
तुमही हो जग साध, और वैद्य कोई नही ॥ ४९ ॥

पद्धड़ी

तब मुनिवर कहत सुनाय एम । तन व्याध हरख कारन सुकेम ।
यहहै शरीर अपवित्र जोय । निर्गुण दुर्जन समजान सोय । ५० ।
इम व्याध हरन इच्छा जुधार । नासामलते टारैं अवार ।
तब वैद्य तनी औषधि अपार । तिसतें क्या काज हिये विचार । ५१ ।
ऐसा कह नासामैल लीन । भुज रोग सबै नासो प्रवीन ।
सुबरन सम बांह तबै दिपंत । माया तजप्रगटो सुर तुरंत । ५२ ।
फिर नमन ठान अरु इम उचार । स्वामी चरित्र तुमरो उदार ।
अचरजकारी निरदोष सार । अरु तनमैं निस्नेही अपार ॥ ५३ ॥
ऐसो निज सभा विषै सुरेश । बरनो जैसा देखो विसेश ।
तातें तुमअवनीमैं महान । धन तुमरो जनम दया निधान ॥ ५४ ॥
सब जनको तुम सुखदैनहार । इम स्तुति कीनी बार बार ।
चित भक्ति धारकर नमस्कार । वह देव गयो अपनेअगार ॥ ५५ ॥

दोहा

सनत कुमार मुनीश तब, करतसो निज कल्यान ।
चारित्र पंच प्रकारको, करोउद्योत महान ॥ ५६ ॥
शुक्ल ध्यान करकर्मअरि चार, घातिया नाश ।
इंद्र चंद्र पूजत चरण, केवल ज्ञान प्रकाश ॥ ५७ ॥

चौपाई

तबै केवली सनत कुमार । धर्म रूप बरषावत बार ।
भव जीवन को दे उपदेश । रहे कर्म सब नाश असेश ॥ ५८ ॥
तबही पहुंचे मोक्ष सुथान । नंत गुणों की आकरजान ।
तिष्ट सिद्ध थान गुण लीन । आवागमन रहित परवीन ॥ ५९ ॥
सम्यक्तादि अष्ट गुणसार । ताकर शोभित ज्ञान भँडार ।
पूजन वंदन किए महंत । निज लक्ष्मी सो दो भगवंत ॥ ६० ॥

सनस कुमार मुनी जगपोत। चारित्रको कीनो उद्योत।
तैसे और भव्य जन जेह। बहु बिध कर परकाशोतेह ॥ ६१ ॥

छप्पय ॥ छंद

गच्छ भारती मांहि मूल संघी सुखदाई। श्री भट्टारक नाम मल्ल भूषण बरदाई ॥ तिनके शिष्य महान सिंघ नंदी मुनिजानो। गुण रतमन की खान बुद्धि तिनकी बरमानो॥ सो मुझको संसार ते, तारन हार दयाल हैं। भव जीवनको शुभगति करैं, ऐसे गुरु गुण माल हैं ॥ ६२ ॥

सोरठा

ब्रह्मनेमिदत जान, कथा तीसरी बर्णाई।
तापर छन्द बखान, की बखतावर रतन ने ॥६३॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषै सनतकुमार की चक्री की चारित्र उद्योत कथा समाप्तः

अथ श्री समंतभद्र स्वामी की दर्शन

उद्योत कथा प्रारम्भः ॥ नं० ४

मंगलाचरण ॥ सवैया इकतीसा

तीन जग्तके सुजीव पूजें चरनारविंद, ऐसे अरिहंत जिन ताको शीश नायकै। सम्यक्दरश सार तासको उद्योत कीनो, श्रीमत समंतभद्र शूर चित्त लायकै॥ तिनकी कथा महान सोई मैं करूं बखान, सुनो भव्य जीव तीनो जोग को लगायकै। जासके सुनत ही ते सम्यकदरश होत, जाय तत्काल भाग दुरनय पलायकै ॥१॥

चौपाई

भरतक्षेत्र आरज खँड जान। ताकी दक्षण दिशा महान॥
काशीपुर शुभ नगर बसात। तामें पंडित मुन बिख्यात ॥२॥
आतम ज्ञानी बहु बुधवान। तर्क छन्द व्याकरण निधान॥

अलंकार आदिक जु पुरान । तिनको जानै रहस पुमान ॥३॥
चारित्र मणि को सागर सार । स्वामी समंतभद्र हितकार ॥
तिष्ठत है तहँ ध्यान लगाय । कर्म असाता उदय पसाय ॥४॥
भस्म व्याधि उपजी तन आय । तीव्र कष्ट दाई अधिकाय ॥
तिसी व्याधि कर पीडित मुनी । तत्काय चित चिंता ठनी ॥५॥
इस प्रथवी लख पे तप करो । दर्शन उद्योतहि विस्तरो ॥
अब यह भस्म व्याधि दुखदाय । उपजी हमरे तनमें आय ॥६॥
इसके नाश करन तत्काल । कोई बिध कीजे दरहाल ॥
घृत मिश्रित पकवान अनोग । तासों नाश होय यह रोग ॥७॥
यहां अहार प्राप्ति नहि होय । तातें भेख धरूं अब कोय ॥
कोई थान कोइ भेष बनाय । इस को उपसम कीजे जाय ॥८॥
ऐसो मनमें धार विचार । तबही काशीपुर को छार ॥
उत्तर दिश को चले तुरन्त । पौडोंड नगरी पहुचंत ॥ ९ ॥
बौद्धसतन के मट तिह थान । तहां जो दान बटै अधिकान ॥
देख जबै मन हरष सुधार । बौद्ध रूप कीनो तत्कार ॥ १०॥
तहां भी अल्प अहार पसाय । क्षुधा रोग नहि उपसमथाय ॥
तहँ ते निकस चले बुधवान । बहुत नगरमें कियो पयान ॥११॥

दोहा

केतक दिन में पहुंचयो, दशपुर नगर सुजाय ।
क्षुधा लीन अति दुखित है, देखे मठ अधिकाय ॥१२॥
भगवत भेषी तहँ रहैं, है तिनको समुदाय ।
जैसे बायस वन विषै, दीखत है अधिकाय ॥१३॥

चौपाई

उनके सेवक दान जु देत । सदा काल अति हर्ष समेत ॥
ऐसे लख मत बौद्ध सुढाल । भगवा भेष धरो तत्काल ॥१४॥

तहां भस्म ब्याधी नाहि गई। तन में साता नेक न भई ॥
वहँ से निकस चले दरहाल। दशों दिशा में फिरे दयाल ॥१५॥
भ्रमते पहुंचे काशी देश। तामें नगर बनारस वेश।
तहँ परवेश कियो हरषाय। जानी यहां मम चुधा पलाय ॥१६॥
वे समंतभद्र बरवीर। हिरदे सम्यक धरो गंभीर ॥
भस्म ब्याधि संगोग पसाय। बाह्य भेष अनेक बनाय ॥१७॥
जैसे कम्प मांहि है लाल। तैसे बाह्यजयेह गुण माल ॥
नगर बनारस में अधिकाय। जोगी जनके हैं समुदाय ॥१८॥
तब इन भगवा पटको छार। जोगी रूप कियो तत्कार ॥
शिव कोटी राजा कर जहां। करवाए शिव मंदिर तहां ॥१९॥
भेद अठारह धान मनोग। मिश्री युत तहँ चढ़े सुभोग।
तहां देख मनकियो बिचार। यहँ मम ब्याधि होय निरवार ॥२०॥

दोहा

करत बिचार सु इमतहां, सेवक नृपके आय।
नैवेद्यके पिंड बहु, शिवको दियो चढ़ाय ॥ २१ ॥
फिर उठाय बाहर नख्यो, देखो पिंड गिरात।
तब जोगी ऐसेकहो, सुनो सबै तुम बात ॥ २२ ॥

अडिल्ल

अहो राज्य में समरथ कोई है नहीं। षटरस कर संयुक्त महा उत्तम सही। आव्हानन कर शिवको देय खुवायही। जाकर पुन्य भंडार भरैं अधिकायही ॥ २३ ॥ ऐसे इनके बैन सुने सेवक जबै। कहत भए क्या तुममे समरथहै अबै ॥ समंतभद्र इम बैन कहे हरषायके। है समरथ मुझमांहि कहो नृपजायके। २४।

दोहा

सुनते ही सेवक सबै, नृपपे गये सुभाज।

शिव थानक जोगीश इक, तिष्टतहै महाराज ॥ २५ ॥
तुमभेजो नैवेद्य सो, बाहर गेरत देख ।
कहत भयो बच एसतब, जोगी सुंदर भेख ॥ २६ ॥
मैं भोजन इस देव को, करवाऊं तत्कार ।
आव्हानन बिधिठानके, इह बिध बचन उचार ॥ २७ ॥

पद्धरी

इम सुन शिवकोटी तब नरेश । मन माही हरष धरो विशेश ।
नाना प्रकार पकवान सार । घृत दधि के कुंभ लिए सुलार २८
पूरी पापड़ रस इख जेह । सत कलेश भेर लायो सुतेह ॥
जोगी के ढिंग आयो तुरन्त । बोलो नृप बच तब हर्षवन्त ।२९।
अब देव तनो भोजन कराय । सुन जोगी बोलो हर्ष पाय ॥
मैं करवाऊं भोजन अपार । इम कह सामग्री ली उदार ॥३०॥
मंदिर भीतर परवेश कीन । सेवक जन बाहर काढ़दीन ॥
अरपाट जुगल तबही भिड़ाय । वह सब सामग्री आप खाय ३१
फिर खोल किवाड़ कहो पुकार । भोजन बाहर सबलो निकार ॥
तब नरपति चित आश्चर्य धार । नितप्रति भेजे पकवान सार ३२
शिव मन्दिर में बहु धार प्रीत । षटमास भए ऐसे व्यतीत ॥
तब भस्म व्याधि उपशांति थाय । भोजन बाकी नितप्रति बचाय ३३

दोहा

जो अहार मरजाद थी, तितने पै वह ठाय ।
भोजन बचतो देख के, सेवक बोले आय ॥३४॥
हो जोगी यह क्यों बचै, नित भोजन अभिराम ।
समंतभद्र तब इम कहो, अब तुम सुनो ललाम ॥ ३५ ॥
नृपकी भक्ति सुबहु लखी, तृप्तो देव महान ।
ताते भोजन अल्प अब, लेन लगे सुखमान ॥३६॥

चौपाई

इम बच सुन सेवक जन जेह । नृपसों जाय कहो सब तेह ॥
तब इस चरित निहारन काज । नृपने कीनो एम इलाज ॥३७॥
सूके पुष्पन में नर कोय । मोरी मध्य छिपायो सोय ॥
किह विध भोजन देव कराय । सो चरित्र तुम देखत जाय ॥३८॥
उन देखो सो कहो तुरन्त । नरपति आगे सब बिरतन्त ॥
जोगी भोजन आप सुखाय । शिवपर पग धर सैन कराय ।३९।
शिवकोटी सुन बैन सुएव । हिरदे कोप धरो बहु भेव ॥
जोगी से बच कहे सुनाय । तू धूरत झूटो अधिकाय ॥४०॥
तूही भोजन नितप्रति करै । देव नाम व्रिथा उच्चरै ॥
अर नहि नमन करै किस काज । भेद बतावो हमको आज ।४१॥
कहे समंतभद्र बच एव । राग द्वेष जुत है यह देव ॥
हमरी नमस्कार परवीन । यह सहने समरथ नाहि दीन ॥४२॥
अहो महीपति सुन मुझ बैन । दोष अठारह जिनके हैन ॥
केवल जुत अरिहंत सुएव । मेरी नमन सहैं ते देव ॥४३॥
तातै इस कुदेवको जदा । नमस्कार करहूं नहि कदा ।
जोमें नाऊं इसको भाल । तेरो देव फटै तत्काल ॥ ४४ ॥
इनके बच सुनके नरनाथ । कहत भयो तू नाय सुमाथ ।
खंड खंड होवैं तो होय । हम देखैं तुम समरथ जोय ॥ ४५ ॥

दोहा

तब जोगी ऐसे कही, तुम सुनये नरनाथ ।
निज सामर्थ दिखायदूं, होत समय परभात ॥ ४६ ॥
तब नरनायक बोलियो, ऐसीही जो होय ।
इमकह इनको लेगयो, मंदिर पीछे सोय ॥ ४७ ॥

काव्य

तब पृथ्वी पति जतन कियो बहु विधि तिह ठाई ।
असि जिनके करमांहि सुभट चौकी बैठाई ॥
गज समूह चहुं ओर खड़े घूमैं मतवारे ।
इम रत्नाकर नृपति गयो निज धाम मझारे ॥ ४८ ॥
समंतभद्र महाराज रात को एम विचारी ।
मैंने जलदी मांहि वचन नृपसे उच्चारी ॥
सो होवै अक नाहि यही संशय मन माही ।
ऐसो चिंता करी प्रभूको ध्यान कराही ॥ ४९ ॥
जिन शासन रिछपाल अम्बका देवी तबही ।
निज आसन कम्पाय आय इनके ढिग जबही ॥
कहत भई जोगींद्र सुनो तुम बैन हमारे ।
जिन चरणाम्बुज भ्रमर समां सब जग को प्यारे ॥ ५० ॥
तुम सम दृष्टी जीव करोमत चिंता कोई ।
जोतुम नृपसे कही होय सो निश्चय सोई ।
चौबिस जिन महाराज तनी अस्तुति उच्चारो ।
रचो स्वयंभू पाठ कोट सुख को दातारो ॥ ५१ ॥

दोहा

यह स्तुति उच्चारके, तू न्यावेगो भाल ।
सहस खंड उस देवके, होवैंगे तत्काल ॥ ५२ ॥
वह देवी जिन भक्ति जुत , ऐसेकह शुभ बैन ।
जात भई निज गेहको, भवि जनको सुख दैन ॥ ५३ ॥

चौपाई

तब देवी के दर्शन पाय । विगसत आनन अंग न माय ।
चौबिस जिनको पाठ मनोग । रचत भयो शुधकारत्रयजोग । ५४ ॥

सुखसे तिष्टे बुद्धि निधान । इतने प्रगटो भानु सु आन ।
सारी नगरी के जन जेह । नृप जुत आए सब शिवगेह । ५५ ॥
कौतूहल जुत देखन हार । बेग उघारो शिवको द्वार ।
समंतभद्र को बाह्यबुलाय । देखो नृपने बिकसित काय ॥ ५६ ॥
सूरज सम तेजश्वी जान । आनंद चित्त धरे अधिकान ।
ऐसो लख शिव कोटी राय । मन विचार यह भांति कराय ॥ ५७ ॥
दिव्य मूर्ति दीखे जोगिंद । पालैगो निज वच गुण बृंद ।
इम विचार बोलो भूपाल । अहो देव को नावो भाल ॥ ५८ ॥
हम देखैं तुम शक्ति प्रवीन । तब श्री समंतभद्र यह कीन ।
बहु बिध भक्ति हिये में आन । चौबीसी जिन स्तुति ठान ॥ ५९ ॥
देव बचन कर आरम्भ कीन । पढ़ो पाठ अति आनंदलीन ।
अष्टम तिर्थेश्वर जिनचंद । तिन स्तुति कीनी जोगिंद ॥ ६० ॥
जितने मुखते करै उचार । तितने शिव दीरघ आकार ।
खंड खंड तिस काया भई । सब जनके देखत फट गई ॥ ६१ ॥
तबही प्रतिमा अधिकरिसाल । चतुर्मुखी निकसी तत्काल ।
चंद्र प्रभुकी अति छबिवान । देखत जन जैजै बचठान ॥ ६२ ॥
कौलाहल लख नृप तिहबार । अतिशय देखो नैन निहार ॥
कहत भए सुनिये जोगीश । कौन पुरुष तुमहो जगदीश ॥६३॥
दीरघ समरथ धारी आप । ऐसे नृपने बचन अलाप ॥
तबही समंतभद्र सब कहो । दो काव्यन में सब बरनयो ॥६४॥

संस्कृत ॥ काव्य

काञ्च्यां नग्नाटकोऽहं मलमलिततनुर्लाम्बुशे पाण्डुपिण्डः ।
पुण्ड्रोण्ड्रे शाकभक्षी दशपुरनगरे मृष्टभोजी परिव्राट् ॥
वाराणस्यामभूवन् शशधरधवलः पाण्डुरागस्तपस्वी ।
राजन्यस्यास्तिशक्तिः स वदतु पुरतो जैननिर्ग्रंथवादी ॥ १ ॥

पूर्वं पाटलिपुत्रमध्यनगरे भेरी मया ताड़िता ।
पश्चान्मालवसिंधुठकविषये कांचीपुरे वैदिशे ॥
प्राप्तोऽहं करहाटकं बहुभटैर्विद्योत्कटैः संकटं ।
वादार्थी विचराम्यहं नरपते शार्दूलविक्रीडितं ॥ २ ॥

चौपाई

यह वृतांत सब कह परवीन । तजो पिनाकी लिंग मलीन ॥
मोर पिच्छिका सहित तुरन्त । भए निर्ग्रंथ जतीश्वर संत ॥६५॥

दोहा

खोटे मतधारीन ते, मत एकांती जोय ।
अनेकांत परभावते, जीतें छिनमें सोय ॥ ६६ ॥

पद्धड़ी

जो सुरग मुकत दायक रशाल । ऐसे श्रीजिनकोमत बिशाल ॥
ताको उद्योतन बहु कराय । उत्तम सम्यक दर्शन पसाय ॥६७॥
यह धीर वीर गुणवंत सार । अब काल अनागत होनहार ॥
तामें तीर्थंकर पद दयाल । पावैंगे निश्चय सुगुण माल ॥ ६८ ॥
शिव पिंडी को इन खंड कीन । यह कवि सत्तम जगमें प्रवीन ॥
सब वादी गण दीने नशाय । श्रीसमंतभद्र निर्ग्रंथ काय ॥ ६९ ॥
श्री जिनवर कर भाषो सुज्ञान । ताको उद्योतन बहुत ठान ॥
ऐसो भारी अचरज लखाय । नृप आदिक बहुजन हर्षपाय ॥७०॥
श्री भगवतचंद्र तनो सुधर्म । तामें दृढ़ होय तजो सुभर्म ॥
अरु शिवकोटी राजा उदार । क्षय उपशम चारित्र मोहकार ७१
सब राज त्याग दिक्षा महान । लीनी तबही सुखकी निधान ॥
धर बहु बिवेक हिरदे मझार । शिवकोटी मुनि बैराग धार ॥७२॥
गुरु भक्ति करी इनने अपार । तातें हिय ज्ञान बढ़ो उदार ॥
जो लोहाचारज कृत पुरान । चारों आराधन को बखान ॥७३॥

चौरासी सहस शलोक थाय। ताकी इनने टीका रचाय ॥
चौंतीस सूत्र तामें उचार। संख्या ताकी ढाई हजार ॥७४॥
अब काल अल्प अरु तुच्छ काय। तातें संक्षेप दियो बनाय ॥
सोई आराधन जग मझार। सबही जनको आनन्दकार ॥७५॥

गीता छन्द

श्री मूलसंघ विषै भए दैदीप्यमान सु जानये।
सम्यक्त दर्शन ज्ञान चारित्र तास आराधि मानिये ॥
विद्या सुनन्द गुरू हमारे काम जगको हर बली।
श्री मल्लभूषण जी भट्टारक सकल दुरनय जिन दली ॥७६॥

दोहा

जैन शास्त्र षटमत विषै, है परवीन दिनेश।
सो शिव लक्ष्मी दो मुझै, किरपाधार विशेश ॥७७॥
ब्रह्मनेमिदत देव बच, बरनो यही पुरान।
ताकी भाषा को करी, बखत रतन हितठान ॥७८॥

इति श्रीआराधनासार कथा कोष विषै श्रीसमंतभद्र स्वामिनु दर्शन ज्ञान उद्योत कथा सम्पूर्णम् ॥

अथ श्री संजयंत मुनिकी कथा प्रारंभः

मंगलाचरण सवैया ॥ तेईसा ॥ नं० ५

श्रीअरिहंत जिनेश्वरजी तिनके चरनारसुबिंद जजेरे। हैं सुपवित्र महा सुख दाय हरें दुख ताप सबै जन केरे ॥ ताह नमूं सिरनाय अबे तुम हूजे दयाल प्रभू अब मेरी। श्रीपतको उद्योतनकीन कहूं जिनकी सुकथा अब टेरी ॥ १ ॥

दोहा

संजयंत नामा मुनी, प्रगट जगत में सार।
ताकी कथा सुहावनी, बरनूं बुध अनुसार ॥ २ ॥

चौपाई

सब दीपन मध जम्बूदीप । जो सब जगमें दिपै महीप ॥
मेरु सुदर्शन तामध जान । देश विदेह सुपश्चिम थान ॥ ३ ॥
गंध मालनी देश विख्यात । वीतशोक नगरी अवदात ॥
तिसको वैजयंत नर नाथ । भव्यश्री रानी तिस साथ ॥४॥
तिनके संजयंत सुजयंत । जुग्म पुत्र उपजे गुणवंत ॥
एक दिना चपला बिकराल । अम्बरतें जुपड़ी तत्काल ॥ ५ ॥
ताकर पट्ट वंध जुकरिंद । भस्म होत देखो सुनरिंद ॥
तब मनमें वैराग उपाय । दोनों सुत लीनो बुलवाय ॥ ६ ॥
राज संपदा को बहु भार । तिनको देन लगो तत्कार ॥
तब दोनों सुत वोले वैन । सुनो तात हम विनती ऐन ॥७॥
आप चतुर हो अरु शुभ राज । होते क्यों छोड़ो महाराज ॥
हमतो ग्रहण करें नाहि कदा । पंडितजन कर वर्जित सदा ॥८॥
ऐसे बच सुन नृप बुधलीन । पोते को बुलवाय प्रवीन ॥
संजयंत को पुत्र महान । बिजयवंत तिस नाम सुठान ॥९॥
ताको राज संपदा दई । युगम पुत्र जुत दिक्षा लई ॥
नाना विध तप तपैं मुनीश । वैजयंत नामा जगदीश ॥ १० ॥
शुक्ल ध्यान में अग्नि प्रज्वाल । चार कर्म नाशै तत्काल ॥
जबही केवल लक्ष्मी पाय । पूजन को आए सुरराय ॥११॥

दोहा

तिन अमरन में नाग पति, आयो छबी निहार ।
तिस विभूति सुजयंत मुनि, लखकर कियो निदान १२
इस तप के परभाव तें, दूजे जन्म मझार ।
मेरे ऐसी संपदा, हूजो सुख दातार ॥ १३ ॥

इस निदान धर मरन कर, भट असुरन के राय।
नागपती धरनेंद्र जो, उपजे पुन्य वसाय ॥ १४ ॥

छन्द

अब संजयंत मुनिराई। तप उग्र करैं अधिकाई ॥
इक पक्ष तने उपवासी। तनक्षीण अधिक सुखरासी ॥१५॥
बाईस परीषह जेहैं। सब सहैं मुनीश्वर तेहैं ॥
कानन में धारो ध्याना। तिष्टे थिर मेर समाना ॥ १६ ॥
इक दिन रवि सन्मुख कीना। पद्मासन ध्यान प्रवीना ॥
आतम से लव जिन लाई। तिष्टे थे श्री मुनिराई ॥ १७ ॥
खग विद्युदंष्ट अयानो। अम्बर में करै पयानो ॥
मुनि ऊपर गमन करंतो। थंभयो बिमान सुतरन्तो ॥ १८ ॥
यह देख खेट तिहबारा। मनमांही करत विचारा ॥
है क्या कारन यह भायो। मुनि लखते क्रोध उपायो ॥१९॥
परभव की बात विचारी। उपसर्ग करो अतिभारी ॥
मुनि आतम मांहि पगे हैं। बहु कष्ट थकी नचिके हैं ॥२०॥

दोहा

जैसे पवन प्रचंड से, हलै न मेरु महान।
त्यों मुनि इस उपसर्ग ते, चिके न दया निधान ॥२१॥
विद्या के परभाव ते, विद्युदंष्ट अयान।
संजयंत को ले चलो, क्रोध हिये में आन ॥२२॥

चाल ॥ अहो जगत गुरु की

भरत क्षेत्र में लाय पूरब दिशा भली है। सिंधुवती को आदि नदी जहँ पांच मिली है ॥ तहँ मुनिवर को क्षेप देश के जन बुलवाए। यह पापी अति दुष्ट बैन इस भांति सुनाए ॥२३॥

अहो सबै सुन लेहु यहै राक्षस अधिकाई। तुम भक्षण के हेत यहां आयो दुखदाई॥ याको हनो तुरंत यही में बैन सुनायो। तिस बच सुन तत्कार सबैजन क्रोध उपायो॥ २४॥

काष्ठ खंड पाषान और तहँ त्रास अपारा। देत भएतेमूढ़ तहां मुनिवर को मारा॥ तौभी दीन दयाल क्रोध रंचक नाहि आनो। शत्रु मित्र सम जान चित्त आतममें ठानो॥ २५॥

चारों कर्म प्रचंड घातकर केवल पायो। तबही हने अघाति वास शिवथान कसयो॥ ताही छिनके मांहि सुरासुर पूजन धाए। लघु भ्राता धरनिंद्र भक्ति कर तेभी आए॥ २६॥

दोहा

मुनिवर काय बंधी लखी, क्रोध कियो फणधार।
सब पापी मम भ्रातको, मारो बहु परकार॥ २७॥
इम बिचार धरानिंद्र कर, नागफांस कर धार।
सर्व जननको पकड़कर, दृढ़बांधे तत्कार॥ २८॥

चौपाई

तब सब जन इम करी पुकार। अहो नाग पति सुनों उदार।
हमरो दोष रंच नहि मान। कियो सुविद्युदंष्ट्र अयान॥ २९॥
ऐसे दीन बचन सुन जबै। छोड़ दिए सबही जन तबै।
अरु वह पापी विद्युदंष्ट्र। ताको बांध दियो बहु कष्ट॥ ३०॥
वारधिमें डोबन तिहवार। लागो फण पति क्रोध सुधार।
तबै दिवाकर निरजर आय। कहत भयो इनको समझाय॥ ३१॥
दीन जीव इह भोफणराज। तिहके मारन ते क्या काज।
इसका उनका बेर महान। चार जन्मते है दुखदान॥ ३२॥
ताकर इन उपसर्ग कराय। कोप करो मत तुमफणराय।

ऐसे बच सुनकर नागेंद । कहो करूं कैसे परबंद ॥
तबै दिवाकर देव महान । कहत भयो तुमसुनोसुजान ।
पूरब भवको इन सम्बंद । वैर तनो भाषो गुण ब्रंद ॥ ३४ ॥

पद्धड़ी

जम्बु सुद्वीप मधमें बिख्यात । शुभ भरत चेत्र तामें सुहात ।
तिस मांहि सिंहपुर नगरजान । तहँ सिंहसैन नरपतिमहान ॥ ३५ ॥
नारी सु रामदत्ता प्रवीन । श्रीभूत परोहत कपटलीन ।
सुखसों तिष्टै निज नगर माहि । इकपद्मखंडपुर और थाहि ॥ ३६ ॥
ताको बासी इक बनकजेह । गुण उज्जल सेठसुमित्र तेह ॥
तिस नारि सुमित्रा चित उदार । बारधदत नामा पुत्र सार ॥ ३७ ॥
सत सौच बिपय तत्पर सुजान । बाणिजके हेत कियोपयान ।
सो सिंह पुरी आयो तुरंत । ले पांच रतन उत्तम महंत ॥ ३८ ॥
श्रीभूत परोहित पास जाय । ताको सौंपे बहु हर्षपाय ।
फिर उदधदत्त इम बच बखान । यह लेवैंगे निज रत्नआन ॥ ३९ ॥
इम कहजो गयोसागर मझार । बहु द्रव्य कमायो करब्योहार ।
प्रोहन भर निजघरको चलंत । सोपाप उदय फटयो तुरंत ॥ ४० ॥
यह करम जोग कर तटलहाय । सिंहपुरमें आयो दुखत काय ।
श्रीभूत पास निज रत्नजेह । मांगे पांचों सौंपे जो तेह ॥ ४१ ॥
तब श्रीयभूत इम बच बखान । सब जनके आगे हर्षठान ।
में तुमसे जो पाहिले कहाय । यहभयो बावलोधन गंवाय ॥ ४२ ॥
काहू जनको तोहमत अवार । लेसी इसही जु सभा मझार ॥
अब भए ठीक मम बचन एह । ऐसे निरमोलिक रतनजेह ॥ ४३ ॥
अवनीपर कोने कित लहाय । काहू नरपै कबहू लखाय ।
ऐसे सबजनते कुटिल बैन । भाषे अत्यन्त परतीत दैन ॥ ४४ ॥

दोहा

इम कहकर याको तबै, दियो निकार तुरंत ।
लोभी जन या लोकमें, क्या नहि काज करंत ॥ ४५ ॥
जब यह सेठ समुद्रदत, नगरी मद्ध पुकार ।
पांच रतन श्रीभूत मम, देवै नाहि लगार ॥ ४६ ॥

चौपाई

ऐसे नित प्राति करै पुकार । महल निकट तहँ रैन मझार ।
इस प्रकार बीते षट मास । राजा न्याव करै नाहि तास ॥ ४७ ॥
ऐके दिन रानी इम कही । नृप इस न्याव करोक्योंनही ।
बोले राजा गहलो एह । तब रानी इम उत्तर देह ॥ ४८ ॥
यह नित प्राति इक बचन सुनाय । याको किम गहलोठहराय ।
सुन प्यारी नरपति इमकही । याको न्याव करो तुमसही ॥ ४९ ॥
रानी रामदता सुखदाय । समुद दत्तको निकठ बुलाय ।
वासों पूछो भेद तुरंत । उन सब साच कहो बिरतंत ॥ ५० ॥
फिर यहरानी चतुर सुजान । श्रीयभूत ते जूवा ठान ।
पांच रतन लेनेको सही । ताघर दासी भेजत भई ॥ ५१ ॥
बिप्र नार तबही नट गई । रानी जीत अंगूठीलई ।
सहनाणी यहदई पठाय । तोपण रतन दिएनाहि ताहि ॥ ५२ ॥
फेर जनेऊ जीत सो लियो । दासीके करमें तादियो ।
सो पहुंची लेकर तत्कार । श्रेयभूतके ग्रेह मझार ॥ ५३ ॥
ताकी नारीको दिखलाय । तब उन चितमें अति भयपाय ।
पांचो रतन सोंप उनदिए । दासी करतें रानी लिए ॥ ५४ ॥
तब रनी राजा के पास । रतन दिखाए जुत परकाश ।
नृप निज रतन मांहिमिलाय । सेठ तनुज को तबै दिखाय ॥ ५५ ॥

सोरठा

अपने रतन प्रवील, तू चुनले इन मांहि ते।
तब उन काढ़ सुलीन, अपने ही पांचों रतन ॥५६॥
जे नर हैं सतवन्त, ते नहि छोड़ैं सांचको।
भूलैं नही महंत, बहुत काल बीते कोऊ ॥ ५७ ॥

काव्य

तब नरिंद्र मनमांहि क्रोध कीनो अतिभारी। लीने निकट बुलाय हुते जेते अधिकारी ॥ इस पापी श्रीभूत चोरको दंड क्या दीजे तब मंत्रिन इम कहे बैन हमरे सुनलीजे ॥ ५८ ॥ तीन दंड जग मांहि इसी लायक हैं नामी। यातो गोबर खाय नही सरबस दे स्वामी। अथवा बत्तिस मुष्ट मल्लकी तनमें खावे। यह ही इसके योग्य करो जो तुम मन आवे ॥५९॥

दोहा

तब पापी श्रीभूतको, लीनो नृपति बुलाय।
तीन दंड क्रमते दियो, मरो तबै दुख पाय ॥६०॥
आरत ध्यान प्रभावते, उपजो सर्प कराल।
नृपत तने भंडार में, मानो दूजो काल ॥६१॥

चौपाई

बुद्धिमान जो सागरदत्त। बनमें पहुंचा हर्षित चित्त ॥
नाम सुधर्माचारज पास। धर्म स्वरूप सुनो सुखरास ॥६२॥
दिक्षा ग्रहण करो तत्काल। नाना बिध तप करत त्रकाल ॥
पूरण थिर कर उपजो जाय। सिंघसैन जो है नरराय ॥६३॥
रानी रामदत्त गुणखान। तिनके पुत्र भए धीमान ॥
निरमल कीरत धारी जान। सब जगमें बिख्यात महान ॥६४॥
एक दिना हरसैन नरिंद्र। निज भंडार गए गुणबृंद ॥

श्रीयभूत चर अहि तिहथान । उपजा था दीरघ तन आन ॥६५॥
डसत भयो नरपति को सोय । तबही मरन प्रापति होय ॥
नाम सल्यकी बनमें जान । उपजो हस्ती अतिबलवान ॥६६॥
इस अंतर नृप मरण निहार । मंत्री नाम सुघोख अवार ॥
क्रोध धार कर अहि तत्कार । बुलवाए सब तिसही बार ॥६७॥

दोहा

तब मंत्री कहतो भयो, सुनो नाग सब एह ।
अगन कुंड परवेश कर, जावो अपने गेह ॥६८॥
तबही सब परवेश कर, गए सुनिज निज धाम ।
श्रीयभूत चर दुष्ट यह, आवत भयो सुताम ॥६९॥
तब सुघोखना सर्पसूं, कहै सुबैन सुनाय
क्या तो बिषको चूसले, नातर तू जरजाय ॥७०॥
तबै सर्प कहतो भयो, मैं अगंध कुल मांहि ।
उपजोहूं ताते जहर, चूसूंगो अब नाहि ॥७१॥

सोरठा

इम बच कह बिषधार, अगन कुंड में तब जरो ।
बन सल्य की मझार, कुरकट अहि होतो भयो ॥७२॥
जो पापी जगमांहि, क्रूर भाव ना तजत हैं ।
ते खोटी गति जांहि, यामें संशय को नही ॥७३॥

अडिल्ल

रामदता नृप नार शोक पतिको कियो। जाय कनकश्री बृतका पै चारित लियो ॥ सिंहचंद्र नृप पुत्र मरन लख तातको । है बिरक्त चित राज दियो लघु भ्रातको ॥७४॥ पूरन चंदको थाप आप बन में गयो । सुब्रत नाम मुनीश्वर पै चारित लियो ॥ तप नाना परकार किये मन लायके । मन परजय शुभ ज्ञान सो उपजो आयके ॥ ७५ ॥

चौपाई

एक दिना तप कर तन छीन । रामदत्ता आयो बुधलीन ॥
देख सिंहचंद्र मुनिराय । चार ज्ञान धारी सुख दाय ॥ ७६ ॥
भक्ति ठान थुत इन मुनि करी । आर्या जी ऐसे उच्चरी ॥
हे स्वामिन धन कूख हमार । जामैं लीनो तुम अवतार ।७७।
तुम लघु भ्राता पूरन चंद्र । धर्म ग्रहण कब करे मुनिंद्र ॥
ऐसे वच सुन दीन दयाल । कहत भए निर्मल गुणमाल ॥७८॥
देख मात संसार चरित्र । ताको वरणन सुनो विचित्र ॥
सिंहसैन हमरो जो तात । सर्प थकी जो मरो विख्यात ॥७९॥
उपजो वह वन सल्य मँझार । हस्ती की परयाय सुधार ॥
अहो मात मुझको अवलोय । आयो मारन सन्मुख जोय ।८०।
तबमें ऐसो बचन बखान । होकरिंद्र मोको पहचान ॥
तुम थे सिंहसैन नर राय । मैं सुत तुम प्यारो अधिकाय ॥८१॥
सिंहचंद्र नामा मुझ जान । अब गजेंद्र हो मारन आन ॥
क्या वह बात भुलवो गयो । ऐसो बच मैंने तब कहो ॥ ८२ ॥

दोहा

ऐसे सुन करके तबै, अहो मात गजराज ।
जाती सुमरन होय के, अश्रुपात ढलकाय ॥८३॥
मुझ चरणन ढिग तिष्ठयो, तब मैं धर्म सुनाय ।
ताह श्रवण करके तबै, सम्यकदर्श लहाय ॥८४॥

पद्धडी

तब वह करिंद्र अणुव्रतवंत । प्राशुक अहार जल लेत संत ॥
तब छीण भयो सोखी कषाय । तटनी तट करदम में फँसाय ॥८५॥
तिस अवसर में श्रीभूत जीव । जो कुरकट नाग भयो अतीव ॥
तिस आय डसो गजराज भाल । सो जपत मरो नवकार माल ।८६।

सन्यास मरन करके तुरन्त । सहस्रार सुरग उपजो महंत ॥
श्रीधर नामा सुर दीप्तकाय । नाना प्रकार संपत लहाय॥ ८७ ॥
इस धर्म थकी क्या क्या नहोय । याते अधिकी नहि वस्तु कोय ॥
अरु वह कुरकट मरके अयान । पायो चौथे तिन नर्क थान ।८८।
हेमात वही गजराज काय । भीलों के पति ने देख आय ॥
तिसके दोउ दांत लिए उपार । अरु मस्तक के मोती निकार ।८९।
लेकर धन मित्र जुसार्थ बाह । ताको दीने अति हर्ष पाय ॥
सो बनक पती लेकर प्रवीन । नृप पूरनचंद को सौंपदीन ॥९०॥
नृप दांत तने पाये बनाय । सो पलंग माहि दीने लगाय ॥
अरु मोतिन को कीनो सुहार । पहिरो रानी हिरदे मँझार ॥९१॥
हे मात इसी बिध तुम निहार । संसार तनोगत मन मँझार ॥
अब तुम पूरनचंद पास जाय । जिन धर्म ग्रहन ताको कराय ९२
तब व्रतका मुनिको नमन ठान । फिर नृप मंदिर पहुंची महान ॥
तब पूरनचंद निज मात जान । उतरो पलंग ते हर्षवान ॥९३॥
बहु बिनय ठान हिरदे मंझार । भूपति तिष्ठो करनमस्कार ।
तब आर्याजी सबही उचार । इन पिता तनो बिरतंतसार ॥ ९४ ॥
अरकहत भई सुन पुत्रजोग । यह पाये तें कीने मनोग ।
निज तात तने यह रदनजान । अर मोती बाकेसीसथान ॥ ९५ ॥
ताको शुभ हार सुतें कराय । निज रानी को दीनोपहराय ।
इम सुनके पूरनचंद संत । बहु शोक अगन करके तपंत ।
जिम दावानल कर गिरतपाय । तैसे नरिंद्र बहु तपतकाय ।
अति मोह थकी पाये मंगाय । ताको दृढ़ आलिंगन कराय ॥ ९७ ॥

दोहा

हाय हाय मम तातजी, ऐसे करत पुकार ।
अंतेपुरके जन सबै, रुदन कियो तिहवार ॥ ९८ ॥

चंदन अच्छत पुष्पले, पूजा करी अपार।
दांततथा मोतीनकी, चितमें मोह सुधार ॥ ९९ ॥
संसकार ताको कियो, अगन माहि पधराय।
मोही जन या जगतमें, क्या क्या नाहि कराय ॥ १०० ॥

सोरठा

पूरन चंद्र प्रवीन, श्रावक धर्म सुपालयो ।
नाक बास तिन लीन, महा सुक्र दशमों सुरग ॥ १ ॥
आर्याजी बृत पाल, उसही स्वर्ग बिषै गई।
भयो देव गुणमाल, नाना बिध सुख भोगवै ॥ २ ॥

चौपाई

चार ज्ञान धारी मुनिराय। सिंहचंद्र नामा सुखदाय।
शुद्ध चरित्र तने परभाय। भए अहमिंद्र सुग्रीवकजाय ॥ ३ ॥
या अंतर अब सुनोसुजान। येही जम्बूद्वीप महान।
ताकी दच्छिण भरत निहार। तामध बिजयारध गिरसार ॥ ४ ॥
श्री सूर्यप्रभ पुर तहँ थाय। सुरावर्त तामें नरराय ॥
नाम जसोधर रानी जास। धरै रूप लावन्य प्रकास ॥५॥
पूजा दान ब्रत्त अधिकाय। भलो शील पाले सुखदाय।
ताके सिंहसेन चर आय। रस्मबेग सुर नाम लहाय ॥६॥
इक दिन सुरावर्त भूपाल। चित बैराग भयो तत्काल ॥
रस्म बेग सुत बुद्धि निधान। ताहि राज दे मुनि बृतठान ॥७॥
अब यह रस्म बेग बडभाग। हिरदे में धरके अनुराग ॥
सिद्ध कूट चैत्यालय जाय। भक्ति सहित बहु नमन कराय ॥८॥
तहँ मुनिवर जगके रिछपाल। हरीचंद्र नामा गुणमाल ॥
तिन ढिग धर्म सुनो नरनाथ। भगवत भाषित जग विख्यात ॥९॥
तबही तजकर राज समाज। रस्मबेग कीनो निजकाज ॥

एक दिना यह गहन मझार। महा गुफा में ध्यान सुधार ॥१०॥
क्षीण शरीर खड़े तप लीन। निज आतमको अनुभव कीन ॥
अब यह पापी कुरकट थाय। चौथे नर्क थकी निकसाय ॥११॥
याही वनमें अजगर भयो। अति दीरघ तन ताने लयो ॥
करत फुँकार सुबारम्वार। तनको भस्म करै तत्कार ॥१२॥
मुनि सन्मुख आयो सुखकार। भक्षण हेत बदन बिकरार ॥
अहिको आवत देख मुनिंद। ध्यान धार तिष्टे गुण वृंद ॥१३॥
उस पापी ने मुनि भख लीन। तव जोगिंद्र काय तजदीन ॥
उपजे अष्टम स्वर्ग मझार। प्रभु आदित्य नाम शुभधार ॥१४॥
श्रीजिन चरण कमल को अंग। बढ़ी रिद्ध सुख लहो अभंग ॥
अरु वह अजगर तज निजकाय। उपजो चौथे नर्क सुजाय ॥१५॥

सोरठा

कैसो नरक स्थान, छेदन भेदन है जहां।
सूलारोपन ठान, ऐसेदुख भोगत भयो ॥ १६ ॥
दीरघ काल प्रमान, नाना विध दुखको सहो।
कीनो पाप महान, ताको फल पायो यही ॥१७॥

चौपाई

तव चक्रायुधजी महाराज। वज्रायुध को दीनो राज ॥
आप जाय निज दिक्षा लेह। बहु विध तप कीनो गुण गेह ॥१८॥
अब जो वज्रायुध वड़भाग। परजा पालै जुत अनुराग ॥
बहुत काल तिन कीनो राज। कारण लख चितवो निजकाज ॥२०
अपने तात मुनिंद्र उदार। तिन ढिग लीनो संजम भार ॥
अब वह अजगर जीव मलीन। नरक थकी निकसो दुखलीन ॥२१॥
भयो भयानक भील सुआय। पाप थकी क्या क्या नहि पाय ॥
वज्रायुध मुनि दीन दयाल। परवत नाम प्रयंग मझार ॥२२॥

कायोत्सर्ग ध्यान धर धीर। तिष्ठे थे साहस जुत बीर॥
तहँ वह पापी भील सुआय। बान थकी भेदी मुनिकाय ॥२३॥
सो गुरु पुन्य तने परभाय। सरवारथ सिद्धि उपजे जाय॥
तेतिस सागर आयु लहाय। एक हस्त की उज्जल काय ॥२४॥

दोहा

अब यह पापी भील मर, नर्क सातवें जाय।
छेदन भेदन आदि बहू, नाना बेदन पाय ॥२५॥
इस अंतर अहिमिंद्र सो, करके पूरी आय।
भए जगत विख्यात यह, संजयंत मुनिराय ॥२६॥

सोरठा

पूरनचंद सुराय, कितने ही भव शुभ लहे।
बेजयंत मुनिराय, कर निदान फणपाति भए ॥२७॥

पद्धड़ी

अब तज कर सप्तम नर्क थान। वह भील जीव पापी अयान॥
नाना कुयोनिमें भ्रमर ठान। उपजो ऐरावत क्षेत्र आन ॥२८॥
तहँ भूत रमन नामा उद्यान। जहँ बेगमती सरिता बखान॥
तहँ श्रृंग नाम तापसि रहाय। संबरनी ताकी नार थाय ॥२९॥
तिनके ही सुत उपजो अयान। हरि सिंह नाम ताको बखान॥
श्रीभूत परोहित जीव जान। पञ्चाग्न तपस्या सो करान ॥३०॥
वह मरकर कर्म थकी लहाय। खग विद्युदंष्ट भयो सुआय॥
सो पूरब बैर थकी अवार। मुनिको उपसर्ग कियो अपार ॥३१॥
मुनि सम भावन सह धीर काय। जिम मेर सदा निश्चल रहाय॥
बाईस परीषह जीत लीन। परगट तपको उद्योत कीन ॥३२॥
सो कर्म नाश लह मोक्ष थान। गुण अष्ट तहां पाये महान॥
बच कहे दिवाकर देव सार। सुन भो धरनेंद्र महा उदार ३३

संसार तनी गति इम निहार । चित से दीजे अब क्रोधटार ॥
अब नागपास ते दो छुटाय । यह दीन बिचारो रंक थाय ॥३४॥
इम नागराज बच सुन तुरन्त । यों कहत भयो सुन सुर महंत ॥
मैने याको छोड़ो अबार । पण यह दुरातमा पाप धार ॥ ३५ ॥
इस के मद नाशन हेत तेह । मैने सराप दीनो जुएह ॥
इसके कुल में विद्या जु कोय । काहू जनको नहि सिद्धहोय ३६

दोहा

होवै तो या विध थकी, करै सवै मनलाय ।
संजयंत मुनि राय की, प्रतिमा लेय बनाय ॥३७॥
ताको ध्यान सुचित करैं, पूजैं गंध जुलाय ।
नारी तब बिद्या लहैं, पुरुषन को नहिं थाय ॥ ३८ ॥
ऐसी कह धरनेंद्र तब, खग छोड़ो तत्कार ।
फेर सुधी निज थानको, जात भयो तिहबार ॥३६॥

कवित्त

ऐसे संजयत मुनि ईश्वर, कठिन तपस्या को जिनधार ।
तप रूपी लक्ष्मी को बर कर, फिर पायो शिव सुख भंडार ॥
सो भगवान हरो मम कालुष, मम निज दीजे सर्म अपार ।
तप उद्योत किया जगमें इन, तैसे और करो हितधार ॥४०॥

गीता छन्द

श्री कुंद कुंद सो बसे नभमें मल्ल भूषण इंदु ही ।
सो गुरु हमारे जानिये इम ब्रह्मनेमीदत्त कही ॥
संसार सागर में पुरोहन ज्ञान बारधहे यही ।
श्री जिन पदाम्बुज सेवने को भ्रमर सम जानो सही ॥ ४१ ॥
चारित रतन भंडार है मुनि भव्यगण सेवैं सदा ।
सोश्रेष्ट मंगल देउ हमको स्वर्ग शिव लक्ष्मी मुदा ॥

यह तप उद्योतन कथा पूरन करी छंद बनायके।
कहै बख्तत रत्न सुनो सबै जन चित्तको हरषायके ॥ ४२ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष बिषै रुजयत मुनि तपोद्योतन कथा सम्पूर्णम्

अथ अंजन चोर के निशांकित गुण की

कथा प्रारम्भः ॥ नं० ६

मंगलाचरण ॥ दोहा

सुख दाता सर्वज्ञ के, चरण कमल सिर नाय ।
कथा निशांकित सुगुण की, बरनूं चित्त लगाय ॥१॥
अंजन चोर विख्यात जग, तिन कीनो उद्योत ।
तप कर कर्म खिपायके, भये सुपूरन जोत ॥ २ ॥

चौपाई

मगध देश इस भरत मंझार । राजग्रही नगरी तहँ सार ॥
तामध वनकपती अभिराम। जिनदत नाम महा गुणधाम ॥३॥
जिन पदाब्ज सेवनको भृंग । पालै श्रावक वृत्त अभंग ॥
पूजा दान करै बड़भाग । सुनै शास्त्र चितधर अनुराग ॥ ४ ॥
इक दिन सेठ महा बुधिवान। चौदश के दिन प्रौषध ठान ॥
रात्री बिषय मसान मँझार । मन बच काय बैराग सुधार ॥५॥
कायोत्सर्ग ध्यान तिन दीन । निज आतमको अनुभव कीन ॥
इस अंतर जिन भक्त सुलीन। अमित प्रभु सुर एक प्रवीन ॥६॥
दूजा मिथ्या दर्शन वान। बिद्युत प्रभ सुर नाम सुजान ॥
तिन दोनो की चरचा भई । निज निज धर्म टेक तिनगही ।७।
धर्म परीक्षा लेने काज। अवनी पै आए सुर राज ॥
एक तापसी थो जमदग्न । ताको तपते कीनी भग्न ॥ ८ ॥

पीछे जुग सुर चित उमगाय । जिनदत ध्यान लखो अधिकाय ॥
कायोत्सर्ग धरे बुधवान । भूम मसान विषे चित ठान ॥ ९ ॥
अमित प्रभु सुर हर्षित होय । बिद्युतप्रभते बोलो सोय ॥
उत्तम चारित धारन हार । श्री मुनिवर हैं तोहि निहार ॥१०॥
पण इक श्रावक सेठ महान । याको देखा निश्चल ध्यान ॥
तुम में समरथ जो अधिकाय । देखैं इनको ध्यान चिगाय ॥११॥
तब बिद्युत प्रभ सुन वच एव । रैन अँधेरी में बहु भेव ॥
नाना विध उपसर्ग अयान । करत भयो भयकारी जान ॥ १२ ॥
तो पण सम्यक दृष्टी धीर । ध्यान थकी न चलो बरबीर ॥
होत प्रभात समय युग देव । नमस्कार कीनी बहु भेव ॥१३॥
माया दूर करी तत्कार । अस्तुति कीनी बहु परकार ॥
तुम सम दृष्टी जगत मँझार । भव्य शिरोमणि थिरमनधार १४

दोहा

नभ गामी विद्या तबै, दीनी सुर हरषाय ।
चित्त प्रसन्न करली तब, अहो सेठ सुखदाय ॥१५॥
अरु जो काहू पुरुषको, यह विद्या तुम देय ।
नमोकार विध ठानके, ताको सिद्ध सो होय ॥१६॥

चौपाई

इम कहकर सुर निज घरजाय । अब यह सेठ महा सुखपाय ॥
सम्यक वंत महा गुणवान । विद्या के परभावहि जान ॥ १७ ॥
स्वर्ग मोक्ष दाता जिन गेह । सदा सास्वते वंदन तेह ॥
भक्ति ठान शुभ द्रव्य मगाय । पूजे मेर कुलाचल जाय ॥१८॥
इक दिन सोमदत्त भूपाल । हो खुशाल पूछो तत्काल ॥
अहो सेठजी दया निधान । जैन धर्म में लीन महान ॥ १९ ॥
हो स्वामी तुम उठ परभात । ले सामिग्री नित कहँ जात ॥

भले वचन जिनदत्त उचार । विद्या लाभ हुई मो सार ॥२०॥
ता प्रभावकर गमन अकाश । सुबरन रतन मई परकाश ॥
ऐसे जिनवर धाम पवित्त । तहँ पूजन मैं जाऊं नित्त ॥ २१ ॥
सोमदत्त बिनती तब करी । हो स्वामिन विद्या गुण भरी ॥
मोको दीजे चित्त दयाल । तो मैं चालूं तुम संग काल ॥२२॥
भली गंध पुष्पादिक लेय । पूजो श्रीजिन प्रतिमा तेह ॥
तुमरे पुन्य तने परभाव । भक्ति बंदना करुं सो जाय॥ २३ ॥

दोहा

तबै सेठ कहते भए, विद्या की बिधि जेह ।
सो सुन कर माली चतुर, निज उर धारी तेह ॥२४॥

सवैया इकतीसा

चौदश की रैन कारी भूम जो मसान माही, महा भयकारी बट बृक्ष तले जायकै । अगन की ज्वाला सम शस्त्र जो प्रचंड महा ताके नीचे गाड़ दीजे चित्त हरषाय के ॥ एक शाखा बिच सत लड़ी को प्रमाण जामें, ऐसे इक छींको तहँ दीजो लटकायके । षट उपबास धार ऊरध सो मुख कीनो, पुष्प आदि द्रब्य लेय पूजत सो धायके ॥ २५ ॥

दोहा

छींके में बैठत भयो, नमोकार उच्चार ।
एक एक लड़ छेदये, यह बिध किया बिचार ॥२६॥
नीचै शस्त्र निहार के, भय लागे तत्कार ।
सोमदत्त मन चिन्तवे, मन कायरता धार ॥२७॥

काव्य

जो कदाचि यह सेठ बचन मिथ्या होजावैं ।
तो मम प्राण बिनाश होंय इक पल नलगावैं ॥

इम संशय मन आन चढ़ै उतरै बहु बारी ।
चित उद्वेग मझार मूढ़ निश्चय नहि धारी ॥ २८ ॥
जै जिनवर जगदीश सुरग शिवके दातारं ।
तिनके बचन महान मूढ़ निश्चय नहि धारं ॥
तिनके अवनी मांहि सिद्ध कहो कैसे होई ।
भटकैं जगत मझार दुःख बहु पावैं सोई ॥ २९ ॥

(चौपाई)

इस अंतर इक गणका जान । अंजन सुंदरि नाम बखान ॥
तिसको प्रीतम अंजन चोर । तासों बच इम भाषे जोर ॥३०॥
तिसही रात्रिको कहो सुनाय । अहो प्राण बल्लभ सुख दाय ॥
प्रजा पाल राजा की नार । कनक प्रभा ताके गल हार ॥३१॥
अति सुंदर तिस क्रांत अनंत । सो मुझको लादेय तुरंत ॥
जो अवार लावै नहि हार । तो मेरा तू नहि भरतार ॥३२॥
इम सुन तस्कर वेश्या भक्त । हार बिषय चितकर आशक्त ॥
लेन गयो निज काय छिपाय । नृप मंदिर में बुद्धि पसाय ॥३३॥
लेय हार निस तिमिर मझार । आवै था गणिका के द्वार ॥
तिसकी द्युतिकी क्रांति अपार । देख तबै दौरो कुतवार ॥३४॥
तब इन हार दियो छिटकाय । भाग मसान भूमिमें आय ॥
सोमदत्त को कायर जान । तासों पूछो आदर ठान ॥ ३५ ॥

दोहा

कहो बीर क्या करत हो, काज बहुत दुखदाय ।
तब वाने बिद्या तनी, कथा कही समझाय ॥ ३६ ॥
सुनके अंजन चोर तब, मंत्र लेय नवकार ।
उसही बिधते राख कर, चितमें दृढ़ता धार ॥३७॥

छप्पैय

सेठ बचन जे कहे सत्त निश्चय कर सोई। यो मन संशय भान चढ़ो छींके पर सोई॥ सतक लड़ी इकबार छेद तरकार सुदीनी। जितने श्रम नहि पड़े तिते विद्या गुण भीनी॥ सो बिच मांहि थांवत भई, हाथ जोड़ बिनती करैं। हो देव हमें आज्ञा करो, जासे तुम कारज सरैं॥ ३८॥

पद्धड़ी

तब हर्ष सहित अंजन बखान। गिर मेर बिषै जिन धाम जान।
तहँ पूजा सेठ करै उदार। लेचल ताढिग मोको अवार॥ ३९।
सुनतेही बिद्या हर्षवंत। जासेठ पास थापो तुरंत।
जिन धर्म थकी क्या २ न होय। यासम जगमें दूजः नकोय॥ ४०॥
अंजन निरभय चित भक्ति आन। जिनदत्त सेठको नमन ठान।
अरु कहत भयो तुमरे पसाय। नभ गामी बिद्या में लहाय॥ ४१॥
हो धीर बीर करुणा निधान। जासों होवै मोहि सिद्धथान।
सोही मंतर दीजे दयाल। तुम परउपगारी सुगुण माल॥ ४२॥
तब सेठ चित्त हरषो प्रवीन। अंजनको अपने संगलीन।
गुणाकर मंडितमुनिबरन नाम। कर कष्ट काय जीतो सुकाम। ४३।
तिनके ढिग पहुंचे हर्षयुक्त। मुनि चरण नमो बहु भक्तियुक्त।
जिनदत्त तबै रंजाय मान। अंजनको जिन दिक्षा महान। ४४।
गुरुके ढिग दिलवाई तुरंत। तब इन ब्रतलीने हरषवंत।
श्री अंजन मुनि बहुतपतकाय। तिसदिक्षाकोपालनकराय॥ ३५॥
क्रमते अष्टापद गिरसु आय। तहँ कर्म नाश केवल लहाय।
सुर असुरनकर पूजित महान। होकरपायो फिर मोक्षथान॥ ॥ ॥
यह निःशंकित गुणके प्रभाव। अंजन निरअंजनपदलहाय।
अरुभीजो पंडित बुद्धिवान। ते इस गुणको पालो महान। ४७।

यह कथा छटी पूरन बिशाल । बरनी कवि नेमदित रिशाल ।
ताके अनुसार करी बखान । बखतावर रतन सुहरष ठान ॥ ४८ ॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै अंजन चोरने निःशंकित गुण पाला ताकी कथा सम्पूर्णम्—

अथ निकांक्षितगुणअनंतमतीने पाला

ताकी कथा प्रारम्भः नं. ७ ॥

मंगलाचरण * अड़िल्ल

सुखकारी अरिहंत नमूं सिर नायके । निःकांक्षित गुण पालो
जिन हरषायके ॥ ताकी कथा रिशाल सुनो शुचिकर हियो ।
अनंतमती बाईने उद्योतन कियो ॥ १ ॥

चौपाई

अंग देश चम्पापुर जान । बसुबरधन राजा तिह थान ।
लक्ष्मी मती नार तिसगेह । नृपसों ताको अधिकसनेह ॥ २ ॥
तिसही नगरी में धनवान । प्रयेदत्त श्रेष्टी धीमान ।
पंच प्रकार गुरु बचन मझार । सम्यक जुत सरधा चितधार ॥ ३ ॥
अंगवती तिसगेह सुनार । धरम करममें चतुर अपार ।
तिन दोनोके तनुजा भई । अनंत मती तिन संज्ञादई ॥ ४ ॥
सुखकी आसा जृम्भ सुपंक । तिस देखे लागे रतरंक ।
शोभा आदिक गुणते जान । तिनही रतननकीहै खान ॥ ५ ॥
इक दिन प्रयेदत्त सुखकार । नंदीस्वरके पर्व मंझार ।
धर्म कीर्ति नामा मुनिराय । तिनको नमन कियो हरषाय ॥ ६ ॥
अष्ट दिननको नेम सुकियो । उत्तम ब्रम्हचर्य व्रत लियो ।
क्रीड़ा मात्र नचित उमगाय । पुत्री कोभी व्रत दिलवाय ॥ ७ ॥
सोयह बात सत्य करजान । सत्पुरुषनकी है यह बान ।

जो बिनोद ठानै चितमांहि । सोभी शुभपथ रूप कराय ॥ ८ ॥
इक दिन प्रयैदत्त सो शाह । आरोप्यो पुत्रीको ब्याह ।
तनुजा लख बोली सुनतात । यह तुम क्या आरम्भीबात ॥ ९ ॥
पहिले ब्रम्हचर्य ब्रतसार । ग्रहण करायो तुम हितकार ।
ताते इमबिवाह कर आज । हमको कौन रहो अब काज ॥ १० ॥

दोहा

तब बोले इम सेठजी, सुन पुत्री चितलाय ।
क्रीड़ा करकेमें तहां, तुम्है बरत दिलवाय ॥ ११ ॥
सुख दाई यह धर्म ब्रत, अहो तात बुधिवान ।
तामें क्रीड़ाहै नही, यह निश्चय चितआन ॥ १२ ॥

काव्य

तबै सेठ इमकहै सुनो पुत्री कुल मंडन ।
दिलवायो ब्रत शील अष्ट दिन को दुख खंडन ॥
तब पुत्री इम कहै सुनो मम बचनतात अब ।
श्रीगुरु तुम नाहि कहीकछू मरजाद तहां जब ॥ १३ ॥
ताते तात दयाल शीलब्रत निश्चै पालूं ।
इस भव ब्याह नकरो सबै अघपंक पखालूं ॥
ऐसे कह तब जैनशास्त्रमें बुद्धि लगाई ।
तिष्टत अपनेगेह शीलमें दृढ़ अधिकाई ॥ १४ ॥

चौपाई

इक दिन समय बसंत निहार । क्रीड़ा हेत गई सबनार ।
निज उद्यानमें डारहि डोर । अनंतमती झूलै तिहठौर ॥ १५ ॥
जोबन मंडित रूप अपार । पट भूषण बहु तनमें धार ।
इस अवसर रूपाचल जान । ताकी दाक्षिण श्रेणि महान ॥ १६ ॥
तामें किन्नरपुर सुखदाय । कुंडल मंडित ताको राय ।
नार सुकेशी ताके संग । नभमें गमन करै सुअभंग ॥ १७ ॥

देख अनंतमती का रूप। विच्छित चित्त भयो खगभूप।
तब मनमें इम करो बिचार। या विनजीवन वृथा निहार ॥ १८ ॥
बेग गयो तब निज आगार। तहां नार छोड़ी तत्कार।
आप उलट तिह थानक आय। झूलत बाई लई उठाय ॥१९॥
चलो गगन में हर्षित काय। सन्मुख निज नारी दरसाय।
तिसके भयते खग तत्काल। लघु परनी विद्या दे नाल ॥ २० ॥
महा भयानक अटवी बीच। डारत भया तबै वह नीच ॥
अनंत मती चितमें दुख लीन। ब्रह्मचर्य जिन गही प्रवीन ।२१।

सवैया इकतीसा

हाय तात हाय तात ऐसे बिलाप करै, नैननते अश्रुपात डारे दुख पायके। तहांभीम नामभील राज एक आय कर, लेगयो तबैही निजपल्ली में उठायके॥ कहे तिन ऐसे बैन मम तू पियारी नार, पटरानीपद तोह देऊं मन लायके। और वहु संपत भंडार सब तोहेलिये मोको बेग इंछो निज चित्त हरषायके ॥२२॥

दोहा

अनंत मती इंछो नहीं, भील महा चंडाल।
तब वह पापी रात्रि में, कियो उपद्रव भार ॥२३॥

चौपाई

जबरीतें भोगूं यह नार। ऐसी चिंता मनमें धार॥
ताही समय शील परभाव। बन देवी आई तिह ठाव ॥२४॥
ताड़न करी भील की काय। तब पापी डरपो अधिकाय॥
कर विचार मनमें तिह घरी। यह नारी नहि है कोई सुरी ।२५।
वारिज नैनी रूप अपार। बहु प्रकार समरथ यह धार॥
इम चितवन कर कन्या लेय। पुष्पक नाम बणिक को देय ॥२६॥
सो वह समरथ वाह मलीन। कन्या रूप अधिक तिन चीन॥

कामातुर पापी तब भयो । निंद्य वचन सुखते वह चयो ॥ २७ ॥
नाना भूषण वसन मनोग । है सुंदर यह तुमही जोग ॥
सो लीजे सब इसही बार । मोकूं कीजे अंगीकार ॥ २८ ॥
तेरो दास रहूं मैं सदा । हो अलीक भाषूं नहि कदा ॥
कैसो है यह सारथ वाह । दुष्ट बुद्धि ताकी अधिकाय ॥ २९ ॥
तब यह दृढ़ ब्रत धारन हार । अनंत मती इम बैन उचार ॥
प्रये दत्त जो मेरो तात । तैसोही तू है अत्र दात ॥ ३० ॥
ऐसे पाप मई तू बैन । भाषै मत कबहूं दुख दैन ॥
ऐसे सुनकर सारथ वाह । नगर अयोध्या में तब आह ॥३१॥
तहां काम सैना विख्यात । गणिका के तिन बेची हात ॥
प्रानी कर्म उदय अनुसार। सुख दुख सब भोगे अधिकार ॥३२॥

दोहा

वह वेश्या अतिही चतुर, किये प्रपंच अपार ।
शील मेरु ता सती को, भेद नसकी लगार ॥३३॥

चौपाई

तब गणिका संग कन्या लई । सिंहराज नरपति को दई ॥
सो भी इसको रूप निहार। मनमें धारो काम विचार ॥३४॥
जबरीते तब रैन मंझार । भोगन की इच्छा मन धार ॥
तब इस शील तने परभाय । नगरी तनि देवी तहँ आय ॥३५॥
मनमें क्रोध धारकर सुरी । नृपको भय दीने तिह घरी ॥
डर मानो पायो बहु त्रास । कन्या को तब दई निकास ॥३६॥
तब यह शील ब्रत्त दृढ़ धार । सुमरन करो मंत्र नवकार ॥
काहू थानक बैठी जाय । याके पुन्य तने परभाय ॥ ३७ ॥
पदमश्री आर्या इस देख। याको उत्तम जान बिशेख ॥
इसते सब पूछो बिरतन्त। अपने ढिग राखो गुणवन्त ॥३८॥

कैसी है ब्रतका शुभ चित्त। निरमल आतम धरै पवित्त॥
सत्पुरुषन के जे आचार। सो परही के अर्थ निहार॥ ३९॥
या अंतर प्रयेदत्त सुजान। अनंत मती को पिता महान॥
याके शोक अगन करे जीव। ब्याकुल मन दिन रैन सदीव।४०।
यहां सेठ बुद्धि धर सेत। कन्या शोक निवारण हेत॥
केते इक सज्जन ले लार। जिन तीरथ को कियो बिहार॥४१॥
तीरथ यात्रा कर बहु भाय। पहुंचे नगर अयुध्या आय॥
तहँ इक जिनदत्त सेठ बिख्यात। सो इनकी नारी को भ्रात॥४२॥
संध्या समय तास ग्रह गए। गुण उज्जल तहँ उतरत भए॥
जिनदतने पाहुन गत करी। खेम कुशल पूछी तिह घरी॥४३॥

दोहा.

दुखदाई बिरतांत सब, अपनो कहो सुनाय।
प्रयेदत्त की सुन गिरा, जिनदत बहु दुख पाय॥४४॥
फिर जिनदत धरमातमा, प्रात काल उठ न्हाय।
जिन दर्शन जातो भयो, दर्शन कर हरषाय॥४५॥

काव्य

जिनदतकी तब नार करी भोजन की त्यारी। आर्जा पदम श्रीय पास कन्या सुखकारी॥ चौका देने हेत तासको लियो बुलाई। तब कन्या गुणवंत तहां जवही चलि आई॥ ४६॥
चौका दीनो सार बहुरि अम्रत सम भोजन। करके गई तुरंत तवैं निज थानक शुभ मन॥ तिस पीछे जिन बिंब महा जगमें हितकारी। देव इंद्र नागेंद्र नमें तिन चरन मँझारी॥ ४७॥
ऐसे श्री जिन चंद्र तनी पूजन बिस्तारी। कर आयो निजधाम फेर सज्जन हितकारी॥ तिस चौके को प्रयेदत्त तब सेठ देखकर। पुत्री कीनी याद नैन लीने आंसू भर॥ ४८॥

दोहा

हो उदास बोले तबै, जिन चौका यह दीन ।
तिसकी शीघ्र बुलाईये, इसही ठौर प्रवीन ॥ ४६ ॥
केते इक सज्जन तबै, गए अर्य का पास ।
तहँ ते कन्या लायके, प्रेयदत्त दी तास ॥ ५० ॥

चाल मेघकुमार देशी

शोकरूप जलकर भरेजी, दोनोंनैन विशाल। अपनी पुत्री देख
कर जी, सेठ मिलो तत्काल ॥ सयाने हिरदे शोक अपार ॥५१॥
मिष्ट बचन बहु भाषियो जी, हो पुत्री सुखकार। किस पापीने तुम
हरीजी, झूलत बाग मझार ॥ सयाने हिरदे शोक अपार ॥ ५२ ॥
कैसी है तू शुभ मतीजी, शील शिली कर सोय। पाप प्रछालन सब
कियेजी, दृढ़ वृत धारक होय ॥ सयाने हिरदे शोक अपार ॥५३॥
हरन हार दुर्जन महाजी, पाप पंक करलीन। दया नतिस हिरदे
विषयजी, जाने मुझ दुखदीन ॥ सयाने हिरदे शोक अपार ॥५४॥
फिर पूछो इम तातनेजी, सुन पुत्री सुकुमार। यहां तुमको को लाई
योजी, कर मुझ सुन्य अगार ॥ सयाने हिरदे शोक अपार ॥५५॥

सोरठा

अनंतमती तिहबार, सब ब्रतांत कहती भई ।
सुनकर दुखित अपार, प्रयेदत्त होतो भयो ॥५६॥

पद्धडी

ताही छिन जिनदत हर्षवंत। दोनोको मिलनेको तुरंत ॥
सब नगरीमें कीनो उछाय। बहु दान दियो आनंद पाय ॥ ५७ ॥
फिर प्रेयदत्त बचयों बखान। सुन पुत्री निज घर कर पयान ॥
तब तनुजाने बच इम सुनाय। संसार तनी गतिमैं लखाय ॥ ५८॥
हे तात आप संयम सुभार। दिलवायो तातें मैंअवार ॥

तब पिता कही सुन चितलगाय। तुम कोमललता समानकाय ५९
जिन दिक्षा दुःसह जग मझार। याते निज घरमें बरत पार ॥
कितने दिन पीछे पुंन्य जोग। मन बांछित फिर कीजोमनोग ६०
बहु कोमल बचन कहे सुतात। तो पण याके नहि चित्त आत
तबही मनमें बैराग भाय। पदमश्री अंतका पास जाय ॥ ६१ ॥
सुख देनहार दिक्षा महंत। बहु भक्ति सहित धारी तुरंत ॥
अरु पक्ष मास उपबास आदि। दुद्धर तपकीने तज प्रमाद ६२
सन्यास तनी बिध करि प्रवीन। नवकार मंत्र सुमरन सुकीन
हो धर्म लीन तज दीन काय। सहस्त्रार सुरग सबही लहाय ॥ ६३ ॥
वह देव भया अति दीप्त अंग। पट भूषण मुकट धरै उतंग ॥
श्री जिनवरचद्र तनो सुदास। नाना बिध संपतको अवास ॥ ६४ ॥
यह सुकृत फल परत्यक्ष पाय। शुभ पुन्य थकी क्या २ नथाय ॥
देखो इह नंतमती सुजान। क्रीड़ा कर शील गहो महान ॥ ६५ ॥
फिर निरमल पालो जग मझार। उपसर्ग सहे नाना प्रकार ॥
सब शील थकी भाषे तुरंत। सुख दायकहै यहही महंत ॥ ६६ ॥

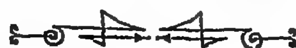
दोहा

श्री जिन चंद्र पदाब्ज को, भ्रंगी सम सेवंत।
निःकांक्षित गुण पालके, नाना सुःख लहंत ॥ ६७ ॥
भोगनको स्थानजो, स्वर्ग बारमो ताम।
दीरघ स्थिति धारी भयो, देव तहां अभि राम ॥ ६८ ॥

सोरठा

सो वह देव महान, सब सत्पुरुषनको अबै।
दीजो मंगल दान, अतिशय करके जग विषै ॥ ६९ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष बिषै निःकांक्षित गुण अनंत मतीने पाला ताकी कथा समाप्तम्



अथ श्री उद्यापन नृपने निर्बिचिकित्सा

अंग पाला ताकी कथा प्रारम्भः नं. ८

मंगला चरण * छप्पय

तीन जगत मेंहैं पवित्र अरिहंत देववर। और भारती माय तासको नमस्कार कर॥ गुरु चरननको ध्यानधार हिरदेके माही। निर्बिचिकित्सा अंग जगतमें जिन प्रगटाही॥
उद्यापन नरपतितनी, कथा सुताहि बखानियें।
अब सुनो भव्य चितलायके, जाते पातिग हानिये॥ १॥

चौपाई

भरतक्षेत्रमें कच्छ सुदेस। तामें रोरब नगर बिशेस॥
उद्यापन प्रभु नाम नरिंद। सम्यक दृष्टी है गुणवृंद॥ २॥
जिन चरणाम्बुजमें धर राग। नित प्रति पुजत सो बड़भाग।
दाता भुक्ता धेरे बिचार। परजा पाले बहु हित धार॥ ३॥
तानरपाति केहै पटरान। नाम परभावाति चतुर सुजान॥
नृप बहु पंडित बुद्धिनिधान। धारे सम्यक दरश महान॥ ४॥
पूरन कला मयंक समान। पूजा दान सोई जल जान।
ताकर मनको मैल निहार। उज्जलकीनो चित आधिकार॥ ५॥

दोहा

निःकंटक निजराजको, भोगै नृप बलवान।
धर्म बिषे तत्पर महा, तिष्टै पुन्य निधान॥

चौपाई

या अंतर सौधर्म सुरेश। धर्मराग उर धार बिशेश॥
सब अमरन आगे हित आन। सभा बिषे इम करो बखान॥ ७॥
दोष रहित अरिहंत सुदेव। ताही की निज कीजे सेव।
उत्तम क्षमा आदि में जान। ऐसो धर्म कहो भगवान॥८॥

रहित परीग्रह गुरु निरग्रन्थ । तेही दिखलावैं शिव पन्थ ॥
जिनवर कथित तत्व अभिराम । तिनकी सरधा सो रुचि नाम ।६।

सवैया । कतीसा

सोई रुचि स्वर्ग मोक्ष देनहार जान लेहु, काहे कर होय ताहि चित्त माही भाई है ॥ धर्म अनुराग कर तीरथ गमन कीजे, उत्सव ठान जिन मंदिर बनाई है ॥
बिंब जिन चंद्रके धराय परतिष्ठा करै, बात्सल्य गुण जाके नित प्रति पाईये । इत्यादिक कारनते होत रुचि सोई मान, सम्यक दरश आन मिथ्या को नशाइये ॥ १० ॥

दोहा

हो देवो या जगत मैं, उत्तम सम्यक जान ।
ताहीके परभाव ते, लहिये सुर शिव थान ॥११॥
इत्यादिक बरणन कियो, सम्यक तनो सुरेश ।
निर बिचिकित्सा अंगकी, महिमा करी विशेश ॥१२॥

सोरठा

नृप उद्यापन जान, ताकी स्तुति बहु करी ।
वासम और नमान, निरविचिकित्सा अंगमें ॥ १३ ॥

पद्धडी

इक बासव सुर तिसही सुवार । सुनकर मुनिवरको भेष धार ॥
बहु कोढ़ गलित निज काय कीन । व्रण घाव बहे दीखै मलीन १४
सो लेन परीक्षा हेत आय । मध्यान समै नृप गेह जाय ॥
उद्यापन नृप मुनिको लखाय । माखिन कर बेष्टित दुखित काय १५
तबही नृप उठकर हर्ष धार । तिष्टो तिष्टो इम बच उचार ॥
बहु भक्ति धार थापे मुनिंद । फिर पद प्रक्षालन कर नरिंद १६
प्राशुक अहार संयुक्त लेह । मुनिवरको देत भयो सुतेह ॥

कीनो अहार दीनो जु भूप । फिर बमन करी दुरगंध रूप॥१७॥

दोहा

तब नृप अपनी नार युत, मुनि सन्मुख ठहराय ।
अर तहँते सज्जन जना, ते भागे दुख पाय ॥ १८ ॥
मुनि शरीर को पूंछतो, भूप खड़ो कर जोर ।
तितने नृप की नार पै, बमन करी अति घोर ॥१६॥

पायता

तब राजा शोक करीनो । में पापी यह क्या कीनो ।
जो प्रकृति विरुद्ध अहारा । मुनिको दीनो इह बारा ॥ २० ॥
इस प्रथवी तलके मांही । शुभ पुन्य बिना कछु नांही ।
यह पात्र दान अति भारी । किम बन आवै सुख कारी ॥ २१ ॥
चिंतामणि रतन अनूपा । अर कल्प वृक्ष सुख रूपा ।
मन वांच्छित फलके दाई । तुछ पुन्नी केम लहाई ॥ २२ ॥
इम पात्रदान विध जोहै । कम पुन्नी को किम होहै ।
ऐसे निज निंदा ठानी । फिर लेकर उज्जल पानी ॥ २३ ॥
मुनि काय धोवने काजा । ऊभे उद्यापन राजा ।
तब सुरमन मांहि बिचारी । यह भक्तिवान अधिकारी ॥ २४ ॥

दोहा

निज मायाको दूरकर, सुर हरषो तिहबार ।
बहु प्रकार स्तुति करी, मुखते येम उचार ॥ २५ ॥

मेघ कुमार

हो नरिंद्र सुन लीजियेजी, तुमहो सम्यकवान । निर बिचिकित्सा गुण धरोजी, दान बिषै अधिकान॥ सयाने तुमसम अवरनकोय ६
श्री जिनवरने वरनयोजी, तत्व स्वरूप महान। ता जाननको तुम सहीजी, पंडित चतुर सुजान। सयाने तुमसम अवर नकोय ॥२७॥

हे समदृष्टि शिरोमणीजी, तुम बिन और नकोय। हस्त रूपकमलन
थकीजी, पूंछी बमन सुधोय। सयाने तुम सम अवरन्दोय २८।
ऐसे कहकर सुर तबैजी, पूज करी बहु भाय। निज आवन बिर
तांत कहजी, नामि फिर निज थल जाय॥ सयाने तुम सम० ॥२९॥

दोहा

देखो सत्पुरुषन तनो, पुन्य महात्तम जोय।
सुरपति जस बरणन करैं, यहँ बरने किम सोय ॥ ३० ॥

चौपाई

इस अंतर उद्यापन राय। पूजा दान ब्रत्त अधिकाय।
करते तिष्टैं निज आगार। धरम बिषै तत्पर आधार ॥ ३१ ॥
कितो काल सोइह बिधिगयो। इक दिन कछु कारनलखलियो।
मन बच काय बैराग उपाय। राज पुत्रको दे हरषाय ॥ ३२ ॥
स्वर्ग मोक्षदाई जिन ईश। बर्द्धमान स्वामी जगदीश।
तिनके चरण कमलढिगजाय। दीक्षा लीनी भक्तिउपाय ॥ ३३ ॥
कैसीहै जिन दीक्षा सोय। देव इंद्रकर पूजित सोय।
सम्यक दर्शन ज्ञान चरित्र। जगत मांहि यह महा पवित्र॥ ३४ ॥
ताहि पाल करके धीमान। ध्यान हुतासनमें अरिहान।
सुर असुरनकर पूज महान। उद्यापन लाहि केवलज्ञान ॥ ३५ ॥
भव्यनको उपदेश कराय। फेर अघाती कर्म नशाय।
अविनाशी शिव थान मझार। तिष्टे आवागमन निवार ॥ ३६ ॥
बहुर प्रभावति नृपकी नार। आर्या ब्रत धर तपकर सार।
दुखदाइ तिय लिंग नशाय। ब्रह्म सुरगमें सुर उपजाय ॥ ३७ ॥

दोहा

पूरन कथा सुयह कही, ब्रह्मनेमिदत्त जान।
नृप उद्यापन केवली, ताकी स्तुति ठान ॥ ३८ ॥

चौपाई

तुमरी भक्ति विषै जिम चंद । मैं बरनो मनधर आनंद ।
कैसेही तुम गुण दधि राश । केवलरूप भए परकाश ॥ ३९ ॥

दोहा

देव इंद्र सम तुम चरण,सीस निवावत आय ।
सुख दाता या जगतमें, तुमहीहो जिनराय ॥ ४० ॥
गुण समूह सोई रतन, ताके हैं भंडार ।
ज्ञान उदधि इंद्री जिता, इत्यादिक गुण धार ॥ ४१ ॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै निर्विचिकित्सा अंग राजा उद्यापनने पाला ताकी कथा सम्पूर्णम् ॥



अथ अमूढ़ दृष्टि अंग रानी रेवती ने पाला ताकी कथा प्रारम्भः नं. ॥ ८ ॥

मंगलाचरण ॥ गीता

त्रैलोकके हितकार जिनवर सर्व इंद्री तिन जई ।
जिनकी सुभक्ति हिये विषै धर नमस्कार करूं सही ॥
अमूढ़ दृष्टि जो रेवती तिय पालयो चित लायके ।
ताकी कथा बरनन करूं मैं सुनो भवि हरषायके ॥ १ ॥

चाल अहोजगतगुरु

ऐही भरत सु क्षेत्र, बिजयारध सुख कारी । मेघकूट पुर नाम, दच्छण दिशा मझारी ॥ चंद्र प्रभू बुधिवान खग, नृप तहँ सुख दाई । भोगै दीरघ राज पूरव पुन्य वशाई ॥ २ ॥
ऐकै दिन महाराज, आप निज पुत्र बुलायो । शशि शेखरको राज, देय चितमें हरषायो ॥ श्री जिन तीरथ काज, गमन कीनो

हित कारी। जात्रा करत महान, भ्रमत आय बुधधारी ॥ ३ ॥
क्रमते पुन्य प्रभाव, सुदक्षण मथुरा आए। गुप्ताचारज नाम, तहँ ऋषि तिष्टे पाए॥ नमन कियो सिर नाय, तबै मुनि धरम सुनायो। परउपकार महान, यही जग सार बतायो ॥ ४ ॥

दोहा

इम सुनकर मुनि मुखथकी, क्षुल्लक व्रत करलीन।
इक विद्या नभ गामिनी, रखकर सब तजदीन ॥ ५ ॥
तीरथ जात्रा हेतको, तथा सु परउपकार।
याकारण इक राखियो, औरन काज लगार ॥ ६ ॥

चौपाई

इक दिन जात्रामें चित धार। उत्तर मथुरा गमन विचार।
गुरुके निकट गयो हरषाय। पूछत भयो सीसको नाय ॥ ७ ॥
अहो देव करुनाके राश। मोको आज्ञा करो प्रकाश।
काहूते कछु कहनो होय। कृपा धारकर कहिये सोय ॥ ८ ॥
अब आनंद सहित मुनिराय। कहत भए खगकों समझाय।
गुणकर शोभितअति गुणवान। सुव्रत नाम ऋषीश्वरजान॥ ९ ॥
मम ओरीते बचन सुनाय। नमस्कार कहियो तुमजाय।
सम्यक जुत तहँ नृपकीनार। नाम रेवती है सुखकार ॥ १० ॥

दोहा

ताको हमरी ओरते, धरम बृद्धि अधिकाय।
कहियो इम तुम जायके, हो श्रावक हितलाय ॥ ११ ॥

चौपाई

अरु त्रगुप्ति नामा मुनिराय। तहँ तिष्टै थे जन सुखदाय।
तेभी कहत भए बच एम। गुप्ताचारज भाषे जेम ॥ १२ ॥
फिर शशि प्रभक्षुल्लक तिहवार। अपने मनमें करताविचार।

भव्य सैन मुनिवर तिहथान। ग्यारह अँगके पाठी जान ॥ १३ ॥
तिनको गुरु वचकहै नकोय। ताते ह्या कारन कछु होय।
ऐसे छुल्लक मनमें धार। तहँते गमनकियो तत्कार ॥ १४ ॥
सुव्रत नाम मुनीश्वर पास। अपने गुरुके वचन प्रकाश।
वातस्ल्य जुत वंदन कही। नमस्कारकर साता लही ॥ १५ ॥

दोहा

जो भविजन धरमातमा, धरम विषै चितधार।
कौरैं वात्सल सबनते, तिन हू जन्म सुसार ॥ १६ ॥

पद्धड़ी

फिर छुल्लक इह शुभ बुद्धि वान। क्रीड़ा कर आयो हर्षवान।
जहँ भव्यसैन मुनि भेखधार। विद्या मदकर गर्भित अपार। १७।
तिन धर्मबुद्धि खगको नदीन। मदकर उनमत्त भयो मलीन।
कोड़ो कष्टनका दैनहार। एगर्व महा ताको धिकार ॥ १८ ॥
जहँ वचन विषै दारिदअपार। तहँ और बड़ाई कोनिहार।
पाहुण गति आदि क्रिया महान। तिनके सुपनेमें भी नआन। १९।
सब दोष रहित श्री जैनज्ञान। तिसमेंभी प्राणी मदजुलान।
यह वात सत्य जगके मझार। जे पुन्यहीन पापी निहार। २० ।
तिनके अमृत विषकी समान। होजावै निश्चयकरसोमान।
तब वह छुल्लक उठ प्रातकाल। भव सैन क्रिया देखन सुचाल। २१।

सोरठा

भव्यसैन तिहवार, बहिर भूमको जायथो।
पीछे यह व्रतधार, लेय कमंडलको चलो ॥ २२ ॥
फिर विद्यापरभाय, मारगमें छुल्लक रची।
चहुं दिश हरत सुकाय, चिकनी और सुहावनी ॥ २३ ॥

पायता

तब नष्ट बुद्धिको धारी। मुनि मनमें करत विचारी।

श्री जिन आगमके माही । एकेंद्री जीव कहांही ॥ २४ ॥
इम कहकर गमन जोकीना । तृण ऊपर पैर धरीना ।
फिर सोच समय ब्रह्म चारी । माया अपनी विस्तारी ॥ २५ ॥
जलथाजो कमंडल मांही । सो सोख दियो तिह ठांही ।
अर कहत भयो इम बानी । हो मुनिइसमें नहि पानी ॥ २६ ॥
तातें सरकों जल लीजे । मृतकाजुत सौच करीजे ॥
ऐसे सुनके हरषायो । ताही विध सौच करायो ॥ २७ ॥
मिथ्याकर दूषित जेहैं । क्या क्या नहि काज करैंह ।
चारित्र रहित जो ज्ञानं । सो देखै नहि शिव थानं ॥ २८ ॥
जैसे जब भानु प्रकाशै । घू घू को तमही भाशै ।
तैसे यह मुनि अज्ञानी । चारित्र रहित अभि मानी ॥ २९ ॥

दोहा

मिथ्या दृष्टी के निकट, जैन शास्त्र सुखदाय ।
सोभी खोटे पथ अरथ, दोष रूप होजाय ॥ ३० ॥
जैसे मिष्ट सो दुग्धको, तूंबी माहि भराय ।
जहर रूप हो पर तबै, कष्ट देय अधिकाय ॥ ३१ ॥

चौपाई

ऐसे मनमें करत बिचार । यह छुल्लक चतुरोत्तम सार ।
मुनिको मिथ्या दृष्टी जान । खोटे कर्म बिषे रतिमान ॥ ३२ ॥
नाम अभव्यसैन तिह बार । सब जन आगे कहो प्रचार ।
दुरा चार कर कष्ट अतीव । या जग मांही पावै जीव ॥ ३३ ॥
बहुर ब्रह्मचारी धीमात । व्रत पवित्र उज्जज अधिकान ।
वरण भूपकीहै वरनार । नाम रेवती सम्यक धार ॥ ३४ ॥
तास परिछा लेने काज । पूरब दिश मायाको साज ।
कमल बिषै चतुरानन रूप । गले जनेऊ धरै अनूप ॥ ३५ ॥

वेद ध्वनीको करै बखान। सुर अर असुरनमैं तिसआन।
ब्रह्मा रूप करो तत्कार। लीला कर तिष्ठो पुर बार॥ ३६॥
ब्रह्माकोसुन आयो राय। अभवसैन आदिक तहँ जाय।
बड़े हर्ष जुत बंदन करी। सब पुरजनने भी तिसघरी॥ ३७॥
कैसे जन मूरख अभिधाय। जड़ आतम दूषित अधिकाय।
तबही बरुण नामनरराय। रानी को बहु बिधसमझाय॥ ३८॥
तुम भी जावो जात्रा हेत। तौभी गई नही गुणसेत।
सम्यक रत्न सहित वहनार। जिनवर भक्ति हियेमेंधार॥ ३९॥
करो बिचार चित्त यह भंत। यूं भाषोहै जैन सिद्धांत।
ऋषभदेव सो ब्रह्माभए। आतम ज्ञानी शिवपुर गए॥ ४०॥
अरु कोई ब्रह्मा नहि आय। यह दीखे धूरत अधिकाय।
आयोहै ठगने को यहां। इम बिचार कर गई नहितहां॥ ४१॥
और दिना दक्षणदिशजाय। क्षुल्लक माया धरी अधिकाय।
विश्नु रूप कीनो तिह थान। चार भुजा गरुड़सान जान॥ ४२॥
संख गदा अरु चक्र अनूप। करमें अस बिकराल स्वरूप।
सर्व दैत्य गणको भयदाय। ऐसो रूप सबै दिखलाय॥ ४३॥

दोहा

तोपण रानी रेवती, गई नही तिस पास।
सम्यक तिस हिरदेबिमल, बरततहै सुखरास॥ ४४॥
अरु इक दिन छुल्लक बिमल, पश्चम गोपुरजाय।
संकर रूप बनाईयो, मायाकर अधि काय॥ ४५॥

काव्य

बृषभ पीठ असवार जटा सिर ऊपर छाई। पारबती अरधंग तास मुख कंज लखाई॥ सुर असुरन कर पूज्य सर्बजनको सुखदाई। धाए पुर के लोग तोहू रानी नहि आई॥ ४६॥

और दिनाके विषै बृह्मचारी इम ठानी । उत्तर दिशकी ओरकरी
माया अधिकानी ॥ समवशरन रचलीन ध्वजा जामें फहरावें ।
प्रातिहार्य बहु युक्त तहां सुर गान करावें ॥ ४७ ॥
मानी जनका मान सुमानुष थंभ नशावैं । तूप वापिका आदि
सुमंगल द्रव्य लखावें ॥ तीर्थंकरको रूप रचो तोने अतिभारी
सुन नर असुर अधीश आय पूजा बिस्तारी ॥ ४८ ॥
तब नृप बारन भव्यसैन आदिक जन सारे । आए अर्चनहेत
हर्ष चितमें अति धारे ॥ समझाई नृपनार सबै पुरजन तिहबारा
कहत भई इस भांत सुनो तुम बचन हमारा ॥ ४९ ॥
अहो जिनागम मांहि कहे चौबिस तिर्थंकर । ग्यारारुद्र विख्यात
भए नवबासु देव वर ॥ ते पहुंचे पर लोक आपने गुणअनुसारी
तातें निश्चय जान लेहु यह माया चारी ॥ ५० ॥

दोहा

कैसोहै यह भेख धर, ठग विद्या अधिकाय ।
मूरख जनकी बुधहरै, नाना रूप दिखाय ॥ ५१ ॥
ऐसी रानी रेवती, सम्यक रतन भरंत ।
सब जनको समझायके, निज ग्रहमें तिष्टंत ॥ ५२ ॥
जैसे सुर गिर चूलका, निश्चलहै अधिकार ।
ताहि चलावनको पवन, समरथ नाहि लगार ॥ ५३ ॥

चौपाई

फिर यह छुल्लक कपट सुधार । ब्याधि युक्त तनकर तिहवार ।
ब्रतकर शोभित छीन शरीर । श्रावक रूप धरो वरवीर ॥ ५४ ॥
चर्या समय रेवती ग्रेह । याको लेन अहार सुतेह ।
ताही छिन पीड़ाके भार । मूर्छा खाय पड़ो तत्कार ॥ ५५ ॥
तिसको देख नृपति की नार । धर्म सनेह चित्तमें धार ।

हाहा कार करी अधिकाय । भक्ति ठान इनके ढिग आय । ५६ ।
सुंदर शीतल करी समीर । ताकर कियो सचेत शरीर ।
आदर कर घर भीतर लाय । तहँ तिष्ठाये बहु सुख पाय ॥ ५७ ॥
कैसीहै यह दया निधान । प्राशुकरस मई दीनो दान ।
दयावान जो प्रानीहोय । दान बिषे बुध धारे सोय ॥ ५८ ॥

सवैया

तब यह ब्रम्हचारी लेयके आहार शुभ, तिहिथान माया फिर येम बिस्तारी है । करीहै प्रचंड बौन आति दुर्गन्ध रूप, जाके देखे ते गिलान आवै तहां भारीहै ॥ जबै रानी रेवती पश्चाताप ऐसे करै, भोजन अपथ मैंने दियो दुख भारी है । हाय हाय पापनी मैं कौन यहकाज कीनो, इत्यादिक निंदा निज कीनीतिहबारीहै ।५९।

दोहा

फेर भक्ति हिरदय सोधर, निःशांकित मनहोय ।
बमन सबै धोवत भई, लेकर उश्न जु तोय ॥ ६० ॥

पायता

तब चंद्र प्रभु ब्रह्मचारी । श्रावक दृढ़ ब्रतको धारी ।
धीमान चित्त हरषानो । रानीको भगति लखानो ॥ ६१ ॥
जब माया तज तत्कारा । आदर जुत बचन उचारा ।
कैसे जुबैन उचरेहैं । रस युक्त संतोष भरेहैं ॥ ६२ ॥
हो देवी अब सुन लीजे । मन बचन काय थिर कीजे ,
त्रय जग में सारजो मानो । त्रिय गुप्ताचारज जानो ॥ ६३ ॥

अडिल्ल

तिनकी देख सुधर्म वृद्धिचित धारिये । जाते सबही सिद्ध होत सुनिहारिये । तुह्मरे मनको सार पवित्र करो वही । या प्रकार शुभ गिरा ब्रह्मचारी कही ॥ ६४ ॥

पद्धरी

अरु मनमें धर्मनुराग धार । नाना प्रकार जिन जिज्ञसार ।
कीनो है सो तुमकोअवार । कल्याण हेत बरतो अवार ॥ ६५ ॥

यह अमूढ़ दृष्टि गुण जगमझार। संसार जलधिते करतपार।
मैं नानाबिधि माया दिखाय। पण तुह्मरी दृढ़ता अति लखाय।६६।
ताते तिहु लोक सु पूज्यमान। तुमरे हिरदय सम्यक महान।
श्री जिनवर चंद्रतनेसुचर्न। जग जीवनको आनन्द कर्न ॥६७॥
तिन पूजनको तुमही सुजान। पंडित नाहि कोई तुमसमान।
ताते तुह्मरी महिमा अपार। या जगमें कौन करै उचार॥ ६८ ॥
ऐसे गुण जुत रानी मनोग। ताकी स्तुति कीनी सुजोग।
फिर निज ब्रतंतसबहीउचार। बृह्मचारी कीनो गमन सार ॥६९॥
तिस पीछे चारुण नाम राय। शिवकीर्ति नाम सुतको बुलाय।
निजराजदेय बन मांहिजाय। जिनभाषत तप धारन कराय ।७०।
सो काय त्याग तपके प्रभाव। माहेंद्र स्वर्ग उपजो सुभाव।
देदीप्यमान वपुकांतिवान। जिन पद पूजै नित भक्ति ठान ॥७१॥

दोहा

फिर वह रानी रेवती, जिन बच में अनुराग।
धर कर जिन दिक्षा लई, तप कीनो बड़ भाग ॥७२॥
बृह्म स्वर्ग में सुर भयो, ऋद्धि लहो अधिकाय।
जिन तीरथ जात्रा करै, मनमें हरष लहाय ॥ ७३ ॥

काव्य

आचारज इम कहैं, सुनो तुम भवि जन सारे।
देव इन्द्र नर धीश, रैन दिन सेवन हारे ॥
स्वर्ग मोक्ष दातार, धर्म जिन भाषत सोई।
अति पवित्र हिय धरो, तासते सब सुख होई ॥ ७४ ॥
बहुत कालते लगो, कुमारग मिथ्या भारी।
ताको तज नृपनारि, हिये दृढ़ सम्यक धारी ॥
तैसे तुम भी करो, जगतमें पूजा पावो।
क्रमते शिव सुख लहो, बहुरि जगमें नहिं आवो ॥ ७५ ॥

इति श्री आराधनासार विषै रानी रेवती की कथा सम्पूर्णम्

अथ उपगूहन अंग सेठ जिनेंद्रभक्ति नै पाला ताकी कथा प्रारम्भः नं. ॥ १० ॥

मंगला चरण । सोरठा

सुरशिव सुख दातार, श्री अरिहंत जिनेशहैं ।
तिनकी भक्ति सुधार, नमन करूं सिर नायके ॥ १ ॥
उपगूहन गुण सार, जिनेंद्र भक्ति श्रेष्ठी करो ।
ताकी कथा उदार, भाषामें भविजन सुनो ॥ २ ॥

चौपाई

रत्न संयुक्त दयाकी खान । ऐसो सोरठ देश महान ।
श्री नेमीश्वर जन्म प्रभाय । ताते देश पवित्र कहाय ॥ ३ ॥
पाटलपुर तहँ नगरी जोग । नृप विशुद्ध नामा सुमनोग ।
नाम सुसीमा तिसके नार । रूप और लावन्य अपार ॥ ४ ॥
तिन दोनोंके करम बसाय । पुत्र सुवीर भयो दुखदाय ।
सब चोरनमें वह सिरताज । सप्त विशन सेवै तजलाज ॥ ५ ॥
मात पिता शुभ कुल अरु ज्ञान । ईखतहै निर्मल विख्यात ।
कीनद्वार दुर्गत दुख जास । कुल आदिक निरफलहैतास ॥ ६ ॥
इस अंतर इक गौड़ सुदेश । तामें लिस नगरी तहँवेश ।
जहां बसैं नर कीरत वान । पूजा दान करैं अधिकान ॥ ७ ॥
तिसही नगर विपय बड़भाग । जैन धर्ममें धर अनुराग ॥
सम्यक दृष्टी श्रावक जान । सेठ जिनेन्द्र भक्ति बुधवान ॥८॥
जिसको चित मो मेघ स्वरूप । सुर शिव लख जो भान अनूप ॥
ताको सींचत चित्त लगाय । सप्त क्षेत्र में धन खर्चाय ॥ ९ ॥
श्री जिनमंदिर बीच मनोग । शास्त्र लिखावैं बाँचन जोग ॥
चार प्रकार संघ को दान । येही सप्त क्षेत्र पहचान ॥ १० ॥
सम्यक दृष्टि शिरोमणि येह । सेठ बुद्धि आकर गुण गेह ॥

ताके महल विषय जिनधाम। सप्तम खणपैहै अभिराम ॥११॥
रतन मई प्रतिमा तहँ जोग। श्री जिन पारस नाथ मनोग॥
तिसके शीस छत्र त्रय जान। अद्भुत रतन मई दुतिवान ॥१२॥

दोहा

जिन छत्रन में एक मणि, दुतिकर कांति अपार।
बैडूरज मणिमय दिपै, ता रचा अधिकार ॥ १३ ॥
ता मणिकी महिमा अधिक, फैली जगत मझार।
सुनी चोर भूपति तनुज, मनमें हरष सुधार ॥ १४ ॥

पद्धड़ी

सब चोरनको तबही बुलाय। तिनसों यह बात कही सुनाय ॥
तुममें कोई सामर्थवान। जो उस मणिको लावे सुजान ॥१५॥
तिनमें इक सूरज नाम चोर। सो कहत भयो इम वैन जोर ॥
मैं इन्द्र मुकटकी मणि उदार। चणमें लाऊं अवनी मँझार ॥१६॥
जो दुराचार कर युक्त नीच। ते तत्पर खोटे करम बीच ॥
यह बात युक्त जानो प्रवीन। यामें संशय रंचक न हीन ॥१७॥
तिस बच सुनकर तस्कर सूबीर। तिसको आज्ञा दीनी गहीर ॥
तस्कर सूरज कपटी महान। चुल्लक को भेष धरो निदान ॥१८॥
सो काया क्लेश करै अपार। वपु चीण कियो बहु बरत पार ॥
पुर ग्राम द्रोण पट्टन सुदेश। तिनमें भिरमन करता विशेष ॥१९॥
उपदेश सर्व जनको कहंत। अपनो आपो परगट करंत ॥
नाना प्रकार तप तपत सोय। हिरदय में धारे कपट जोय ॥२०॥

दोहा

क्रम कर ताम्र सुलिप्त पुर, आयो तप में रक्त।
सुन कर वंदनको चलो, सेठ जिनेन्द्र सुभक्त ॥ २१ ॥
माया चारी की तबै, देखी दुर्बल काय।
नमस्कार कर सेठ जी, स्तुति कर घर लाय ॥२२॥

सोरठा

कोई न जानन हार, धूरत जनको धूर्तपन।
जे पंडित बुधवार, तेभी ठगे सुजाय हैं ॥ २३ ॥

चौपाई

मणिको लखकर तस्कर सोय। हर्षित मनमें बहु बिधि होय ॥
जैसे सुवरण देख सुनार। मनमें धारै हर्ष अपार ॥ २४ ॥
तब वह सेठ महा बुधिवान। सरल चित्त सम्यक्त निधान ॥
इसको श्रावक निर्मल देख। यासों बचन कहे सुबिशेष ॥२५॥
छत्र तनी रक्षा तुम करो। मेरे मनको संशय हरो ॥
तबही कहै सुनो चितलाय। मैं तो नहीं रहूं इस ठाय ॥ २६ ॥
आग्रह करके भक्ति सुधार। याको राखो जिन आगार ॥
आप चले व्यापार निमित्त। इसे पूंछकर हर्षित चित्त ॥ २७ ॥
भरो परोहन बहु बुधवान। नगर बाह्य तब कियो पयान ॥
सब कुटुम्ब निज काज लगाय। आवे जावे जन अधिकाय ॥२८॥
तादिन छुल्लक यह मनलाय। अर्द्ध रात्रि मणि लियो चुराय ॥
सेठ धाम तज चलो लवार। मणिकी रस्म लखी कुतवार ॥२९॥
चोर जान तिस पकड़न काज। तलवर धावो जाय न भाज ॥
तब यह दौड़ो चोर अयान। सेठ जिनेन्द्र भक्ति जिसथान ॥३०॥
रक्ष रक्ष इमि कह सिरनाय। शरन सेठ मैं तुम्हरी आय ॥
तब वह सेठ बनिक सिरताज। सम्यक दृष्टी धर्म जिहाज ॥३१॥
कोलाहल सुनके गुणवन्त। याको जानो चोर तुरन्त ॥
जो इसको पकड़ाऊं जाय। दर्शन मलिन होय अधिकाय ॥३२॥
ऐसो मनमें कियो बिचार। कहत भयो सुनरे कुतवार ॥
यह धर्मातम बुद्धि निधान। हो मूरख तुम नांहि पिछान ॥३३॥
इन्हें ठहरायो तुमने चोर। मुखते बहुत मचायो शोर ॥
चारित रतन तनो भंडार। यह श्रावक संतोषी सार ॥ ३४ ॥

मैंने मणि मँगवायो सोय। तातें अत्र लायो थो सोय ॥
ऐसे वच सुनके कुतवार। नमिकर गयो गेह तत्कार ॥ ३५ ॥

सोरठा

तब एकांत सुजाय, वणिक पती निज मणि लई।
कहत भयो समझाय, माया चारी ताहि लख ॥ ३६ ॥

दोहा

रे रे पापी मूढ़ मति, तैं क्या कियो विचार।
यह चेष्टा दुख दायनी, तोको है धिक्कार ॥ ३७ ॥

काव्य

जे अन्यायी जीव जगतमें हैं दुखकारी। सो निश्चय दुख लहैं जांय वे नर्क मंझारी ॥ जे पापी शुभ न्याय छोड़ पातिग रति होवें। अपनो पोषन करैं तेई भवि बीज सुबोवें ॥ ३८ ॥
फेर सेठ महाराज चोर ते गिरा उचारी। तू इस लोक मंझार तीव्र तृष्णा को धारी ॥ पड़ता पातिग मांहि नास निश्चय तुझ होवे। यामें संशय नांहि विफल नर भव तू खोवे ॥३९॥

दोहा

इत्यादिक दुर बचन बहु, भाषे बज्र समान।
काढ़ दियो निज थानतें, कपटी चोर अयान ॥४०॥

पद्धड़ी

ऐसे जानें जो भव्य जीव। उपगूहन गुन पालो सदीव ॥
दुर्जन लंपट पापिष्ठ जोय। तिन जोग दर्श में दोष होय ॥४१॥
तिनको ढक लीजे बार बार। कल्याण हेत हिरदय विचार ॥
अतिशयकर निर्मल श्रीजिनेश। तिनकर भाषित जिन मत विशेष
जो बुद्धि हीन या जग मंझार। तिसमें भी दोष धरैं निकार ॥
ते पापी मतवाले अयान। यामें संशय रंचक न मान ॥ ४३ ॥
जैसे मिश्री अरु दुग्ध जान। पीवें जन जो अमृत समान ॥
जिसको पित्त ज्वर रोग होय। ताको लागत है कटुक सोय ४४

इति श्री आराधनासार विषय जिनेन्द्र भक्ति की कथा समाप्तम्

अथ स्थितिकरण अंग बारिषेण जीने पाला ताकी कथा प्रारम्भः नं. ॥ ११ ॥

मंगलाचरण । कवित्त

जगत पूज श्री वीतरागको, भक्ति सहित सो नमन कराय ।
स्थिति करण गुण पालो जाने, ताकी कथा कहूं हरषाय ॥
बारिषेण श्रेणिक सुत ताने, अंग यही उद्योत कराय ।
भव्य समूह सुनो चित देकर, जाते सम्यक शुद्ध लहाय ॥१॥

चौपाई

भरथक्षेत्र में मागध देश । संपति को भंडार विशेष ॥
राजग्रही नगरी तहँ जान । श्रेणिक नरपति सम्यक वान ॥२॥
सम्यक व्रतकी धारन हार । नार चेलना तिस आगार ॥
तिन दोनो के पुन्य संजोग । बारिषेण सुत भयो मनोग ॥३॥
उत्तम श्रावक व्रत धारंत । तत्त्व लखन में श्रावक संत ॥
इक दिन प्रोषधि कर धीमान । चौदश रैन गयो सुमसान ॥४॥
कायोत्सर्ग ध्यान धर धीर । तिष्टे तहँ गुण गण गंभीर ॥
ताहि दिवस इक कारज जान । मदन सुंदरी गणका आन ॥५॥
बनमें क्रीड़ा करत अपार । श्रीकीरत तहँ सेठ निहार ॥
ताके गले हार द्युतिवंत । देखो वेश्या ने चमकंत ॥ ६ ॥
नगर नायका करै विचार । बिना हार मम जन्म असार ॥
ऐसे चितवन कर बहु भाय । दूखित ह्वैकर निज ग्रह आय ॥७॥
जितने दूखित तिष्टे नार । तितने आयो रैन मंझार ॥
विद्युत तसकर यामें रक्त । चोरी करन विषै आशक्त ॥८॥
कहत भयो प्यारी सुन बात । क्या तुम दुःख आजहै गात ॥
कारन मोको देउ बताय । तब वह कहत भई समझाय ॥९॥

अहो प्राण वल्लभ सुखदान । श्रीकीरत जो सेठ महान ॥
ताके गले हार द्युति वन्त । सो मोको दो लाय तुरन्त ॥१०॥

दोहा

जो तू नोको लायदे, तो मेरो भरतार ।
जो लावै नाहि हारको, तो नाहि प्रीत लगार ॥११॥

सवैया

बचन सुनाए नार लिये सोई हिये धार, साहस अपार कर रैन मांही जायके । गयो सेठके अगार लियेहै चुराय हार, बुध अनुसार चतुराई को फेलायके ॥ पथमे चलो सो आत तेज मणि की लखात, तब कुतवार सांथ लगो पीछै धायके । जब यह पापी चोर सको नाहि तहँ दौर, गयो है मसान भूमि हिये डरपाय के ॥ १२॥

दोहा

वारषेण चित ध्यान में, ठाढे आतम लीन ।
तिन चरनो ढिग हार धर, अदृश भयो मलीन ॥१३॥
कोतवाल तत्खण गयो, राजा के दरबार ।
कहत भयो विरतांत सब, सुनिये प्रभु चित धार ॥१४॥

चौपाई

वारिषेण तुम सुत महाराज । चोरीकरत लखो हम आज ॥
तब राजा, इसके सुन बैन । कोप सहित कीने निजनैन ॥१५॥
ऐसे कहत भयो नृपराय । हो पुरुषो सुनलो चित लाय ॥
खोटे चरित पापकी खान । मो सुतको देखो अधिकान ॥१६॥
भूमि मसान भयानक काय । तामे ध्यान धरे अधिकाय ॥
कहँ तो धर्म तनी यह बात । कहां ठगन करनो विख्यात ॥१७॥
जे ठगहैं जगमें अधिकार । क्या क्या काज करें नलगार ॥

फिर नृपति मन कीन विचार। दीरघ राज हमारो सार ॥१८॥
तिसभोगन लायक सत जेह। तितने कारज कीनो येह।
याते अधिक कष्ट नहिं कोय। जगत माहिं देखो अब लोय १६॥

दोहा

इम विचार कर नृपति ने, हुक्म दिया तत्काल।
ताको मस्तक छेदिये, शीघ्र जाय कुतवाल ॥२०॥

चौपाई

इम आज्ञादीनी नृपाल, कुँवर हतन को चले चंडाल।
इकठे भये सबै मातंग। चोर हतनको उद्धित अंग ॥ २१ ॥

काव्य

तहां एक चंडाल तीव्र असि करमें लीनीं। बारिषेण के सीस विषै तिन तत्त्क्षिण दीनी ॥ नगरीके सबलोग खड़े देखें तिह ठाहीं। इनके पुन्यप्रभाव भयो कारन अधिकाई॥ सो खड्ग फूल मालाभई, देखन जन हरषाइयो। बहु देवन जै जै करी, पुलकित चित गुण गाइयो ॥ २२

चौपाई

आचारज इम कहैं उचार। पुन्य महा सुखको भंडार।
तीव्र अग्नि जल सम ह्वै जाय। वारध सेती थल दरशाय ॥२३॥
विष अमृत अरु मित्र समान। विपतिं संपदा हैं अधिकान।
ताते सुख इच्छुक भवि जेह। करो पुन्य नाना विधि तेह २४॥
पुन्य कौनको कहिये बीर। ताको वर्णन सुनो गहीर।
श्री जिनचरन कमल की सेव। पांच दान दीजे बहु भेव २५
शीलतनी रक्षा उपवास। या विधि पुन्य जिनेश्वर भास।
इम अचरज सुर असुर निहार। हर्षित ह्वै इम कहत पुकार२६॥
पुन्य बड़ो है जगत मँझार। इहविधि अस्तुति करी अपार।

पुष्प वृष्टि नभते बरषंत । तापर अलि गुंजार करंत ॥ २७ ॥
धर आनंद हिये तिहबार । बड़े बड़े सावंत अपार ।
कहतभये नृपति से जाय । हो साधू सुनये मनलाय ॥ २८ ॥
बारिषेनको चरित महान । ताको अब हम करैं बखान ।
तुम्हरे सुतको चित्त अभंग । जिन चरनांवुज सेवनभृंग ॥२६॥
श्रावक क्रिया करै बुधवान । शुद्ध आतमा निर्मल ज्ञान ।
जैन धर्म में निपुण महंत । तिस महिमा वर्णत नहिं अंत ३० ॥

दोहा

इम अस्तुति करते भये, नृपके आगे शूर ।
पून्य थकी क्या क्या न है, याते कुछ नहिं दूर ॥ ३१ ॥
श्रेणिक नृप सब चरित सुन, पश्चाताप कराय ।
मैं कारज कीनो कहा, हाय हाय दुखदाय ॥ ३२ ॥

अडिल्ल

करैं नरेंद्र विचार सोच उर धारके ।
जे जन हैं बुधवान करैं सुविचारके ॥
तेही सुख अधिकान लहैं या जग सही ।
तिनकी कीरति प्रगटहोय संशय नहीं ॥ ३३ ॥
जे महंत जड़बुद्धी हम सम जग विषै ।
बिना बिचारे कारज निज मुखते अखै ॥
तेई सुख सागरमें डूबत देखिये ।
अपकीरति परत्यच्छ तिन्हींकी पेखिये ॥ ३४ ॥

दोहा

इत्यादिक आलोचना, करके श्रेणिक राय ।
महा भयान मसान में, गयो तबै दुख पाय ॥ ३५ ॥

मेघकुमार

कहत भयो जिन पुत्रसेजी सुनिये ज्ञान निधान ।
बिना बिचारे मैं कियोजी यह कारज दुखदाय ॥
सयाने क्षमा करो बुधिवान ॥ ३६ ॥
इत्यादिक बच भाषियोजी श्रेणिक बारंबार ।
विनयधार करतो भयोजी विनती बहुत प्रकार ॥
सयाने क्षमाकरो बुधिवान ॥ ३७ ॥
मलियागिरि दाहो थकोजी अथवा घिसन कराय ।
देत सुगंधत ऊसही जी त्योंही धूचित थाय ॥
सयाने श्रीगुरु के यह बैन ॥ ३८ ॥
तिस पीछे तस्कर वही जी सुभट महा बलवान ।
नमस्कार कर मांगियो जी, नृपसे अभय सुदान ॥
सयाने मोबिनती सुन भूप ॥ ३९ ॥
अहो देव मैंने कियोजी यह कारज दुखदाय ।
गणका शक्त सदारहो जी हूं पापी अधिकाय ॥
सयाने मो बिनती सुन भूप ॥ ४० ॥
तुमरो पुत्र महान है जी श्रावक शुद्धाचार ।
इम वृत्तांत भाषे सही जी विद्युत ने तत्कार ॥
सयाने मो बिनती सुन भूप ॥ ४१ ॥
तब नृप आदरयुत कहोजी पुत्र चलो निज गेह ।
राज संपदा भोगवोजी तुमसे अधिक सनेह ॥
सयाने मो बच लीजे मान ॥ ४२ ॥
वारिषेण कहते भयेजी, सुनो तात चित लाय ।
चेष्टा सब संसार कीजी, मैं देखी बहु भाय ॥
सयाने सुनिये तात महान ॥ ४३ ॥

अब निज चरन कमल तनोजी, मोको शरण महान।
पान पत्र भोजन करोजी, आतमको हितठान ॥
सयाने सुनिये तात दयाल ॥ ४४ ॥
बनमें जाऊं बेगहीजी, मुनि मारग चित लाय ।
तिष्टूंगो नित ही तहांजी, हो दीगम्बर काय ॥
सयाने सुनिये तात दयाल ॥ ४५ ॥
ऐसे कह संसार तेजी, कै बिरक्त अधिकार ।
सूरदेव मुनि गयोजी, दिक्षाले तत्काल ॥
सयाने निज आतमके काज ॥४६ ॥

चौपाई ।

तब यह बारिषेण मुनि संत । निज भाषित चारित पालंत ॥
अवनीपर सो करत बिहार । भव्यनको संबोधत सार ॥४७॥
ग्राम पलाश कूट इक जान । तहँ चर्याको गयो महान ॥
श्रेणिकको मंत्री तिहि ठाम । अग्नि भूत तिस नाम ललाम ।४८
तनुज तासके पुष्प सुडार । पूजा दान विषै रतसार ॥
तामें गुण शोभित मुनिराज । आवत देखे धर्म जिहान ॥४९॥
हर्ष सहित उठकर तिहि घरी । तिष्ट तिष्टकर बंदन करी ॥
नवधा भक्ति करी अधिकाय । दाताके गुण सप्त लहाय ॥५०॥
हर्ष सहित रसकर संयुक्त । दीनों मुनिको प्रासुक भुक्त ॥
भले सुपात्र अर्थ जो दान । देवै सुख जग में अधिकान ॥ ५१ ॥

दोहा ।

लघु वयसे इन मित्रथो, पुष्प डाल हितकार ।
मुनिको पहुंचावन चलो पूछ सो मिला नार ॥५२॥

काव्य ।

भक्ति धार हिय मांहि, कमंडल कर निज लीना ।
थोड़ी दूर सुजाय, फेर ग्रह को मन कीना ॥

पुष्प डाल इम बैन कहे, मुनि से तिहि बारी ।
अहो देवपथ में तड़ाग, यह है सुखकारी ॥५३॥
हम तुम दोनों कीनी थी, यहाँ क्रीड़ा भारी ।
सघन छांहि यातीर, अधिक शोभा बिस्तारी ॥
कल्प वृक्ष सम वृक्ष, फलन कर उन्नत पेखो ।
मोहत हैं सहकार तने, यह आगे देखो ॥५४॥
यह दूजो अस्थान, लखो तुम श्री मुनिराई ।
हम तुम क्रीड़ा प्रथम, करी थी बहु सुखदाई ॥
कैसो यह स्थान महा, बिस्तीरण जानो ।
सत पुरुषन मन जेम, यहै निश्चय मन आनो ॥५५॥

दोहा ।

इत्यादिक बहु बचन कर, चिन्ह दिखाये सार ।
नमस्कार करतो भयो, मुनि को बारम्बार ॥ ५६ ॥

चौपाई ।

इसके चितकी जान तुरंत । तत्व बचन भाषे बुधिवन्त ॥
आदर सहित सुधर्म सुनाय । याको मन बैराग कराय ॥५७॥
भगवत दिच्छा याको दीन । शास्त्र पढ़ाये बहुत प्रवीन ॥
पालत संजम पढ़त पुरान । तो पण मोह धरै अधिकान ॥५८॥
कानी नारि सोमिला जोय । ताको भूलत नाहीं सोय ॥
आचारज इम कहे उचार । काम मोहको है धिक्कार ॥५९॥
ताकर जीव ठगाये जाय । हित अनहितको जानतनांहि ॥
वारिषैन मुनि दीन दयाल । तपकी सिद्ध हेत तत्काल ॥ ६० ॥
तीरथ जात्रा करत अपार । द्वादश बर्ष गये निरधार ॥
इक दिन ये दोनों मुनिराय । समो शरन मे पहुँचे जाय ॥ ६१ ॥
-ीरनाथ को वंदन करी । निज कोठे बैठे तिहि घरी ॥

तहं गंधर्वन की बहु नार। प्रभूके गुण गावें थी सार ॥ ६२ ॥
नाना विधिके गान कराय। तामें बिरह अधिक दरसाय॥
इत्यादिक गावें थी गान। ताको बरन सुनो दे कान ॥ ६३ ॥

गाथा।

मलय कुचेली उम्मणी नोहे पबसियरणि।
कह जीवो षणयधर इमंत बिरहेण ॥ ६४ ॥

चौपाई।

इह बिधि गान सुनै देकान। काम अग्नि तिसतन उपजान।
पुष्प डाल लघु बरती साद। नारि सोमिला कीनी याद ॥६५॥
बारिषेण जोगीश्वर तबै। याके मनकी जानी सबै॥
स्थिति करण गुणपालन काज। याको साथ लेय महराज ॥६६॥
राज ग्रही नगरीमें आय। आवत देखे चेलन माय॥
अपने मनमें करो बिचार। क्या मुझ सुत चित चलो अपार।६७।
ऐसे मनमें चितवनकीन। कनक काष्ट दो आसन दीन॥
तब यह बारिषेण धीमान। बीतराग आसन थित ठान ॥६८॥

दोहा।

जे मुनिराज जहाज सम, ऐसे क्रिया कराय।
सत्पुरुषन के चित्तमें, भ्रांत नहीं उपजाय॥
यह जतीन्द्र ताही समय, सुधा समाने बैन।
बिनय वान माता थकी, कहत भये सुखदैन॥ ७० ॥

पद्धड़ी

या विधिते श्रीमुनि बचकहाय। सुनमाता अबतू चित्तलाय।
मेरे अन्तेवरकी जुनार। श्रंगारसहित लावो अवार ॥ ७१ ॥
ऐसे सुनकर मातातुरंत। बत्तीस नार अति रूपवन्त॥
पटभूषण जुतबहुबिधि श्रंगार। लाई मुनिढिग तिसहीसुबार।७२।

शिष्य पुष्पडाल परमादलीन। तिष्ठथोइन ढिंग चितमलीन।
तब वारिषेण मुनि इम भनंत। सुन पुष्पडाल मोबच तुरंत।७३।
जुगराज पदी मेरीअपार। बहुसार संपदाकी भंडार॥
अरुये नारी अतिरूपवान। हो मुनितुझ रुचि तोलेमहान।७४।
तिनके बच सुनकर पुष्पडार। लज्जाजुत उठकर भूनिहार॥
गुरुचरन कमलमें शीसधार। बचकहत भयोकर नमस्कार॥७५॥
होमुनि स्वामिनतुम धन्यधम्य।तुमलोभ पिशाच कियोकदन्य॥
अरु साततत्व भाषेजिनेन्द्र। तिनजाननको पंडितजितेन्द्र।७६।

दोहा

जे महंत तुम सारिखे, तज संपति तप ठान।
तिनको क्या इसलोक में, दुर्लभ है भगवान॥ ७७॥

चौपाई

मैं तो जन्म अंधसम होय। यामें संशय नाही कोय।
तपरूपीमाणि ग्रहणाकराय। तऊकारण तियनाहि बिराय।७८।
तुमने द्वादशबर्ष प्रजंत। तप निर्मल कीनो गुणवन्त॥
अरुमैं मूरखभी तपकीन।पणमुझ चित सलरही मलीन॥७९॥
तातें करुणानिधि तुमईस। मैं अपराधी विस्वेबीस॥
प्राश्चित मोकूं दीजे देव। जाते नाशहोय अघभेव॥ ८०॥
तबही बारषेण मुनिचन्द। निश्चल वृतधारी गुणवृन्द॥
परमानंद उपजावनहार। बचन कहे ताको हितकार॥ ८१॥
होमुनि धीरबीर मनमांहि। दुखअब कीजे रंचकनांहि॥
यह प्रानीउठ करमबसाय। पंडितजन भी मग बिसराय॥८२॥

काव्य

ऐसे कहकर बैन सरस धीरज उपजायो।
प्राश्चित आगम जुक्त देयकर शुद्ध करायो॥

फिर श्री पुष्प सुडाल वचन गुरु के चित आने ॥
ह्वै वैराग सुभाव बहुत दुःसह तप ठाने ॥ ८३ ॥
धर्म रूप पर्वतते जो कोइ पड़तो प्रानी ।
तिसको थांभा भव्यनने जो करअधिकान ॥
निज कल्याण निमित्त यही गुण हिरदय धारो ।
स्वर्ग मोक्षफल लहोजगत महिमा बिस्तारो ॥८४॥

दोहा

देह आदिक अरु संपदा, यह जग अथिर सुजोय ः
तो पण करहू थान में, रक्षाते सुख होय ॥ ८५ ॥
कोड़ौ सुख दातार जो, धर्म जगत बिख्यात ।
तिसही रक्षाकरन ते, क्या क्या सुख नहिंपात ॥८६॥

सबैया इकतीसा

ऐसो जान भव्य जन तजो परमाद बेग, एही दुख कारन हैं जग मांहि जानिये । भवदधि तारन को अंग स्थिति कर्न सेत ताहि, पालो बार बार छिन न भुलानिये ॥ कहे गुरु बैन येह बारिषेन मुनि वह, हमें मोक्ष थान देउ भव भ्रम हानिये। और सुख मंगल की प्राप्त नित प्रति करो, यह बर मांगत हूं मेरे कर्म भानिये ॥ ८७ ॥

चौपाई

कैसेहैं वे श्रीमुनि राय । बारिषेन जी जन सुखदाय ॥
श्री जिनचरन कमलके भृंग। ज्ञानध्यान रतजयो असंग ॥८८॥
है प्रसिद्धमहिमा जगबीच। ज्योंपूरब शशिसहित मरीच॥
तपरूपी भू भृततेजान । पड़तो मुनिथामों धीमान ॥ ८९ ॥

दोहा

हस्तालंबन देयके, ब्रत को प्रापति कीन ।
स्थिति करन गुन पालिये, बारषेण परबीन ॥ ९० ॥

इति श्री आराधना सार कथा कोष बिषै स्थिती करण अंग बारषेण जी ने पाला ताकी कथा समाप्तः ।

अथ वात्सल्य गुण विष्णुकुमार मुनि

नै पाला तिनकी कथा प्रारम्भः नं० १२

अडिल्ल

श्री अरिहंत जिनेश्वर को सिरनाय के, और सरस्वति मात तनों मनलायके। गुरुके चरन कमल जग में सुखकार जी, तिनको बंदन करूं हर्ष उरधारजी ॥ १ ॥

चौपाई

वातसल्य गुण प्रगटकराय। विश्नु कुमार भये मुनिराय।
तिनकी कथाकहूं चितलाय। सुनते भविजन आनंदपाय ॥२॥
येही भरतक्षेत्र है बेश। तामधि आवंती शुद्ध देश॥
तहँ उज्जैनीपुरी अनूप। श्रीवर माता कोवर भूप ॥ ३ ॥
श्रीयमती ताके पटनार। ताकोंलख रति लज्जाधार॥
फिर कैसोहै नृपतिउदार। न्यायशास्त्रको जाननहार ॥ ४ ॥
अरिमद मर्दनको बलवान। परजा पालन दक्षमहान॥
धर्मातमा धर्ममें लीन। दुष्टनको जिन निग्रह कीन ॥ ५ ॥
तिस नृपतिके मंत्रीचार। जैन धर्मके शत्रु निहार॥
बलानिमुंच वृहस्पति पहलाद। तिष्टत नृपढिग जुतअहलाद।६।
धर्मलीन नरपति हैं जेह। ए पापी सैवें कर नेह॥
जैसें चंदनके तरुमांहिं। दुष्टसर्प निसदिन लिपटाहिं ॥ ७ ॥

दोहा

इक दिनके औसर विषै, ज्ञान नैत्र दुतिवान।
नाम अकंपन सूरजी, आय तहं थिन ठान ॥ ८ ॥

मद अवलिप्त कपोल छंद

कैसे हैं ऋषिराज वचन अमृत बरसावैं।
भव्यरूप जेधान सींच तिन मुदित करावैं॥

काम जई मुनि शान्ति सतक तिन के संग मांही ।
देव इन्द्र नागेन्द्रन कर पूजत अधिकाई ॥ ९ ॥
उज्जैनी उद्यान विषै तिष्ठे सुखदाई ।
तब आज्ञा गुरुहई सुनो सब चित्त लगाई ॥
राजादिक जन आय कहें कुछ जो सुन लीजो ।
हो जतीन्द्र तुम बीच कोऊ मत उत्तर दीजो ॥ १० ॥

दोहा

अरु तुम में कोई मुनी, देगो उतर सोय ।
सर्व संग को तास तें, महा उपद्रव होय ॥ ११ ॥

सोरठा

दोनों भव सुखकार, ऐसे गुरुके वैन सुन ।
तब ही मौन सुधार, ध्यान लगा तिष्टत भये ॥१२॥
जे हैं शिष्य महान, बिनय सहित गुरु बच कहैं ।
जो अग्या नहिंमान, ते कुपात्र सम जग बिषैं॥१३॥

चाल—अहो जगत गुरु की

या अन्तर पुरलोक चित्तमें हर्ष बढ़ाये ।
पूजन बंदन काज सार सामग्री लाये ॥
तास समय भूपाल महल ऊपर थित ठाने ।
पुरजन को समुदाय जात देखे अधिकाने ॥ १४ ॥
श्री बरमां महाराज तबै इम बचन उचारें ।
बिना काल पुरलोक कहा को गमन सुधारें ॥
तब वे मंत्री चार दुष्ट निज बचन सुनावें ।
अहो देव बन मांहि जती नित आवें जावें ॥ १५ ॥
तिन के ढिंग यह जात पुष्प लेकर जन सारे ।
सुन ऐसे नरराय फेर इम बचन उचारे ॥

तिनके देखन काज चलें हम भी इहिबारा ।
लीने मंत्री साथ तही पहुंचे तत्कारा ॥ १६ ॥

दोहा

तहां जाय कर नृपति ने, देखो मुनि समुदाय ।
ध्यान जुक्त निश्चल सबे, आतम सों लवलाय ॥१७॥

दोहा

सब मुनिको लख नगन स्वरूप। प्रति प्रति बंदन कीनी भूप॥
भक्तिहर्ष करिके तिहघरी । बहु प्रकार अस्तुति बिस्तरी ॥१८॥
सब जतीन्द्रलख नृपको सही । धर्मलाभ काहू नाहिंकही॥
निसप्रेही वे साधुमहान । देखराय तब कियोपयान ॥ १६ ॥
तिसऔसर मंत्री पापेश । सत्पुरुषनसों राखे द्वेश ॥
कहत भये सुनिये नरनाह। क्यायह बोलन जानत नांह ॥२०॥
कपट सहित यह मौन धरंत। यह बिधि हास्य वचनभाषंत ॥
नृतजुत चाले तिसहीबार। दुष्ट चित्त ये मंत्री चार ॥ २१ ॥

दोहा

इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र कर, बंदनीक गुरु जान ।
जे पापी निंदा करैं, ते सठ स्वान समान ॥ २२ ॥

पद्धडा।

तिस पीछे मारगके मंझार । श्रुतसागर मुनि आवत उदार॥
चर्या निमित्त कीनो पयान । गुरुकी आज्ञा नहिं सुनी कान।२३।
इनको आवत लखके तुरंत । तब दुष्ट सचिव ऐसे भनंत ॥
यह तरुन बैल देख्यो प्रत्यच्छ । आवतहै मगमें पुष्ट कुक्ष ॥ २४॥
ऐसे सुनि सुनि इन जान भाव । इन बाद करनको चित्तचाव ॥
तब स्याद् बाद नभकर प्रचंड । नृप देखत बच भाषे प्रचंड ।२५।
कैसे हैं बच मुनिके महान । ज्ञानांबुज जल कल्लोलमान ॥
ऐसे बचकर जीते तुरंत । विद्या गर्भित दुजमति एकन्त ॥२६॥

दोहा।

एक मुनी जीते बहुत, यह क्या अचरज ज्ञान ।
ऐसे भानु प्रकाश तें, होत सबै तम हान ॥ २७ ॥

चौपाई।

श्रुतसागर मुनि गुरुढिंग आय। बाद भयो सो कह्यो सुनाय ॥
तब गुरु सुन इम भाषे वैन। हां यह काज कियो दुखदैन ।२८।
सुखको देनहार जो संग। अपने करते कीनों भंग ॥
तात तुम एका की जाय। वाद थान तिष्ठो मुनिराय ॥ २९ ॥
कायोत्सर्ग रैनमें धार। ध्यान करो परमारथ सार ॥
तो जीवन संगको ह्वे सही। तुम निर्मल हो गुरु इमकही ॥३०॥
धीरबीर थिरमेरु समान। श्रुतसागर नामा ऋषि जान ॥
गुरु बच सुन संग रक्षा हेत। बाद थान तिष्ठे जग सेत ॥ ३१ ॥
तब वे ब्राह्मण मंत्री चार। मान भंगकर लाजित अपार ॥
रात्रि विषै मारनके काज। घरसे निकसे आयुध साज ॥ ३२ ॥
मारग में श्रुतसागर संत। कायोत्सर्ग धार तिष्ठंत ॥
दुष्ट चित्त इम करो बिचार। चारों षड्ग लई इकबार ॥३३॥
मुनि मस्तक वाही तत्काल। इन मुनिवरको पुन्य विशाल ॥
नगरदेव आसन कंपाय। सब चरित्र लख ततछिन आय ॥३४॥

दोहा।

इन चारों मंत्रीनको, कीलत भयो तुरंत।
नगन षड्ग तिनकर विषै, ऋषि सिरपर शोभन्त ।३६।

चौपाई।

होत प्रभात सबै जन आय। देखे मंत्री कीलत काय ॥
नृपके ढिंग जब कहो सुनाय। तब नृपति देखो तहँ आय ॥३७॥

जो पापी या जगत मंझार। कुत्सित मनके धारन हार ॥
निराबाधको दुख बहु करैं। ते निश्चयकर नर्कहिं परैं ॥ ३८ ॥
जो समान जनको मारत। तिनको मुख देखे महिसंत ॥
येतो तीन जगत गुरु जान। इनको जेदें कष्ट महान ॥ ३९ ॥
ते बहु विधि जन दुःख लहाहि। ताकी कथा कही नहिं जाहि ॥
कुल क्रमते एते परधान। अरु इनको ब्राह्मण नृपजान ॥ ४० ॥
याते इनकी हनी न काय। क्रोध धार खरपे चढ़वाय ॥
देश निकालो दियो तुरंत। न्याय शास्त्र बेत्ता नृपसंत ॥ ४१ ॥

सोरठा।

अन्यायी नर जेह, ते असंगति को लहे।
यामें नहीं संदेह, आचारज इम कहत हैं ॥ ४२ ॥
जैन प्रभाव निहार, भविजन आनंदित भये।
कीनी जयजयकार, कोलाहल बहु ठानके ॥ ४३ ॥

पद्धड़ी।

इस अंतर हस्तिनापुर मंझार। नृप महा पदम तिष्टे उदार ॥
सो कपट रहित धर्मज्ञसार। लक्ष्मी पति नामा तासुनार ॥ ४४ ॥
तिन दोनोंके शुभपुन संजोग। जुगसुत उपजे अतिही मनोग ॥
इक पदमनाम शुभतनुज जान। अरु विष्णकुमार द्वितियमहान ४५
बहुसुखसे तिष्टे धर्म लीन। इस आगे और सुनो प्रवीन ॥
इक पदम नृपतिहै पुन्यवान। लख धारे अंबुजकी समान ॥ ४६ ॥
निज चरनकमलमें लीन सोय। एक दिन चित्त वैराग होय ॥
निजपुत्र पदमके राजदेय। छोटेसुतको निजसाथ लेय ॥ ४७ ॥
श्रतसागरचंद्र मुनीदयाल। परमारथमें निजचित विशाल ॥
तिनको करके नृप नमस्कार। दिक्षा लीनी आनंद धार ॥ ४८ ॥

अवधानविषै तत्परमुनिंद्र। श्रीविश्नुकुमार महा जोगिंद्र ॥
भगवतभावत तपको करंत। उपजी विक्रियसो रिधिमहंत॥४९॥

दोहा।

तिस अंतर नृप पदम अब, दीरघ राज कराय।
हस्तिनागपुर नगरमें, तिष्टे बहु सुख पाय ॥ ५० ॥
बलि आदिक चारों सचिव, पदम रायपै आय।
होत भये मंत्री तहां, अपनी बुद्धि पसाय ॥ ५१ ॥

चौपाई।

एकदिना यह बलप्रधान। रायकाय कृषिलख अधिकाय ॥
कहतभये सुनियेहो देव। कृषितन क्यों सो कहियेभेव ॥५२॥
तब नरेंद्र बोले इमबान। कुंभ नगर सिंहबल राजान॥
दुर्गम गढ़को बल धारंत। मेरो देश उजाड़ करंत ॥५३॥
याते मम चिन्ता अधिकाय। यह विधि कारन कहो सुनाय।
तब राजाकी आज्ञा पाय। बल मंत्री ता ऊपर जाय ॥५४॥
अपनी बुध चतुराई ठान। ततछिन ताको गढ़के मान।
हर बलको बांधो तत्कार। लायो गजपुर नगर मँझार ॥५५॥
पद्मराय पै तबही जाय। कहत भयो लोहर बलराय।
ऐसी सुनकर पदम नरेश। निज तनमें धर हर्ष विशेष ॥५६॥
कहत भयो बलते तेहिवार। धीर बीर बच सुन तू सार।
जो तुमरे चित इच्छा होइ। वर मांगो मैं देहू सोइ ॥ ५७ ॥
बोलो बच सुन नृप गुण गेह। रहै भंडार बचन शुभ येह।
जब मोको कछु पर है काज। लेऊंगो तब मैं महाराज ॥

काव्य

इस अन्तर मुनि सात सतक जिन के संग सोहैं।
नाम अकंपन सूर जगत जनके मन मोहैं ॥

भविजनको उपदेश देत आये हितकारी ।
गजपुर वाह्यउद्यान विषै तिष्ठे जगतारी ॥ ५९ ॥
जब सुनके पुरलोग किये उत्साह अपारा ।
ले सामग्री सार गये बंदन तिहिबारा ॥
जब ये मंत्री चार कियो मनमाहिं बिचारा ।
यह नृप मुनिको दास, एम डर चित बहु धारा ६०॥

दोहा

इम डर मनमें आनकै, चारों कियो बिचार ।
बलने नृप से आयके, बर मांगो तत्कार ॥ ८१ ॥
सप्तदिवस को राज अब, दीजे भूप उदार ।
तुम सतबादी जगत में, बचनकरो प्रतिपार ॥ ६२ ॥
तिन मंत्रिन के बचन कर, ठगो गयो नर राय ।
राजदियो वाही समय, आप महल तिष्ठाय ॥ ६३ ॥

चौपाई

तब ये मूरख मंत्री चार । राज पाय जिय कपट सुधार ।
मुनि गणके मारनको जबै । यज्ञ आरम्भ कियो इन तबै ६४
बाड़ो रोप्यो चारों ओर । तृणको मंडप कियो अघोर ।
तामें बिप्र वेद ध्वनिकरैं । पशु घात बहुविधि विस्तरैं ॥ ६५ ॥
पशू होय करके दुर्गंध । घृत और अग्नि भयो सम्बध ।
ताको धूम उड़ो दुखदाय । जाकर मुनि उपसर्ग लहाय ॥६६॥
झूठीपातल ले मतिहीन । सब जतियन पे चेपन कीन ।
ताकर पीड़ित श्रीमुनिराय । द्वै प्रकार सन्याश धराय ॥ ६७ ॥
कैसे हैं सब वे मुनिचंद । परमातम में धरो अनंद ।
शत्रु मित्र में है सम भाय । अचल मेरु सम निश्चल काय ६८

इस अन्तर अब सुनो बखान । दक्षिण प्रथुरा नगर महान ।
तहँ श्रुतिसागर चंद मुनिंद । अष्ट निमित्त जान गुणवृन्द ६९
तिष्टै थे वे जन सुखकार । कारन एक लखो तिहिबार ।
नभ में श्रवण नक्षत्र महान । कंपत देखो तिन अधिकान ७०
हाय हाय यह कष्ट अपार । मुनिगण पै इस समय मंझार ।
पुष्पदंत क्षुल्लक तहँ एक । मुनिढ़िग तिष्टै सहित विवेक ७१
ताते पूछो तब सिरनाय । कहँ उपसर्ग कौनको थाय ।
तब श्रीगुरु बोले इम बान । गज पुरनगर विषै तू जान ॥७२॥
नाम अकंपन शूर प्रधान । सात सतक मुनिता संग जान ।
तिनको बहु उपसर्ग अवार । फिर श्रावक पूछो कर धार ॥७३॥
अहो देव यह कष्ट अपार । क्योंकर दूर होय तत्कार ।
तब गुरु कहत भये सुन वत्स । भू भूषण पर्वत परतक्ष ७४
तापर विष्णुकुमार जोगिन्द्र । धरैविक्रिया ऋद्धि मुनिंद ॥
तिष्टत हैं तहँ ध्यान लगाय । तिनकर यह उपसर्ग पलाय ७५

दोहा

तबही क्षुल्लक गगन मग, ततछिन कियो पयान ।
विष्णुकुमार मुनिंदने, भाषो सब तिन आन ॥ ७६ ॥
तब स्वामी कहते भये, क्या मुझको है ऋद्ध ।
नाम विक्रिया तासको, उपजी है परसिद्ध ॥ ७७ ॥

सोरठा

लेन परीक्षा जान, भुज फैलाई आपनी ।
सो भू मृतको भानु, सागर तक पहुँचत भई ॥ ७८ ॥
जानत भये तुरंत, मोकूं ऋद्ध उपजत सही ।
धर्म स्नेह धरंत, हस्ति नागपुर में गये ॥७९॥

गीता

तव जायकर नृपपद्म सेती बचन ऐसे उच्चरे ।
हो भ्रात कारज कष्ट दाता कौन तुम ने यह करे ॥
शुभ कुल हमारे में किसी ने आज लों यह नहिं करी ।
ऋषि गणन को उपसर्ग कीजो क्या सु यहचितमें धरी ॥८०॥
जो सृष्टि को पालै सदा अरु दुःख को निग्रह करे ।
वोही नृपति है जगत माहीं जस तिनों को बिस्तरै ॥
जो साधु जन की करै बाधा ते लहैं अति कष्टही ।
जैसे उषण जलते लहै तन जान या बिधि तूसही ॥ ८१ ॥

दोहा

जोलों मुनिगण को अबै, कष्टग होय शरीर ।
तिनतेही तू शांतिकर, मान बचन मो बीर ॥ ८२ ॥

छप्पय

ऐसे बच सुन पद्म नरेश्वर उत्तर दीनो ।
हो मुनि मैं क्या करूं काज यह बलने कीनो ॥
सप्त दिवसको राज दियो मैं बचन बंध है ।
ताते तुम अब करो वेग जाते आनंद है ॥
यासेमें अब क्या कहूं कारज तुमहीं से सरै ।
दैदीप्यमान सूरज उदै दीप प्रभा नहिं विस्तरै ॥८३॥

पधूडी

तव विष्णुकुमार मुनिन्द चंद । विक्रिया ऋद्धि धारै अमन्द ॥
लीनो बावनको रूप धार । बहु बेदध्वनी मुखतें उचार ॥८४॥
जहँ होत यज्ञ अतिही अघोर । अरु ब्राह्मण बहुविधि करत शोर ।
तिहि थानक तिष्ठे आप जाय । सुनकर बलआयो हरषपाय ८५
अरु कहतभयो इम बचनसार । हो विप्र रुचै सो ले अबार ।

वेदांग वेदपाठी जु येह। बालो ब्राह्मण बावन सुदेह ॥ ८६ ॥
हो राजन चित करके उदार। भू तीन पैंड़ दीजे अवार।
बल फेर कहौ सुन विप्र संत। कछु बहुत मांगियो हरषवंत ८७

दोहा

अहो विप्र क्या जांचियो, बलिसे दाता पास।
और कछू मांगौ अबै, ऐसे बहुजन भास ॥ ८८ ॥

सोरठा

समझाये बहुबार, और कछू मांगों नहीं।
तीन पैंड़ सुखकार, धरती दीजे देव अब ॥ ८९ ॥
तब बलि कहो सुनाय, तीन पैंड़ भू लीजिये।
इम कह जलमँगवाय, छोड़ा तबही संकलप ॥

चाल

तब मुनि क्रोधकर एक करंतेभये एक पग लेयं कर मेरुधारो।
दूसरो चरण फिर मानवोत्तर धरो कियो विस्तार नहिं टरे टारो
तीसरी पैंड़की भूमि दे बेग अब आपसुखनाथ वच इम उचारो।
तासमैं त्तोभ त्रैलोक्य माहींभयो और नभ में हुवो च्तोभभारी ९१
सर्व परवतचले सबै बारधिहले भूमिथरहरभई तिसीबारी।
भयो संघट्ट परचंड पाषाण में देव बीमान तब चिगे भारी ॥
जबै सुर असुरगण आवयुतबिस्तरी त्तमाकरनाथ इमअर्जधारी।
तबै बलिरायको बांधतत्त्तिणलियो ल्यायचरननतलेदियोडारी ९२

दोहा।

सबै देव मिलके तबै, पूजा करी अपार।
विष्णुकुमार मुनिने दये, त्तमाकराई सार ॥ ९३ ॥
सात सतक मुनिराजको, दूरकियो तिन कष्ट।
ऐसे विष्णुकुमार ऋषि ऋद्धिधार उत्कृष्ट ॥ ९४ ॥

चौपाई

तवहीं सुनकर पद्म सुराय । आतेवर तज वाहर आय ।
विष्णुकुमार आदि मुनिचंद । तिनके चरण परो गुणवृंद ॥ ९५॥
अरुवेभी चरणों परधान । खोटे अभिप्राय को मान ।
विष्णुकुमार अकंपन शूर । और मुनी जे गुण भरपूर ॥ ९६ ॥
सबके चरनन में सिरनाय । मिथ्या मत तज ज्ञान लहाय ।
जैन धर्ममें तत्पर होय । श्रावक व्रत धारे मदखोय ॥ ९७ ॥
ताही छिन सुरगाए गान । तीन बीन लाये बुधिवान ।
तिनकर पूजे विष्णुकुमार । तीनलोक के आनंदकार ॥९८॥
आचारज अब कहें उचार । और भव्य जे जगत मंझार ।
तेभी वातसल्प गुण गेह । करो जगतमें सहित सनेह ॥ ९९ ॥
मुनि आदिक सबही भव जीव । इनते बतसलकरो सदीव ।
स्वर्ग मोक्षकी आपत दोय । याही गुणकर निश्चय होय १००

अडिल्ल

ऐसे विष्णुकुमार मुनीश्वर जानिये ।
जिन चरनाम्बुज सेव अलि सम मानिये ॥
धर्मरागयुत उद्यमवंत अपार हैं ।
बतसल गुण परकाश भये भव पार हैं ॥ १०१ ॥
सोही विष्णुकुमार मुनीश्वरजी सही ।
हमको भवदधिपार करो विनती यही ।
बात सत्य गुणतनी कथा पूरनभई ।
सुर शिव सुखदातार बखत रतना कही ॥ १०२ ॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोषविषै बिष्णुकुमारमुनिमेवात्सल्य गुणपालालाकीकथा समाप्तः ॥ १२ ॥

—:0:—

वज्रकुमार मुनिके प्रभावनांग गुण

पाला ताकीकथा प्रारम्भः नम्बर १३

मंगलाचरण दोहा

तीन जगत के गुरु प्रभू, परमातम भगवान।
तिनको नमन सुठानके, कहूं कथा इस थान ॥ १॥
परभावन अंगक्क में, कीनों बहु उद्योत।
बज्रकुमार मुनीश ने, तासु सुनत सुख होत ॥ १ ॥

चौपाई

गजपुरनगर महा रमणीक। बलनामा नरपति तहँ नीक॥
ताके प्रोहित गरुड़ सुनाम। चतुर महा बुधको सो धाम ॥ २ ॥
तिसप्रोहित के तनुज महान। सोमदत्त तिस नाम सुजान॥
श्रुतसागरको जाननहार। सज्जनजनको आनन्दकार ॥ ४ ॥
एक दिना अहच्छतपुर जाय। नाम सुभूत मामग्रह आय॥
विनय सहित इमवचन उचार। दयावन्त तुम माम उदार ॥ ५ ॥
दुरमुख नामा नरपतिसार। मुझको दिखलावो तत्कार ॥
तब तिन गर्वधार मन मांहि। राजाको दिखलायो नांहि॥ ६॥
सोमदत्त तब बुद्धि पसाय। गहलेको तब रूप बनाय॥
राजसभामें गयो तुरन्त। दे आशीरवाद बहु भंत ॥ ७ ॥
अपनी विद्या तहां प्रकाश। मंत्रीपद पायो सुखराश॥
याको मंत्रीपद लख तेह। नामसुभूत जुमातुल जेह ॥ ८ ॥
अपनी जगदत्ताजो सुता। परनाई याको गुणजुता॥
एक दिना जगदत्ता नार। ताको गर्भ रहो सुखकार ॥ ९ ॥
ताको भयो दोहलो येह। जो विन सत अब बरसे मेह॥
पक्काफल होवे सहकार। मैं आश्वादन करूं अबार ॥ १०॥

ऐसे याके मनकी जान । सोमदत्त मुनि कियो पयान ॥
जे जगमें साहस धारन्त । बिना काल भी उद्यमवन्त ॥ ११ ॥
ढूंढ़त पाये पुन्य संजोग । मुनि सुमित्र नामा सुमनोग ॥
तरुसहकार तले थिर ठान । तिन अतिशय तरु फलोमहान ।१२।
महन पुरुष जहँ थितको करैं । तहँके तरुभी शोभा धरैं ।
ऐसी अतिशय मुनिकी जान । हरषो सोमदत्त बुधिवान ॥१३॥

दोहा ।

फल इकले सहकार को, भेजो नारी पास ।
तिष्ठो आप मुनीश ढिंग, भक्ति सहित गुरुपास ।१४।
हैं पवित्र त्रिय जग विषे, वे सुमित्र मुनिराय ।
सोमदत्त पूँछत भयो, तिनको सीस नवाय ॥ २५ ॥

काव्य ।

हो मुनि दीनदयाल दयासागर जगतारी ।
तीन भुवन के मांहि कहो क्या है सुखकारी ॥
तुम मुख कमल समान तासतें बचन बखानो ।
सार वस्तु को भेद कहो मम संशय भानो ॥ १६ ॥
तब मुनीश अति दक्ष धर्मको भेद बतायो ।
जो जिन बर जगचंद्र तास बानी में गायो ॥
अहो वत्स सुन भेद धर्मको तुम चितलाई ।
अनागार सागार यही दो विधि सुखदाई ॥ १७ ॥
तिन दोनोंमें प्रथम जती को धर्म बतायो ।
दश प्रकार सो जात सहित रतन त्रिय गायो ॥
दूजो श्रावक भेद कहो पूजा अधिकारी ।
ब्रत प्रोषधि जुत करै शील पालन सुखकारी ॥ १८ ॥
पर उपगार निमित्त तथा कल्याण हेत बर ।

दीनों भेद बताय धर्मको इहि विधि हितकर ॥१९॥
इम सुन सोमसुदत्त तबै मनमें बैरागो।
दीक्षा ले तत्काल निजातम रस को पागो

दोहा।

गुरुकी भक्ति प्रशादतें, पहुंचो आगम पार।
तिष्ठो पर्वत नाभि पै, आतापन तप धार ॥ २० ॥

पद्धडी छन्द

इस अंतर इनकी नार जेह। जगदत्ता नामा जान लेह ॥
तिन पुत्र जनो अति रूपवंत। सुखआकर पूजन जोग संत ॥२१॥
मानो यह श्रेष्ठ सुकाव जान। अथवा विदुषनकी बुध समान॥
इक दिन जगदत्ता ग्रहमंझार। निज नाथ सुनोतुम चरितसार २२
अपने परिवार विषैसुजाय। बहु रुदन कियो तिन दुःख पाय॥
सारेबिरतांत कहो सुनाय। जिस विधि भरता दीक्षा लहाय॥२३।
तबसब परयन इसलारलेह। गिरि नाभि विषै पहुंचो सुतेह ॥
आतापन जोग धरे महान। तब देख नार कहे कोप ठान।२४।

सवैया इकतीसा

रे रे दुष्ट क्यों कियो विवाह-कष्ट देनहार, मेरे साथ तैंने बहु चित्त उमगायके। अब तज दीन मोहे प्रीत करी तप मांहि, तिष्ठो शील धारतू तो चित हरषायके ॥ ताते इस बालक को पाल अब तूही बेग, ऐसे जो कठोर बच भाषे रिसलाय के। खोटो अभिप्राय धारबाल धरो चर्न मांहि, आप निज धाम तब गई दुखपायके ॥

दोहा

सिंह व्याघ्र करबन भरो, तामें शिशुगई डार।
क्रोध धार या जगत में, क्या नहिं कर हैं नार ॥ २६ ॥

ताही औसर के बिषै, बालक पुन्य पसाय ।
कारन एक भयो तहां, सो सुनिये चितलाय ॥ २७ ॥

चौपाई

अमरावती पुरीको ईश । नाम दिवाकर देव खगीश ।
तिसलघु भ्रात पुरन्दरदेव । तासों युद्धभयो बहु भेव ॥ २८ ॥
बड़े भ्रातको लघु तेहिबार । नारी जुततब दियो निकार ॥
कैसोहै लघु भ्राता जान । बुद्धकठोर धरै अधिकान ॥ २९ ॥
अबजो दिवाकर देवखगेन्द । चढ़ बिमानचालो गुणवृन्द ॥
तीरथ जात्राकरन उदार । दुर्गत बेदक सुखकरतार ॥ ३० ॥
नभमें जातहुतो बुधवन्त । पर्वत नाहि लखो दुतिवंत ॥
तापरतिष्ठै श्री मुनिराय । भक्तिसहित खग बंदेआय ॥ ३१ ॥
तहँ सुफरायमान दुतिवान । आननकंज समानमहान ॥
ऐसो बालक मुनिपद पास । पड़ोजो मानो पुनकी रास ॥ ३२ ॥
देखतही खग चितहरषाय । ततछिन ताको लियो उठाय ॥
निज नारीको दियो तुरंत । एहि बालक लीजे दुतिवंत ॥ ३३ ॥
तब नारीने देखो सार । याके करमें बज्र अकार ॥
ताते बज्रकुमार सुनाम । धरके लेयगयो निजधाम ॥ ३४ ॥
देखो माताँतजो अयान । तो पण बालक पुन्यनिधान ॥
विद्याधरकी नारी लाय । याको पालो बहुत लडाय ॥ ३५ ॥

दोहा

अब वह बालक बुद्धवर, अपने गुणकी लार ।
बढ़त भयो आनंद कर, दोयज शशि समसार ॥

अडिल्ल

या अन्तरयक्ष कंकन पुरी को रायजी ।
नाम बिमल बाहन खग बहु सुखदायजी ॥

जो सो दिवाकर देवतनों सालो सही ।
या बालक को माम भयो कुत्तम यही ॥ ३७ ॥
तिसके ढिंग सीखो बहु विद्या जायके।
पार भयो गुणवन्त बुद्ध अति पाय के ॥
सब खगेश इस बालक को लखके तबै ।
अचरज वृन्त महान भये चित में जबै ॥ ३८ ॥

चौपाई

इस अन्तर इकदिन बुधवान। गरुड़ वेग विद्याधर जान ॥
ताके आवंती नरनार । गुणकर पंडित बहु सुकुमार ॥ ३६ ॥
ताके पुत्री रूपनिधान । नाम पवन वेगा दुतिवान ॥
सो श्रीमंत शिखिरपै जाय। विद्या साधेथी सुखदाय ॥ ४० ॥
तिनने ताके नैन मंझार । कंटक उड़कर पड़ो दुखकार ॥
ताकर पीड़त चल चितथई। याते विद्या सिद्ध नभई ॥ ४१ ॥
तवही कन्या पुन्यपसाय। वज्रकुमार कुंवर तहं आय ॥
आकुलता जुत ताहि निहार। दुर्जन समकाढ़ो दुखकार ॥४२॥
भले जतनते चतुर सुजान। काढ़तभयो कुंवर गुणखान ॥
तव वो कन्या बहु सुखपाय। निश्चल चित्त कियो अधिकाय।४३।
मंत्र जोगकर लही तुरंत । विद्या पर गुणी दुतिवंत ॥
कोड़ो सुखकी जोदातार । याको सिद्धि भई तत्कार ॥ ४४ ॥

दोहा

तव कन्या कहती भई, सुनो धीर मम बैन ।
तुम प्रसाद ते में लही, ए विद्या सुख दैन ॥ ४५ ॥

सोरठा

काज सिद्ध एहकीन, याते तुम ममनाथ हो ।
वरूं तोहि परवीन, गुणी होय वा निर्गुणी ॥ ४६ ॥

चौपाई

गरुड़बेग कन्याको तात । बिधि बिवाहकी कर विख्यात ॥
बज्रकुवार कुंवर सुखदाहि । ताको पुत्री दीनी ब्याहि ॥ ४७ ॥
इस अंतरअब बज्रकुमार । विद्या जुतनारी ले लार ॥
सेन्या संगलई बहुभेव । लीनों साब दिवाकर देव ॥ ४८ ॥
अमरावती पुरीमें जाय । कीनो युद्ध महा भयदाय ॥
तत् छिन जीतालियो खगराय । नाम पुरन्दर जो दुखदाय ।४६।
उत्सव कीनों बहु बिधि साज । धर्म तातको दीनों राज ॥
सो यह बात सत्यही मान । भलो पुत्रकुँ दीपक जान ॥५०॥
एक दिना राजाकी नार । मनमें कीनों एम विचार ॥
या होते मेरे सुत कोय । राज लच्छ पावै नाहि सोय ॥५१॥
उपजी कोन ठोर यह बाल । होत भयो हम सिरको साल ॥
श्रीगुरु कहै कष्ट यह थाय । नारनको बुध जड़ अधिकाय५२॥
बज्रकुमार कटुक बच सेह । माताके मुखसे सुनलेह ।
पिता पास सो गयो तुरन्त । कहत भयो यहिबिधि गुणवंत ५७
अहो खगेश्वर मैं किस बाल । याको भेद कहो तत्काल ।
तब खगेन्द्र बोलो मुसकाय । क्या तुम्हरीमत थिर नहिंथाय ५६
जो तुम बोलतहो यह बैन । मेरे चितको बहु दुखदैन ।
ऐसे कहे दिवाकर देव । फिर कुमार बोलो सुनलेव ॥५५॥
सांच बैन भाषो नर इंद । जाते मेरे होय अनंद ।
अरु न कहोगे तुम यह बात । तो भोजन परतिज्ञा तात ५६॥
याको हठ लखके नर राय । सब बृत्तान्त भाषो समझाय ।
ऐसे सुनकर कुँवर सुजान । है विरक्त चित चढ़ो विमान ५७॥

दोहा ।

सोमदत्त इनके पिता जो मुनि दीन दयाल ।
तिनकी बंदन करनको चलो कुँवर तत्काल ॥ ५८ ॥

सवैया इकतीसा

सर्व साथ परिवार लेयके तबै कुमार, मथुरानगर पास पहुँचो हरषायके। तहँ गुफा शुभ नाम चत्रत्रिय मान, जहां तिष्टे हैं मुनिंद ध्यानको लगायके ॥ इंद्र चन्द्रनर बृंद सेवत पदारविंद, करे थुति तिनकी सो सीसको नवाय के। तहँ आयके कुमार देखो तात को निहार, देयपरदक्षणा सुमन हरषायके ॥ २६ ॥

दोहा

बहु प्रकार पूजन करी, भक्तिधार सुख पाय।
नमस्कार करके तबै, बैठे सब समुदाय ॥ ६० ॥
तबै दिवाकर देवने, भाषो सब वृतन्त।
सोमदत्त मुनिके निकट, धर्मराग कर संत ॥ ६१ ॥

पद्धड़ी छंद

तब बोले बजूकुमार येह। भो तात मोह आज्ञा सुदेह ॥
जाकर तप ग्रहण करूं अवार। तब कहै दिवाकर खग उदार ६२
हे पुत्रपाय तेरी सहाय। मुझको तपकरतो जोग थाय।
तुमराज लक्ष मेरी अपार। अब ग्रहनकरो आनंद कार ६३ ॥
इत्यादिक मीठे बैन सार। खगने भाषे बहु युक्त धार।
तोपण कुमार उनको समोध। मुनि होतभयो चितपाय बोध६४
तप कीनो नाना बिधि महंत। बाईस परीषह को सहंत।
अरु कामरूपते हैं करिंद्र। ता जीतन को वे मुनि मृगेंद्र ॥६५॥
श्रीजिनकोमन अम्बुध समान। तिसबिरधकरनको शशिमहान।
यह बिधि तिष्टे गुरुके सुपास। श्रीबजूकुमार सुगुण प्रकास ६६

दोहा

इसअंतर सब भव्यजन, कथा सुनों सुखदाय।
मथुरा नगरी के विषै, पूत गंध नरराय ॥ ६७ ॥

तिस नरपति के नार वर, उर बल्या बड़भाग ।
जिनवर चरण सरोज में, धारै बहु अनुराग ॥ ६८ ॥

चौपाई

सम्यक दृष्टिन में सरताज । जिन पूजनमें पंडितराज ।
एक बरसमें सो त्रिय बार । नंदीश्वर को पर्व संस्कार ॥ ६९ ॥
रथ जात्राको उत्सव करै । अंग प्रभावन चितमें धरै ।
कर इकट्ठो सब संग समुदाय । नितप्रति ऐसी भांत कराय ।७०।
या अन्तर इसही पुरमांहि । सागर दत्त इक बणिक रहाय ॥
ताकेसागर दत्तानार । तिनके पाप उदय अनुसार ॥ ७१ ॥
दुख दरिद्रदाता अघमई । नाम दरिद्रा पुत्री भई ॥
याके उपजतही तिहबार । बन्धुवर्ग नासे तत्कार ॥ ७२ ॥
झूंठपराई कन्या खाय । वृद्धभई सो बहु दुख पाय ॥
जे नर पूजादान न करैं । सो यह बिधि दुखको अनुसरैं ।७३।
तहं नन्दन मुनिराय महान । दूजो अभिनन्दन लघुजान ॥
लेय अहार नगरमें आय । देखी कन्या झूंठ सुखाय ॥ ७४ ॥

दोहा

ताको लख छोटे मुनी, कहत भयो यहिभाय ।
हाय हाय कन्यातु येह, जीवत है दुखपाय ॥ ७५ ॥
ऐसे बच सुनकर तबै, नन्दन ऋषि तप रास ।
ज्ञान नेत्र कहते भये, मधुरे वचन प्रकास ॥ ७६ ॥

काव्य

अहो मुनी तुम सुनो दरिद्रा कन्या यो है ।
पूत गंध नरधीश तनी पटरानी सो है ॥
तहं ही भिक्षा अर्थ धर्म श्री बोध जु आयो ।
तातें मुनि बच सुने, चित्त में निश्चय लायो ॥७७॥

बचन जैन के तीन काल में मिथ्या नाहीं।
इम विचार कन्या को ले गयो ग्रह निज मांही।
बहु विध मिष्ट अहार देयकर पोषन कीनो॥
यह दालिद्रा सेठ सुता तन जोबन लीनो ॥ ७८ ॥

दोहा

ऋतु बसंत पल चैत में, लीला सहित अपार।
झूलै थी बन के विषै, जोवन में मद धार ॥ ७९ ॥
देव जोगते नृपत ने, देखी कन्या आय।
काम अन्ध हो तो भयो, तिसको रूप लखाय॥८०॥

चौपाई।

तबही मंत्रीको बुलवाय। बोधमती ढिग दिये पठाय॥
जाय तिनोंते भाषे बैन। भो बंधक सुनिये सुखदैन ॥ ८१ ॥
तुम्हरी कन्याये सुखदाह। नृपको दीजे वेग बिवाह॥
अरु तू धन आदिक लेसार। सुख भोगे नाना परकार ॥ ८२ ॥
तबै बोध बोलो उमगाय। अहो सुनो तुम चित्तलगाय॥
मेरे मतको अंगीकार। करै नृपति जो चित्त मंझार ॥ ८३ ॥
तो गुण उज्जल कन्या येह। नृपको देहूं निज संदेह॥
तब राजा उसके बचमान। बोध धर्मको कर सरधान ॥ ८४ ॥
दारिद्रा परनी तत्काल। पटरानी कीनी दर हाल॥
कामी काम अग्नि तपताय। क्या क्या पातग नाहिं कराय।८५।
यह दारिद्रा लहि सुखरास। बुधदासी निज नाम प्रकास॥
अरु पटरानी पदको पाय। बोध धर्मसे वे हर्षाय ॥ ८६ ॥
आचारज इम बचन बखान। यह तो बात सत्यकर जान॥
श्री जिन चन्द्रतनो मतसार। पृथ्वी तलमें सुख दातार॥ ८७॥

ताको लघु पुत्री नर जेह। ग्रहन करन समरथ नहिं तेह ॥
जैसे जन्म अंध नरकोय। ताको निधी प्राप्त किम होय ॥

दोहा

या अंतर अष्टान का, आई फागुन मास।
उरवल्या नृप नार तब, धरो चित्त हुल्लास ॥ ८९ ॥

पद्धडी

पूजा विधान बहु विधि सुठान, कंचनमई रथ देदीप्य मान।
जिन जात्राको उद्यम अपार, सो करत भई नृपनार सार। ९०।
वो कैसो रथ जिम मारतंड, देदीप्यमान आभा अखंड।
रेशमके पट नाना प्रकार, बहु शब्द करत घंटे निहार ॥ ९१ ॥
अरु क्षुद्र घंटका करत शोर, तहँ होय रहो आनंदजोर।
नाना प्रकार के रतन सार, रथ माहि जड़े शोभैं अपार ॥ ९२ ॥
भीतर त्रिय चत्र बिराजमान, गंगा तरंग सम चमरजान।
जिन बिंबनकर सोरथ सुनाय, अब गणन्यावें तिनको सुभाय। ९३।
बहु लटकन चहुंदिश फुलमाल, सौरवदसदिस फैलो विशाल।
इत्यादिक शोभायुत अपार, उरविल्या रथ कीनों तयार ॥ ९४ ॥

दोहा।

ऐसो लख ताही समय, बुध दासी रिसधार।
पूत गंध नृपसे तबै, ऐसे बचन उचार ॥ ९५ ॥
हेनरिंद्र या नगर में, बौध तनो रथ जेह।
सो पहले मन थिर करै, ऐसी आज्ञा देह ॥ ९६ ॥

चौपाई।

तसके बच सुनके हरषाय। ऐसेही हो इम कहो राय ॥
मोहअंध प्रानी जगमाह। काज अकाज लखे कुछ नाय ॥ ९७ ॥
जैसे आक गायपै जोय। मूरख अंतर लखे न कोय ॥
वा उरविल्या नृपकी नार। जिन चरणांबुज सेवनहार ॥ ९८ ॥

इम परतिज्ञा तबतिन कीन । मनमें निश्चयकर प्रावीन ॥
पहले मेरो रथ सुपदाय । नगर माहि जो भ्रमण कराय ॥९९॥
तबतो मैं जो लेऊं अहार । नातर त्यागन किये अपार ॥
ऐसे कह पहुंची हरषाय । छत्री नाम गुफा में जाय ॥ १००॥
सोमदत्त मुनिवर जग त्यार । तिनको नमन कियो हितधार ॥
तहँही वज्र कुमार मुनिंद । पूजे रानी धर आनन्द ॥ १ ॥
धर्मस्नेह धार, अधिकाय । बिनय सहित इम बचन सुनाय ॥
भो मुनिंद्र श्रीजिन सुखकार । तास धर्म सागर उनहार ॥२॥
तास बढ़ावन चंद्र समान । मिथ्यामत नाशनको भान ॥
याते तुमरी सरन महान । लीनी अब मैं निश्चय आन ॥ ३ ॥
भक्तिसहित इम स्तुति ठान । अपना सब बिरतंत बखान ॥
श्रीमुनि चरणनके ढिगसार । जबलों तिष्ठतहै एहनार ॥ ४ ॥
इतने याके पुन्य पसाय । मुनि दोनों पूजन खग आय ॥
नाम दिवाकर देव महान । खगचर बहुत तास संगजान ॥५॥
तिनते वज्रकुमार मुनिंद । कहत भए ऐसे बुध ब्रंद ॥
भो सबखग सुनिये चित्त लाय । धर्म नेह धारक तुमराय ॥६॥
यह रानी उरबल्या जान । सम्यक् दृष्टि सिरोमणि मान ॥
तिसकी रथ यात्रा सुखकार । करवावो तुम नगर मंझार ॥ ७॥

दोहा ।

इम सुनके खग गण सबै, श्री मुनिको सिरनाय ।
पहुँचे मथुरा नगरमें, शीघ्र सबै हरषाय ॥ ८ ॥

काव्य ।

प्रथम जैनके धर्म विषै तत्पर खग सारे ।
दूजे गुरु के बैन तिन्हों ने चित में धारे ॥
क्रोध धार चित्त मांहि बुद्धिदासी रत नासो ।
उत्सव कर संयुक्त जैन को रथ परकासो ॥९॥

धर्मलीन नृप नार नाम उरबिल्या जानो ।
रथ यात्रा तिन करी हर्ष जियमें तिन आनो ॥
बंद्य बंद्य इम शब्द करत भये जन मिल सारे ।
दसों दिशाके मांहि बजत बाजे अधिकारे ॥ १० ॥
चारन स्तुति करैं बृद्ध भासें अधिकाई ।
जय जय कार महान भयो नगरी के मांहीं ॥
रथ ऊपर जन करत पुष्प बरषा अधिकारी ।
नृत्य बिनोद उछाह होत नाना परकारी ॥ ११ ॥
श्रीजिनके गुण गान करत कामन तिहबारी ।
सुनते जन मन हरष बहुत उरधारैं भारी ॥
नाना विध को दान जबै बांटत पथमांही ।
सम्यक् दृष्टी भए जीव केते तिहठांही ॥ १२ ॥
श्रीजिन बिम्ब बिराजमान दैदीप्य मानवर ।
सर्व संघकर सहित मनोरथ पूरालिए उर ॥
साज सहित रथ नगर बिषै चालो अधिकारी ।
उरबिल्या नृप नार तबै चित्त साता धारी ॥१३॥

दोहा

बहरथ सब भवि जननको, भयो जो सुखदातार ।
ताके बरणन करनको, को या जगत मंझार ॥ १४ ॥

पद्धड़ी

इस अंतर नृपको पूतगंध । बुधदासी के युत बौद्धबृंद ॥
ते रथ जात्रातिनकी निहार । जिनधर्म प्रभाव लखो अपार ॥१५॥
मिथ्या तब कीनों मनतुरंत । भए जैनधर्म रति सर्वसंत ॥
अब बज्रकुमार मुनिदयाल । करवाई परभावन रिसाल ॥१६॥
अरु और भव्यजे जग मंझार । ते करो प्रभावन अंगसार ॥
सो स्वर्ग मोक्षके दैनहार । हितदाताहै त्रय जग मंझार ॥१७॥

किह विधि प्रभावना अंग होय। श्रीजिन भाषो सो सुनो लोय।
नानाप्रकार तीरथ महान। तिन जात्राकीनी हरष ठान ॥१८॥
करवावै श्रीजिन बिम्बसार। अरु करै प्रतिष्ठा भावधार।
जिनमत को उद्योतन करंत। यह विधि प्रभावना अंग महंत १९
वर बुद्धि सहित जे धर्म लीन। सोई सम्यकयुत नर प्रवीन।
सोई सुर शिवको सुख लहाय। त्रय जगत पूज्य वोही कहाय २०
वो वज्रकुमार मुनिंदचंद। भवि जीवनको आनंद कंद।
सोई हमको दे बुद्धि यार। नित लीनकरो जिनमत मँझार २१॥

कवित्त

शोभितहै श्रीमूल संगमें गंवभारती तिनको जान। भट्टारक गुरु मल्ल सुभूषण तिनके गुणको करै बखान ॥ बुद्धिवान बानी के वारिध सम्यक दर्शन चारित्र ज्ञान। सोई निर्मल रतन अनूपम तिनकी आकार हैं दुतिवान ॥ २२ ॥

दोहा

ऐसे गुरुकी भक्तिमें, अतिशय कर चितलाय।
हमको मंगल श्रेष्ठ अब, दीजे निज सुखदाय ॥ २३ ॥

सोरठा

कथा तेरमीसार, पूरन यह कीनी सही।
संस्कृतके अनुसार, बखतावर अरु रतनने ॥ २४ ॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोषविषे भट्टारकश्रीमल्लभूषण तत्शिष्य ब्रह्मनेमीदत्तविरचितायां वज्रकुमारमुनि प्रभावनां अंग करो ताकी कथा सम्पूर्णम्

श्रीनागदत्त मुनिकीकथा प्रारम्भः १४

मङ्गलाचरण दोहा।

पंचपरम गुरु हैं सही, पंचमगति के स्वाम।
नागदत्त मुनिकी कथा, भापूं कर परणाम ॥ १५ ॥

चौपई

एही मागध देश सुद्वार। राजग्रही नगरी तहँ सार।
प्रजापाल नरपति तिह थान। परजापालन करै महान ॥ २ ॥
न्यायशास्त्र को जानन हार। धरमात्मा जिन भक्त अपार।
ताके ग्रह नारी गुणवंत। प्रिय धर्मा बर रूप धरंत ॥ ३ ॥
चितप्रसन्न कर धर अनुराग। पूजा दान करै बड़भाग।
जुगसुततिनके भए विख्यात। प्रियेधर्म प्रियेमित्र कहात ॥४॥
जैन धर्मके जाननहार। गुण उज्जल यह धरै कुमार।
एकदिना यह दोनों बीर। मनमें राग विचारो धीर ॥ ५ ॥
श्रीजिनवरकी दीचा धार। तप कीनो नाना परकार।
तन तज अच्चुत स्वर्ग सुजाय। बहुप्रकार तहँ रिद्धि लहाय ६
पहलोभव तहँ करके याद। जिनमत धारो कर अहलाद।
भगवतभक्ति मांहिं चित दीन। दोनों सुर तिष्ठे सुखलीन ॥७॥
धर्मराग धर त्रदश महान। आपुस में परतिज्ञा ठान।
जो पहले निरजर तजकाय, मध्यलोक में उपजे जाय ॥ ८ ॥
ताको स्वर्ग विषै जो देव। संबोधे करके बहुभेव।
दिच्छा दिलवावे तत्काल। थापे शिव मग जग अघटाल ॥९॥
इस अंतर अब सुनो बखान। उज्जैनी नगरी में जान।
नागधर्म नरपति बड़भाग। धर्म विषै धारे अनुराग ॥ १० ॥

गीता छंद

ताके अनूपम नाग दत्ता नार ग्रह मध जानिये।
शुभ रूप लावन अधिक तनमें पुन्यवान प्रमानिये ॥

तिनके सुरग ते आनकर प्रियमित्रको चरसुत भयो।
तिस नागदत्त सुनामधारो बुध सदन विधना ठयो ॥ ११ ॥

दोहा

अहकर क्रीड़ा करन मैं, महा चतुर सुकुमार।
गारुड़ विद्यासीखियो सो, नानापरकार ॥ १२ ॥

पद्धडी

इक दिन प्रिये धर्मतनो जो जीव। तिष्ट अच्चुतमें अवस दीव।
ताने भ्राताको जानभेव। संबोधनको आयो स्वमेव ॥ १३ ॥
गारुड़को रूप करो तुरंत। युग अह लीने तिनजहरवंत।
ताको करंडमें धार लीन। उज्जैनी में परवेश कीन ॥ ७४ ॥
तब नागदत्त के पास जाय। सो कहतभयो निज बचसुनाय।
तू बड़ो चतुर क्रीड़ा मंझार। मैं यह सुन आयो हूं अबार १५॥
तब राजपुत्र बहु गर्भधार। निज बचन भने ऐसे पुकार।
जो मणधर तुझ ढिग जहरवंत। सो मो आगे छोड़ो तुरंत १६
तासों क्रीड़ा करहूं अबार। तब गारुड़ बच ऐसे उचार।
मैं बादकरूं नहिं आप सात। तुमराजपुत्रहो जग विख्यात १७

दोहा

पिता तुम्हारो जो सुनै, करै रोस अधिकान।
पकड़ मंगावे वेगही, हरै जो मेरे प्रान ॥ १८ ॥
ऐसे सुनके नागदत्त, ताको ले निज संग।
पिता पास दिलवाइयो, अभय दान भय भंग ॥१६॥

चौपाई

तबही एकसर्प तिह ठौर। तासों क्रीड़ा कीना जोर ॥
ताको सब मद दियो उड़ाय। अहिको पकड़ कंवर हरषाय।२०।
फिरयह कँवर कहै सुनलेय। दूजो नाग छोड़ अबदेय ॥
तब वह कहत भयोहो देव। इस अहिको तुम लहो न भेव।२१।

बड़ो दुष्टहै यह दुखदान । देव जोगते हनै जो प्रान ॥
तो इसकी भेषज नहिकोय । यह निश्चयकर जानोसोय ॥ २२ ॥
नागदत्त तबरोस कराय । कहतभयो तू सुन चितलाय ॥
तेरोसर्प बिचारो दीन । मेरो कहाकरै विप लीन ॥ २३ ॥
मंत्र तंत्रमें जाननहार । गारुड़ विद्याधरूं अपार ॥
ऐसे सुनकर गारुड़तबै । राजादिक साखी कर सबै ॥ २४ ॥
छोड़ो नाग तबै विकराल । कंवर डसो ताने तत्काल ॥
ताही छिन विषके परभाव । पड़ो सोभूंपर मूर्छा खाय ॥ २५ ॥
जैसे मोह अंधहो जीव । भव अम्बुधमें पड़े सदीव ॥
तब नरेश मनमें दुखपाय । मंत्रवादियों को बुलवाय ॥ २६ ॥

दोहा

वह यह बिध कहते भए, सुन अवनी के राय ।
काल सर्प कर यह डसो, याको नाहि उपाय ॥

चौपाई

तब नरिंदमन होयउदास । उसगारुड़ प्रति बचन प्रकास ॥
जो तू याको करै सचेत । आधो राज लेय सुखहेत ॥ २८ ॥
ऐसे कह निजपुत्र उठाय । गारुड़को सौंपो नरराय ॥
तब गारुड़ इम कहो पुकार । काल सर्पकर डसो कुमार ॥२९॥
जो कदाचजीबे तुम बाल । जिनदिक्षा लेवे तत्काल ॥
तोमें करूं इलाज अवार । येही भेषज इसकी सार ॥ ३० ॥
तब राजा मनधर हुल्लास । गारुड़ प्रति इस बचन प्रकास ॥
ऐसेही हो आज्ञादीन । तब निजसर्प ज़हर हर लीन ॥ ३१ ॥
नागदत्तको कियो सचेत । उठो तबै यह हर्ष समेत ॥
जैसे जगमें जीव अयान । मिथ्या विषकीनो जिनपान ॥३२॥
तिनको श्रीगुरु करै सचेत । दे उपदेश तिन्हे सुखहेत ॥
तैसे इस सुरने उपकार । कीनो नागदत्तकी लार ॥ ३३ ॥

छप्पय छंद

तिस पीछे इह नागदत्त चित्त में हरषानो।
राजादिक ते सब व्रतांत निश्चयकर जानो॥
पर फुल्लित धीमान प्रतिज्ञा पालन कीनी॥
दमधर मुनि ने चरन कमलकी सरन जो लीनी॥
भक्तिहिये में धारकर, भगवत दीक्षा आदरी।
जासों सुरिंद्र पूजैं सदा, सोई विधि याने धरी॥ ३४॥

दोहा

तब वह देव सु प्रकट है, प्रिय धर्मचर सोय।
सब व्रतांत कह नमन कर, गयो सो हर्षित होय॥ ३५॥

पद्धडी

तिसपीछे तब मुनि नागदत्त। वैरागयुक्त चितवैं सुतत्व॥
निर्मल आचरणगहो अत्यंत। जिनकलपी साधु भयो महंत।३६।
श्रीजिनवर चंद्र तने सुत्तेत्र। ताकी जात्रा करते पवित्र॥
बहु चितमें भगवत भक्तिठान। बिहरत अवनीमें हर्षमान।३७।
एहमुनि सत्तम करते बिहार। इकदिन आए अटवीमंझार॥
सोमहा बिकट संयुक्तथान। तहं सूरदत्त इकचोर जान॥३८॥
बहु तस्करजाके संगबीच। खोटी बुधधारे कर्म नीच॥
मारगको रोककरै जुवात। इहमुनि हमको करहै बिख्यात।३९।
ऐसे डरकर वह चित्तमांहि। मुनि पकड़ किए अतिभय जोखांहि॥
तब सूरदत्त सबको हटाय। उन चोरनते इमबच कहाय॥४०॥

छंद चाल

यह उत्तम चारित्र धारी, प्रभु बीतराग अनगारी। है बुद्धि-वान अधिकाई, देखतभी नाहि लखाई॥४१॥ काहूसे कुछ नहिं भाषै। निज धीर बीर मन राखै॥ इनको तुम छोड़ो भाई। भय करो नहीं दुखदाई।४२॥ तस्कर सुन के यह बानी। तबहीं

मुनि ज्ञानी ॥ तहँते रिषीगमन कराही । आवेंथे पथके मांही ४३
इस अंतर इनकी माता । है नागदत्त विख्याता । नागश्रीपुत्री
लारी । संगहै विभूति अधिकारी ॥४४॥ सो वत्सदेसके माहीं ।
कोसांबी नगरी कहाही ॥ तामध नरनायक जानो । जिन पाल
नाम बुधिवानो ॥४५॥ ताको सुत जिनदत्त जो है । जिन धर्म
विपय रतिसोहे ॥ ताके संग भई सगाई। नाग श्रीकी सुखदाई४६
दो०—ताको एहपर भाववंत, ले निज पुत्री लार ।
सज्जन जनकर सहित जो, जावें थी तिहबार ॥ ४१ ॥

चौपाई ।

पथमें मुनिको मात निहार । नमन कियो चित हर्षसुधार ॥
कहत भई हम आगे जाह । मारग निर्मलहै अकनाह ॥४८॥
तब मुनि मोह जई वड़भाग । सत्रु मित्रपे रोष नराग ॥
महा चरित्रको धारन हार । मौनलीन तब कियो विहार ॥४९॥
नागदत्ता तब आगे गई । सब चोरोंने पकड़ सो लई ॥
वहुधन लूट लियो तस्कार । अर कन्याकोभी लेलार ॥ ५० ॥
सूरदत्तको सौंपत भए । तब तिनने ऐसे बच लये ॥
देखो तुम सबही परधान । वे मुनि उदासीन अधिकान ॥५१॥
निस्प्रेही अतिही गम्भीर । जैन तत्व जाने बरवीर ॥
इन सबने उनसे पूछाय । तौ भी भेद न दियो बताय ॥ ५२ ॥
ऐसे बच सुन मुनिकी माय । सूरदत्त प्रतिएम कहाय ॥
एक छुरी अति तीच्छरा देह । ताकर कूख विदारूं एह ॥५३॥
जामेंमैं राखो नव मास । यह कुपुत्र मुनि दुखकी रास ।
मोह रहित चित मांहि कठोर । यूं नकहा आगेहैं चोर ॥५४॥
ऐसे वच तब याने भास । सूरदत्त सुन भयो उदास ॥
कहत भयो ऐसे विख्यात । तू मुनि मात सो मेरी मात ॥५५॥
इमवच कहसब धन तिसदीन । कन्याभी दे नमन करीन ॥

करी बिदा सो ताही बार। अपने मन वैराग जु धार ॥५६॥
सब चोरनको जो यह राय। नागदत्त मुनिके ढिग जाय॥
चरण कमलको नयो तुरंत। स्तुति मुखते बहुत चयंत॥ ५७॥
तिन ढिग दिच्छा ले तत्कार। तपकीनों नाना परकार॥
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित्र। तिनको पालन करैं सुनित्त॥५८॥

छप्पय छंद

घातकर्मको नाश कियो तबही मुनि नायक।
लोकालोक प्रकाश ज्ञानपायो सुखदायक॥
देव इंद्र नागेंद्र चंद्रकर पूजत सोई।
दे उपदेश महान बहुत न्यारे भवलोई॥
फेर अघाती नाशकर, शिव नगरी छिनमें लही।
श्रीसूरदत्त मुनिराजजी, निज अवास दीजे सही ५९॥

सवैया इकतीसा—सूरदत्त नागदत्त दोनों मुनिराज मोह, सांत अर्थ होय कल्याण शुभ ठानिये। गुणके समुद्रसार लोकालोक को निहार सर्वदेव इंद्रकर बंदनीक जानिये॥ तीन जग जीवन के नेत्र जो कमोद भए तिन विकसावनको मृग अंक मानिये। कहै करजोर बख्त हूजिये दयाल मोपै सुख विस्तारकर सर्वकर्म भानिये॥ ६०॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषै नागदत्त मुनिकीकथा समाप्तम्

कुसंगतदोषमें शिवभूतकी कथा १५

मंगलाचरण सोरठा

सर्व जीव हितदाय, श्री सर्वज्ञ महंत हैं।
बंदू सीसनिवाय, ताप्रशाद बरनूं कथा॥ १॥
खोटो संग दुखकार, तास दोष बखान करूं।
कीनों निज दुख धार, सुनो भव्य चितलाय के॥२॥

चौपाई

वत्स देश कोशांबी पुरी। कोट खातिकर सहित सोखरी।
तामें नृप सोहै वनपाल। दुष्ट जनन को दीखत काल ॥३॥
ताके प्रोहित है शिव भूत। चारवेद विद्या संयूत।
सब विप्रनमें है परधान। राजा बहुत करै सन्मान ॥ ४ ॥
तिसही नगर विषै धनवान। पूरण चंद्रकलाल बखान।
नारी मणिभद्र का नाम। पुत्र सुमित्र तासुके धाम ॥५॥
एक दिना यह पूरण चंद। पुत्र बिवाह रचो सुखबंद।
बहुजनको भोजन करवाय। फिर शिवभूत विप्रबुलवाय ॥६॥
भोजन है तैयार इमकही। तबइनकहो शूद्र तू सही।
तब ऐसे बोलो कल्लाल। हो गुणवान सुनो गुणपाल ॥७॥
बहु बिप्रनने बनमें जाय। सामग्री राखी अधिकाय।
ताको भोजन करो तुरंत। यामें दोष कछू न लहंत ॥८॥
याको हट शिवभूत लखाय। आरे करलीनी सतभाय।
बिनय युक्त जो देवै दान। मानलेय सोई परधान ॥ ८ ॥
दोहा—तब पूरन चंद बन विषै, गयो महा हरषाय।
बिप्र हाथ खट रस सहित, भोज ताहि जिमाय ॥ १० ॥
उस कलालको कुटुम सब, एक तरफ तिष्टंत।
दुतिय तरफ शिव भूत जो, पैमिश्री पीवंत ॥ ११ ॥

पद्धडी

कितने इकजन नृप पास जाय। शिवभूत चरित्रकहो सुनाय॥
हमदेखो अपनी दृष्टिजोय। माधिरापीवत शिवभूत सोय ॥१२॥
ऐसी सुनकर तत्काल राय। शिवभूत विप्र लीनों बुलाय॥
पूछनकीनी तासों नरेश। सो नटतभयो जानूं नलेश ॥ १३ ॥
नृप लेन परीक्षाके निमित। करवाई बमन तबै तुरंत॥
तामाहींते दुर्गंध आय। नरधीश तबै निश्चय कराय ॥ १४ ॥

सो क्रोधधार अतिही प्रचंड । निष्ठुरवच भाषदियो जोदंड॥
फिर कष्टदेय मनकर विचार । निजदेश थकी दीनों निकार ।१५।
खोटी संगतकर दुष्ट एह । ततछिन पायो शिवभूत तेह ॥
ता ते खोटा संगजग मंझार। है निंदनीक देखो बिचार ॥ १६ ॥
जे बुद्धिवान पंडितमहंत । ऐसो लख तज दीजे तुरंत ॥
सज्जन जनकी संगत महान। ताको कीजे आदरसुठान ॥१७॥
दोहा-जे श्री जिनवर चंद के, चरन कमल रसलीन।
खोटी संगत तज करो, साधु संग परवीन ॥ १८ ॥
सोई संगत जग विषै, माननीय है सार ॥
ऊंचो पद तातें लहै, धन धान्यादि अपार ॥ १९ ॥
सोई संगत साधु की, दीजे मंगल मोह ।
तातें सुख की प्राप्ति है, नाशे दुख अरुद्रोह ॥ २० ॥
इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय कुसगत दोष शिवभूत कथा समाप्तः

अथ बुद्धिबर्धनी कथा प्रारम्भनं० १६

मंगलाचरण । अडिल्ल

श्रीअरिहंतजिनेश्वरकोसिरनायके। बुद्धवर्धनी कथा कहूं हरषायके
जैसीबालकनै देखीतैसी कही।ताको वरननसुनो भव्याचित देसही
चालछंद-कोसांवी नगरी जानो,जयपाल विचत्तण रानो ।
तहं धर्मलीन अधिकाई, सागर दत्त सेठ रहाई ॥ २ ॥
सागरदत्ता तिसनारी; युग प्रीतिधरै अति भारी ॥
तिनके सुत रूप निधानो, बारधदत्त नाम बखानो ।३।
तिसही नगरी के मांही, गोपायन वनक रहांही ॥
तिसपाप उदय अधिकाई, दारिद्र धरै अधिकाई ॥४॥
खोटी बुध धरै अयानो, सो सप्त विषनरति जानो ।
तिनके है सोमा भामा, सोमक सुत ताके धामा ॥५॥

दोहा

समुद्र दत्तजो सेठ सुत, अर सोमक मिल दोय ।
रेत विषय क्रीड़ा करें, बहु बिध हर्षित होय ॥ ६ ॥

चौपाई

एकदिन धनके लोभपसाय । पापी गोपायन अधिकाय ॥
समुद्र दत्त बालक जोथाय । भूषणाकर शोभित बहुभाय । ७ ।
ताके भुषण सर्व उतार । बालकको मारो तत्कार ॥
अपने सुतके देखत लाय । घरमें गढ़ो खोद गड़वाय ॥ ८ ॥
तबही सागर दत्त तिस तात । अरु सागर दत्ताजो मात ॥
सब कुटंब मिलके तिहबार । बहु बिलाप कीनो दुखकार । ६ ।
सारे ढूंढ फिरे अधिकाय । कहीं न पाई ताकी साय ॥
ऐसे पुन्यहीन नरजोय । ताको सुख प्रापति किम होय ॥१०॥
तिसपीछे बालक की माय । सोमक शिशु से पूछो आय ।
अरे समुद्रदत्ता किह थाय । जहँ देखो तहँ देय बतान ॥ ११ ॥

दोहा

तब तिन बालक भावते, सांच बैन कहदीन ।
गड़ो हमारे घर बिशे, गढ़ो माहिं दुखलीन ॥
बालक क्या जाने सही, भले बुरेकी बात ।
जैसे की तैसेकहै यह सुभाव शिशु जान ॥ १३ ॥

सोरठा

पापी पाप छिपाय, करै सुचित हरषायकै ।
तौभी प्रगट ह्वै जाय, कोड़ दुःख दाता सही ॥ १४ ॥

पद्धडी

तब सागर दत्ता सेठनार । निज बालकको मृतक निहार ।
अपने पतिके तब पास जाय । दुख्यदायनि बात कही सुनाय १५

जब सेठ जाय जमदंड पास । सब बातकही तासों प्रकास ।
उसने नरपति सेती बखान । सुनके नरिंद्र कोपो महान ॥ १६ ॥
गोपायन बुलवायो नरेश । ताको निग्रह कीनो विशेश ॥
यह जान भव्य तितपापत्याग । दुखिदाता लखकरतजो राग ।१७।
सुखदाय श्री निज धर्मसार। ताको सेवो अनुराग धार ॥
इम आचारज भाषे महान । तुम निश्चयकरजानो सुजान ॥१८॥

दोहा

इतने जन जाने नहीं, हित अनहित क्या होय ।
ताको बरणन करतहूं, सुनो सबे भव लोय ॥

चौपाई

बालक और विकल नरजान। कामातुर फुनि जोवनवान ॥
तथारोगकर पीड़ित जोय। बहु कुटम्ब कर दूखित होय ॥ २० ॥
इत्यादिक जब जानो सही। ऐसे श्री जिनवर बरनई ॥
अरजेथिर चित धारणहार । प्रभुको धर्म गहो सुखकार ॥ २१ ॥
तेहित अनहितको जानंत, यह विधि भाषो श्री अरिहंत।
कथा सोलमी यह बरनई, जिम बालक देखी तिमकही ॥२२

इति श्री आराधना सार कथा कोष विषे जिनपरिपतिमवदति कथा सम्पूर्णम्

श्री धनदत्त नरेश्वरकी कथा नं० १७

मंगलाचरण । सवैया तेईसा

श्री मत देव जिनेन्द्र नमूं तिन पूजन इंद्रन के गुण सारे।
लोक अलोक प्रकाश करो जिन सिद्ध भए सब कर्म प्रजारे॥
तास प्रसाद कथाबरनूं धनदत्त नरेश्वर की हितधारे ।
भव्यन के समुदाय सुनो सुख होय सबै अघजाय निवारे ॥१॥

चौपाई।

अंध्रदेश जगमें विख्यात। ध्यान कनकपुरनगर सुहात॥
ताको धनदत्त नृपचड़ भाग। सम्यक् दृष्टी जिनमतराग॥ २॥
बोधमती मंत्री मत हीन। संघश्री मिथ्या मति लीन॥
धर्म कर्ममें तत्पर राय। ताजुतराज करै सुख दाय॥ ३॥
एकेदिन धनदत्त नरिंद्र। महल सिखर तिष्ठे गुणवृन्द॥
संघश्री मंत्री ढिगजान। क्रीडामात्र मंत्र कछु ठान॥ ४॥
तव मध्यान समै नरराय। अंबरमें जुगमुनि सुखदाय॥
देखे चमतकार युतसोय। मनमें अति आनंदित होय॥ ५॥
धरअनुराग उठे तत्काल। दोकर जोड़ नवायो भाल॥
आदरकर निजमहल मझार। लायो जुगमुनिको तिहवार॥ ६॥
साधोकी संगत सुखदाय। सत्पुरुषनको सदा सुहाय॥
नृपतव पूछो सीसनवाय। धर्म स्वरूप कहो मुनिराय॥ ७॥

दोहा।

तव श्रीगुरु जिन धर्मको, कीनों विविध बखान।
सुन संघश्री बोध मत, लायो चित श्रद्धान॥ ८॥
कर श्रावक इस बोधको, वे मुनि दीन दयाल।
गुण मंडित अम्बर बिषै, जात भए तत्काल॥ ९॥

छप्पै।

पहले मिथ्या मोह ग्रसित मंत्री जो थाई।
बुधश्री तिसका नाम कुगुरुथो दुरगति दाई॥
जावै थो तिस पास एक दिनमें त्रियबारी।
करतो बंदन सदा हर्ष चित मैं बहु धारी॥
सो अब ता ढिग बंदना, करनेको नाही गयो।
बुद्धश्री बंधक तवै, ताको बुलवावत भयो॥ १०॥

चौपाई ॥

तानेनमन करो नहिं आन। तब बंधकइम बचन बखान॥
रेतूने मोकूं इहघरी। नमस्कार क्यों नाहीं करी॥ ११॥
तब मंत्रीने सबै चरित्र। मुनिवर को भाखियो पवित्र॥
पल भक्षी बंधक बुध हीन। ऐसे बचन कहे सुमलीन॥१२॥
हाय हाय तू ठगयो बीर। को चारन कहँहै कहो धीर॥
निरआश्रय एहहै आकास। तामधगमन होय किमभास॥१३॥
कपटखान तेरोनरराय। इंद्र जाल तोहि भांति दिखाय॥
सो तू बोध भक्त परवीन। तू मति हो जिन मतमें लीन॥१४॥
ऐसे मिथ्याकर दुःखंत। मने कियो याको बहु भंत॥
अरु तू मत जायो चित धार। प्रातकाल नृप सभामंझार॥१५॥
जो कदाचिभी जानो होय। सभा विषै इम कहिये सोय॥
मैंने मुनि देखे नहिं कोय। ऐसे थे किसने अवलोय॥ १६॥
ऐसे बोधगुरुके बैन। सुन संघश्री तज मन जैन॥
बंधकमतकी श्रद्धा करी। श्रावक ब्रत छोड़े तिह घड़ी॥१७॥

दोहा।

पाप करावै और से, आप करै अधिकार।
ते नर अगन समान हैं, आप जरैं परजार॥ १८॥
सम्यक दृष्टि शिरोमणी, धनदत्त नृप बुधिवान।
प्रातकाल निज सभामें, धर्म राग चित आन॥१९॥
सामंतादिक भव्य जन, तिनके आगे राय।
चारन मुनि देखे हुते, तिनकी कथा कहाय॥ २०॥

छप्पय।

साक्षि हेत मंत्री बुलवायो तब नरनायक।
तासों कहे सुनाय आप निज मुखतें बायक।

कल हम तुम जुगचारन मुनिके दरशन पाए।
सो कैसे थे कहो अब जिह भांत लखाए॥
तब निंदक बंदकमती, कहत भयो सुन रायजी।
चारन मुनि किम होत हैं, मैंने नांहि लखायजी॥२१॥

पद्धड़ी

ताहीछिन मंत्री अतिमलीन, एहवच भाषित बहु दुःख लीन।
महापाप उदय आयो प्रचंड। युगनैत्र तने भये खंड खंड॥२२॥
जिन धर्म जगतमें मारतंड। सब जनको सुख दाता अखंड॥
एक पापी धूधू दुखपात। ताको सुभाव एही विख्यात॥ २३॥
ऐसो कारन लखके तुरंत। नृप आदिकजन सब धर्मवंत॥
जिनमतकी सरधाकर अपार। श्रावकव्रत धारे चित मझार॥२४॥

काव्य।

देव इंद्र नागेंद्र चंद्रकर पूजा जिन मत।
ताकी सरधा करो तासते ह्वै सुर शिवगत॥
कुबुध भ्रांत को त्याग चाह जो सुख निधकेरी।
निरमल धी निज करो मिटे तातें भवफेरी॥ २५॥

इतिश्रीआरधनासारकथाकोषविषै धनदत्तनृपतिकीकथासम्पूर्णम्।



श्रीब्रह्मदत्त चक्रेश्वरकी कथा नं० १८

(मंगलाचरण कवित)

तीन जगतकर पूजत जिनवर तिनकी भक्ति करूं अधिकाय।
जिनके चरणकमलमें नमहूं शुद्धकिये निज मन बच काय॥
सत्पुरुषन सम्बोधनकारन, अब चरित्र भाषूं उमगाय।
ब्रह्मदत्त बारमचक्रेश्वर तिनकी कथा कहूं चितलाय॥ १॥

चौपाई

कम्पल्या नगरी एहजान । ब्रह्मसुरथ राजा धीमान ॥
ताके प्राणवल्लभा थाय । नाम रामला है सुखदाय ॥ २ ॥
रूप गुणनकर मंडित भली। तालख नृप मन धारत रली ॥
तिन दोनोंके पुन्य पसाय । ब्रह्मदत्त सुत उपजो आय ॥ ३ ॥
द्वादश मोसेंहै चक्रीश । छहो खंड पालक अवनीश ॥
सो तिष्ठत है अपने धाम । सुखसे बीतत हैं वसुजाम ॥ ४ ॥
एके दिना रसोईदार । विजै सैन तिसनाम निहार ॥
चक्रवर्तिके जीमन बार । खीर परोसी उश्न अपार ॥ ५ ॥

सवैया इकतीसा

सोई खीर खावने को समरथ भयो नाहि, चक्रवर्ति कोप अंध भयो अधिकाई है । मनमें कुबुधिधार करमांहि लेयथार, उश्न खीर युत उस सीसपे बगाई है ॥ भयो दुखलीन सोय तन तिसदाभ्क गयो, ततछिन माह मौत पाई दुखदाई है ॥ खारड़ी समुद्र बीच दीरघ रतन दीप, तहां परयाय तिन व्यंतर की पाई है ॥ ६ ॥

सोरठा

कोड़ो दुख दातार, क्रोध जगत में जनन को ।
तातें है धिक्कार, भव्य जीव त्यागो सदा ॥ ७ ॥

चौपाई

तब वह जीव रसोईदार । व्यंतर ऋधिपाई अधिकार ॥
अवध विभंगा धर कर सोय । पूर्व चरित्र सबै अवलोय ॥ ८ ॥
महाक्रोधकर कम्पित होय । पूरबबैर सबै तिन जोय ।
दंडी रूपधरो रिस ठान । मीठे फल लीने रसवान ॥ ९ ॥
शीघ्र जाय चक्रीके पास । फलदीने धर चित हुल्लास ।
सरना लंपट अवनीपाल । खायो फल तन भयो खुशाल १० ॥

दोहा

चक्रवर्ति तब पूछियो, हे परिव्राज महान ।
बहुत मनोहर फल विमल, एह उपजत किस थान ।११।

छप्पय

तब दंडी इमकहो सुनो अब हे नर नायक ।
सागरके मध जान हमारो मठ सुख दायक ॥
ताके निकट महान बाग इकशीरघ जानो ।
तामें फल बहु लसैं इसी बिध के तुम मानो ॥
ताके बच सुन चक्र धर, चलने कीइच्छाकरी ।
जे रसना लंपट पुरुष हैं, जानत नाहिं भली बुरी ।१२।

चौपाई

दंडी संग चले चक्रेश । अंतःपुर जन लेय विशेश ॥
पहुंचो वारधिके मधजाय । तब वह व्यंतर तहं प्रगटाय ॥१३॥
चक्रवर्तिके मारन हेत । दुख दीनो उपसर्ग समेत ॥
तब चक्री सुमरे नवकार । व्यंतर जोर चले नलगार ॥ १४ ॥
दुष्ट भाव धारक वह देव । प्रगट बचन भाषेतिन येव ॥
रे रे दुष्ट प्रथम भवबीच । कष्ट देय मोह मारो नीच ॥ १५ ॥
ताते अबमें तेरे प्रान । कष्ट देय हनहूं इस थान ॥
एक तरह ते छोडूं सही । तू निश्चयकर मन में यही ॥ १६ ॥
अपने मुखते एम बखान । जिनवर को मत झूंठो जान ॥
अरजो मत है जगत मझार । तिनको परशंसा कर सार ।१७।
लिख नवकार मंत्र इस बार । अपने पगते मेट सुढार ॥
तो तोको छोडूं तत्काल । नातर तू अपनो लखकाल ॥ १८ ॥

दोहा

ताही बिध करतो भयो, ब्रह्मदत्त चक्रेश ।
मिथ्या भाव प्रचंडते, रही बुद्धि नहि लेश ॥ १९ ॥

पद्धड़ी।

व्यंतर तब बैर हिये धरंत। सागर मध डोब दियो तुरन्त॥
सो मरकर सप्तम नरक जाय। इह मिथ्या जगमें कष्टदाय।२०।
जिनके हिरदे नहिं धर्म प्रीत। तिनके दोऊ लोक न कुशल मीत॥
मिथ्यात समान न और जान। बहुनिंद नीक अरु तुच्छ मान।२१।
जिसके प्रभावतें चक्रधार। पहुंचे सप्तम पृथिवी मंझार॥
तातैं हो पंडित भव्य संत। मिथ्यात वमन कीजे तुरंत॥ २२॥
सम्यक्त गहो तुम बार बार। ताकर पावो सुर शिव अगार॥
जिनबच धारो हिरदे मंझार। सोई बचदे मंगल अपार॥ २३॥
कैसेहैं सो बच अतिमहान। भव अंबुधितारन पोत जान॥
अरु बहु प्रकार सुख देत येह। यामें नाहीं जानो संदेह॥२४॥
जिन भगवतके यह वच उदार। सो कैसेहैं हिरदे निहार॥
सब दोष रहितसो हैं दयाल। संग वरजत नाशैं कर्मजाल।२५।
अरु देवइंद्र नागेंद्र चंद्र। रविखग बहु भक्तिधरैं नरेंद्र॥
पूजैं तिनको सिरनाय नाय। तिहुं काल विषै आनंद पाय।२६।

दोहा

ब्रह्मदत्त चक्रेशकी, कथा सो पूरन थाय।
भव्य जीव बांचे सुनैं, तिनको मंगलदाय॥ २७॥

इति श्रीआराधनासार कथाकोष विषै ब्रह्मदत्त बारवें चक्रेशकीकथा सम्पूर्णम्

अथ श्रेणिक नृपतिकी कथा नं० १९

मंगलाचरण॥ सवैया इकतीसा।

जग पूज केवल विशाल नैन धारैं देव, तिष्टैं समोशर्ण बीच छवि अधिकाई है। ज्ञान दर्शन सुख वीरज अनंतजाके वानी खिरैं, मेघसम जान ताहि भव्य सुखदाई है॥

तिन्हैं सीस नाय नृप श्रेणिककी कथासार । तासको बखान
करूं मेरे मन आई है ॥ सुन जेते जग जीव तिनके कल्याण
होय, सम्यक प्रकाश होत दुरनय नशाई है ॥ १ ॥

चौपाई ।

एही मागध देश सुहात । राज ग्रही नगरी विख्यात ॥
तहां राज विद्या करलीन । नृप श्रेणिक शोभै परवीन ॥ २ ॥
ताके महला लक्षणवती । नाम चेलना शोभे सती ॥
सम्यक दृष्टि नमें परधान । भगवत चर्ण जजें गुणखान ॥३॥
एकै दिन नृप कहो सुनाय । सुनदेवी तू चित्त लगाय ।
बिश्नु धर्म जगमें है सार । ताको तू कर अंगीकार ॥ ४ ॥
तब वह जैन तत्व मे लीन । निश्चल तत्व धरे परवीन ॥
बोली वायक मिष्टर शात । विनय सहित सुनये भूपाल ॥५॥
बोध भक्ति जेते हैं सार । तिनको भोजन दो तत्कार ॥
ऐसे सुनकर अवनीपाल । हिरदे मांहि भयो खुशहाल ॥ ६ ॥

अडिल्ल

इस अंतर इस सती चेलनाने तबै ।
बिश्नु भक्त बुलवाए निज ग्रह में सबै ॥
भोजन देने अर्थ उनै थापन करो ॥
कपट सहित सो मूरख ध्यान तहां धरो ॥ ७ ॥
तिन के पछन करी चेलनाने सही ।
अहो तपस्वी करत कहा कहिये यही ॥
तब बोले हम करत सो निज कल्याण हैं ।
भेल भई तन त्याग जाय शिव थान हैं ॥ ८ ॥

दोहा

तब चेलन तिस थान में, दीनी अगनि लगाय ॥
भागे वायू सम सबै, महा कष्ट को पाय ॥ ९ ॥

तब अशोक बहु रोस कर, कहत भए सुन लेय।
जो तू भक्ति धरै नहीं, मारत क्यों दुख देय ॥१०॥

पद्धड़ी

जब रानीबोली सुनहु देव। इन ध्यान धरो है बिशमसेव ॥
खोटोशरीर तज मोक्ष थान। हम जावतहैं इनइम बखान ।११।
तब मैंने चित्त बिचार लीन। इह सुख सेवा तिष्टो प्रवीन ॥
या आकर क्या करहै अवार। इम जान करो उपगारसार ।१२।
मम बच कीजो परतीत होय। इक कथा कहूं दृष्टांत जोय ॥
सो आदरकर सुनिये नरेश। जिमतुम मत में भाषी विषेश ।१४।
इक वत्स देश बिख्यात जान। नगरी कोसांबी मध्यमान ॥
तहँ प्रजापाल सोहै नरिंद्र। लीलाकर तिष्टत जिम फणिंद्र ।१४।
सागरदत्त सेठ तहां राय। बसुमती नार तिस गेह थाय ॥
तहँ दूजो सेठ समुद्रदत्त। नारी समुद्रदत्ता पवित्त ॥ १५॥

दोहा

तिन दोनों के परस्पर, हुती प्रीति अधिकार।
बचन बंध आपस विषै, इह विधि कियो करार ॥१६॥
हमरे तुमरे ग्रह बिषै, पुत्र सुता है मीत।
तो बिबाह करनोसही, सदाकाल रहे प्रीत ॥१७॥

चौपाई

तापीछे सागर दत्त जेह। पुत्र सुमित्र भयो तिह गेह।
दिनमें सर्प रहै बिकराल। रैन समय है कुंवर रिसाल ॥ १८ ॥
अरु समुद्रदतके गृह आय। पुत्री भई रूप अधिकाय।
नागदत्ता तिस नाम बखान। लावनता जुत जोबनवान ॥१९॥
कर्भ कर बसुमित्रके साथ। भयो बिवाह जगत बिख्यात।
बचन बंधहै सेठ उदार। दई सर्पको कन्या सार ॥ २० ॥

सत्पुरुषनकी है यह बान। कोड़ो कष्ट होय जो आन।
तौभी निज बचनाहि तजंत। मुख सो कहैं सोकरैं तुरंत॥२१॥
अब यह वसुमित्र अहिजान। रात्रिसमय ह्वै कुँवर महान।
लीला करके सर्प जुकाय। धरत पिटारेमें हरषाय॥ २२॥
नागदत्ता नारीके संग। भोगत भोग अनूप अभंग।
नागदत्ता की माता आन। देखी पुत्री जोबनवान॥२३॥
कहत भई तब सिर हलाय। कर्म तनी गति कही न जाय।
कहाममपुत्री जोबनवन्त। कहा सर्प बर लखै डरंत॥२४॥
माताके इम बच सुनकान। कहत भई तू दुखमत ठान।
निज भरताको सब विरतंत। मातासे भाषियो तुरंत॥ २५॥
तब समुद्रदत्ताहरषाय। रही रैन पुत्री ग्रहजाय।
वसु मित्र अहि तन दुखरास। तजकर गयो नारके पास॥२६॥
निंदनीक अहितन भेदाय। धरो पिटारेमाहिं लखाय।
ताको छिपकर दियो जराय। तब समुद्रदत्ता सुखपाय॥२७॥

दोहा

बसुमित्र तब नर रहो, गई सरप परयाय।
भोगत भोग सुहावने, तिष्टत दीपत काय॥ २८॥
इसप्रकार शुभ चेलना, कथा कही समझाय।
याही विधि शिवलोकमें, ए रहते सुखपाय॥ २९॥
यह विचार करके तबै, दीनी अगन लगाय।
ब्रह्मलोक ए थिररहे, जरै मलीन जुकाय॥ ३०॥
ऐसे बच श्रेणक सुने, मनमें रोश जुआन।
उत्तरको असमर्थ है, तिष्टे मौन सुठान॥ ३१॥

छंदचाल

इस अंतर श्रेणक नरिंद्र मन इच्छाधारी ।
करन अखेट प्रचंड गयो कानन दुख भारी ॥
तहां आतापन जोग धरैं तिष्ठैं मुनि नायक ।
नाम जशोधर देव जगत जनको सुखदायक ॥ ३२ ॥
तिनैं देख नरनाथ क्रोध धारो अधिकाही ।
इह मो बिघन निमित्त भए या बन के माहीं ॥
मारूं इन्हैं तुरंत एम मन चिंतवन कीना ।
तबै पांचसै स्वान छोड़ मुनिवर पर दीना ॥ ३३ ॥
जबै स्वान विकराल महा उद्धत तनवारे ।
मुनि तपके परभाव शांतहूवे वे सारे ॥
दे परदच्छणा चरण कमल में सीस नवाई ।
भक्ति हियेमें धार पास बैठे ते आई ॥ ३४ ॥
इहविध देख नरेश क्रोध में अंध होयकर ।
छोड़ो बान तुरंत मुनीपै रोश हिये धर ॥
सायक फूल सुमाल भयो ततच्छन दुखदाई ।
मुनिप्रभाव जगमाहिं किसी तें कहो न जाई ॥३५॥

दोहा

ताहीविध श्रेणिक तनी, बँधी आय दुखकार ।
नरक सातवें की सही, बहुत कष्ट दातार ॥ ३६ ॥

चौपाई

मुनिप्रभाव लखि श्रेणिकराय । भक्तिसहित तिनके ढिगजाय ।
चरन कमलमें धारो सीस । खोटी बुद्धि त्यागो नर ईस ॥३७॥
नृपको पुन्य उदय जब भयो । मुनिको पूरन जोग सुभयो ॥
इंद्रचंद्रकर पूजित जान । तत्व स्वरूप कहा हित दान ॥ ३८ ॥

तबसुनके श्रेणिक बड़भाग। भक्तिसहित धारो अनुराग।
उपसम सम्यक प्रापत भई। दीरघ आयु छेद तिन दई ॥३९॥
बरस चौरासी सहस प्रमान। प्रथम नर्कमें रही सुआन॥
सम्यक दर्शतने परभाय। कौन २ दुख मिट नाहिं जाय ॥४०॥
तिस पीछे नरनाथ महान। चित्र गुप्त श्रीमुनि गुणखान॥
तिनकी भक्तिकरी अधिकार। ह्वै उपशम सम्यक गवधार॥४१॥
फिर श्री जगत पूज परमेश। वर्द्धमान स्वामी जगतेश॥
तिनके चरणकमलके पास। चायक सम्यक लहि सुखरास।४२।
तिसही सम्यक तने प्रबन्ध। तीर्थंकर विरकत कर बंध॥
तीन लोक करहैं जिन सेव। होवेंगे तीर्थंकर देव॥ ४३ ॥
प्रथम तिर्थंकर पदम सुनाम। अब होवेंगे बहु गुणधाम॥
सो जैवंतो होय सदीव। केवल ज्ञान सहित शिवपीव ॥४४॥
देव इंद्र चक्रीश गधीस। तिनको आन नवावे सीस॥
भक्तिभाव धारे अधिकाय। पूजा अस्तुति करे बनाय॥४५॥
जिनके श्रेष्ठ वचन हिये आन। हर्ष सहित धारैं सरधान॥
सो निरमल लक्ष्मी भरतार। होवे निश्चय जगत मंझार ॥४६॥

दोहा

श्री श्रेणिक महाराज की, कही कथा हित दाय।
भव्य जीव बांचो सुनो, जातैं सम्यक पाय॥ ४७॥

इतिश्री आराधनासार कथाकोष विषय श्रेणिक महाराजकी कथा समाप्तम् १९

अथ रायपदमरथकी कथा प्रारम्भः २०

मंगलाचरण कवित्त।

तीन जगत पति पूजतहैं ऐसे श्री अरिहंत महान। तिनके चरणकमल को नुतकर कथा तनो अब करूं बखान॥ रायपदम

रथ प्रगट भये हैं भव्य नमैं उत्कृष्ट सुजान। जिनवर भक्ति धार चित माहीं ताकर फल पायो अधिकान ॥ १ ॥

चाल

तर्ज–सुन भाईरे, मागध देश सुहावनो सुन भाई रे। मिथला पुरी विख्यात सत्य सुन भाई रे ॥ भूप पदम रथ तासको, सुन भाई रे। सो मूरख अब दात, सत्य सुन भाई रे ॥ २ ॥

एक दिना अटवी विषय, सुन भाईरे। खेट करन गयो सोय, सत्य सुन भाईरे॥ हयको दौड़ावत भयो, सुन भाईरे। एक सुसा अवलोय; सत्य सुन भाई रे ॥ ३ ॥

दूर निकलगयो वन विषय, सुन भाईरे। एकाकी नरराय, सत्य सुन भाईरे। पुन्य उदय जब आइयो, सुन भाईरे। काल गुफा में जाय, सत्य सुन भाईरे ॥ ४ ॥

तपो दीप्त रिधिके धनी सुन, भाईरे। तहां तिष्टे मुनिराय, सत्य सुन भाईरे। रत्न त्रयकर सोहने, सुन भाईरे। है सौधर्म ऋषिराज, सत्यसुन भाईरे ॥ ५ ॥

चाल मेघकुमारकी

देखी तिने देख नृप सुखलहो जी शांत चित्त है सोय। तप्त पिण्ड जिनलोहका जी, पैंते शीतलहोय रेभाई ॥ ६॥

त्यों नृप समता लीन बाजीते उतरो जबैजी। मुनि ढिग गयो तुरंत सिर धारो चरण विषयजी। मनमें अति हरषत रेभाई। नृपको पुन्य विशेष ॥ ७ ॥

दोनों बहुत उपदेश सुन नृप सम्यक हिये धरीजी। गहे अनुव्रत वसे रेभाई। नृ० पु० वि०। ८।

फिरमुनि को नायकेजी, बुद्धिमान भूपाल। प्रश्नकियो एह

विधि तवैजी । सुनिये दीनदयाल गुरुजी । मेरी संसय हान
रेभाई ॥ नृपको पुन्य विशेप ॥ ९ ॥

सवैया इकतीसा

जैन धर्म रूपी सार सागर तरनजोग और बच आदि गुण
जास मांहिं पाइये । ऐसेकोई उत्तम पुरुष इस अवनीपर तुम सम
हूके नाहिं मोह मन लाइये ॥ तत्व ज्ञानी मुनिराय काहे नरधीश
सुन वयां नगर अनूप सुखदाइये । ताविषे विराजमान बांस पूज
जिनराज पूजे गिरवान आप तिने शिरनाइये ॥ १० ॥

चौपाई

भविजनको सुखके दातार । कोटभानु ते दुति अधिकार ।
ज्ञान दीप्त गुणको धारंत । ऐसे बांस पूज भगवंत ॥ ११ ॥
तिन जिनवर को ज्ञान महान । अरु मेरे में अन्तर जान ।
जैसे मेरु सुदर्शन जोय । अरु सरसों तासम किम होय ॥१२॥
इमि मुनिवरके बच सुन राय । धर्म विषे बहु प्रीति लगाय ।
श्रीजिनवरके वंदन हेत । कीनो मन उत्साह समेत ॥ १३ ॥
होत प्रभात समय नर राय । बहु विभूतिं संग लेउ मँगाय ।
प्रीति सहित वन्दन के काज । चम्पापुर चालो महाराज १४॥
तितने कारन एक मनोग । होत भयो इस कर्म संजोग ॥
नाम धनन्तर एक सुजान । दूजो विश्वानल बुधवान ॥१५॥
रायभक्त देखनके हेत । आयो भूंपर हर्ष समेत ॥
पथमें जात लख्यो भूपाल । माया फैलाई तत्काल ॥ १६ ॥
स्याम शरीर नाग अधिकाय । मारगमें आडो दिखलाय ॥
छत्र भंग अरु हाहाकार । रज पत्थर अम्बरते झार ॥ १७ ॥
करी अकाल वृष्टि अधिकान । ताकर पंक भई दुख दान ॥
तामध गज झूमत दिखलाय। इमि माया बहुत विधि दरसाय।१८।

दोहा।

इस प्रकार अप शकुन लख, बोले मन्त्री एव।
अहो अबै चालो नहीं, भयो अमंगल देव ॥ १९ ॥

चौपाई

तब प्रसन्न धीमान नरेश। कहत भयो ऐसे वच वेश ॥
बांस पूज स्वामी को सही। नमस्कार हो इमि मुखकही ॥२०॥
ऐसे कहकर पंक मझार। प्रेरो करी भक्ति हियधार ॥
इमि लखि सुर माया तज दीन। बारम्बार प्रशंसा कीन ॥२१॥
सर्व रोगको नाशन हार। जो जन एक पवन विस्तार ॥
ऐसो भेरी बहु गुणवन्त। नृपको देकर गये तुरन्त ॥ २२ ॥

दोहा

जिनके चित्त सदा बसे, जिन वर धर्म अपार।
तिन के कारज सिद्ध सब, होवैं जगत मंझार ॥ २३ ॥

काव्य

तिस पीछे नरनाथ गयो चम्पापुर मांही।
परफुल्लत हिये कमल भक्त रूपी खग पाहीं ॥
मंगल तीनों लोक तनें वे जिनवर स्वामी।
तिन के दर्शन किये नृपति ने बहु सुख यामी ॥२४॥
बहु स्तुति उच्चार फेर निज सीस नवायो।
सुनो तत्व व्याख्यान चित्त में निश्चय लायो ॥
तबै पदम रथ राय लई दीक्षा सुखदाई।
बांस पूज जिन नाथ चरन में तिन लौ लाई ॥२५॥
कैसे हैं जिन देव समोश्रित मांह विराजें।
बानी खिरे त्रकाल घात हारज बसु साजें ॥

सेवैं चरन सरोज सदा सुर नर खग सारे।
केवल ज्ञान प्रकाश तत्व जिनने विस्तारे ॥ २६ ॥

दोहा

लगो अनादि जु काल तें, मिथ्या भाव अयान।
ताके नासन हार प्रभु, बांस पूज भगवान ॥ २७ ॥
चार ज्ञान धारक सुधी, श्री गणधर महाराज।
तिनकर सेवत चरन युग, ऐसे जिन भव पाज ॥ २८ ॥

चौपाई

ऐसे प्रभुके चरन महान। मिथ्या तज सेवो भव आन ॥
यातें सुर शिव तुमको होय। यामें संशय नाहीं कोय ॥२९॥
जैसे राय पदम रथ करी। भक्ति प्रभूकी हिय विस्तरी।
तैसे तुम भी करो सुजान। जो श्री पावो तासु समान ॥३०॥
अब वे श्रीमान भगवान। केवल ज्ञान विराज सुथान ॥
सत्पुरुषन कर सेवत जेह। सब जगको दीजे सुख गेह ॥३१॥
जिनकी भक्ति जगतमें जान। निश्चय सुख देवें निरवान ॥
बाहज इंद्र आदि चक्रेश। पद अथवा पावें धरनेश ॥ ३२ ॥

दोहा

राय पदम रथ की भई, पूरन कथा महान।
पढ़ें सुनें जे भव्य जन, तिनको ह्वै कल्यान ॥ ३३ ॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय पदमरथ राजा
दृष्टान्त कथा समाप्तः



अथ सेठ सुदर्शन की कथा प्रारंभः नं. २१

मंगलाचरण। सोरठा

पंच गती के हेत, पंच परम गुरुको नमूं।
कहूं कथा सुख केत, नमोकार फल की अवै ॥ १ ॥

चौपाई

अंग देश शोभा जुतलसे। तामध चम्पापुर शुभ वसे ॥
ताको नृप वाहन भूपाल। धारे सुन्दर नेत्र विशाल ॥ २ ॥
निज प्रताप कर अरिगण जास। परजा पालत सहित हुलास ॥
तिसही अवनीपति के जान। वृषभदास एक सेठ महान ॥ ३ ॥
सो वह सेठ जिनेश्वर दास। प्रभुकी भक्ति हिये परकास ॥
जिन चरनांबुज सेवन भंग। पाले निरमल क्रिया अभंग ॥४॥
तिस बानक पतिके वृष पाल। सब गौधनको है रिछपाल ॥
इक दिन बनते आवत धाम। पुन्य जोग पथमें अभिराम। ५।
जुग चारन मुनि ध्यान धरंत। सब जगमें उत्तम शिवकंत ॥
तिनको देख गोप हरषाय। मन बिचार इहि भांति कराय।६।
एह मुनि मारतण्ड गुणवन्त। वस्त्र रहित तननगन धरन्त ॥
शिला अत्तपर धारत ध्यान। और एह शीत पड़े अधिकान।७।
कैसे कर है रैन वितीत। इमि करुनाकर ह्वै भयभीत ॥
कर विचारसो निज गृह आय। मुनि चरननमें चित्त लगाय।८।
पिछली रैन समय उठधाय। भैंस चरावनको तहं जाय ॥
देखे जुग मुनि ताही ठाम। तन तें निस्नेही गुणदाम ॥ ९ ॥
सब शरीर पर पड़ो तुशार। देख ग्वाल करुणा मन धार ॥
अपने करतें हिमकण सवै। कीने दूर हरष जुत तवै ॥ १० ॥
जुग मुनिके चरनाम्बुज सार। बहु तप लोटे थिरचित धार ॥
ताही छिन सुकृत भंडार। भरत भयो नाना परकार ॥ ११ ॥
इतने मांही भयो परभात। पूरन ध्यान कियो जगनाथ ॥

निकट भव्ययाको अविलोय। स्वर्ग मोक्ष सुख जाते होय।१२।
ऐसो मंत्र दियो तत्काल। णमो अरिहंताणं गुणमाल॥
याको याद राखयो बीर। इमिकहि गये गगन तब बीर।१३।

दोहा

तब ही उस गोपाल को, श्रद्धा भई महान।
सुख दाता दोउ लोक में, मन्त्र प्रभाव सुजान॥ १४॥
सब कारज के आदि में, पहिले मंत्र उचार॥
यह निश्चय हित में धरी, गोपालक सुखकार॥ १५॥

पद्धड़ी छन्द

एकै दिन सेठ महा सुजान। या मुख ते मंत्र सुनो महान॥
तब कही अरे तू क्या कहन्त। तब गोप सबै भाखो वृतन्त।१६।
सुन सेठ चित्तमें हर्षधार। धन धन भूपर तुमही औतार॥
तू ने देखे मुनिराज जेह। तिहुंलोक पूज गुरूजान तेह।१७।
जे धर्म राग प्रानी धरन्त। तेजगत विषय शोभा लहंत॥
एक दिन याकी एक भैंसजान। गंगाके पार गयीनिदान।१८।
तब ताके ढूंढनको गुवार। वो मंत्र उचारत बार बार॥
सो नदी विषय ऐसो तुरंत। तहां काष्ठ खंड आवत बहंत।१९।
याने ताको नाही निहार। तानें हिरदो ततछिन बिदार॥
जिमि दुरजन अपनो पायदाव। छिपकर शायकतें करतघाव।२०।
तब गोप मंत्र मुखतें बखान। करके निदान छोड़े पिरान॥
सो बृषभदासकी नार सार। ताकी सुकूख लीनो औतार।२१।

दोहा

नाम सुदर्शन तासुको, उपजे रूप निधान।
महा भाग्य निज पुन्यते, शोभा धेरे महान॥२२॥
पुन्यवान को जगत में, क्या दुर्लभहै वस्तु।
कोई दूर न देखिये, निकट निहार समस्त॥ २३॥

चौपाई

इस अन्तर इस नगर मँझार। सागर दत्त एक सेठ निहार।

सागर सोना ताकी भाम। मनोरमा पुत्री गुणधाम ॥ २४ ॥
सेठ कुंवरको ताके संग। भयो विवाह सहित सुखरंग।
वृषभदास अब सेठ पुनीत। धर बैराग विषै तिन प्रीत ॥२५॥
अपनो पुत्र सुदर्शन सार। ताको निजपददे तत्कार।
गुरु समाधि गुप्त यह जाय। दीक्षा लीनी मन वचकाय २६॥
सेठ सुदर्शन अब बुधवान। राजादिक ते पायो मान।
भयो प्रसिद्ध जगतके बीच। फैली कीरति सहित मरीच २७॥
भगवत भाषत किरपासार। पाले श्रावककी अविकार।
पूजादान शील व्रत मांहिं। नितप्रति सावधान अधिकाहिं २८
एक दिन बनमें क्रीड़ा काज। नृपसंग गये सहित समाज।
इनकी रूप सम्पदा सार। देखत भई नृपतिकी नार ॥ २९ ॥
अवयानाम तासुको जान। होतभई विहवल अधिकान।
धाय प्रतीबोली दुखपाय। हे माता सुनिये चितलाय ॥ ३० ॥
क्रोड़ों मुनि गणमें परधान। को तिष्टत यहकाम समान।
तब वह कहतभई मुसकाय। सुनरानी मैं कहुं समझाय ।३१।
नाम सुदर्शन सेठ महान। जग विख्यात काम सम जान ॥
ऐसे वच सुन नृपकी भाम। धाय प्रति बोली अभिराम ३२ ॥

दोहा

हे माता इस पुरुषको, दीजे मोहिं मिलाय।
तो मेरो जीवनरहे नातरु जमपुर जाय ॥ ३३ ॥
तब धातृ बच इमकहे, सुन पुत्री अभिराम।
तन छिनमें करहूं सही, तेरे पूरन काम ॥ ३४ ॥

सोरठा

जे कुलटा हैं नार, निन्द काज सबही करें।
रंचक भय नहिंधार, आचारज बच इम कहें ॥ ३५ ॥

काव्य

इस अन्तर अब सेठ सुदर्शन जो बड़ भागे।
श्रावक व्रत कर सहित सदा जिनमत अनुरागे ॥
आठें चौदस रैन विषै बन खण्डमें जावे।
भूमि मसान मंझार जायकर ध्यान लगावे ॥ ३६ ॥
बन में जातो देख सेठको धाय अयानी।
पाप कर्म में चूर दुष्ट मनसें अघकानी ॥
यह कुम्हार घरजाय एक इन पुतलो लीनो।
मनुष समानी काय गन्ध बहु तिस वपु दीनों ॥३७॥
पटमें ढको तुरंत चली रानी गृह आवे।
रोकी तब दरवान जबै यह बहु खुनसावे ॥
पुतलोको तब लेय सीसते भू पर डारो।
फटत भयो तुरन्त तबै रिस बैन उचारो ॥ ३८ ॥
रे रे दुष्ट अयान निन्द कारज तुम कीना।
रानी के उपवास आज था वह नहिं चीन्हा ॥
इस पुतलेको पूज फेर वह भोजन करती।
बिन देखे नहिं खाय यही व्रत मनमें धरती ॥ ३९ ॥
ताते तुमको अबै दण्ड बहु विधि दिलवाऊं।
प्रातकाल के होत सीस तुमरो छिदवाऊं ॥
तबही सारे द्वारपाल याके ढिग आये।
स्तुति बहु विधि करी फेर इम बचन सुनाये ॥ ४०॥

दोहा

अबतो क्षमाकीजिये, फेर न रोकें तोहिं।
इनको बसकरके तबै, गई सो हर्षित होय ॥ ४१ ॥

रैन अँधेरी अष्टमी, भूम मशानमें जाय।
सेठ सुदर्शन ध्यानजुत, देख धाय हर्षाय ॥ ४२ ॥
बड़े जतन ते सेठको, लीनो कंध बठाय।
रानी को सौंपत भई, मनमें बहु सुख पाय ॥ ४३ ॥

सवैया इकतीसा

काम कर पीड़ितभई है नृप नार तबै,आलीगन आदर करत तब बोली है। नाना उपसर्ग किये सारी रैनके मंझार, त्रियाके चरित्र तोभी पार न बसाई है ॥ सेठ धीय मानकियो मेरु के समान चित्त, निज मनमाहिं प्रतिज्ञा इम आनी है। टरै उपसर्ग एह मुनिव्रत धारकर, पान पात्र लेऊं अन्न ऐसे विधि ठानी है ४४॥

दोहा

जिन चरनाम्बुज को भ्रमर, बारिध सम गम्भीर।
काष्ट खंड सम होयकर, तिष्ठोतित ही धीर ॥ ४५ ॥
सन्त जीव जे जगतमें, कोड़ों कष्ट लहाय।
तो भी नेक न चिगतहैं, चित्त धीरज अधिकाय ४६

छन्द चाल

तब नृप त्रिय निश्चै जानो। यह है पाखान समानो ॥
इस शील खण्डने रानी। ना भई समर्थ अयानी ॥ ४७ ॥
सो दुष्ट चित्त अधिकाई। तब ऐसे चरित कराई ॥
नखतें शरीर जु बिदारो। मुखते तिन कियो पुकारो ॥ ४८ ॥
एह सेठ अवस्था कीनी। ऐसे भाषो रिस भीनी ॥
जे पापन हैं अधिकाई। ते क्या क्या नाहिं कराई ॥ ४९ ॥
तब राजा सुन दुख पायो। रिसते शरीर कंपायो ॥
तब हुक्म दियो तस्कारा। ले जाओ पकड़ यह धारा ॥ ५० ॥
मारो मसान में जाई। एह सेठ महा अन्यायी ॥

नृप वच सुनके भट आये। गह केश मसाणे लाये ॥ ५१ ॥

दोहा

एक दुरमती ने तबै, बांधी अस तत्काल।
तब ही शील प्रभावतें, भई फूल की माल ॥ ५२ ॥
दशों दिशा गंधित भई, गूंजे अलि बहु भाय।
सेठ गले शोभित भई, सो किमि बरनी जाय ॥५३॥

सवैया इकतीसा

देवन के गण सार कियो तहँ जैजै कार, कहो सब भव्यन मे तुम परधान हो। धन धन सेठ आप जगकर पूजनीक, जिन पद सेवनको मृग केसमान हो ॥ श्रावक आचार महा पंडित प्रवीन अति, शीलके निधान अरु रूप अप्रमान हो। इत्यादिक वच सुरभाषे तहं बार बार, पुष्प वृष्टि कीनी कहो दया के निधान हो ॥ ५४ ॥

दोहा

पुन्यवान जनको सदा, होवे कष्ट अपार।
सुखरूप ह्वै परनवै, महिमा धर्म अपार ॥ ५५ ॥
तातें भविजन जतन तें, पुन्य करोहित कार।
जैसा भगवत ने कहा, तैसा हिरदे धार ॥ ५६ ॥

चौपाई।

पुन्य सोयको कहिये मित्त। श्री जिन पूजन कीजे नित्त ॥
दान दीजिये चार प्रकार। पालो शील सदा अबिकार ॥५७॥
आठें चौदश धर उपवास। रैन मसाण विषय करवास ॥
सामायिक कीजे तिरकाल। एही पुन्य सबै अघटाल ॥५८॥
सेठ सुदर्शन शील प्रभाय। लखकर तिनही आयो राय॥
नगरीके जन सारे तबै। सेठ चरन को नमिये सबै ॥५९॥

क्षमा कराई बारम्बार । लज्जा चित में नरपति धार ॥
सेठ सुदर्शन होय उदास । पुत्र सुकान्त बुलायो पास ॥ ६० ॥
अपनो पद दीनों तत्काल । आप गयो कारन गुणमाल ॥
नाम बिमल बाहन मुनिचन्द । तिनके चरननमों गुणवृन्द ।६१।
जैनिन्द्री दीक्षा तिस पास । लई सेठ धर चित्त हुलास ॥
दर्शन ज्ञान चरित तपसार । तिनको धारो सब अघटार ॥६२॥
निर्मल केवल ज्ञान प्रकास । सब चर अचर पदारथ भास ॥
देवइन्द्र कर पूज महान । मोक्ष पुरीमें कियो पयान ॥ ६३ ॥
और भव्यते है परधान । मन्त्र जयो नौकार महान ॥
सुखको देनहार है यही । ऐसी प्रभु बानी में कही ॥ ६४ ॥
नित सर धान करो मनलाय । निश्चल चितकर हर्ष बढ़ाय ॥
इसही मन्त्रतनें परभाय । भये सेठ शिवपुर के राय ॥६५॥
सोई प्रभु बरतो जैवन्त । जो शिव नारतने है कन्त ॥
केवल ज्ञान मरीच प्रकाश । भवजनके हिय कंच बिकाश ॥६६॥
सुरखग असुर और चक्रेश । अथवा श्रीमुनिवर जगतेश ॥
बनि बारिध जाननहार । इत्यादिक सेवें हितधार ॥६७॥
ऐसे प्रभुके कवि चित लाय । सुँमिरन करे सीस भू नाय ॥
तुमही दीना नाथ दयाल । मेरे भव अघ दीजे टाल ॥६८॥

इतिश्री आराधनासार कथाकोष विषय सेठ सुदर्शनकी कथा समाप्तम्

अथ यमभूतकी कथा प्रारम्भः नं० २२

मंगलाचरण । सोरठा ।

श्री अरिहन्त महान, और भारती मात जी ।
गुरु निर ग्रन्थ महान, तिनको बन्दूं भाव जुत ॥१॥

कहूं कथा सुखकार, भई खगड श्लोक तें ।
ताको सुन चित धार, अहो भव्य प्रानी सबै ॥ २ ॥

चौपाई।

उंडू देश सबसे विख्यात । धर्म नगर ता मांहि सुहात ॥
सर्वशास्त्र को जाननहार । बुद्धिमान यमभूत उदार ॥ ३ ॥
धनवंती तासू गृह भाम । गर्दभ पुत्ररूप अभिराम ॥
नाम कौनका तनुजा जान । लावन मगडत तन अधिकान ४
तिसही नृपके और जो नार । तिनके पुत्र पांच सौ सार ॥
जैन धर्ममें तत्पर सोय । सज्जन जन लख हर्षित होय ॥५॥
मन्त्री दीरघनाम बखान । मन्त्र कर्ममें है परधान ॥
या विधि राज करत भूपाल । सुखसे बीतत है तिसकाल ॥ ६ ॥
एक दिना इक निमती आय । राजासे इमि बचन कहाय ॥
तुमरी सुता कौन का जोय । चक्रवर्त्ति के नारी होय ॥ ७ ॥
ऐसे बचन सुने नरराय । पुत्री पालत भयो छिपाय ॥
एक दिना उस नगर उद्यान । नाम सुधर्मा सूर महान ॥ ८ ॥
पांच शतक मुनि तिन संगधीर । आय विराजे नगन शरीर ॥
तब सबजन मिल हर्ष बढ़ाय । सामग्री ले बन्दे जाय ॥ ९ ॥

दोहा

पुरजन जाते देख नृप, ज्ञान गर्भ चित आन ॥
मुनि निन्दा करतो गयो, एह भी उसही थान ॥१०॥
मुनि निन्दा परभावतें, अथवा गर्भ पसाय ॥
ताछिन पाप उदै थकी, नृपकी बुद्धि नसाय ॥ ११ ॥
महा कष्ट दाता सही, गर्भ सो आठ प्रकार ॥
याको ततछिन छोड़िये, अहो भव्य चित धार ॥१२॥

पद्धड़ी

तब नृपत ज्ञानकर हीनहोय। निरमद करीन्द्र सम भयोसोय।
मुनिको कीनो तब नमस्कार। तिष्ठो तिनढिग बहुभगतधार।१३।
जिन भाषित धर्मसु दो प्रकार। सुनिये नरिन्द्र हियमांहि धार।
तब राज लखते ह्वै उदास। गर्दभ सुतको बुलवाय पास॥१४॥
सब राज सौंपताको जु दीन। सुत पांच शतक जिनसंग लीन।
मनवचन काय त्रय शुद्धवान। मुनि होत भये ततछण महान १५
सबशास्त्र पढ़े पण सत मुनीश। जिन आगम पार भये जगईश।
अरुयम मुनिको श्रम जात बाद। नहि नमोकर भी होत याद।१६।
तब इह लज्जा चित मांहि आन। श्रीगुरुते पूछ कियो पयान॥
तीरथ यात्राके हेत जाय। एकाकी विचरे शुद्ध काय॥ १७॥
इक दिन मारग बिहरतमुनिन्द। यकरथ देखोजुत मनुषवृन्द।
अरु खेत खात गर्दभ निहार। तब खण्ड रचो यह श्लोकसार १८

गाथा

१ कहसि पुण शिर केवल सिरे गदहा जब पेछ सिर वादीडुमिते १९

चौपाई।

फिर और दिना मगमें निहार। बालक करते लीला अपार॥
गिल्ली जु काष्ठकी तिन बनाय। सो पड़ी गढ़ेके मध्य जाय।१९।

दोहा

तबभी मुनिवर ने रचो, खण्ड श्लोक सुखकार।
कछु यक बुद्धि प्रसादते, इहि बिधि कियो उचार।२०।

गाथा

२ अणाऊकिं पलोव तुम्हेए छाणि बुद्धि पाछिवे
अवई कोण आई तिछे॥ २१॥

दोहा

इक दिन कमलन पत्रकर, अच्छादित फण धार।
मींडक लख मुनिकूं तवे, भागो भय चित धार।२१

चौपाई

तब यह मुनिवर तहां बनाय। रचो खगड श्लोक सुखदाय ॥
या विधितें भाषे गुण गेह। ताको वर्णन अब सुन लेह ॥२२॥

गाथा

२ अम्हा दोग्ग छिभयं दिही दोषीसे देभयं तुम्हेति गछ गये हजे

चौपाई

इस प्रकार त्रय खन्ड बनाय। इनकी नित स्वाध्याय कराय ॥
जिन तीर्थनकी वन्दन करै। शुद्धातम निरमल चित धरै ॥२३॥
विहरत आये दया निधान। नाम धर्मपुर नगर उद्यान ॥
कायोत्सर्ग धरो जगदीश। तिष्टे ध्यान विषय मुनि ईश ॥२४॥
दीरघ मंत्री गर्दभ राय। यममुनि आये सुन दुख पाय ॥
राज हमारो लेने काज। आये हैं वह विहरत आज ॥२५॥
ऐसा मनमें कियो विचार। इन मारनकी इच्छा धार।
अर्द्धरात्रि खोटी मत ठान। खड्गलेय आये बन थान ॥२६॥
मुनिके पीछे ऊभे जाय। मूरख नृप मंत्री अधिकाय।
तब गर्दभ दीरघ मिल दोय। खड्ग उठाइ हर्षित होय ॥२७
फिर मुनिकी हत्यातें डरे। खड्ग लेय कर म्यान सुकरे।
हत्याको भय चितमें आन। काढ़े खड्ग करे फिर म्यान २८
उसी समय मुनि दयानिधान। खगड श्लोक त्रिय कियेबखान।
प्रथम श्लोक सुन गर्दभराय। मंत्रीसे ऐसे बतलाय ॥ २६ ॥
हम तुम दोनों दुष्ट अयान। इन मुनिने अब लिये पिछान।
दूजा सुन श्लोक नरेश। दीरघ प्रत बोलो वच वेश ॥ ३० ॥
यह तपसी नहिं चाहत राज। पर उपकारी धर्म जहाज।

नोट—यह तीनों गाथाएँ हमको ऐसेही मिली हैं इसकारण हमने ज्योंका त्यों नकल करदी हैं बुद्धिमान शुद्ध करलेवें और हमको सूचित करें

नाम कौशिका इनकी सुता । समभगनी जो है गुणयुता ३१ ॥
तिष्ठत है जो तेखानेमांहिं । तिस सनेह बतलावन आहि ।
तृतीय श्लोक जो खंड बनाय । सोभी पढ़ो तबै मुनिराय ॥३२
सुनकर गर्दभ चित्त मंझार । ऐसे कीनों सार विचार ।
यह मंत्री दीरघ दुखदाय । दुष्ट स्वभाव धरे अधिकाय ॥३३॥
मुझको मारन चाहत एह । यामें तो ना है सन्देह ।
मेरा पिता मोह वश आय । गुप्तभेद मोहिं दियो बताय ॥३४
इमि विचारकर नृप परधान । कियो प्रनाम भक्त बहु आन ।
अभिप्राय खोटा तजदीन । उत्तम श्रावक व्रत तिन लीन ३५॥
अब यह यम मुनिंद गुणवान । अति वैराग लीन तपखान ।
भगवत भाषित शुद्ध चरित्र । तिसको पालत सदा पवित्र ३६॥
तप जु प्रभाव कर्म नस गये । सातों रिद्धिके धारी भये ।
तुच्छ ज्ञान धारी यह राय । गुण भाजन है ऋद्धि लहाय ३७
तातें अहो भव्यजन सबै । भगवत ज्ञान अराधौ अबै ।
तुच्छ ज्ञान भी है सुखदाय । जगमें है सो यम मुनिराय ३८॥
कैसे हैं गुणनिधि योगिंद्र । सप्त ऋद्धि धारी सुखकंद ।
तातें भगवत भाषत ज्ञान । सत्पुरुषन को करै कल्यान ॥३९॥

दोहा

पूरन कथा जो यह भई, यम मुनिकी जुमहान ।
कविताके वे श्रीमुनी, करहैं सब कल्याण ॥ ४० ॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषय सप्त ऋद्धिकर शोभित यमसुनिकी कथा समाप्तम् २२ ।

अथ नवकारमंत्र फलमें सूरजचोरकी

कथा प्रारभ्यते नम्बर २३ ।

मंगलाचरण । सवैया तेईसा ।

लोक अलोक प्रकाश कियो जिन श्रीअरहन्त नमूं सुखकारी।
तीनहुं लोक विषय जु पदारथ भासरहे जिन ज्ञान मंझारी ॥
तासु प्रसाद कथा बरनूं शुभ श्री नवकार तनी अति भारी।
श्रीदृढ़ सूरज चोर लहो फल तासु चरित्रकहूं अघटारी ॥१॥

दोहा।

येही उज्जैनीपुरी, ताको नृप धनपाल ।
धनवति रानी तासुकी, गुण रतननकी माल ॥२॥

चौपाई

एकदिना वन देखनकाज ऋतुवसंतमें सहित समाज ।
क्रीड़ा हेत गई नृप नार, लारलेय सबही परिवार ॥ ३ ॥
तिस रानीके गल विच हार । तामें रतन जड़े अति सार ।
तिस अवसर एक गणिका आय। नाम बसंतसेना तिसथाय ४
देखहार चित विस्मै भई । मन विचार इमि कीनों सही ।
या बिन जीवन निष्फल जान । है उदास गृह पहुँची आन ५॥
दृढ़ सूरज तस्कर इस गेह । रैन समय आयो जुत नेह ।
कहत भयो दुःखित क्यों बाल । तब गणका बोली दरहाल ६
रानीके गलमें जो हार । मोको लाय देय तत्काल ।
तो तू प्रीतम है परधान । नाहीं तो जावे मुझ प्रान ॥७॥

दोहा

दृढ़ सूरज यह बचन सुन, धीरज बहुत बंधाय ।
राजाके गृह जाय के लीनो हार चुराय ॥ ८ ॥

रैन समय लेकर चलो, भयो उद्योत अपार ।
नाम तास जमपास है, तहँ आयो कुतवार ॥ ९ ॥

छन्दचाल

दृढ़ सूरज कूं तिन चीन्हा । बांधो बहु कष्ट सो दीना ।
नृप आज्ञा फिर तिन पाई । सूली पर दियो चढ़ाई ॥१०॥
ताही नगरी के मांहीं । एक धनदत्त सेठ रहाहीं ।
सो प्रातकाल उठ धावे । श्रीजिनमन्दर को आवे ॥ ११ ॥
सो तस्कर दुख जुत भारी । कंठागत प्राण सुधारी ।
इम कही सेठसे बानी । मोहे वेगहि लावो पानी ॥ १२ ॥
तुम दयावान अधिकाई । जिन भक्ति महा सुखदाई ।
तब सेठ कहे सुन भाई । मेरे बच चित्त लगाई ॥
द्वादश वर्ष माहि लहायो । गुरुकी सेवा तैं पायो ॥
इह मंत्र महा सुखदाता । तिस याद करो अब भ्राता ॥ १४ ॥
जो मैं अब जलको लाऊं । तो मंत्र भूल यह जाऊं ॥
ताते इसको तू भासे । तो जल लाऊं तुझ पासे ॥ १५ ॥
जबमैं जल लाऊं भाई । तब दीजो मोहि बताई ॥
सुन चोर कही सुन नामी । करहूं ऐसे ही स्वामी ॥ १६ ॥

दोहा

धरम तत्व ज्ञायक सुधी, पर उपकारी सार ।
ऐसे धनदत्त सेठ ने, मंत्र दियो नवकार ॥ १७ ॥
आप गयो पय कारने, सज्जन जन हित दाय ।
इतने दृढ़ रथ चोर तब, मंत्र सुयाद कराय ॥ १८ ॥

सोरठा

ततक्षण छोड़ी काय, मंत्र घोषतें चोरने ।
प्रथम स्वर्ग में जाय, उपजो निर्जर ऋद्धि धर । १९ ।

अहो मंत्र परताप, क्या न लहै प्रानी सबै ।
तातें कीजे जाप, सदां मंत्र नवकार की ॥ २० ॥

चौपाई

इतनेमें दुर्जन इक जाय । नरपति तें इम अरज कराय ॥
बाणिक पद धनदत महाराज । चोर थकी बतलाये आज ॥२१॥
यातें याके गृह मधिजाल । चोर द्रव्य तिष्ठे अधिकान ॥
दुरजन जनको है धिक्कार । सज्जन जनको भी भैकार ॥२२॥
याके बच सुन अवनीपाल । क्रोध थकी कम्पो तत्काल॥
सेठ पकड़ने हेत तुरंत । किंकर भेजे अवनीकन्त ॥ २३ ॥
ताही छिन तस्कर चरजेह । भयो त्रिदश अति सुंदर देह ॥
अवध ज्ञानते सब उपकार । सेठ तनो जानो तेहिबार ॥ २४॥
अवनी पै आयो हरषाय । द्वारपाल को रूप बनाय ॥
सेठ पौल तिष्टो तिह घरी । करमें छड़ी सुरतनों अड़ी॥ २५ ॥

दोहा

राजा के किंकरन को, करत प्रवेश निहार ।
मने कियो इसने तबै, उन हठ कियो अपार ॥ २६ ॥
तब सुर ने माया थकी, वे चर हने तुरन्त ।
नृपति वारता यह सुनी, भट भेजे बलवन्त ॥ २७ ॥

चौपाई

वे भी मारे सब रिष धार । सुन के नृप ले सेना लार॥
गज चढ़ आयो तिहहीथान। जहँ तिष्ठत हैं वहदरवान॥२८॥
सब सेना नृपकी तिहघरी । सुरने तबही मूरछा करी ॥
राजा भयकर कम्पित काय । भागत भयो महा डरपाय । २९ ।
कहे अमर सुनरे नर-राय । सेठ तने जो सरने जाय ॥
तो तुझ जीवन है निरधार । नातर मारूं इसही बार ॥ ३०॥

दोहा

तब नरपति जिन धाम में, गयो सबै मद छार ।
सेठ प्रती कहतो भयो, रच्छ रच्छ यह बार ॥ ३१ ॥

पद्धड़ी

तबही शुभ आतम सेठ धीर । निर्जर प्रति बैन कहे गंभीर ॥
हो धीर वीर यह सब चरित्र । तुमने कीने किस हेत मित्र । ३२।
तब दृढ़रथ सूरजको जु जीव । सुर नमस्कार बोलो सुईव ॥
हे महाराज तुमहो दयाल । जिनपद अम्बुज षट् पद विशाल ।३३।
मैं महा पाप गिरसत अयान । मोको दृढ़सूरज चोरजान ॥
तुमरे प्रसाद किरपानिधान । मैंने पायो सौधर्म थान ॥ ३४॥
पूरब भवमें निज यारकीन । उपकार लखो तुमरो प्रवीन ॥
यातें मैं आयों हर्ष धार । मोको अपनो चाकर निहार । ३५ ।
रच्छा तुम्हरी हियमाहिं धार । याते इह काज कियो अवार ॥
इम कह रतनादिक सार लाय । धनदत्त तनी पूजा कराय ।३६।
फिर नमस्कार करके तुरंत । निज धामगयो बहु हर्षवन्त ॥
तब चित प्रसन्न नरनाथ होय । पूजे सु सेठके चर्न दोय ॥३७॥

दोहा

पर उपकारी जीव जे, धनदत सेठ समान ।
तिनको दुर्लभ कछुक नहिं, सबही सुलभ सुजान ।३८।

गीता छन्द

धन पाल नृपको आद लेकर मुख्य भविजन जे जहां ॥
इह मंत्र शुभ नवकार महिमा देख हरषित है तहां ॥
अरहंत भाषित धरम निरमल भक्ति रति उन आदरो ।
तातें सबै भव जीव अब भी धरम में बुधको धरो ॥ ३९ ॥

दोहा

पूरन कथा जु इह भई, दृढ़ सूरत की जान ।
मंत्र प्रभाव सुपाइयो, तानें नाक सु थान ॥ ४० ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय दृढ़ सूरज चोरकी कथा समाप्तम् ।

जयपालनाममातंगकीकथाप्रारंभः२४

मंगलाचरण ॥ दोहा ॥

सुख दाता अरिहन्त को, धर्म हेत शिर नाथ ।
कहूं कथा मातंग की, पूजो सुरतिस आय ॥ १ ॥

चौपाई

नगर बनारस उत्तम थान । नृपति एक शाशन गुणवान ॥
इक दिन अपने देश मंझार । पंडित जन देखे अधिकार ।२।
रोग शांति करनेके काज । उद्यम कियो आप महाराज ।
श्री नंदीश्वर पर्व मंझार । कातिक की अष्टानिक सार ॥३॥
तामें घोष नवी नीराय । कोई जीव न मारो जाय ।
कैसो है धरमातम भूप । प्रजा विषय हितधार अनूप ॥४॥
सेठ पुत्र इक दुष्ट स्वभाव । सप्त विषन सेवै अधिकाव ।
धर्म नाम नृपको उद्यान । तामें गयो पापकी खान ॥५॥
नृपको मींढो तामें एक । मारो पापी रहित विवेक ।
ताको पल भख्यो तत्कार । अस्थि गाड़ियो भूमि मंझार ॥६॥
सप्त व्यसनके सेवनहार । तिनके दया न हृदय मंझार ।
इहलो बात सत्य पहचान । यामें मिथ्या रंच न जान ॥७॥
तबै पाक शाशन नरपाल । मींढो ढुंढवायो तत्काल ।
कहिंय न पायो याको खोज । हेरे चर नगरी में रोज ॥८॥
रैन समय बन पालक आय । निज नारीसे इमि बतलाय ।
सेठ तनुज ने मींढो मार । ताको पल भख्यो तिहवार ॥९॥

दोहा

इसकी बातें सुन सबै, हलकारे हरषाय ।
सब वृत्तान्त कहो भूपती, जिम मालिक बतलाय १०

राजा सुन मनरोशधर, लियो जम दंड बुलाय ।
आज्ञा इहविधिकी दई । तू सुनले चितलाय ॥११॥
धरम सेठको जो तनुज, धर्म परायन जान ।
ताको सूली दो अबै, रंचक देर न आन ॥ १२ ॥

चौपाई ।

नृप आज्ञा सुनके कुतवार । शूली निकट गयो तिहिवार ।
प्यादन को इम आज्ञा दई । एक चंडाल बुलावो सही ॥१३॥
सुन आज्ञा चरगये अभंग । जहँ जमपाल रहे मातंग ।
ताने व्रत लीनों परधान । ताको वर्णन सुनो सुजान ॥१४॥
इकदिन सर्व औषधी नाम । सुन भेटे इन कियो प्रनाम ।
धर्म सुनो जिन भाषित सार । दोनोंलोक सुधारनहार ॥१५
यम बालक नामा मातंग । यह विधि नेम लियो जु अभंग ।
दिन चौदश के पर्व मंझार । कोई जीव हनूं न लगार ॥१६॥
इहविधि नेम पवित्र अपार । पहले लीनोथो सुखकार ।
सो इन आवत देखे सही । कोतवाल के चाकर वही ॥१७॥

दोहा

नारी तें बतलाइयो, व्रत रक्षाके काज ।
हे प्रिये ऐसे भाषियो, गयो गांव वह आज ॥१८॥
ऐसे कह निज भामते छिपो धाममें जाय ।
शुद्ध बुद्ध धारक यही, इतने वे चरआय ॥ १९ ॥

अडिल्ल

तिनसेती चंडाली ऐसे वच कहे ।
गयो ग्राम मुझ नाथ आज जानो यहे ॥
तिस बच सुनकर किंकर ऐसे तब कहो ।
देव ठगो वह आज ग्रामको क्यों गयो ॥२०॥

सोरठा

सेठ पुत्रको आज, शूली देनोथो सही।
मिलतो सकल समाज, पट भूषण आदिक सबै २१।

पायता

किंकर बचसुन चंडारी। मन लोभ भयो अति भारी।
ऊपरते इमि बतलावे। वह ग्रामगयो कल आवे॥ २२॥
अरुसैन थकी बतलाई। गृह कोने माहिं छिपाई।
मायाचारी है नारी। फिर लोभ मिले जब भारी॥ २३॥
तबतो क्या कहो सुनावे। बहु विधिके चरित बनावे।
जिमि अगिन तेज है भाई। है पवन थकी अधिकाई॥२४॥

चाल मेघकुमार

कोतवारके चर तबै जी, पकड़ लियो चण्डाल। भूपति आगे लेगयोजी तब इनबचन उचार॥ हो स्वामी ममविनती उरधार २५

हे नरेश मुझ नेमहै जी, जीवन हनहूं आज। जो मनभावे सो करोजी, सुनलीजे नरराज॥ हो स्वामी ममविनती उरधार २६

इम सुनके तब नरपतीजी, कीनो क्रोध अपार। सेठपुत्र को दोप तैंजी ऐसे वचन उचार। सुनों चर लेजावो इन वेग २७।

इह शिसुमार विषय अवैरे, दोनों को दो डार। आज्ञा इह यम दण्ड सुनी जी, ठानी निज सिर धार॥ तबेही ले चालो तत्काल॥ २८॥

सेठ पुत्र चंडारको जी, गेरे द्रह मध जाय। क्रूर जन्तु जामे भरे जी, अरु जलकी नाई थाय॥ रे भाई धर्म बड़ो संसार २९

वृत रक्षाके कारनेजी, संकट सहे अपार। ता प्रभाव अनुरागले जी, आये सुर तत्कार॥ रे भाई धर्म बड़ो संसार॥ ३०॥

जलपे सिंहासन रचोजी तापर दियो बैठाय। फिर उत्तम जल

लायकेजी न्हौन कियो हरषाय ॥ रे भाई धर्म बड़ो संसार ॥३१॥
पटभूषण पहरायके जी दीने रतन अपार। यह कारन लख नृप तबै जी आयो हर्ष सुधार ॥ रे भाई धर्म बड़ो संसार ॥३२॥
गुण उज्जल यम पाल है जी ताको पूजो राय। बहु स्तुति मुखतें करीजी तू उत्तम अधिकाय ॥ रे भाई धर्म बड़ो संसार ३३
इह बिध भवि जन जानके जी धर्म करो अधिकाय। जो श्रीजिन वरने कहोजी स्वर्ग मुक्ति सुखदाय ॥ यह निश्चय मन धार ३४

छप्पय

घृत जुत जो चण्डार सुरोंकर पूजित होई।
तातें जगमें जात गर्व कीजो मत कोई ॥
देखो जिनवर धर्म लेश जिम चितमें धारो।
देवनकर भू मांहि पूज है सब अघ टारो ॥
सो श्रीभगवत धरम अब, तीन लोक में सुख करो।
अरुमेरे कल्याण कर, दुख दारिद्र बाधा हरो ।३५।

सोरठा

यम पालक मातंग, तासु कथा पूरी भई।
सुनते अघहों भंग, बहु कीरत जगमें बढ़े ॥३६॥

इतिश्री आराधनासार कथाकोष विषय यमपालनाम चाण्डारकी कथा समाप्तम्

मृगसेन धीवरकी कथा प्रारम्भः नं० २५

मंगलाचरण ॥ मरहटा छन्द ॥

केवल चखु धारी ज्ञान भण्डारी ऐसे श्री अरिहन्त।
सब जनके ज्ञाता जन सुखदाता धारें सुगुण अनन्त ॥
तिनको सिरनाऊं, भगत बढ़ाऊं कहूं कथा रसवन्त।
धीवर अघधारी हिंसा छारी ताकर भयो महन्त ॥ १ ॥

कड़खाछन्द

सर्व सन्देह तमदूर करने विषय भानकी किरने सम जैनबानी।
ग्यान सम जानकर प्रीतकर सेइये करे अघहान मुखलहै प्रानी ॥
खिरीजिन मुखथकी शब्द घनघोरसम श्रीगणधीश निजहियेआनी
अंग द्वादश तबै रचे पदरूप कर सोई जगवंत जगमें बखानी २

सवैया इकतीसा

अट्ठाईस मूल गुण पाले सदा प्रीति कर नगन स्वरूप धरे जग हितकारी हैं। ज्ञान के उदधिसार सुगुण तने भंडार भव दधिसेत और आप अणागारीहैं॥ बाईस परीषह जोर ताको सहे बार बार धर्म शुक्ल ध्यान गहे दया धर्म धारी हैं। ऐसे गुरु मेरे हिये बास करो मेटो त्रास हूजिये सहाय हम सरन तुम्हारी हैं ॥ ३ ॥

दोहा

ऐसे श्री अरहन्त को, और भारती माय।
गुरुको सीस नवाय के, कहूं कथा सुखदाय ॥ ४ ॥
यही मंगल रूप है, करम शान्ति करतार।
यातें सबको आदि में, इनको सुमरन सार ॥ ५ ॥

चौपाई

हिंसा सबजन को भै दार । नाम मात्र भी है दुखकार।
सोई हिंसा तीन प्रकार। पंडित जन त्यागो निरधार।६।
पितृ अर्थ इक जानों सई। दूजी देवता हित बरनई ॥
तृतिय शान्ति अर्थ निहार। त्यागी बुधलख दुख भंडार ॥ ७ ॥
हो भवि जन सुनिये मनलाय। बरत अहिंसा सब सुखदाय॥
तासु महात्तमको व्याख्यान। सुख दाता कल्याण निधान।८।

पद्धड़ी छन्द

रमणीक अवन्ती देश नाम । तामें श्रीयुत सुसरीख ग्राम ॥
तहां धीवर इक मृगसेन जान । सो पाप तनी मूरख अयान । ९।
इक दिन कांधे धर जाललीन । शिप्रा सरिताको गमन कीन ॥
मछियनके पकड़न हेत जाय । इतने मगमें एक मुनि लखाय ।१०।
तिनको इह भविलखि हर्षपाय । कांधेते जाल दियो बगाय ॥
बहु भक्तिवन्त ह्वै के तुरंत । उनके पदपूजे हर्षवन्त ॥ ११ ॥
कैसे है श्री मुनिराज चंद । जिन नाम जसोधर सु गुण बृंद ॥
सुर असुर चक्रधारी सुआय । तिनके पद पूजे सीस नाय । १२ ।
अरहन्त कथितनैस्याद बाद । तिस जाननको पंडित अगाध ॥
सबजन उद्धारन चित्तठान । अरु कमरकसी मुनि भटनिधान ।१३।
धर्मामृतकर सब जीवराश । पोषे त्रियलोक कियो प्रकाश ॥
निजबचन भरीचितमें प्रभाव । मिथ्यात अन्ध कीनो अभाव ।१४।

दोहा

दिशा रूप अम्बर धरे, रत्न त्रयकर लीन ।
ऐसे श्री मुनिराज लख, धीवर मन सुख कीन ।१५।
कहत भयो कर जोरके, अंग बसू भुवि लाय ।
स्वामी कर्म करीन्द्र को, तुम मृगेन्द्र भयदाय ॥ १६॥
कौन बरतकर नर लहे, नेम महा सुखदाय ।
इमि कह मस्तक नम्र करि, बैठो मौन लगाय । १७ ।

चौपाई

तबै जसोधर श्री मुनिराय । मनमें येम बिचार कराय ॥
इह धीवर हिंसक अधिकार । कैसे इन ब्रत चितमें धार ॥१८॥
अथवा बातजोग इहजान । कर्म चरित्र विचित्र महान ॥
अवधि जानबल ज्ञानतुरंत । तुच्छ आयु याकी लखिसंत ।१९।

दय। धुरंधर बोले ऐन। हे धीवर तू सुन मुझ बैन॥
आजजाल मधि पहिलोजीव। जो आवे सो छोड़सदीव।२०।
अहो जु महा भाग धीमान। मेरे बच हिरदेमें आन॥
यही नेम तूले गुणवंत। याहीको पालन कर सन्त ॥ २१ ॥
बहुरि जगतमें जो हितकार। ऐसो मंत्र दियो नवकार॥
फेर कह्यो तू राखियो याद। सदा सुमरियो तज परमाद॥२२॥
ऐसे धीवंर सुन मुनिबैन। स्वर्ग मोक्ष दाता सुख दैन॥
अपने मनमें हर्ष सुधार। मुनि बच कीने अंगीकार ॥ २३ ॥
जे जन गुरु बचकरें प्रमान। तिनको सुर शिवहै आसान॥
धींवर नम करके तिहंबार। शिप्रा नदी गयो तत्कार ॥ २४ ॥
डारो जाल नदी में तबै। दीरघ मत्स आइयो जबै॥
तब मनमें इमि कियो विचार। मैं पापी धींवर अधकार ॥२५॥
कोई पुन्य उदय मुझ भयो। श्री मुनि बरको दर्शन लयो॥
बहुरि बरत लीनो सुखखान। याते याके हनूं न प्रान ॥२६॥
ब्रत रच्छाके हेत सुजान। पट टूकरो बांधो तिस कान॥
छोड़ दियो सरिता महं सोय। ब्रत पाल्यो चित हर्षित होय।२७।
जे सत्पुरुष जीव जग मांहि। मरन प्रयन्त तजें ब्रत नांहि॥
विघन रहित पाले नित जेह। सुख सम्पतिको कारन येह।२८।

दोहा

दूर जाय डुहनी निकट, डारो याने जाल।
फिर वोही पाठी फंसो, आयो तब तत्काल ॥ २९ ॥
होनहार सुभगत जिसे, ऐसो धीवर सोय।
छोड़ दियो तिस मच्छको, चितमें हर्षित होय ॥३०॥
सकरी पति तिस जाल में, आयो बरयां पंच।
तब इस ने गह छोड़यो, भयो उदासन रंच ॥ ३१ ॥

सोरठा

मारतगड जिहिं बार छिपत, भयो पश्चिम दिशा ।
भूमधि सार असार, सबै अस्त होवैं सही ॥ ३२ ॥

चाल अहो जगत गुरुकी

तब ही इह मृगसेन चित्त में एम बिचारे ।
व्रत रक्षा के काज गुरु के बचन चितारे ॥
घरको चलो तुरन्त जाल लीनों तिन खाली ।
लख तब घंटा नार बचन बोली दे गाली ॥ ३३ ॥
रे मूरख मति मूढ़ गेह खाली क्यों आयो ।
अब क्या खाय पखान कटुक इमि बचन सुनायो ॥
करने लगो प्रवेश तबै निज घर तत्कारी ।
नारी दियो कपाट रह्यो यह घर के बारी ॥ ३४ ॥
आचारज इमि कहें जगत में हैं जे नारी ।
लाभ विषय अति प्यार नहीं नर करहै ख्वारी ॥
जबही धींवर नमस्कार मुखतें उच्चारत ।
बाहर गयो तुरन्त रैन में भूमि निहारत ॥ ३५ ॥
काष्टखगड इक पड़ो सोइ सिर नीचे दीनों ।
सोयो सुमिरन मन्त्र तहां अहिने उस लीनों ॥
दसों प्रानते रहित भयो ताही छिन मांही ।
प्रातकाल इस नारि देखकर अति पछितानी ॥ ३६ ॥

दोहा

तब इस घगटा नारने, मुख इम बचन उचार ।
परभव में एही पुरुष, हूजो मम भरतार ॥ ३७ ॥
ऐसो कियो निदान तब, सब जन देखत हाल ।
अगनि विषय जलती भई, अपने पतिकी नाल ॥ ३८ ॥

चौपाई

इस अन्तर इक नगरी जान। नाम विशाला है दुतवान ॥
तहां विश्वम्भर नाम नरेश। विश्वगुणा तिस नारी वेश ॥३६॥
तहां गुणपाल सेठ इक रहे। भक्ति जिनेश्वरकी चित गहे।
धन श्रीनाम तासुगृह नार। तनुजा भई सुबन्धा नार ॥४०॥
फिर तिसहीके गर्भ मंझार। पूरब पुन्य उदय अनुसार।
मृगसेन धीवर चर आय। गुण मण्डित तिष्ठो सुखदाय ॥४१॥
इस अन्तर अब नगर नरेश। नष्ट बुद्धिधारी जुविशेष।
नर्म भर्म इसको परधान। नर्म धर्म ताको सुतजान ॥४२॥
ताके हेत नृपति ने सही। इस गुणपाल बनिकते कही।
तुझ पुत्री जसुबन्धा येह। मन्त्रीके सुतको अब देह ॥ ४३ ॥
कैसी है कन्या दुतवन्त। सब परयन लखि हर्ष धरन्त।
सेठ विचारी मनके माहिं। यहतो कष्ट भयो अधिकाय ४४॥
नष्ट बुद्धि यह है नरधीस। कन्या मांगे बिस्वे बीस।
मन्त्री को सुत दुष्ट अपान। जो याको दूं कन्यादान ॥४५॥
तो अपकीरति जगमें होय। कुल कलंक लागे अब मोय।
अरु दूजो नाहीं इसवार। सरब नाशहै कष्ट अपार ॥ ४६ ॥
ऐसे भयकर आकुल थाय। मन विचार इस भांति कराय।
श्रीयदत्त वाणिक इक जान। याको मित्र सुहै अधिकान ४७
तिस घर गर्भवती निज नार। छोड़ चलो पुत्री लै लार।
भाग कुसंभी नगरी गयो। छिपकरके तहां रहतो भयो ॥४८॥
दुर्जन संग सदा दुख मूल। ताके ढिग नहिं रहिये भूल।
निज गृह तज देशान्तर जाय। तो पण ह्यांते सुख अधिकाय४९

दोहा

या अन्तर ऋषिराज दो, आये तिसही ग्राम।
शिवजु गुप्त मुनिगुप्त शुभ, हैं तिनके इह नाम ॥५०॥

चारित्र करी मण्डित प्रभू, सहत बहुत उपवास ।
श्रीयदत्त बाणिक गृह, आये गुणकी रास ॥५१॥

अडिल्ल

सो कल्याण निमित्त चाव चित धारके ।
पगगाहें जुग साधु सबै भ्रम टारके ॥
सम्पतिको भंडार दुःखटारन यही ।
जगत मांहिं अति सार अन्न दीनों सही ॥ ५२॥
ताकरि पुन्य उपायो वाने अति घनो ।
तिस पीछे इक कारन भयो सोही सुनो ॥
धन श्रीगर्भवती लखि लघु मुनिराज जी ।
सब कुटुम्ब ते रहित महा दुखदायजी ॥ ५३ ॥

सवैया इकतीसा

परघर रहने थकी भयोहै जो दुख अपार आभूषण आदिक रहित उदासीन है। जैसे खोटेकवि केरी काज दुखदाई होत, तैसे गर्भ पीड़ित सो आपदाकीदासी है॥ जैसे इसे देखकर लघुमुनि तिसवार बड़े मुनि रायसेती पूछो सुखरासी है। खा महाराज याने किये कौन पाप घोर कौन जीव याके गर्भ आयो सुखनासी है ॥५४॥

दोहा

ऐसे वच सुन शिव धनी, ज्ञान नेत्र धारन्त ।
श्रीजिनेंद्र कहतेभये, सप्त तत्व सुखवन्त ।५५॥
तिन जानन को अति निपुण, ऐसे मुनि शिव गुप्त ।
कहत भये मुनि गुप्त तें, ज्ञान तलीने उक्त ॥५६॥

सवैया

वृथा वच ऐसे मत कहो अब साधु तुम यह केते दिनमांहि बसु सुख पावेगी । पुन्यके उदयतें राजमान बलवान अति ऐसो सुत जनसब दुःखको भगावेगी । धरमको धोरी बाल विश्वम्भर

नरपाल तासुकी सुताजो इह नारी कहलावेगी ॥ ऐसे कहे बैन साध सुन धनश्रीय तब मनमाहिं जानी अब विपति नसावेगी ॥ ५७ ॥

दोहा

यही वचन श्रीदत्त सुन, मनमें बहु दुख पाय ।
दुष्ट बुद्धि पापिष्ट अति, निज ग्रह तिष्टो जाय ॥५८॥

सोरठा

होनहार जो बाल, तासु सहन को दुःख यह ।
बगुलेवत तत्काल, कारन नित हेरा करे ॥५९॥

पद्धड़ी छंद

दुरजन जन विन कारन अयान। सज्जन जनतें बहुबैर ठान ।
अब एही धनश्री सेठ नार। सुत जयो पुन्यको पुंज सार ।६०।
परसूत दुःख ते है अचेत। मूर्छा आई नहिं रही चेत ।
तब यह पापी श्रीदत्त थाय । ऐसे बच प्रकटाकिये सुनाय ६१॥
हूवो धनश्रीके मृतक बाल। ऐसे कह बुलवायो चन्डाल ।
खोटी बुध धारक चित मलीन । मारनको बालक सौंप दीन ६२
जे बैरीजे जगमें बिख्यात। तेभी शिशुकी नहिं करत घात ॥
हा कष्ट बड़ो जगमें दिखात ।दुरजन अहिवत् क्या नहिंकरात ६३
जे मात गले शिशु रूपवन्त । मारन थानक पहुंचो तुरन्त ॥
इम दीन देखकर है दयाल। जीवतही तज आयो सुबाल ॥६४॥

दोहा

इस अन्तर श्रीदत्तको, भगनी पति तहां आय ।
ग्वाल थकी वृतान्त सुनि, तिस बालक ढिग जाय ।६५।
देख्यो बालक रूपवर, मानों दुती मयंक ।
गौपुत्र ताडिये खड़े, शिला सोय पर जंक ॥ ६६ ।

भानु समान जु बाल लखि, लीनों गोद उठाय ।
पुत्र रहित थो इन्द्रदत्त, भयो सुखी अधिकाय ॥६७॥

चौपाई

अपने पुत्र समान निहार । निज नारी ते बचन उचार ॥
हे राधे तू सुन चित लाय । गूढ़ गरभथो तुम सुखदाय ॥६८॥
सो इह पुत्र भयो बड़भाग । ले पालो तुमकर अनुराग ॥
ऐसे कह नारी कर दियो । सुत उत्साह नगरमें कियो ॥ ६९॥
पूरब पुन्य उदय तिस थाय । तहां बैरीकी कौन बसाय ॥
आपद सम्पत होय रसाल । दुख होवे सुख में तत्काल ॥७०॥
इस अन्तर श्रीदत्त अयान । बालकको बृतान्त सुजान ।
इन्द्रदत्त के घर तब आय । कपट रूप हित बहुत जनाय ।७१।
अपनी भगिनी ते इह बात । कहत भयो इह हर्षित गात ।
भाग्यवानहै यह तब बाल । मम गृह इस युत चल तत्काल ७२
वहांही बृद्धि होयगी सही । कपट रूप इम बातें कही ॥
तबही लेय गयो निज धाम । बहन युक्त तासुत अभिराम ।७३।
जेजन दुष्ट चित्त अघमोर । मनमें और बचन कछु और ॥
कायाते कछु औरहि करे । ठगने में चतुराई धरे ॥७४॥
ऐसे इह श्रीदत्त मलीन । शिशु मारनकी इच्छा कीन ॥
पहिले तब चण्डाल बुलाय । कहत भयो याको ले जाय ॥७५॥
शीघ्र हतो तुम याके प्रान । निर्दय मन इम बचन बखान ॥
सो मातंग लेयकर गयो । रूप देख करुणा में भयो ॥ ७६ ॥

दोहा

एक गुफा ढिग जायकर, उत्तम बृक्ष निहार ।
सरिता बहै सुहावनी, तातट बालक डार ॥ ७७ ॥
दयावान मातंग है, हने न बालक प्रान ।
निज घर आये डारकर, बाल रहो तिह थान ॥७८॥

पद्धडी

गुणपाल पुत्र अति पुन्यवान। तहां एक गोप आयो सुजान।
अभिराम नाम ताको निहार। ताने अचरज देख्यो अपार ॥७९॥
गौवनके थनते दुग्ध धार। स्वयमेव कसे आनन्द कार ॥
जिमि धाय हस्तमें बालहोत। तिस थनते क्षीरझरो बहोत ॥८०॥
सो इह गोपाल निहार येम। फिर शिशु मुख देख्यो कंजजेम।
सो संध्याको निज धाम आय। गोबिन्द गोपको सब सुनाय ८१
सो सुनकरके आश्चर्यवान। इह गोपवती चित हर्ष ठान।
तिसठाम जाय सुत सम निहार। लाकर सौंप्यो तियकर मझार ८२
पालो सुमुनिन्द्रा हर्ष लीन। धन कीर्त्ति नाम प्रकटो प्रवीन ॥
बहु प्रीति सहित तिस तात मात। हितधारे वृद्धि करैं सुगात।८३

सवैया

कैसा इह बाल रूप गोपनैन कंज सम ताहि विकसावन को अमृत समान है। सर्व देह लक्षण पूरण विराज मान अद्भुत प्रीति उपजावै गुणवान है। रूप काम के समान प्रभा जु मयंक मान तेज उदय भानवत जन सुख दान है। ऐसो दुतिवन्त बाल धर्म जाके सदा नाल वृद्धि होत गोप गेह पुन्य को निधान है ॥ ८४ ॥

दोहा

एकै दिन श्रीदत्त अब, दुष्ट चित्त अधिकाय।
घिरत हेत घर गोप के, आयो चित उमगाय ॥८५॥
इस बालक को देखकर, सब वृतान्त इह जान।
कहत भयो गोविन्दतें, सुनियो ग्वाल सुजान ॥८६॥

चौपाई

मेरे घरमें है कछु काज। इस बालक कूं भेजूं आज ॥

कागज लिखकर देहुं तुरन्त । आज्ञादेवो अबै महन्त ॥८७॥
सिद्धातम गोबिन्द गुवाल । कहतेही भेज्यो तत्काल ॥
जे जन दुष्ट चित्त अधिकाय । तिनको भेद न जान्यो जाय ॥८८॥
तब पापी कागज करलीन । ऐसे अच्चर लिखे मलीन ॥
इह बालक बलवन्त अपार । हम कुल तरुको है चयकार ॥८६॥
प्रजलतकाल अगन सम जान । धन कीरति उज्जल गुणखान ॥
याहि पकड़ियो ममबच मान । मूसलते हनियो इहप्रान ॥६०॥
ब्रह्मनाम सुतको इहबात । लिखकर दीनो बालक हात ॥
कंठ बांधकर चलो तुरंत । इह बालक अतिही बलवन्त ।६१।
चलत चलत पहुंचो गुणरास । उज्जैनी नगरीके पास ॥
मारग खेद निवारनहेत । आमृ तले सोयो सु अचेत ॥ ६२ ॥
या अन्तर इक कारन भयो । गणका बाग चलत चितठयो ॥
सब परिवार संगले बाम । जूंटे पुष्प बढ़ाये दाम ॥ ६३ ॥
अति चतुराई धाई सोय । नाम मदन सेन्या तिस जोय ॥
तरु सहकार तलै सोवन्त । बालक लखो महा दुतिवन्त ।६४।
पूरव जन्म कियो उपकार । ताकर उपजो मोह अपार ॥
फेर लखो ताकंठ मझार । कागज लेख सहित तियबार ।६५।
जतन थकी खोलो तत्काल । बांच लेख जानो सब हाल ॥
जानो सेठ महा दुटभाव । तब इन कीनो और उपाव ॥ ६६ ॥

दोहा

ताके अच्चर मेटियो कर चतुराई सार ।
चखुते सारंग सुत लियो, लता कलमकर धार ॥ ६७ ॥
ता मांहीं अच्चर लिखे, इह विधि भ्रांति निवार ।
ताको वरनन अब सुनो, पुन्य महा हितकार ॥ ६८ ॥

चौपाई।

सेठ औरते लिखियो येम। सुन मेरी नारी जुत येम॥
जो प्यारो मोहे जाने नार। तो यह कीजो काम अवार॥९९॥
इह बालक धन कीरत नाम। रूपवान अरु अति बलधाम॥
मुझ आये पहिलेंही जान। कन्या श्री यमती गुणवान।१००।
दान मानकर दीजों ब्याह। याकी साथ सहित उत्साह॥
ऐसा लिखकर गणका तबै। याके कंठ बांधियो जबै॥ १॥
तिस अंतर धन कीरत जाग। सेठ धाम पहुंचो बड़भाग॥
सेठ भाम अरु सुतको जोय। कागज तिनकर दीनो सोय।२।
तातें बाचतही परमान। याको दीनो कन्या दान॥
जे हैं पुन्यवान अधिकार। तिनको सुख है कष्ट मझार॥३॥

दोहा

अब धन कीरति की सबै, बात सुनी श्री दत्त।
ताही दिन घरको चलो, अति व्याकुल ह्वै चित्त॥४॥
एक पुरुष चराडी भवन, दीनों इन बैठाय।
जो आवे निसि पूजने, तू हनियो तिस काय॥ ५॥

चौपाई

इमि कहकर निज आयोधाम। तनुजा पतिते कह्यो ललाम॥
यह हमरे कुलकी है रीत। रात्रि समय चंडी गृह भीत॥६॥
उड़द बाल लेके कर जाय। कीर काकको देय खवाय॥
इमि कह रक्त वस्त्रमें धार। देकर कहि जावो इहवार॥ ७॥
उत्सव सुन धन कीरत बाल। कहत भयो जाऊं तत्काल॥
सुसरे करते लेपट लाल। आरज चित्त चलो दर हाल॥ ८॥
नगर बाह्य अंधियारी रात। नाम महाबल नारी भ्रात॥
पेख इसे बोलो सुन बैन। कहां आज हो तुम इस रैन॥९॥

तब इह कहत भयो इम बात। आज्ञा दई तुम्हारे तात ॥
कात्यायनी सुरी विकराल। ताको भेट देहु इह हाल ॥ १० ॥
सो मैं जाऊं तिसके धाम। और नहीं मेरो कछु काम ॥
तब याको सालो हरषाय। कहत भयो तू निज घर जाय ॥ ११ ॥
मैं जाऊंगो चंडी थान। तब धन कीरत बच्यो जान ॥
तुमरो तात करेगो रोष। तुम मति जावो हे गुण कोष ॥ १२ ॥

दोहा।

तो पणमी जातो भयो, चंडी के स्थान।
धन कीरति निराबिघ्न तब, आयो घर बुधवान ॥ १३ ॥
गयो बेग चंडी भवन, नाम महा बल जोय।
तब उस नर ने शीघ्र ही, मारो अति से सोय ॥ १४ ॥

छप्पय

जिस के पूरब पुन्य उदै होवे अधिकाई।
काल रूप विकराल अगन जल सम हो जाई ॥
बारिध हो थल रूप शत्रु हो मित्र समाना।
हालाहल जो जहर होत सो सुधा प्रमाना ॥
अरु होवे आपद सम्पदा, विघन उलट सुख विस्तरे।
तातें सुर शिव बीज यह, पुन्य करो गुर उच्चरे ॥ १५ ॥
कैसो है यह पुन्य दुख नाशक पहिचानो।
बरनो श्री जिन चन्द्र तहां इम भेद बखानो ॥
अर्चा भगवत तनी दान पात्र को दीजे।
ब्रत जु शील उपवास आद बहु बिध सों कीजे ॥
सो या प्रकार इस धर्म को, भव्य जीव हिरदे धरो।
अनुकम्पा सब जन नये, कर के अघतम को हरो ॥ १६ ॥

पायता

इस अन्तर अब सुन भाई। पापी श्रीदत्त अन्याई ॥
निजपुत्र दुःख में भीनों। अपनो चित ब्याकुल कीनों ॥१७॥
एकान्त बिशाखा नारी। तासों इम बात उचारी ॥
हे प्यारी अब सुन मेरी। मोह सुतकी पीड़ घनेरी ॥ १८ ॥
यह धन कीरति जो थाई। मम कुल नाशक दुखदाई ॥
सो क्योंकर मारो जावे। जब मो चित साता पावे ॥ १९ ॥
हमरे घरमें तिष्टन्तो। यह बैरी अति बलवन्तो ॥
तब बोली वह सेठानी। अब नाथ सुनों मुझ बानी ॥ २० ॥
तुम बृद्ध भये अधिकाई। यातैं सब बुद्धि नसाई ॥
मैं करूं बेग उपकारी। ऐसे इन गिरा उचारी ॥ २१ ॥

दोहा

ऐसे कह निज नाथ को, धीरज बहुत बंधाय।
मोदक ज़हर तने किये, औरे दिन दो भाय ॥ २२ ॥
पाप विषय पंडित महा, नार विशाखा येह।
पुत्री से कहती भई, तू सुनले गुणगेह ॥ २३ ॥
सुता समाने स्वेत बहु, मोदक अति सुखदाय ॥
अपने पतिको दीजिये, ऐसो बैन कहाय ॥ २४ ॥
स्याम बरन लाडू जुए, तू दीजो निज तात।
इम कह सरिता मह गई, मंजनको हरखात ॥ २५ ॥

पद्धड़ी।

पीछे श्रीमति कीनों विचार। जगमें जानो जो वस्तु सार ॥
जो पिता जोग देनीं तुरन्त। यह बात कहैं सबही महन्त ।२६।
माताके चितकी नाहिं ज्ञान। निज पिता भक्ति हिरदे सुठान ॥
लाडू सुविपर्जय तब खुलाय। श्रीदत्त मुयो बहु दुःखपाय ॥२७॥

जगमाहिं कुकर्मी जीव जोय। तिनके कल्याण न होत कोय॥
फिर भाम विशाखा आनि तेह। भरतार विना लखि शून्यगेह २८
तहँ शोक किये तिन बार बार। अरु रुदन सहित कीनों पुकार॥
फिर पुत्रीने इम बच बखान। खोटी चेष्टा तुम्हतात ठान॥ २९॥
सो अपनो बंश कियो विनाश। अब सुखसों तिष्ठो तुम अवाश॥
ऐसे इन्द्रानी जुत नरिन्द्र। तैसे तुम सुख भुगतो करिंद्र।३०।

दोहा

यूं असीस बहु देय के, वोभी मोदक खाय।
जयपुर को जाती भई, जैसी मति गति पाय॥ ३१॥

सोरठा

दुष्ट मती जो थाय, परको विघन करे घने।
ते भी दुख को पाय, खोटी गतिको जात हैं॥ ३२॥

अडिल्ल

अब धन कीरति सुखसों तिष्ठत है सही।
पंच आपदा पुन्य थकी सो तिन जई॥
इक दिना विश्वम्भर नामानर पती।
याको रूप निहारो जैसे रति पती॥ ३३॥
अपने मन में बहु आश्चर्य जु आन के।
निज पुत्री दीनों इस को हित ठान के॥
नाना बिधि के रतन वस्त्र ले सार जी।
दियो दात जो वहुत महाहित धार जी॥ ३४॥

दोहा।

दई सेठ पदवी तबै, भई सु जैजै कार।
जैन धरम परसादतें, होवे शिव पदसार॥ ३५॥

चौपाई

पुत्र प्रताप सुनों गुणमाल । ताढिग कोसांबी गुणमाल ॥
आयो उज्जैनी दुतिवन्त । धन कीरति सों मिलो तुरन्त ॥ ३६॥
पिता पुत्र तिष्ठे सुखपाय । सम्पति भोगैं पुन्य बसाय ॥
पांचों इन्द्रीके सुख जेह । भोगत नाना विधि के तेह ॥ ३७॥
सुखकी याकर धर्म रसाल । सावधान पाले अघटाल ॥
श्री जिन चरन कमल सेवन्त । बहु विधि भक्ति हिये धारन्त ।३८।
ज्ञान मई सम्पत कर लीन । पात्र दान देवें परवीन ॥
पर उपकारी इह बड़भाग । भव्य जीवसों अति अनुराग ॥ ३९॥
बहुत कहनते कौन विचार । सब इह पुन्य तनों फलसार ॥
जग जन चित्त करत आनन्द । भोगे बहुत काल सुख वृन्द।४०।
इस अन्तर अब इक दिन जान । गुण उज्जल गुण पाल महान ॥
मुनि बन्दनको कियो बिचार । पुत्र मित्र संगले परिवार ।४१।

चौपाई

नाम अनंग सेना सहित, वेश्याभी संग लेय ।
बनमें पहुंचे जायके, चितमें हर्ष धरेय ॥ ४२ ॥

सोरठा

तीन जगत हितकार, नाम जसोधर मुनि भले ।
बन्दे भक्ति सुधार, फेर प्रश्न कियो सेठ ने ॥ ४३ ॥

गीता छन्द

हे नाथ यह धन कीर्ति मो सुत कौन पूरब पुन कियो ।
जाते सु बालक वय विषय इन सर्व आपद जे लियो ॥
धनवान कीरतवान दाता कला दुति गुणवान है ।
चित दया धारे भोगता अरु महा शर्म निधान है ॥ ४४ ॥
सो आप हे भगवान अबही कहन लायक हो सही ।

मेरे जु इच्छा सुनो केरी एम कह कर चुप गही ॥
तब चार ज्ञान धरे मुनीश्वर दया वारिध इम कही ।
हे वणिकपति सुन चित्त देकर सब चरित्र कहूं सही ॥ ४५ ॥

चौपाई

देश अवंती है अभिराम । तामें एक सिरीष सुग्राम ॥
ताबासी धींवर मृग सैन । सुने जसोधर मुनिके बैन ॥ ४६ ॥
लियो तहां इकव्रत बड़भाग । ताको पालो जुत अनुराग ॥
तिसही पुन्य तने परभाय । यह धनकीरति उपजो आय ।४७।
इसकी जो थी घंटा नार । सो निदान करके तन छार ॥
श्रीमती उपजी इह आय । याकी भाम भई सुख दाय ॥ ४८ ॥
अरु वो मच्छ तनो चर जान । भई अनंग सेना इह आन ॥
पर उपकार करनमें लीन । इह गणिका अतिही परवीन ।४९।
अहो सेठ सुन चित्तलगाय । वरत अहिंसा फल इहथाय ॥
जे जन जैनधर्म चितधरें । तिनके सबही बांछित सरें ॥५०॥
ऐसे सुनकर बचन रसाल । सुरशिव दायक सुन गुणपाल ॥
श्री जिनवरको धर्म महान । हिरदयमें धारो अधिकान । ५१ ।

दोहा

धन कीरति अरु श्री मती, तीजी वेश्या थाय ।
निज भव सुन ताही समय, जाती सुमरन पाय ॥ ५२ ॥
मन वच काय लगाय के, चित में राग सुधार ।
जानो फल इह करमको, फिर इम कियो विचार । ५३ ।

चाल मेघ कुमार की

अब धन कीरति सेठने जी, श्री मुनि को सिरनाय । भगवत दीक्षा तब लई जी, केश लौंच कराय ॥ सयाने धर्म वड़ो संसार ॥ ५४ ॥

निरमल तप बहु विधि किये जी तीनों काल मझार। भव्य जीव बोधे घने जी यश फैलो अधिकार ॥ सयाने धर्म बड़ो संसार ॥

श्रीमति जिनवर चंद्रने जी भाषा धर्म अबाध। ताकी परभावन करीजी, रत्नत्रय आराध ॥ सयाने धर्म बड़ो संसार ५६

अन्त सलेखन विध धरीजी प्रायोगमन सुठान। सरवारथ सिद्धी गये जी तजके तबही प्रान ॥ सयाने धर्म बड़ो संसार।

पहिले भव इक मच्छको जी छोड़ो पंच सुबार। ता फल कर सुख पाइयो जी आपद पंच निवार ॥ सयाने, धर्म बड़ो संसार

दोहा

ताके पीछे श्री मती, अरगण का हित धार।
यथा योग्य सिच्छा लई, सब तें मोह निवार ॥ ६० ॥
अपने अपने भाव तें, पायो स्वर्ग सुथान।
जैन धर्म परसाद तें, होवे सब कल्यान ॥ ६१ ॥

काव्य

ऐसे श्री जिन सूत्र विषय भाषी हितकारी।
कथा अहिंसा बरततनी भवि जनको प्यारी ॥
सो बरनी संक्षेप पथ की मै ने सुखदाई।
करि है सब कल्याण भव्य गण हिरदे भाई ॥ ६२ ॥
कथा धर्म अनुराग धार तुच्छ बुध से बरनी।
नाना विधि के हर्ष सुःख उपजावन धरनी॥
बिघन समूह अपार तास नासन को बन्ही।
हिंसा त्यागो बेगं भव्य जे हैं शुभ मन्ही ॥ ६३ ॥

छप्पय

तिलक भूत शोभायमान श्री मूल संघवर।
कुन्द कुन्द भए तांस भए मल्ल भूषण गुरु ॥

ज्ञानावुध निसपन्‍ह सिंहनंदी मुनि जानो।
भवि जनको संसार सिन्धु तारन हिय आनो॥
ऐसे श्री आचार्य गुरु, नमस्कार तिनको करूं।
नंदो विरदो चिरकाल लों, चरनाम्बुज में हिय धरूं।६४।

काव्य

कथा कोष इह ग्रन्थ देव वानी में जो है।
ताही के अनुसार कियो भाषा में सो है॥
वन्द प्रबन्ध मंझार भव्य सुनिये हितकारी।
बखतावर अरु रतन कहो तुछ बुध अनुसारी॥६५॥

इती श्री आराधनासार कथा कोष विषय अहिंसा धर्म मृग सेन धींवर ने पालो ताकी कथा समाप्तम्।

अथ राजा वसुने असत्य बचन को सत्य

कहा ताकी कथा प्रारम्भः नं० २६

। मंगलाचरण॥ काव्य।

सुर असुरन कर पूजनीक तिन चरन भले हैं।
ऐसे श्री अरिहन्त सकल जिन करम दले हैं।
जग जन के हित कार तिनों को सीस नमाऊं।
असत बचन नृप वसु कह्यो तिस कथा सुनाऊं॥१॥

दोहा

पुरी स्वस्तिकावती में, विश्वा वसु भूपाल।
श्रीय मती रानी भली, पुत्र वसू अरिसाल॥२॥

सवैया इकतीसा

ताहीं नगरी मझार उपाध्याय एक सार, नाम खीर कन्द वसु महा बुधवान है। उजल स्वभाव धरे विप्रवर माहिं सिरे जिन पद सेवन में अलि की समान है। जैन धर्म कृया में रहे

सावधान नित, भव्य जन सीखन को देत विद्या दान है।
ताके स्वस्ति मती नार शील की धरन हार, पति सेव करन में
सदा सावधान है ॥ ३ ॥

चौपाई

तिन दोनों के कर्म वसाय। पापी पुत्र भयो दुख दाय।
परवत नाम तासु को जान। खोटे कर्म विषय रति ठान॥ ४ ॥
एक विदेशी विप्र महन्त। नारद नाम महा गुण वन्त।
मद वर्जित जिन पदको भक्त। विद्या पढ़न विषय अनुरक्त॥ ५ ॥
सोभी आयो तिस ही थान। खीर कन्द के ढिग बुधवान।
अरुवसु नृपको सुत तहँ आय। पढ़ै सु विद्या चित्त लगाय ॥ ६ ॥
खीर कन्द सुत परवत जेह। और वसू दूजो गिन लेह।
तीजो नारद विप्र उदार। ये त्रिय शास्त्र पढ़ें हित धार ॥ ७ ॥
वसु नारद पढ़ भये प्रवीन। भूमृत ने नाहिं विद्या लीन।
इकदिन स्वस्ति मती दुखपाय। निज पतितैंइमि गिरासुनाय ॥८॥
तुमने अपने सुतको सही। विद्या दान नरंचक दई ।
खीर कन्द बोलो सुन नार। तेरो सुत मूरख अधिकार ॥ ९ ॥
पापातम कछु नाहिं भनन्त। हे प्यारी कीजे किह भन्त।
इस विसवास उपावन काज। कीनों पाठक एक इलाज॥ १० ॥
तीनों शिष्य बुलवाये पास। ऐसे बात कही गुण रास।
कौडी ले वानक पथ जाय। तीनों पेट भरो सुखपाय ॥ ११ ॥
फिर बराट ल्याले गुण रास। जल्दी आयो मेरे पास।
इमि सुन तीनों चले उमाहिं। बानक पथमें न्यारे जाहिं॥ १२ ॥

दोहा

जा वानककी हाट पर, पापी परबत जोय।
कौड़ी के लेकर चने, खाकर हर्षित होय ॥ १३ ॥

खीली आयो धाम में, जबही गुरुके पास।
बिना पुन्य नहिं पाइये, जगमे बुद्धि बिलास ॥ १४ ॥
बसु नारद दोनों जने, लीने चने जु मोल।
बिर्थी और बाजार में, बेचत भये सु डोल ॥ १५ ॥
तामें नफ़ो उठायके, भोजन कर ले दाम।
गुरुपे आयो बेगही, वे दोनो गुण धाम ॥ १६ ॥

चोपाई

फिर पिट्ठी के अजा बनाय। तीनों कर दीने समझाय।
जहँ कोई देखे नहिं आन। तहँ तुम छेदो इनके कान ॥ १७ ॥
ऐसे गुरु कह भेजे तबै। आज्ञा पाय चले ये जबै।
परबत देख सुन्य अस्थान। छेदे अजा तनें जो कान ॥ १८ ॥
अरु वे दोनों बनमें जाय। करत बिचार फिरे अधिकाय।
अहो चन्द सूरज ग्रह देव। ब्यन्तर पशु पंच्छी बहु भेव ॥ १९ ॥
मुनिज्ञानी देखत हैं सदा। हमतो कान न छेदें कदा ॥
इमि विचारकर गुरु पे आय। नमन कियो बहु सीस नवाय ।२०।
अपनी अपनी बुद्धि समान। गुरु ढिग तीनों कियो बखान ॥
पाठक इह लिखके बिरतन्त। दोनों शिष जाने बुधिवन्त ॥

दोहा

नारी ते सबही चरित, बिप्र कहो तिह काल।
हे प्यारी तू देखले, अपने सुत की चाल ॥
एक दिना बसु राज सुत, कीनो कछुक बिगार।
तब गुरु मारन कारने, करमें लकड़ी धार ॥

पायता।

तब स्वस्तमती गुरु नारी। छुड़वाय दियो तिहवारी ॥
जब बसू चित्त हरषायो। कछु मांगो येव सुनायो ॥ २१ ॥

कह स्वस्तमती सुन लीजे। बर मांगों जब मोहि दीजे।
वसु कहो सु यही करूंहूं। तेरो बच हिरदे धरूं हूं। २५।
इस अन्तर इक दिन जानो। अध्यापक इह बुधिवानो।
उठके कानन कों धाये। तीनो शिष अङ्ग सु आये॥ २६॥
तहँ निर्मल भूमि निहारी। चारों तिष्ठे हितधारी॥
वृहदारण शास्त्र बखाने। क्रीड़ा बहु विधि चित ठानें॥२७॥

दोहा

तिसही अस्थानक विषय, जुग चारन मुनि चन्द।
तिष्ठ थे स्वाध्याय कर, तीन लोक सुख कन्द॥ २८॥

पद्धड़ी छन्द

इन चारों को भणते निहार। बहु विनय सहित लघु मुनि उचार॥
हो स्वामी इह चारों पुमान। देखो किमि वेद करें बखान॥ २६॥
बोले तब दीरघ मुनि दयाल। बहु ज्ञान नैत्र धारे विशाल॥
इन वेद जीवके माहिं जान। दो उरधगतीके पात्र मान॥३०॥
तब खीर कन्द बुधवानसार। मुनिबच सुन हिरदे माहिंधार॥
तीनों शिष विदाकिये तुरंत। मुनिराज पास पहुंचो महंत।३१।
बहु नम्न अनकर प्रश्नकीन। को स्वर्ग नर्क जावे प्रवीन॥
तब काम जई मुनिराज एम। याने भाषे धरके सुपेम॥

सोरठा

सुन विप्र नकुलचन्द, इक आपाको जान ले।
दुतिं नारद गुण वृन्द, ऊंची गति पावे सही॥ ३३॥
वसु परवत दुखकार, तेरे शिष्य अपान हैं।
सो निश्चय उरधार, नर्क जाय बहु दुख सहैं॥ ३४॥

चौपाई

इमि बच सुन यह विप्र महान। गुरुके बचननमें हिठ ठान॥
पुत्र दुःखतें व्याकुल चित्त। द्वै विचार तिन कियो पवित्त।३५।

काल अनंत जाय तहंकीक। तौ भी मुनिवच नहीं अलीक॥
इमि चितवन करकेतब येह। बुध आकर आयो निज गेह।३६।
इस अंतर विश्वाबसु राय। मन वैराग विषय तिनलाय॥
अपने बसु सुतको दे राज। आपगये बनमें तप काज॥३७॥
अब इह बसु नृपराज करंत। पाले परजा हर्ष धरंत॥
एकै दिन क्रीडाके हेत। बनमें पहुंचो हरष समेत॥ ३८ ॥
तहं नभते पत्तीगण आय। भूमें पड़ते देखे राय॥
तब आश्चर्यवान है भूप। इहां कोइ कारन है जो अनूप।३९।
इमि विचार सामायक लेह। हेत परीक्षा छोड़ो तेह॥
सो वह बान पड़ो भू आय। तब नरेश उस थानक जाय।४०।
सब वृतान्त लखिके बुधवंत। देख्यो थम्भ एक द्युतिवंत॥
स्वेत वरन नभमें सोहंत। पत्ती भूमजे नाहि लखंत॥ ४१॥
लगकर गिरे सु भूमि मझार। यह अचरज देखो तिहबार॥
तब बसु गूढ़ खंभको लाय। ताके पाये चार बनाय॥ ४२॥
ता ऊपर सिंहासन थाय। सभा विषय बैठो सो आय॥
मायाधरके एक कहाय। मैं सतवादी हूं अधिकाय॥ ४३॥
सत्य तनें जानो परसाद। मुझ विष्टर है अधर अबाध॥
इम ठग विद्या बहु परकाश। जन जाने तिष्ठो आकाश।४४।
जे मायाचारी ठग मूढ़। कोको कारज करे न गूढ़॥
सबही करें दया चित्त नांहि। सोतो निंद नीच गति जांहि।४५।
अब वह खीर कंद् बड़भाग। सम दृष्टी जिन मतसे राग॥
तज संसार सनें जु उपाध। गुण उज्जल हूवो तब साध।४६।
स्वर्ग मोक्ष दाता तपसार। जिन बांछितकर बारम्बार॥
अंत सन्यास मरनको ठान। पायो भयो सुस्वर्ग बिमान।४७।

दोहा

या अन्तर इनको तनुज, पापी परवत सोय ॥
पिता पट्ट बैठत भयो, चित अजीविका जोय ॥ ४८ ॥

काव्य

अब नारद प्रभु चरन कमलको भ्रमरस मानो ।
बुद्धिवान जसवान कियो परदेश पयानो ॥
बहुत दिनन के बीच सर्व शास्त्रनको ज्ञाता ।
आयो पर्वत पास जान गुरु सुत सुख दाता ॥ ४९ ॥

चौपाई

इक दिन परवत वेद भनंत । तामें शब्द सुएम कहंत ॥
अजैर्यष्टव्यं उचार । ताको अर्थ कह्यो दुखकार ॥ ५० ॥
अजा नाम बकरेको जान । ताकर यज्ञ कह्यो इस थान ॥
पापातम ऐसे बरनयो । तब नारदने वच इमि च्यो ॥ ५१ ॥
हे भ्राता सुन चित्त लगाय । याको अर्थ जु इह बिध थाय ॥
तीन वर्षके उपजे धान । ताको होम कह्यो भगवान ॥ ५२ ॥
उपाध्यायने हमको कही । याको अर्थसु इस बिध सही ॥
अहो मूढ़ तू चित्त बिचार । तू ने क्या नहिं पढो लबार ।५३।
फिरभी पापी भू मृत कही । यज्ञ अजाको करनो सही ॥
जाकी गति खोटी दुखदाय । सांच बातको झूठ कहाय ॥ ५४॥
बहुत बिवाद भयो इन माहि । निज वच टेव तजे कोई नाहि ॥
तब परतिज्ञा इह बिध कीन । जो कोइ झूठो होय मलीन ॥५५॥
तिस रसना छेदे वसुराय । ऐसे कह तिष्ठे घर जाय ॥
स्वस्तिमती परबतकी माय । अपने सुततें इमि बतलाय ॥५६॥
पाप रूप कीनों व्याख्यान । खोटी मतिते चितमें ठान ॥
तेरो तात महा शुभ चित्त । जैन धर्म सेवे थो नित्त ॥ ५७ ॥

उसने थान तनों यज्ञ कह्यो । ते भाषो सो कभियन चयो ॥
पुन्यरूप ताको थी बुद्ध । ताको सुत तू भयो कुबुद्ध ॥ ५८ ॥

दोहा

फिर निज सुतको मोहधर, गई वसू नृप पास ।
कहत भई सुभ्भबर अबै, दीजे हो गुणरास ॥५९॥
कहो वसूले शीघ्रही, जो तुम्हरे चित चाय ।
स्वास्तिमती कहती भई, सुन अब तू नरराय ॥ ६० ॥
मेरो सुत जिह बिध कहे, सो कीजो परमान ।
तब बसुने आरे करी, गई सु अपने थान ॥६१॥
आप पाप जे करत हैं, औरन पास करात ।
जैसे अहि परतन डसे, जहर रूप हो जात ॥६२॥

छप्पय

प्रातकालके विषय गये दोऊ बाद चित्त धर ।
पापातम बसुराय थयो सिंहासन ऊपर ॥ ६३ ॥
तासों नारद कही सुनो राजा चित लाई ।
अजा शब्दको अर्थ कहो जिमि गुरु बतलाई ॥६४॥
इह पापी जानत तऊ, असत रूप कहतो भयो ।
परवतके बच सत्यहैं, यही बिधी गुरुने चयो ॥६५॥

कड़खा छन्द

झूठ परचंसडते टूट पायो गये फटी अवनी भयो शोर भारी ।
कण्ठ पर्यन्त नृप गढो भूमि मधि तबै जबै नारद गिरा इमिउचारी॥
अहो अबभी सुनो आप वसुरायजी भनो गुरु पाससो कहो सारी।
वृथा गति नीचको जावो मत आपही बोलबच झूठबहु पापकारी ६६
इमि कहो विप्रने सभा सबही सुन पापके उदय वसु फेर भाखी ।
कहे परवत सोई सांच जानो यही अपने बचनकी टेक राखी ॥

गड़े ताही समय आप अवनी विषय सबैजन देखकर भये साखी
नरक सप्तम गयो दुख बहु विध सहो दुष्टको चित्त जिमिहोत माखी ॥

दोहा

पापी जनजे जगत में, दुष्ट चित्त अधिकाय ।
झूंठ बोल इहँ दुख सहैं, मरके दुरगति जाय ॥ ६८ ॥

सोरठा

प्राण जाय तत्कार, तौ असत्य नहिं भाषियो ।
सत्य जगत में सार, भव्य जीव भाखो सदा ॥ ६९ ॥

पायता

तब पुरजन मिल अधिकाई । पर्वतखर दियो चढ़ाई ।
याको अति दुष्ट निहारो । फिर दीनो देश निकारो ॥७०॥
फिर सज्जन मिल हितकारी । नारदकी भक्ति सुधारी ।
याको पूजो अधिकाई । मुखते अस्तुति बहु गाई ॥ ७१ ॥

दोहा

वह नारद अतिही चतुर, जैन धर्म परवीन ।
शकल शास्त्र जाने सुधी, जग यश तिन बहु लीन ॥७२॥

चौपाई

गिरतट नगरी तनों नरेश । होत भयो यह जेम दिनेश ।
बहुत काल भोगे सुख सार। पूजा दान वरत चित धार ॥७३॥
फिर वैराग्य भावना भाय । जिन दीक्षा लीनी बन जाय ॥
करके तप भयन सम्बोध । रत्न त्रय पाले सुध बोध ॥ ७४ ॥
भगवत चरन कमलको दास । जगत सुःखकी त्यागी आस ॥
सर्वारथ सिध भयो तुरन्त । तहां सुःख भोगे बहु भन्त ॥७५॥
श्री जिनवर के धर्म प्रसाद । भव सुख पावै क्यों न अबाद ॥
तातें जैन धर्म चित धरो । मिथ्या मतको त्यागन करो ॥७६॥

दोहा

श्रीमान जो विप्र कुल, मणि समान दीपन्त।
नारद सत्पुरुषन विषय, मंगल करो अनन्त ॥७७॥
सर्व कुबादी जीतियो, मद वर्जित बुधवान।
जिन मत अम्बुध वृद्धिकी, करे सोच दसमान ॥७८॥
ऐसे नारदको नमैं, कवि बहु बिधि सिर नाय॥
मंगल कारक हूजिये, दीजे दुःख नसाय॥ ७९ ॥
वसु नारद परबत तनी, कथा सु पूरन कीन॥
झूंठ दोष जगमें बुरो, सो सब लखो प्रवीन ॥८०॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषयअनृतदोषराजावसुनेंकिया ताकी कथा समाप्तम्

चोरीदोष श्रीभूतकी कथा प्रारंभः २७

मंगलाचरण चौपाई।

सुर असुरन कर पूजित चर्न। बरदायक है दुख अघ हर्न।
ऐसो श्रीअरिहन्त महान। तिनको नमिहूं भक्ति सुठान ॥१॥
चोरी दोष तनी जो कथा। बरनूं श्रीअभूतकी यथा।
नगर सिंहपुर एक बसाय। सिंहसेन धरमातम राय ॥ २ ॥
रामदत्ता नारी तिस गेह। सब कारजमें चतुर सुतेह।
राजाको प्रोहत श्रीयभूत। मायचार विषय मजबूत ॥ ३ ॥
सतबादी कहलावै सोय। याको कपट लखे नहिं कोय।
इस अन्तर इक नगर निहार। पद्मखंड नामा सुखकार ४॥
तहां सुमित्र सेठ बुधिवान। नार सुमित्रा ताघर जान।
तिन दोनोंके पुन्य संजोग। उदधिदत्त सुत भयो मनोग ५ ॥
सो यह चलो बनजके काज। भरलीने तिन बहुत जहाज।
मारग चलत सिंहपुर आय। श्रीयभूततें मिलो सुजाय ॥ ६ ॥

पांच रतन सौंपे हरषाय। जब चाहूं तब लेऊं आय।
इम कह रतनद्वीप को चलो। द्रव्य उपावन करमन भलो ७॥

दोहा।

सो यह द्रव्य उपाय कर, आवेयो निज धाम।
पाप उदै प्रोहन फटे, बहु जन मरे ललाम॥ ८॥
एक यही बचतो भयो, आयो सागर तीर।
पुन्य बिना इस लोकमें, कुछ नहीं संपति बीर॥९॥

पद्धड़ी

अब वारिधदत्त बहु कष्ट पाय। आयो हरिपुरमें धन गवांय।
श्रीभूत पिरोहित पास जेह, लेऊंगो अपने रतनतेह॥ १०॥
ऐसे मनमांहीं कर विचार, तिस पास चलो चित हर्षधार।
तब सत्यघोष याकू निहार, सब जन, आगे इमिबचउचार ११।
जन सुनो सुनी मैं बात आज, किसी बानकके फाटे जहाज।
सो भयो बावरो धन विनाश, अब आवेगो मेरे जुपास॥१२॥
वह करहै मोको नमस्कार, फिर मांगे गो सो रतन सार।
ऐसे कह तिष्ठो दुष्ट भाय, इतने में वारिधदत्त आय॥ १३॥
कर नमन सुमांगे रतन पांच, देश्रीयभूत तू भनत सांच।
तब सत्यघोषसुनिके तुरन्त, सबजन आगे इहिविधि कहन्त१४॥
मैं बातकही सो भई तेह। तुम देखलेहु निज नेत्र येह।
इम कहकर गलमें हाथ डार। निज घरसेती दीनों निकार १५

दोहा

जे धन लोभी जगत में, पापी दुष्ट अज्ञान।
निन्द कर्म क्या क्या नहीं, सबही करें अयान॥१६॥

पायता

तब वारिधदत्त विचारी। यह पापी ठग है भारी।

मेरे निज रतन न दीने । याने निश्चय कर छीने ॥ १७ ॥
या विधि नगरी में सारे । ऐसे बहु बचन उचारे ।
अरु राज महल ढिग जावे । निसमांहिं पुकार करावे ॥१८॥
इम बीतगये षटमासा । कोई नहिं करे दिलासा ।
इक दिन रानी मन आई । राजा से गिरा सुनाई ॥ १९ ॥
हे देव बनिक इह जानो । गहलो किह भांति पिछानो ।
यह बचन एक उच्चारे । सो गहलापन किम धारे ॥ २० ॥
तब नृपति कहो सुनलीजे । तुमही इस न्याय करीजे ।
रानी कर तब चतुराई । प्रोहतको लियो बुलाई ॥ २१ ॥
जूवाको खेल मचायो । पूछो तुमने क्या खायो ।
तब बिप्र वृतान्त सुनायो । मैं येही आज सो खायो ॥ २२ ॥

दोहा

तब रानी निज बुद्धिकर, लीनी धाय बुलाय ।
निपुनमती तिस नाम है, ताको बहु समझाय ॥२३॥
भेजी रतन सुलेनको, बिप्र बधू के पास ।
सहनाणी भोजन तणी, दे बताय गुण रास ॥२४॥

चौपाई

श्रीयभूतकी नारी यह । ताने रतन दिये नहिं तेह ।
रानी माया कर बहु भन्त । जीत मुद्रिका लई तुरन्त ॥२५॥
फिर भेजी प्रोहतानी पास । तोभी रतन दिये नाहिं तास ।
फेर जनेऊ लीनो जीत । धाय हाथ भेजो कर नीत ॥ २६ ॥
बिप्र नार तब मनमें धार । दीने पांचो रतन निहार ।
ले रानी राजाके पास । दिखलाये चितधर हुल्लास ॥२७॥
बुद्धवान नरपति तिह बार । लेकर रतन थाल मधि धार ।
तामें और मंगाय मिलाय । बाणिकको तब लियो बुलाय २८

ताहि होय वैराग भाव करे निज शुद्धकाय देखके चरित्र है १।

दोहा

राज ग्रही नगरी विषय, सम्पति सुत धन मित्र।
सेठानी है धारनी, धारे रूप विचित्र ॥ २ ॥
तिस सेठानी सेठ के, पुत्र भयो इक आय।
दत्तनाम ताको धरो, परियन जन सुखदाय ॥ ३ ॥
तिस अन्तर सम्पति सहित, नगर भूम यह और।
आनन्द नामा सेठ इक, बसे सुताही ठौर ॥ ४ ॥
मित्रवती तिस नार है, पति को वल्लभ जान।
वीरमती पुत्री भई, कुटिल चित्त दुख खान ॥ ५ ॥

चाल नेमकुमार की

इस अंतर अब दत्त ने जी, तिस ही नगर सुजाय। वीरवती परनत भयो जी, व्याह तनी विधि पाय ॥ सयाने कर्म लिखो सो होय ॥ ६ ॥

जो अक्षर विधिना लिखे जी, ताहि न मेटे कोय। जाको जो सम्बन्ध हैजी, सोई प्रापत होय ॥ सयाने कर्मलिखो सो होय।

ताही नगरी में बसे जी, तस्कर कला प्रवीन। नाम प्रचंड अंगार है जी, सब विसनन में लीन ॥ सयाने नारी चरित अपार। ८।

वीरवती इह पापनीजी, तासों भई असक्त। कुलकी कान गंवाय के जी, भोगकरे है रक्त ॥ सयाने नारी चरित अपार। ९।

एक दिना सुत सेठ को जी, वीरवती भरतार। रतनद्वीप जातो भयो जी, करने को व्यापार। सयाने उद्यमते सब होय।

फिर कमाय उलटो फिरो जी, आवे थो निज गेह। पंथ चलते ससुराल में जी, आये तिय के नेह ॥ सयाने काम महा दुखदाय। ११।

एक चोर अटवी विषय जी, लाग्यो याकी लार । सहश्र भट तिस नाम है जी, कौतूहल चित धार ॥ सयानैं नारी चरित के काज । १२ ।

दोहा

या नारी के सब चरित, जाने थो यह चोर ।
यातैं देखन कारने, आयो वन को छोर ॥ १३ ॥

छंद चाल

सोदत्त ससुर घर आयो । नारी लख अति सुख पायो ।
तब उन बहु आदर कीनो । कर भक्ति सु भोजन दीनो ।१४।
फिर रैन भई अंधियारी । इस ने तब निन्द्रा धारी ॥
अरु या सङ्ग चोर जु आही । छिप रहो पौल के माही ॥१५॥

दोहा

वाही दिन कुतवार ने, हुक्म राय को पाय ।
पकड़ प्रचण्ड अगार को, सूली दियो चढ़ाय ॥ १६ ॥

चौपाई

तब ही वीरवती दुट नार । रात्रि विषै तज निज भरतार ॥
हस्त विषय लेकर तरवार । चोर निकट चाली मैं छार । १७ ।
ड्योढ़ी में वह चोर लखात । जो अटवी ते आयो सात ॥
सो इस चरित निहारन हेत । पीछे लागो होय सचेत ॥ १८ ॥
याके पदकी सुन झनकार । वीरवती फेरी तरवार ॥
ताकर तस्करकी आंगुरी । कटकर भूमि विषै सो परी । १९ ।
तबै चढ़ो फिर वड़पे जाय । तहां वैठ सब चरित लखाय ॥
वीरवती सूली ढिग गई । तस्कर ने तब वानी चई । २० ।
हे प्यारी मैं मरूं अबार । तू आलिंगन दे बर नार ॥
सुख कारी निज मुखको पान । तस्कर आनन दियो निदान ।२१।

सो इस पाप उदय भयो आय । तब पैड़ी पे गई डिगाय ॥
मरते तस्करने तिहबार । अधर गहे इस दशन मझार । २२ ।
होठ रह्यो तस्कर मुख मांहि । पड़ी भूमपे यह दुख पाहि ॥
फेर उठी यह साहस धार । पट मुख ढक चाली तत्कार । २३ ।

दोहा

अपने घरमें आय के, कीनों बहुत पुकार ।
अधर हमारो काटियो, इन पापी भरतार ॥ २४ ॥
जे नारी पर पुरुष रत, तेनिज कुल नाशन्त ।
दुखदाता कारज जिते क्या नहिं करे तुरन्त ॥२५॥

पद्धरी

तब ता घरके जनसर्व आय। राजा पै करी पुकार जाय ॥
नृप सुनके चित भयो रोसवन्त । बुलवायो दत्त तहां तुरन्त। २८।
मारनको हुकम दियो नरेश । इन काम बुरी कीनों विशेश ॥
तब चोर करी अतिही पुकार। जो अटवीतें आयोथो जार।२६।
जब राजा पूछी सर्व बात । तस्करने चरित कियो बिख्यात ॥
यह सुनकर नृप आश्चर्य पाय। ताही छिनदत्त दियो छुड़ाय। ३०।
उस नारीको बहु दगड दीन । पुर बाहर काढ़ दई मलीन ।
अरु दत्त जु पुन्य महान पाय। रच्छा कीनी तिन चोर आय।३१।
इस लोक विषय जे पुन्यवान। तिनकी रच्छा सब करत आन ॥
जे भव्य जीवहैं जग मझार। अपने हियमें देखो बिचार। ३२।
इह नारी चरित अपार जेह। अत्यन्त भयानक कष्ट देह ॥
इमि लखिकर विषै तजो तुरंत। जो अपनो चित चाहो महन्त।३३

सवैया इकतीसा

तेई मुनिराज धन कियो जेन बस मन भाषो जिनराज
सोई शील व्रत धारो है। मेघराय घटा प्रचगड तास नाशने

को सिंह ज्ञान ध्यान माहिं रत सवैं अघ टारो है ॥ भवते विरक्त चित्त भव्य मन कंचन को करत विकाश रूप मार तंड प्यारो है । सोइ मुनिराज जग अंबुध में है जहाज करो कल्याण मम अब अधिकारो है ॥ १४ ॥

दोहा

वीरवती नारी तनें, यह चरित्र अधिकार ।
याको सुन तिय नेह तज, जो चाहो सुख सार ॥१५॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय वीरवती के चरित्र की कथा समाप्तम् नम्बर ॥ ३२ ॥

अथ रायसुदत्तकीकथा प्रारम्भः नं० ३३

मंगलाचरण ॥ काव्य ॥

इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र भान चरनाम्बुज ध्यावें ।
ऐसे श्री भगवान तिन्हें हम सीस नवावें ॥
राय सुदत्तकी कथा कहूं अब चित्त लगाई ।
जिस सुनते सुख होय मोह नासे दुखदाई ॥१॥
नगर अयोध्या विषे सुदत्त राजा है भारी ।
ताके गृहके मध्य पांच सत सोहैं नारी ॥
तामें वो पटनार सती नामा एक जो है ।
महादेवी है द्वितिय सदा नृपको मन मोहे ॥२॥
भोग लीन भूपाल द्वारपालक बुलवायो ।
अपने वचन प्रकाश तासुको इम समझायो ।
जो कोई कारज नगर विषे होवे अति भारी ।
अथवा को मुनिराज इहां आवें अनगारी ॥३॥
तो मुझ कीजो खबर अन्यथा इहां मत आना ।
ऐसे कहकर हर्ष महल में कियो पयाना ॥

भोगे भोग अपार सदा अच्छन सुखकारी।
सब सामग्री सार तासके धाम मझारी ॥४॥
एक दिना नृप पुन्य जोग इस मन्दिर माहीं।
आये युग मुनिराय मास उपवास धराहीं ॥
दमवत नाम पवित्र धर्म रुच दूजो जानो।
आये भोजन काज पौलियो लखि हरषानो ॥५॥
शीघ्र गयो नृप ढिग दरबान। सती नार तिष्टे तिह थान ॥
तिलक करे थी भाल मझार। तबै बोलियो बचन उचार ॥६॥
हे राजन मो बच सुन लेह। देव इन्द्रकर पूजित जेह।
ऐसे श्रीमुनिवर जुग नन्द। तुम मन्दिर आये सुखकन्द ॥७॥
द्वारपाल के ए सुन बैन। भूपति चित अति पायो चैन ॥
कहत भयो नारी ते एह। हे प्यारी मम बच सुन लेह। ८।
जब तक तिलक न सूखे भाल। तब तक मैं आऊं तत्काल ॥
श्री मुनिवरको भोजन देय। आऊं बेग नार सुन लेय ॥ ९ ॥
ऐसे कहकर गयो तुरन्त। युग मुनिवर थापे हरषन्त।
नवधाभक्ति करी अधिकार। सातों गुणदाता के धार ॥१०॥
मुनिको उत्तम दीनो अन्न। ताकर नरपति पायो पुन्न।
जे व्रत पूजा दान कराहिं। ते उत्तम श्रावक जगमाहिं ॥११॥
इनकर हीन जगत जन जेइ। फल वर्जित सम तरुहै सेइ।
तातें मन वच कारि बहु भाय। दानदेहु निज शक्ति बसाय १२
भगवत पूजन नित प्रति करो। व्रत करके निज पातक हरो।
याहीते सुख सम्पति होय। यामें संशय नाहीं कोय ॥ १३ ॥
तिसी समय नरपतिकी भाम। पट देवी जो सती तिस नाम।
ताने रोसधरो अधिकाय। मुनि निन्दा बहु भांति कराय १४॥
तबही पाप उदय भयो पुष्ट। हुवो उदम्बर तनमें कुष्ट।
कोढ़ो कष्ट तनो दातार। ब्यापो दुख वपुमें अधिकार ॥१५॥

सोरठा

एक जन्म भै दाय, हालाहल खानो भलो।
मुनि निंदा जो कराय, भव भव में ते दुख लहैं ॥१६॥

छप्पय

जे मुनि दीन दयाल बरत शीलादिक मण्डित।
दरसावन शुभ पन्थ तने ए दीय अखण्डित ॥
गुरुही बन्धू जान गुरू भवि दधि के तारी।
इनकी निन्दा करे जगत में पापाचारी ॥
ते बहु विध के दुख लहैं, जगत विषै नैनों दिखे।
तातैं बुध जन गुरु सदा, आराधो छिन छिन बिखे १७॥

दोहा

इस अन्तर नृप मोहवस, आयो तियके पास।
देखे सब तन कुष्टयुत, अति बिरूप अघरास ॥ १८ ॥

चन्द्रयाल

तब नृप मन एम विचारी। संसार भोग दुखकारी।
ततछिन कानन में जाई। दीक्षा लीनी सुखदाई ॥ १६ ॥
अरु वह पापिन दुख लीना। संसार भ्रमण बहुकीना।
निश्चयकर मनमें आनो। इहपाप पुन्य फल जानो ॥ २० ॥
संसार चरित्र विचित्रं। ताको देखो तुम मित्रं।
भगवतकर भाषी बानी। जो स्वर्ग मोक्ष सुखदानी ॥ २१ ॥
ताको हिरदे में धारो। सुख हेत न छिनक विसारो।
इह पूरन कथा भई है। ब्रह्म नेमीदत्त कही है ॥ २२ ॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषयसुदत्तनृपकी कथा समाप्तम्।

अथ संसारीजीव दृष्टान्तकथा नं० ३४

मंगलाचरण। अडिल्ल।

संसारा बुध तारनको बरसेतहे। ऐसो श्रीसर्वज्ञदेव मुखहेत

है। तिनको नमि संक्षेप थकी भाषूं कथा। जग जीवन को जो चरित्र दुखमें यथा ॥ १ ॥

चौपाई

कोई पुरुष अटवी में जाय। तहां सिंह देखो दुखदाय।
तासों डरकर भगो तुरन्त। अन्धकूप इक लखो महन्त ॥२॥
तामें लता पकड़ लटकाय। तहां कंठीरव पहुंचो आय।
कूप निकट इक विटप निहार। ताकी सिंह हलाई डार ॥३॥
ह्वां सरघाको हुतो मुहाल। या तन दुखित कियो तत्काल।
मधुकी बूंद तहां ते पड़ी। इस आननमें तिसही घड़ी ॥ ४ ॥
लता पकड़ राखी इन करे। काटत स्याम स्वेत उंदरे।
नीचे चार सरप मुख फार। तिष्ठे याकी ओर निहार ॥ ५ ॥
तिस अवसर में एक खगिन्द। आकर वचन कहे सुख वृन्द।
हो मानुष मुझ दुःख छुड़ाय। लेहूं निज बिमान बैठाय ॥६॥
तिस बच सुन यह महा अपान। कहतभयो लोभी निज बान।
एक बूंद मधुकी सुखदाय। मुझ मुखमें पड़नेदे भाय ॥ ७ ॥
इतने याही ठौर मँझार। खड़ेरहो विद्याधर सार।
तब खग बच सुन कीने गौन। अब इसकारन हारो कौन ८।
जे विषयनके पास ठगाय। ते हित अनहित नाहिं लखाय।
जैसे कूप विषै जन जान। मधुकी बूंद चाख सुखमान ॥९॥
खग काढ़ैथो इस दुख टार। याने निज हित नाहिं निहार।
तैसेही जन विषयाशक्त। अत्पन सुखमें रहें जुशक्त ॥ १० ॥
तिनको गुरू देवें उपदेश। तोभी चितमे धरे नलेश।
अंधकूप संसार निहार। काल रूपके हरबल धार ॥ ११ ॥
माखी है परिवर के जीव। चारों गत ये सर्प सदीव।
श्रीगुरु विद्याधर समजान। काढ़ें दुखतें कहि निज वान १२ ॥

तो पण दुरगति जाको होय । शुभ मारग में लगे न सोय ।
यातें गुरुवच धारो चित्त । जातें शुभ गत पावो मित्त ॥ १३॥

दोहा

तातें इस संसार में, महा कष्ट दातार ।
जहर अन्न दुरजन जिसो विषय सुःख जुनिहार १४
ऐसे उरमें जानकर, भगवत भाषित धर्म ।
कोड़ो सुख दातार जो, नासें सबही कर्म ॥१५॥
ताको निश्चल भावधर, आराधो उर माहिं ।
अपनो चाहो जो भलो, याको विसरो नाहिं ॥१६॥
संसारी सुख दुख तनो, दीनो यह दृष्टान ।
सुनके भविजन चित धरो, करो सुनिज कल्यान ।१७।

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय संसारी जीव दृष्टांत वर्णन कथा समाप्तम् ॥ ३४ ॥

अथ चारुदत्तसेठकी कथा प्रारम्भः ३५

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

देवनकर पूजन्त, प्रभुके चरन सरोज ।
फबिनमि कथा भनन्त, चारुदत वर सेठकी ॥१॥

पद्धडी

चम्पापुर नगरी अति रसाल । तहँ सूर सेन नृप है विशाल।
ताके इक सेठ जु भान नाम । तागेह सुभद्रा नाम भाम । २ ।
सो पुत्र हेत पूजे कुदेव । बहु भांति करे ताकी जु सेव ।
तौ भी सुत नाहि भयो सेठभौन । कुश्रित् सुरते लहि सिद्धकौन ।३।
इक दिन सुख थान जिनेश धाम । वंदनको पहुंची सेठ वाम ।
तहं जुग चारन मुनि अति दयाल । बंदे सेठानी नाय भाल ।४।
फिर वच भाषे इन दुःख लीन । हो स्वामी तुम जगमें प्रवीन ।

मोको तप श्री होवैंकनाह । प्रभु भाषो जो संसय पलाय । ५ ।
इसके वच सुनके ज्ञान चक्षु । याके मनकी जानी प्रत्यक्षु ॥
तब कह्यो सुता सुनले अबार । मिथ्या मतकी तू सेवटार । ६ ।
तेरे सुत होवेगो महान । विदुसन सुख दाता ज्ञानवान ॥
इह निश्चयकर निज चित्त माहिं । यामें शंसय रंचक जु नाहिं । ७ ।

दोहा

श्री मुनिवरके वचन सुन, नमन कियो सिर नाय ॥
यह सेठानी हर्षयुत, तबही निज गृह आय ॥ ८ ॥
ता पीछे भगवत कथित, धर्म गहो धर राग ।
केते यक दिनके विषय, पुत्र भयो बड़ भाग ॥ ९ ॥
गुण उज्वल धीमान अति, चारुदत्त तिस नाम ।
उत्सव कीनो सेठजी, नगर विषय अभिराम ॥ १० ॥

चौपाई ।

गुण युत वृद्ध भयो इह बाल । जग माहीं हैं पुन्य रसाल ॥
या करके क्या क्या नहिं होय । दिन दिन मंगल ताघर जोय । ११ ।
सर्वारथ नामा इस भाम । मित्रवती पुत्री तिस धाम ॥
याकू चारुदत्त बुधवान । ब्याहत भयो तात हट जान ॥ १२ ॥
तो पणभी यह आतम शुद्ध । तिय सेवन में धारे बुद्ध ॥
तब इस मात सुभद्रा जेह । पुत्र मोह बश कीनो येह ॥ १३ ॥
जे जन वेश्यामें थे लीन । तिनके संग पुत्र को कीन ॥
तब ये खोटे संग बसाय । भ्रष्ट भयो सब सुध बिसराय ॥ १४ ॥
जे धीमान करे नहिं भूल । खोटी संग पाप को मूल ॥
चारुदत्त गणका के धाम । द्वादश वर्ष बितायें ताम । १५ ।
षोड़ष सहस दीनार मंगाय । देव सन्त सेनाको खुवाय ॥
इक दिन तियके भूषण लाय । गणकाके ढिग मन हरषाय । १६ ।

दोहा

गणकाकी माता तबै, लख आभूषण येह ।
पुत्री से कहती भई, अवमम वच सुन लेह ॥१७॥
चारुदत्त धन रहित अब, इसते तज तू प्रीत ।
लक्ष्मी जुतते नेह कर, जो हम कुलकी रीत ॥१८॥

चौपाई

ऐसे सुन गणिका तिह बार । यासों छोड़ दियो तव प्यार ।
लोक विषय यह है परतच्छ । गणिका निर्धनकों नहिं इच्छ ।१९॥
नगर नायकाको तज धाम । आयो निज गृह जहांथी भाम ॥
ताके आभूषण कछु लेह । मातुल पास गयो कर नेह । २० ।
ताजुत चलो बनजके हेत । देश उलुखल मांहि सचेत ॥
जहां मूसरावर्त सुनाम । नगर बसतहै अति अभिराम ॥२१॥
तहां कपास खरीदी जाय । चलत भये बोरे भरवाय ॥
तामू लिस नगरी को जात । पथमें अगन लगी दुख दात ।२२।
ताकर भस्म भई जु कपास । जब यह चितमें भयो उदास ॥
पुन्य बिना उद्यम नहिं सिद्ध । क्योंकर पावे प्रानी रिद्ध ॥२३॥
चारुदत्त धर चित उद्वेग । मातुल पूछन गयो यह बेग ॥
जहां समुद्रदत्त इक सेठ । बैठो प्रोहन ताके हेठ ॥ २४ ॥
ता संग पवन द्वीपमें जाय । कष्टथकी बहु द्रब्य उपाय ॥
आवेथो निज गेह मझार । पाप उदय तिस भयो अपार ॥२५॥
वारिध में प्रोहन फटगई । भई सोई बिधना निर्मई ॥
ऐसे सप्त बार फट पोत । पुन्य बिना किम प्रापत होत ॥२६॥
आप क्वो कछु पुन्य बसाय । हुती जु इसकी पूरन आय ॥
सुरु बच सम इक लकड़ी खण्ड । पाकर वारिध तिरो अखंड ।२७॥
राज ग्रहीके पथको चलो । तहँ इक धूरत याको मिलो ॥

बिश्नु मित्र परिव्राजक दुष्ट। याको लखि बोलो वच मिष्ट ॥२८॥
मम वच सुन तू पुत्र अवार। अबही चलियो मेरी लार ॥
अटवीमें परवल है कूप। ताको जान रसायन रूप ॥ २९ ॥
सो तोकू मैं देहूं अबै। जाकर पारिद नासे सबै ॥
ताके वच सुन याने कही। बेग तात दिखलाओ सही ॥३०॥
धन लोभी प्राणी जग माहिं। दुरजन पास ठगायो जाहिं॥
विष्णु मित्र दंडी तिह बार। याको लेय गयो निज लार ॥३१॥
भू भ्रत यह वह कूप दिखाय। इक तूबो इस करमें दाय ॥
छींके में बैठाय उतार। रस्सी पकड़ गयो जहां बार ॥ ३२ ॥
तहां एकथो बहु दुख लीन। ताने याकूं मने सु कीन॥
चारुदत्त पूछी तू कौन। क्यों यहां पड़ो कहां तुझ भौन ॥३३॥

दोहा

कूप विषयको मनुष्य तब, बोले बच तिह ठाम।
उज्जैनी नगरी रहूं, धनदत्त वाणिक नाम ॥ ३४ ॥
सो हम संगल द्वीपको, गये करन व्योहार ॥
आवत मो प्रोहण फटो, मैं बच आयो पार ॥३५॥
इस परिव्राजक दुष्टने, एही लोभ दिखाय।
तूंको देकर कूपमें, दियो मोय उतराय ॥३६॥
तब मैं तूंबा रस भरो, लीनों वाने खींच।
दूजी बर मोहि काढ़ते, काट दियो अध बीच ॥३७॥
सो मैं अन्धे कूप में, पड़ो महा दुख लीन।
रस पीवत काया गली, होहि प्राण अबछीन ॥३८॥

काव्य

ऐसे सुनकर चारुदत्त इम गिरा सुनाई।
क्या रस तूंबा इसे अबै देहों नहिं भाई ॥

तब वाने इमि कही अबै जो रस नहिं देगो।
फेंकूंगो पाखान पड़ो यहां दुःख सहेगो ॥ ३६ ॥
ऐसे सुनकर चारु दत्त कीनी चतुराई।
तूंबो रसको भरो तास को दियो खिंडाई ॥
सो उन खेंचो वेग फेर रस्सी लटकाई।
चारु दत्त पाखान तास में दिये बंधाई ॥ ४० ॥

दोहा

आप कूप में जतन ते, तिष्ठो चिंता वान।
परिव्राजक रस्सा तबे, काढ़ो जुत पाखान ॥ ४१ ॥
जात भयो निज धाम को, ले रस बहु सुखदाय।
कूप विषय के पुरुख ते, चारु दत्त बतलाय ॥ ४२ ॥

पद्धड़ी

हो भ्रात अबै मोको बताय। कोई भी जीवनको है उपाय॥
जो मोहि बतावे तू अबार। तो मैं तोहि देहूं धर्म सार। ४३।
इमि कहकर शुभ नवकार मंत्र। सुर शिवदायक दीनो तुरंत॥
सन्यास तनी विधको बताय। ताने गह लीनी चित लगाय।४४।
तब चारुदत्तें इम कहंत। तुम पुरुष विचक्षण बुद्धिवंत।
यों रस पीवन इक गोह आत। अबतो गई आवेगी प्रभात।४५।
ताकी तुम पूंछ गहो महान। ताकर बाहर निकसो सुजान॥
ऐसी सुनकर तब चारुदत्त। गुण उज्जल चितधारी पवित्त।४६।
सो गोह पूंछ गाढ़ी गहाय। बाहर निकसो छिलगई काय॥
अटवीमें पहुंचो दुःख लीन। इच्छा पूर्वक फिर गमनकीन।४७।

चौपाई

याके तात तनो जो भाय। रुद्रदत्त तहं मिलो सो आय।
कहत भयो सुन पुत्र अबार। तुम चालो अब हमरी लार।४८।

रतन द्वीप सोहे विख्यात । तहां चलें हम तुम मिल सात ॥
इम कहि धन लोभी अधिकाय । बकरेकी तब पीठ चढ़ाय ।४९।
भू भृत मारग कीनो गौन । भाल लिखो सो मेटे कौन ॥
पहुंचे यह परबतके भाल । बोलो रुद्रदत्त विकराल ॥ ५० ॥
अहो पुत्र तू अब सुन लेह । दोनो अजकी हनिये देह ॥
तिनकी खाल विपय इहिबार । भीतर पैठे लेय कटार ॥ ५१ ॥
रतन द्वीपते पच्छी आय । पल भच्छी भेरंड इहां आय ॥
सो हमको ले जावे सही । रतन द्वीपकी पटके मही । ५२ ।
ऐसे पापरूप वच कहे । तो पाणि चारुदत्त नहिं गहे ॥
संत जननमें भीड़ जु पड़े । तो पण दुराचार तें डरे । ५३ ।
रुद्रदत्त इह दुष्ट अयान । युग बकरे के नासे प्रान ।
जे अति दुष्ट निर्दयी चित्त । क्या क्या काज करे नहिं नित्त ।५४।
मरतो अज तिन देखो तबै । चारुदत्त इह कीनो जबै ॥
ताको मंत्र दियो नवकार । मरन समाधि करायो सार । ५५ ।
धरमी जनकी है यह रीत । पर उपकार करे यह नीत ॥
तब दोनों पैठें भा थड़ी । वे वेरुण्ड आय तिस घड़ी । ५६ ।
चोंच विपय धर चले तुरंत । अंबुध ऊपर गमन करंत ॥
और भेरुण्ड पहुंचे आय । इन सेती वे युद्ध कराय ॥ ५७ ॥

दोहा

रुद्रदत्त की भांथड़ी, तजी भिरुण्ड तुरन्त ।
सो वारिध में गिरमरो, खोटी योनि लहन्त । ५८ ।
पापी शुभ गति नाहिं लहे, इह भाषी भगवान ।
जातें शुभ कारज करो, जो चाहो कल्यान । ५९ ।

सोरठा

चारुदत्त युत खाल, ले भेरुण्ड पहुंचत भयो ।
रतन द्वीप तत्काल, रतन चूल परबत जहां ॥ ६० ॥

लगो बिदारन सोय, चारुदत्त निकसो तबै ।
भागो खग इस जोय, चित्त में डर बहु धारि के ॥ ६१ ॥

दोहा

पुन्यवान जन जगत में, लहे सुःख अधिकाय ।
दुख दाता दुरजन जु हैं, हितकारी हो जाय । ६२ ।

पायता

तिस भू भृत सीस खरे हैं । आतापन जोग धरे हैं ।
ऐसे मुनि दीन दयालं । लख चारुदत्त तिह हालं ॥ ६३ ॥
तिनके चरनो ढिग आयो । बहु विधि ते सीस नवायो ॥
मुनि पूरन जो सु कीने । बच चये महा हित भीने । ६४ ।
हे चारुदत्त गुण मण्डित । तेरे हैं कुशल अखंडित ।
तिन बच सुन हर्ष सुधारो । फिर चारुदत्त उच्चारो ॥ ६५ ॥
हे मुनि में दास तुम्हारो । मोकूं किस ठौर निहारो ।
तब कहत भये मुनि ज्ञानी । तुम सुनो चतुर मम बानी ॥६६
मैं अमित खगेश्वर नामा । विजियारध पै मम धामा ।
इक दिन चित हर्ष उपायो । चम्पा नगरी ढिग आयो ॥६७॥
शोभायुत कदली कानन । तिस लखकर फूलो आनन ।
सङ्गनार बसंत सिरी थी । ताजुत वां केल करीथी ॥ ६८ ॥
तहां धूमसिंह खग आयो । मोतिय लखि चित्त लुभायो ।
अपनी विद्या परकाशी । मोहि कील दियो दुखरासी ॥ ६९ ॥
मेरी भामा हरलई जबही । गयो अम्बर माहीं तबहीं ।
तबहीं मम पुन्य बसाये । तुम क्रीड़ा को तहँ आये ॥ ७० ॥

दोहा

मैंने तुझको देखकर, करी समस्या येह ।
त्रियगुटिके मम पास है, ताको तू अबलेह ॥ ७१ ॥

पीस लगा मम तन विषय, तो छोडूं तत्काल ।
सो तुम सबही विधि करी, हे सुन्दर गुणमाल ॥ ७२॥

चौपाई

तबही शल्य निकस मम गई । तब शरीरमें साता भई ।
जैसे गुरु की गिरा महान । सुनते असत तनी ह्वै हान ॥७३॥
फिर मैं अष्टापद गिर जाय । धूमसिंहते जुद्ध कराय ।
अपनी तिय लायो छुड़वाय । फिर तुमपै आयो हरषाय ॥७४॥
मैं तुम थुतकर कही जु मित्त । बर मांगो जो चाहो चित्त ।
तुमने कहि कछु मांगूं नाहिं । सुखी भयो तुमदर्शन पाहि ७५
सत्पुरुषनकी है यह बान । कर उपकार न मांगे दान ।
तिस पीछे मैं गयो तुरंत । अपने धाम विषै हरषन्त ॥ ७६ ॥
दक्षिण श्रेणी में शुभ ठाम । शिवमंदिर नगरी अभिराम ।
तामें राज कियो मैं बीर । बहुत दिनन तक साहस धीर ७७
फिर मेरे उपजी यह चित्त । है सबही संसार अनित्त ।
तब निज सुत लीने बुलवाय । नाम सिंह जस ग्रीव बराय७८
दोनोंको देकर सब राज । मैं आयो बनमें तप काज ।
जो संसार उतारो पार । ऐसी जिनवर दीक्षा धार ॥ ७९ ॥
तप बलपाई चारन ऋधि । गगन गामिनी जो परसिद्ध ।
अब तिष्टूं इस परबत बीच । ध्यान धार नाशौं अघ कीच ८०

दोहा

इह वृतान्त सुन सेठ सुत, ह्वै खुशाल धीमान ।
बहु थुति मुनिवर की करी, तिष्टो ताही थान ॥८१॥
ताही छिन मुनिसुत जुगम, आये बन्दन हेत ।
चारुदत्तकी सब कथा, तिनते कह जगसेत ॥८२॥

काव्य

अरु ताहीछिन मांहिं एक चरसुर तहँ आयो।
चारुदत्तके चरन कमलको शीश नवायो॥
सेठ पुत्र तब कही सुनो चरसुर गुनधारी।
नमनकियो मोहि आय कहो यह कौन विचारी ८३
विद्यमान गुरु पास होत तुम कौनहि लायक।
तब चतुरोत्तम देव कहे सुनिये शुभ बायक॥
मोको बकरो जान हुतो परबत पै स्वामी।
रुद्रदत्तने प्राण हने मैं दुख तहँ पामी॥ ८४॥
तुम दीनों नवकार मंत्र सन्यास करायो।
ता प्रभाव कर प्रथम स्वर्ग में सुरपद पायो॥
इस कारनते आन चरन मैं बन्दे थारे।
शुभ मारग दरशाय दियो तुम गुरू हमारे॥ ८५॥
ऐसे कहकर त्रिदश धरम अनुराग धार चित।
बस्त्राभूषन लाय चारुदत को पूजो नित॥
फेर नमनकर स्वर्ग गयो वह तिसही बारी।
सुर असुरन करि पूज होय जे पर उपकारी॥ ८६॥

दोहा

तिसपीछे वे मुनि तनुज, गुरुको सीस नवाय।
बनिक पुत्रको संगले. चम्पा नगरी आय॥ ८७॥
रतनादिक बहु विधि दिये चारुदत्तको सार।
नमस्कार करके तबै, गये सुनिज आगार॥ ८८॥

चौपाई

जे प्रानी हैं पुन्य निधान। तिनको दुर्लभ कुछ नहिं जान।
सबही सुल्लभ सुखदाय। तातें धरमकरो अधिकाय॥ ८९॥

चार प्रकार दान नित करो । श्री जिनपूजनमें चित धरो ।
बरत शील कल्याण निमित्त । बुद्धिवान मनधारे नित्त ॥९०॥
भान सेठ शुभ जाको तात । भली सुभद्रा ताकी मात ।
तिनके सुतको आवत जान । भये खुशी पुरजन अधिकान ९१
चारुदत्त निज पुन्य बलाय । भोगें भोग महा सुखदाय ।
श्रीजिन भाषितधर्म अराधि । कियो विचार अब तजोउपाधि ९२
सुन्दर नामा सुत बुध धार । ताको निज पद दे तिहबार ।
आपधरी दीक्षा तत्काल । कर सन्यास मरण गुणमाल ९३॥
शल्य रहित ह्वै मन बच काय । स्वर्गलोकमें बहुरि धपाय ।
नाना बिधिके तहँ शुभ भोग । भोगतभये पंचेन्द्री जोग ॥९४॥
मेरु सुदर्शन आदिक धाम । तहँ यात्रा यह करे ललाम ।
अरु तीर्थंकर देव महान । समो शरनजुत ज्ञान निधान ।९५।
तिनकी बानी सुधा समान । ताको यह सुर करे सुपान ।
इत्यादिक ह्वै धर्म सुरक्त । सुखतें तिष्ठे जिनवर भक्त ॥ ९६ ॥

सवैयाइकतीसा

भगवत धरम सार संतजन हियें धार ताको करो बार बार हितकारी जान के । देव इन्द्रचन्द्र नागेन्द्र खगधीश नर सेवैं इसहीको सब भक्ति हिये ठानके ॥ महा जो पवित्र येह स्वर्ग मोक्ष सुखदेह याहीसों करो सनेह सर्म गेह मानके । सोई धर्म नित प्रति मंगलकरो सदीव ब्रह्मनेमीदत्त कही कथा श्रम हानके ।

दोहा

चारुदत्त वर सेठकी, कही कथा इह सार ।
भव्य जीव बांचो सुनो, करो सु पर उपकार ॥ ९९ ॥

इतिश्री आराधनासार कथाकोष विषय चारुदत्तसेठकी कथा समाप्तः ॥

अथ पारासर तपस्वीकी कथा प्रा० ३६

मंगलाचरण सोरठा।

भगवत को सिरनाय, कहूं कथा लौकीक की।
सुमन सुनो चितलाय, पाशसर तापस तनी ॥ १ ॥

चौपाई

गजपुर नगर बिषै तिस बास। गंगज भट धींवर अघरास।
डोरे जाल जु गंगा आन। सफरी पकड़ि हने तिन प्रान। २।
इक दिन मच्छी कूख मझार। कन्या निकसी रूप अपार॥
तिस बपुमें दुरगंध जु आत। सत्यवती तिस नाम कहात। ३।
मिथ्या शास्त्र बिषै जो कही। सो सब झूंठ जान यह सही॥
इक दिन धींवर घरके हेत। चलो सुता तज नाव समेत। ४।
तहं तापसि पारासर आय। मारग देख दुखी तिस काय॥
नदी पार जाने के काज। कन्या से बोलो तज लाज॥ ५॥
हे सुंदरि मोहि सरिता तीर। कीजे बेग न लागे ढीर।
तब वाने याकू बैठाय। नाव चलाई देर न लाय ॥ ६ ॥
तब कन्याको देखो अंग। पापी के तन जगो अनंग॥
कहत भयो सुन्दर सुनि सार। मोकूं कीजे अंगीकार॥ ७॥
सत्यवती बोली मत मन्द। नीच जात मैं तन दुरगन्ध॥
मुझ स्पर्श कीजे नहि नाथ। तुमहो तापस जग विख्यात।८।
नित्य करो गंगा असनान। तर्पन आदिक सकल विधान॥
याते मुझ मन डर अधिकाय। पीप लगे सो कहो न जाय।९।
तब पापी पारासर नाम। अपनी विद्या ते तिस ठाम॥
ताके तनकी हर दुर्गन्ध। फल सादृश बपु करी सुगन्ध।१०।
फिर नारी बोली कर जोर। जन देखत हैं चारों ओर।
काम अंध तब धूंओ कीन। वेदी रचकर ब्याहसो लीन।११।

काम केल कीनी तासंग । सुखी भयो बहु सेय अनंग ॥
ताही छिन इक पुत्र सुभयो । व्यास नाम ताको निरमयो ।१२।
मूछ जनेऊ जटा समेत । भयो बादकी लिये सुकेत ॥
करी तातते चरचा घनी । ताको जीत बुद्ध तिस हनी । १३ ।
अन्य मती इम वर्णन करें । जिन मत वाले चेष्टा धरें ॥
ज्ञान नेत्र जे सम्यक वान । तिनके किम आवे शरधान ॥१४॥
जैसे मद पीकर नर कोय । बिना लाज बोलत है सोय ॥
तैसे कहें कुवादी बैन । पोषें असत सदा दिन रैन ॥ १५ ॥
ताको सुनकर बिदुषन जेह । चित मत लाओ तजो सनेह ॥
करो सदा गुणिजनको संग । भगवत मतको गहो अभंग ।१६।
जिन भाषित तिन सुनो पुरान। बुद्ध पवित्र करो अधिकान ॥
इह पारासर तापसि तनी । कथा कही जिन अनमत भनी ।१७।

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय पारासर तापसिकी लौकिक कथा समाप्तम् ॥

अथ शतक मुनितें रुद्रके उत्पन्न होनेकी

कथा प्रारम्भः नं० ३७

मंगलाचरण ॥ अडिल्ल ॥

केवल ज्ञान बिशाल नैत्र धारक सही ।
तिनको करूं प्रणाम सीस नाऊं मही ॥
रुद्र सत्व की तनी कथा सुखकार जी ।
वरनत हूं चित लाय सूत्र अनुसार जी ॥१॥

पद्धडी ।

रमणीक देश गन्धार नाम । तहँ नगर महेश्वर पुन्य धाम ॥
ताको सत्यंधर है नरेश । तिस नारि सतवती नाम बेश ॥ २ ॥
तिन [illegible] पाय । सात्विक नामा सुत भयो आय ॥

सो राज कलामें अति प्रवीन। बिन विद्या राज थंभे नहीन ॥३॥
अब सिंधु देश इक और जान। तामें विशाल पुर है महान॥
ताको चेटक नामा नरिन्द्र। नित सरहि ठान सेवे जिनिंद्र ।४।
तिसके व्रत मंडित शुद्धकाय। बर नाम सुभद्रा नार पाय ॥
तिनके भई तनुजा सात आन। जिनके अब नाम करूं बखान ।५।
प्रिय कारनि नाम महा पवित्त। दूजी मृगावती शुद्ध चित्त ॥
अरु तृतीय शुभ प्रभा जान लेहु। चौथी प्रभावती सु गुन गेहु ।६।
है सती चेलना जग विख्यात। षष्ठी जेष्ठा परियन सुहात ॥
सप्तमी चंदना शीलवन्त। तिस महिमा वरनन नहीं अन्त।७।

दोहा

इस अन्तर श्रेणिक तनुज, अभय कुमार बुधेश।
नासक मारग चेतना, लेय गयो निज देश ॥ ८ ॥
जेष्टा भूषण लोभ तें, आई उलटी ताम।
दुखी होय निज चित्तमें, तिष्ठी अपने धाम ॥ ९ ॥

चौपाई

नाम यशस्वती अर्जिका पाय। जेष्टा दीक्षा लीनी जाय ॥
अब सात्यकी भूप सुन जेह। जेष्ठामें ताको अति नेह ॥१०॥
दीक्षाके पहले इस साथ। हुती सगाई कीजो बात ॥
अब सुन लीनी भूपति पुत्र। वाके दीक्षा लई पवित्र ॥ ११ ॥
तब यहभी चित होय उदास। गयो समाध मुनीश्वर पास॥
तिनके चरन कमल नम सार। दीक्षा इन लीनी तत्कार ॥ १२॥

दोहा

इक दिन बीर जिनेश के, बन्दन चर्ने महान।
यशस्वती वृतकादि सब, जावें थी हित ठान ॥१३॥
पथ में अटवी के विषय, बिना समय भई वृष्टि।
जहँ इक काल गुफा विषय, सात्वक मुनि तहँ तिष्ट॥१४॥

चौपाई

अब जेष्टाजी आर्जा जोय। बरपातें अति व्याकुल होय॥
काल गुफा में गई तुरन्त। इन जानों स्थान इकन्त॥ १५॥
अपनी इच्छातें जिह बार। निज साढ़ीको लेय उतार॥
लगी निचोरन ताको जबै। मुनि सात्यकने देखी तबै॥ १६॥
पाप उदै आयो तिस घोर। मन विहबल ताको भयो जोर॥
तिस तन रूपी वन्ही पाय। शील रतन इन दियो जलाय।१७।
हाय हाय इह कष्ट महान। काम अंध क्या बया नहिं ठान॥
तब यशस्वती ब्रतका सार। याकी चेष्टा सकल निहार॥१८॥
तबही इसको ले निज लार। गई चेलनाके आगार॥
याको तहां बिठावत भई। गरभ तनी बातें सब कही॥१९॥
तबै चेलना बहु दुःख पाय। याको राखी धाम छिपाय॥
जे सम्यक दृष्टी अधिकान। परके दोष छिपावैं जान॥ २०॥
जेष्टा के बीते नव मास। तबै पुत्रको भयो प्रकास॥
नृप श्रेणिक मन मांहि विचार। उपग्रहन गुण जगमें सार।२१।
प्रकट कियो पुरमें गुण गेह। भयो चेलनाके सुत येह॥
बालक तज भागिनीके भौन। जेष्टा कानन कीनों गौन॥२२॥
कितने दिन पीछे यह बाल। रुद्ध होत मतधर बिकराल॥
सूल कटुक जातरु को होय। ताके फल मीठे किमि लोय॥२३॥
रुद्र भाव इह बहु बिधि धरे। पर पुत्रन को ताड़न करे।
धारो रोस चेलना मात। रुद्र नाम इस कियो बिख्यात॥२४॥
फेर कियो इन और अन्याय। चेलन ऋषधर एम कहाय॥
यह पापी परते उपजाय। हमको दुख दीनों इह आय॥२५॥

दोहा

ऐसी सुनकर रुद्र तब, मन में कियो बिचार।
यह कारन कछु और है, सो करनो निरधार॥ २६॥

भूप निकट तब जाय कर, हठतें पूछन कीन ।
कौन हमारो तात है, सो भाषो परवीन ॥ २७ ॥
नर नायक बिरतान्त सब, याको कहो सुनाय ।
इह सुनके ताही समय, जान तात अरु माय ॥ २८ ॥

काव्य

पिता पास तब जाय लई दीक्षा सुखकारी ।
ग्यारह अंग दश पूर्व तनें पहुंचो पढ़ पारी ॥
अति तप के परभाव महा विद्या तहं आई ।
पांच शतक परमान सात सौ लख सुखदाइ । २९ ।
हुई रुद्र को सिद्धि लोभ वश भयो अयानो ।
कीनी अंगीकार देख रिध को ललचानो ॥
लोभ जगत में है प्रत्यक्ष दुख दायक भाई ।
सो कैसे सुख देय बेद मांही इमगाई । ३० ।
विद्या जुत गोकर्ण नाम परबत पै आयो ।
तहँ तिष्ठो धर ध्यान अतापन जोग लगायो ॥
इसको तात विख्यात सात्वक मुनि सुखदाई ।
ता बन्दन के हेत भव्य आवें समुदाई । ३१ ।
तिहको लख इह रुद्र भयानक रूप बनायो ।
सिंह व्याघ्र तन धार त्रास उनको उपजायो ॥
इह सुनके बिरतान्त सात्वकी मुनि उच्चारे ।
अहो कष्ट दातार वृथा चेष्टा मत धारे । ३२ ।

दोहा

अहो कुबुद्धी नार वश, करि है तू तप हान ।
ऐसे गुरु ने बच कहे, तोउ तजी नहिं बान । ३३ ।
वाही बिध सब जननको, देकर कष्ट डरात ।
पापी जन के चित्त में, गुरु बच नाहिं समात । ३४ ।

चौपाई

तिस पीछे यह रुद्र अयान । अष्टापद गिरि तिष्टो आन ॥
आतापन तहं जोग लगाय । कौतुक चित्त धरे अधिकाय ।३५।
अब हेमाचल दक्षण श्रेणि । मेघ निबद्ध नगर सुख देन ॥
मेघनि चमपुर दूजो जान । मेघन नाद नगर पहिचान ।३६।
तीनों नगरी को भूपाल । नाम कनकरथ है अरिसाल ॥
मनोरमा रानी तिस गेह । जुग सुत उपजे सुंदर देह ॥ ३७ ॥
पहिलो देवदार शुभ नाम । विद्युत जित दूजो अभिराम ॥
मह विद्या अरु रूप सुभाग । ताकर मंडित यह बड़ भाग ।३८।
इक दिन गय कनकरथ आप । जानो सब संसार अताप ॥
देवदार सुतको निजराज । हर्ष सहित देकर महराज ॥ ३९ ॥
आप गयो गणधर मुनि पास । जिन दीक्षा लीनी सुखरास ।
भवि जीवनको तारनहार । ध्यानधरो आतम हितकार ४० ॥
देवदार खगराज करात । अब ताको जो है लघु भ्रात ।
ताने बल पायो अधिकार । बड़े भ्रातको दियो निकार ॥४१॥
सो इह मानभंगको पाय । चलकर अष्टापद गिर आय ।
जिस कुटुम्ब में होत कलेश । ताको सुख व्यापत नहिंलेश ४२
याकर कौन कौन नहिं नष्ट । होत भये पायो बहु कष्ट ।
तिसकी कन्या आठ मनोग । रूप सम्पदा कर अति जोग ४३
मंजन हेत गई तत्काल । वे आठों कन्या गुणमाल ।
वस्त्राभूषण तट पै धार । पैठी नग्न तड़ाग मझार ॥ ४४ ॥
तिनको देखो रुद्र अयान । कामअंध हूवो अधिकान ।
अपनी विद्या को परकाश । उनके वस्त्र मंगाये पास ॥ ४५॥
तब वे कन्या कर अस्नान । बाहर पट नहिं देखे आन ।
अति व्याकुल चित विस्मय लई । इस मुनितें तब पूछतभई ४६

हो मुनि पट भूषण इहि ठांय। हमरे किसने लिये चुराय।
शीघ्र बताओ हमको अबै। दुःखित नग्न काय हम सबै ४७

दोहा

पाप उदयतें आपदा पड़े जनन पैं आय।
तामें लज्जा ना रहे सबही देय गमाय ॥ ४८ ॥
तबै रुद्र ऐसे कही, पट भूषण दूं सार।
मोकूं सुन्दर या समय, करे जु अंगीकार ॥ ४९ ॥

पद्धड़ी

तब कन्या बोली सुन मुनिन्द। हमरे हैं तात बड़े नरिन्द।
वे तुमको नहिं देवें जु तूठ। तो बचन हमारो होय झूठ ५०॥
जो देवैगो तुमको नरेश। तो हम इच्छें तुमको महेश।
तब याने वस्त्राभरणसार। सबको दीने ताही सुबार ॥ ५१ ॥
सो कन्या आईं गृह मँझार। निज तात प्रती सबही उचार।
सुन देवदार खग बैन येह। जानी वे विद्या मुनि सुगेह ५२॥
तबहीं कारजमें जे महान। ताढिग भेजे अपने प्रधान।
सो कहत भये सुनिये दयाल। सो राज हमारो है विशाल ५३
इस नरपति को लघु भ्रात सोय। ताको हनके दिलवाय दोय।
तो हम सब कन्या देय ब्याह। तुझ संग माहिं करिके उछाह ५४

दोहा

ऐसे बच सुन मुनि कहो, सरब करूं मैं काज।
कामी जन जे पापजुत, तिनको कैसी लाज ॥ ५५ ॥

चौपाई

वे विद्याधर इस बच मान। आन भूपतें सबै बखान।
जाको भिष्ट होतहै राज। कौन कौन सो करत न काज ।५६।
शान्तितिन अष्टापद छाड़। विद्याबल पहुँचो वैताड़।
विद्युत जित खगको इन मार। ताको राजलये तत्कार ॥५७॥

देवदार को दियो तुरन्त । नगर तीनको राज महन्त ।
महादेव फिर ताही घरी । कन्या आठौं नृपकी वरी ॥ ५८ ॥
और खगनकी सुता अपार । ब्याहत भयो हर्ष चित धार ।
याको बीरज अति बलवान । तीब्र काम नल याहन जान ५६
जातियको इह सेवन करे । ताके प्राण ततक्षण हरे ।
तनुजा वहु भूपति की मरी । तापीछे इक गौरी बरी ॥६०॥
ताको भोगत भयो अभंग । राखत तिसे जबै अरधंग ॥
इन पापी ने बहुत नरेश । पीड़ित कीने तिनके देश ॥ ६१ ॥
जे दुरात्मा जग के बीच । शान्त अर्थ होवें नहिं नीच ॥
अब जो पारबती को पिता । अपने चितमें है दुखजुता ॥६२॥

दोहा

निज पुत्रीजुत रुद्रके, मारनको चित ठान ।
तब ऐसी चिन्ता भई, क्योंकर हनिये प्रान ॥६३॥
इम उपाय चितमें धरो, सेवत इह जब काम ।
तब विद्या इस तन तजे, तिष्ठे औरे ठाम ॥ ६४ ॥

सोरठा

भूपति ऐसे जान, सेवत काम लखो इसे ।
मारो तियजुत आन, रुद्र गौरजा को तबै ॥ ६५ ॥
जगमें पापी जेह, तिन के मित्र जु हैं सही ।
ते भी तजके नेह, दुखदाई हो जात हैं ॥ ६६ ॥

चउपता

तब याकी विद्या सारी, निज स्वामी मरन बिचारी ।
तब कोप कियो अधिकाई, बहु व्याधि प्रजा पर छाई ॥६७॥
सब दुखी भये अति भारी, जितने तहँ नर और नारी ॥
तब काहू पुरुष बताई, मैं कहूं करो सो भाई ॥ ६८ ॥

उस रुद्र तने लिङ्ग केरी, पूजा कीजे इक बेरी।
जो शांति होय अधिकाई, सो चमा करें हितदाई ॥६९॥
तब नगरी के जन सारे, कछु समझें नाहिं विचारे।
जानें इह देव सही है, तब सेवा बहुत गही है ॥ ७० ॥
लिंग पूजो तिसही ठांही, भई यह चाल जग मांही।
अब आचारज उच्चारें, तुम सुनो भविक हित धारें ॥७१॥

काव्य

देव इन्द्र खगधीश नमें तिन चरन आनकर।
दोष रहित भगवन्त तिनों को मान देव वर ॥
अरु कुदेव सब जान जगत में राग द्वेष जुत।
तिनको मिथ्या मान करो मत तुम कबही श्रुत ॥ ७२ ॥

छप्पय।

सो भगवत जैवन्त प्रवर्तो भू के मांही।
तीन भुवन के नाथ सदा पूजो हरषाई ॥
बहु निरमल गुण युक्त ज्ञान केवल शशि शोभित।
सम्पूरन सुख रूप हरे संताप सु दुरगत॥
सो ऐसे जिन चन्द्र मुझ, शांति अर्थ बरतो सदा।
कवि नमन करे सिर नायके, दीजे मोहे सुख मुदा ।७३।

दोहा

कथा सात्वक मुनि तनी, तथा रुद्र की जान।
पूरन कीनी अब सुनो, कर सम्यक शरधान ।७४।

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय सात्यक मुनि कर उत्पति रुद्रकी कथा समाप्तम् ॥ ३७ ॥

अथ लौकिकब्रह्माउत्पत्तिकथा प्रा० ३८

मंगलाचरण कवित्त ॥

तीन जगत पूजित आदीश्वर भये आदि ब्रह्मा अरिहन्त।

तिनको नमकर कथा उचारूं जैसी मूढ़ लोक भाषन्त ॥ देव पुत्र इक ब्रह्मा हूवो तिन विचार कीनो इह भन्त । इन्द्रादिक के पदको जीतों है सब से उत्कृष्ट महन्त ॥ १ ॥

ऐसे चितवन कर अटवी में दीरघ भुजधर ध्यान लगाय । चार हजार बरस अवनी पर पांव बिना तिष्ठो लवलाय ॥ अति दीरघ तप कीनो याने पवनतनो जुअहार कराय । तास महा तप ते मघवाको आसन कम्पो अति भयदाय ॥ २ ॥

चौपाई

इन्द्रादिक तब चिन्ता ठान । हमरो राज लेय इह आन ।
तातें अब कछु करे उपाय । जाकर तप याको डिग जाय ३ ॥
तबै सचीपति तिल तिल रूप । सब सुरयनको लियो अनूप ।
नारी एक रची तिहवार । तिलोतमा बर रूप अपार ॥ ४ ॥
वहु गंधर्व किये तिस संग । गावें सुरजुत राग अभंग ।
सो चल आई ब्रह्मा पास । हाव भाव जुत नृत्य प्रकास ॥५॥
तब ब्रह्मा निज नैन उघार । देखी एक जु सुन्दर नार ।
तामें रक्त भयो बहु भाय । कामअंध देखी तिस काय ॥६॥
तब वह देवी जानत भई । कामबाण यह वेधो सही ।
बाईं ओर सो कीनों नाच । तब ब्रह्मा नितमें इम राच ॥७॥
तप हज्जार बरस को छोड़ । बाईंओर किया मुखबोर ।
ऐसे सब तप कियो बिनाश । चतुरानन कीनों परकाश ॥ ८॥
तब वह गगन माहिं नाचन्त । जब यह वाकीओर लखंत ।
गर्धव मुख ताको तिहवार । होत भयो अतिही भयकार ॥९॥
सो वह नृत्य कारनी बाम । याको सब तप खोय ललाम ।
गई सुरगमें सुरपति पास । नमिकर सुर विरतन्त प्रकाश ॥१०॥

कहत भई स्वामी परवीन । तुम यहँ तिष्ठो सुखमें लीन ।
कामअंध ब्रह्मा अधिकाय । मैं तिस कीनी मुर्छित काय ॥११॥
इमि सुन सुनाशीर तब कही । तू ह्वांहीं क्यों नाहीं रही ।
देवी कह्यो वृद्धि उस मरत । तातें मोहिं रुच्यो नहिं नाथ १२॥
तिस पीछे मघवा बुधवान । दया भाव निज चितमें आन ।
जबै उरवशी दई पठाय । सो पहुँची ब्रह्मा ढिग जाय ॥१३॥
पद स्पर्श कर कियो सचेत । उठत भयो सो हर्ष समेत ।
लेयगयो निज घर तिहवार । भोग भोगवे बहु परकार ॥ १४ ॥
जगमाहीं चतुरानन कहे । मूरख जन तिस भेद न लहे ।
देव स्वरूप जो जानत नांह । मदवाले वत झूठ कहाह १५ ॥

दोहा

देखो चतुर विचार चित, इन्द्रादिक पद छीन ।
समरथ ब्रह्मा बापुरो, कहो कौन है दीन ॥ १६ ॥
कहां अपसरा सुरगकी, कहां मनुप परजाय ।
अहो भोग कैसे बने, तासंग चित हरषाय ॥ १७ ॥
जो कमलाशन लोकमें, देव कहावत सोय ।
तासों ऐसे दुठ करम, कहो कौन विधि होय ॥१८॥

सोरठा

यातें जान अलीक, मिथ्यातीके वचन सब ।
करो सुधीजन ठीक, स्वाद वाद नयतें अबै ॥ १९ ॥

पद्धड़ी

श्रीजिनवरके मतमें बखान । विश्वसृग पंच प्रकार मान ।
इकतो तिष्ठे हैं सिद्धधाम । दूजे जानो आतम सुराम ॥२०॥
अरु ज्ञानरूप तीजे निहार । दातार धर्म चौथो विचार ।
चारित धारक पंचम अनूप । ऐही ब्रह्माको है स्वरूप ॥ २१ ॥

अरु तीनभवन मांही नजान । यह राग रहित है दीप्यमान ।
जे राग दोष जुत भोगलीन । वह कैसे पूजन योग दीन ॥२२॥
भोलो कालो कल्लखै दयाल । केवल चख धारे अति विशाल ।
अरु धरम रूप धारे सुकेन । सो तिनको धावो सुःख हेत ॥२३॥
ऐसे श्रीआदि जिनेन्द्र चंद । वृष ईश्वर तारक सुगुण वृन्द ।
वे स्वर्ग मोक्ष के देनहार । तिनको सिर नाऊं बार बार ॥२४॥

दोहा

इन्द्र चन्द्र तिन को नमें, ऐसे दीन दयाल ।
इस भवदधि में शांति के, अर्थ होय गुणमाल । २५ ।
तिन को ज्ञान महान अति, लोका लोक निहार ।
भव्य कमल को भानु सम, संसारा ब्धुधि तार । २६ ।

इति श्री आराधना सार कथा कोष विषय लौकिक ब्रह्म की कथा समाप्तम्

अथ दोय भ्रात परिग्रहतें भयभीत भये

तिनकी कथा प्रारम्भः नं० ३९

मङ्गलाचरण । अडिल

निर्गन्थन के स्वामी गणधर देव जी ।
तिन पति श्री अरहन्त चराचर वेव जी ॥
जिनको नमिकर कहूं कथा हितकार जी ।
परिग्रह ते युग भ्रात महा भय धार जी । १ ।

जोगी रासा

देश महारम्गणीक दशारण एक रथपुर तहँ भारी ।
तामें धनदत सेठ बसत है धनदत्ता तिस नारी ॥
धनदेव धन मित्र युगम सुत तिनके उपजे आई ।
धन मित्रा पुत्री गुण मंडित परियन को सुखदाई । २ ।
धनदत्त सेठ मीच तब पाई पीछे दारिद आयो ।

पाप उदै दोनू भ्राता अब बहु विध दुख तिन पायो ॥
फिर कौशांबी नगरी मांही मातुल पै तब जाई ।
अश्रुपात जुत नैन किये तन पिता मरन जो सुनाई ।३।

दोहा

बुद्धिवान मामा तबै, सब सुन के विरतन्त ।
बहु धीरज दे बसुरतन, इन्हें दिये दुतिवन्त ॥ ४ ॥

चौपाई

बंधू पन तिनही को सार । वे ही नर गम्भीर उदार ॥
दयावान हैं जग में तेह । अर्थी बांछा पूरें जेह ॥ ५ ॥
तब इह रतन लेय हरषाय । अपने घरको गमन कराय ॥
पथमें लोभ व्यापियो आन । आपसमें मारन चित ठान ॥६॥
पीछे चलकर नगरी तीर । आकर तिष्ठे दोनों बीर ॥
अपनी अपनी बात प्रकाश । पश्चाताप किये दुख रास ॥७॥
तबही रतन लेयके सार । वेत्रवती सरिता में डार ॥
जबै बारि चरपलको जान । निगले रतन महा दुतिवान ।८।
फिर ए आये अपने धाम । दुखकर तिष्टत आठों जाम ॥
इस अन्तर धींवर के जाल । वे मच्छी आई तत्काल ॥ ९ ॥
तिनकी मणि इन माता पास । आवत भई सहित परकाश॥
धनदत्ता मणि लोभ जु धार । पुत्र सुताको घात विचार ।१०।
फिर निज निंदाकर तत्काल । पुत्री कर सौंपे वे लाल ।
जब इन रतन हस्तमें लीन । भ्रात मात मारन चित कीन।११।
सब पापनको मूल जो लोभ । कष्ट देय उपजावे छोभ ॥
फिर वो कन्या चित भै खाय । पश्चाताप कियो बहु भाय ।१२।
कोड़ो कष्टनको दातार । वे मणि लेकर तिसही बार ॥
युग भ्रातनको सौंपी आन । उन लीनी वेही मणि जान॥१३॥

फोड़ नदी में इह वहाय । फेर अथिर संसार लखाय ॥
अपने चितमें धर बैराग । दुख दाता परिग्रहको त्याग ॥१४॥
भगनी माताको ले लार । दमधर मुनि भेटे तिह बार ॥
सुरग मोक्ष दाता मुनि चंद । तिनको नमत भयो गुणवृंद।१५।
देव इन्द्रकर पूजित सदा । सो दीक्षा लीनी है मुदा ॥
आप तिरे पर तारन हार। येह जुग मुनि बहु विध तप धार॥१६॥

दोहा

यह संसार तनी लखो, सबै अवस्था बीर ।
सुख दाता प्रभु मत गहो, दृढ़ धागे तज धीर ॥ १७ ॥
लोभ पिशाच जगत विषै, देवे दुख अधिकाय ।
पाप मूल सब को ठगे, भव में भ्रमन कराय ॥ १८ ॥
ऐसे लख मन बचन ते, त्यागो लोभ तुरन्त ।
हितकारी भगवत धरम, ताहि गहो बुधिवन्त । १९ ।
संग दोष को दुख महा, सो बरनो यों जाय ।
भव्य जीव लखके तजो, लोभ महा दुख दाय ॥२०॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय परिग्रहतें भय भीत भए ताकी कथा समाप्तम् ॥ ३९ ॥

सेठ धनमित्र और धनदत्तको धनपाकर

चोर भय हुवा ताकी कथा नं० ४०

मंगलाचरण ॥ चौपाई ॥

केवल चख धारी अरिहन्त । परमातम गुण धरे अनन्त ॥
तिनको नमकर बरनूं सही । धन पाकर जिन बिपता गही ।१।

चाल मेघकुमार की ढूंगी ।

कोशांबी नगरी भली जी सेठ तहां धनमित्त ।
अरु धनदत्त को आद दे जी चले बिहार निमित्त ॥

रे भाई उद्यम मन में धार ॥ २ ॥
राज ग्रही पथके विषय जी अटवी अति विकराल ।
तामें चोरन लूटयो जी सब वाणिक तत्काल ।
रे भाई पुन्य विना किम होय ॥ ३ ॥
पुन्य विना जगके विषयजी जेनर हैं धीमान ।
उद्यम बहु विधि के करे जी तो भी होवे हान ॥
रे भाई भाल लिखो सो होय ॥ ४ ॥
तिस पीछे चोरन करो जी रैन विषय आहार ।
तामें विष खाकर मरो जी विन जाने तस कार ।
रे भाई भाल लिखी सोई होई ॥ ५ ॥
दुष्ट तनी किरया जिती जी तिसको है धिक्कार ।
कष्ट करे छहुं भांत के जी तो भी फल नलगार ।
रेभाई पापी दुःख लखाय ॥ ६ ॥
उनमें तस्कर एक थो जी सागरदत्त धीमान ।
सेठ तनुज पहिले तजो जी निश भोजन अघखान ।
रे भाई एक नेम सुख खान ॥७॥
उन भोजन नांही कियो जी बचो सोई बुधवान ।
सब तस्कर देखे मरेजी तितने होत विहान ।
रेभाई एक नेम सुख दाय ॥ ८ ॥
तबही इस संसारते जी है उदास अधिकाय ।
परिग्रह तज संयम लियो जी जग जनको हितदाय ।
रेभाई त्यागहिते सुख होय ॥ ९ ॥
छप्पय ।
सो सागरदत्त मुनी गुणो निध है सुखकारी ।
सत्पुरुषन को सदा करावे मंगल भारी ॥

जिन प्रभु भाषित एक बरत पालो अधिकाई ।
फिर संसार स्वरूप लखो ताने दुख दाई ॥
चपलावत जीतव्य धन, सो छिनमें नासे सही ।
इह जान भले आचर्न जुत, जिन दीक्षा तानै गही ।१०।

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय यमदुतो चोरी को भव, हुआ ताकी कथा समाप्तम् ।

अथ कुसंग दोष कथा नं० ४१

मंगलाचरण ॥ सवैया तेईसा ॥

तीनहु लोकनमें जिनके पद श्री अरिहन्त जिनेश्वर स्वामी ।
भारत मात गही मुनि नाथ कही जिन नाथ सु अन्तर जामी ॥
गुरु निर ग्रन्थ दया व्रतवंत दिखाव सुपंथ करे शिव गामी ।
भक्ति सुठान धरो इन ध्यान करो परनाम यही जग नामी ॥१॥

दोहा

कथन संगके दोष की, बरनत हूं हितकार ।
जैसे श्री जिनवर कही, तैसे सुन चित धार ॥२॥

चौपाई ।

मणिवत नाम देश सुख गेह । तामधि मणिवत नगर बसेह ।
ताको मणिवतहै भूपाल । पृथ्वी मति नारी गुण माल ॥ ३ ॥
तिनके सुत उपजो मणिचंद्र । सूरवीर विद्याको मन्द्र ॥
सो भूपति निज पुन्य वसाय । सुखसें राज करे अधिकाय ॥४॥
धरम करम में लीन नरेश । पात्र दान नित करे विशेष ॥
जिन पूजन अरु पर उपकार । करतो तिष्ठो निज आगार ॥ ५ ॥
एक दिना नृप तिय दुति भरी। पतिके केश समारत खरी ॥
तिसमें स्वेत अलक इक थाय । सो नरेन्द्रको दियो दिखाय ॥६॥
तिसको मणिवत देख तुरन्त । जम फांसीवत ताहि लखन्त ॥

जैनतत्वमें धर अनुराग । मन वच काय भाय वैराग ॥ ७ ॥
बुद्धिवान सुतको दे राज । आप किये तब एते काज ॥
पहिले जिनको कर अभिषेक । पूजा कीनी बहुरि विशेष ॥ ८ ॥
यथा जोग बहु दीनों दान । अर्थीजन के पोषे प्रान ॥
बिनय वन्त फिर गुरु ढिग जाय । दीक्षा लीनी बहु हितदाय ॥ ९ ॥
एक दिना मणिवत योगिन्द । शुद्धातम धारी गुणवृन्द ॥
भगवत चरन कमलको ध्यान । करतो जिन कल्पो धीमान ।१०।
बिहरत आये ईर्जा भास । उज्जैनी नगरी के पास ।
तहां भयानक हुतो मसान । रात्रि विषय तिष्ठे तिह थान ॥११॥
धरो मडासन ध्यान मुनिंद । ध्यावें परमातम सुख कन्द ॥
करम शांति करनेके हेत । सहे परीषह वे जग सेत ॥ १२ ॥

दोहा

ताही छिन योगी सुइक, आयो तिसही थान ।
वैतालीको साधने, पाप करम दुखखान ॥ १३ ॥
दो सिर और उठायकर, लायो अति भैवन्त ।
तीजो मुनि मस्तक तनों, चूल्हो किये तुरन्त । १४ ।

अडिल्ल

नै वेद करनेको भाजन उन धरो ।
नीचे बाली अगनि जु ऊपर पै भरो ॥
बन्हीं जाजुल थकी मुनी शिर नस जरी ।
चटकत भई तुरन्त जबै हांडी परी । १५ ।
तब जोगी भयधार भगो ततकार जी ।
श्रीमुनि मेरु समान ध्यान चित धारजी ॥
होत प्रभात लखो काहू जनने तबै ।
जिनदत्त सेठ प्रती सब आन चयो जबै ॥ १६ ॥

दोहा

गये सेठ जब तुरतही, भूमि मसान मँझार ।
मुनि सत्तम देखे दगध, चितमें दुख यह धार ॥१७॥
हाहाकर बहु सेठजी, आनन भयो उदास ।
महाजतनते गुरनको, लायो निज आवास ॥१८॥

चौपाई

मुनिकी शांति अर्थ बहु भाय । पूछी भेषज वैद बुलाय ।
बोलो वैद सुनो धीमान । सोम सर्म भटके घर आन ॥ १९ ॥
लक्ष पाक को तेल अनूप । दग्ध शांति करनेको रूप ।
ऐसे सुन जिनदत गुणवन्त । बिप्रधामंही पहुँच तुरंत ॥२०॥
तुंकारी तिसकी बरनार । तासों मांगो तेल सुसार ।
तब वह कहत भई सुन सेठ । घट बहु धरे अटारी हेट २१॥
तामेंते इक घट लेजाय । अपने काज माहिं सो लाय ।
जगमें केते दानी जेह । कल्पवृक्ष की सदृश तेह ॥ २२ ॥
घट लेचलो सेठ तिह बार । निकसतही फूटो तत्कार ।
फिर इक घट मांगो वा तीर । बोली और लेजावो बीर ॥२३॥
सत्पुरुषनको चित्त उदार । वारिधि तें गम्भीर अपार ।
दूजो कलश जुकरम बसाय । फूटत भयो पथिकमें आय २४॥
फेर गयो ताही के पास । कुंभ मांगियो होय उदास ।
जब वह कहत भई सुन साह । कुंभ और ले जुत उत्साह २५
तब इन लियो कलश इक और । वोभी फूटगयो तिस ठौर ।
इस विध फूटे कुंभ अनेक । तब वह बोली सहित बिबेक २६
अहो सेठ चितभय नहिं धरो । और कलश ले कारज करो ।
ऐसे सुन बानिक पति जबै । मनमें एम विचारी तबै ॥ २७ ॥
अहो क्षमा अद्भुत पामांहि । ऐसी तो हम देखी नांहि ॥

इम बिचार कर पुलकित गात। पूछो सुन तुंकारी मात ॥२८॥
मैं अपराध कियो अधिकान। तो भी क्रोध नहीं तुम ठान॥
सो क्या कारन देहु बताय। तब तुंकारी कहे सुनाय ॥२९॥

दोहा

अहो सुबुद्धी क्रोध को, मैं फल पायो जोर।
ताते सरब कथा अबै, सुनो तात इह ठेर ॥ ३० ॥

पद्धडी

इक आनंद नामापुर बिशाल। शिव शर्म तहां इक दुज दयाल।
धनवान राजकर मान सोय। कमल श्री ताकी नार जोय।३१।
शिव भूत आदि बसु पुत्र जान। नौमी तनुजा मैं भई आन॥
लावण्यरूप सौभाग्य धाम। भट्टा मेरो राखो सुनाम ।३२।
मैं मान क्रोध धारो प्रचंड। तू कहे तिसे द्यो अधिक दंड॥
ऐसो कारन मुझ तात हेर। नगरीमें घोषन दई फेर ॥ ३३ ॥
मुझ तनुजाको इस नगर मांह। तू काहि के कोई बोलो जु नाह।
तबते तुंकारी नाम येह। सारे प्रकटो पुर गेह गेह ।३४।
जो क्रोध मान धारे अपार। तिनके सुख ना दुखही निहार।
तहां शोमशर्म इक बिप्र आय। मुझ पिता थकी ऐसे बताय।३५।

दोहा

तुं कारी कह के कभी, मैं बोलूंगो नाह।
ऐसे कह कुल क्रम थकी, लीनी मोको व्याह ॥ ३६ ॥
फिर उज्जैनी लाइयो, बहु बिभूत जुत मोह।
संपत कर निज गेह में, तिष्ठो आनंद होय ॥ ३७ ॥

चौपाई

एक दिना मेरो भरतार। शोमशर्म प्राणन आधार॥
नट कौतुक देखनको गयो। अर्द्ध रात्रिको आवत भयो।३८।

घर बाहर तिन करी पुकार । हे प्यारी पट खोल अवार ॥
तबमैं क्रोध कियो अधिकान । इतनी रात गये क्यों आन ।३६।
मौनधार तिष्ठी रिसवन्त । खोले नांहि कपाट तुरन्त ।
फेर पुकारो इह बिध जबै । तू पट खोलत क्यों नहिं अबै ।४०।
तूको शब्द सुनो मैं कान । क्रोध अगन प्रज्वली तन आन ॥
मैं मूरखनी खोल कपाट । घर तज लीनी बनकी बाट ॥ ४१ ॥
बाहर चोर मिले दुखकार । तिन लीने आभरन उतार ॥
बिजैसेन इक हुतो किरात । मुझको सौंपी ताके हात ॥ ४२ ॥
सो लायो पल्ली मैं दीन । शील खंडनेको चित कीन ॥
तबही बन देवी तिह ठाम । ताको भय दीनों दुख धाम ।४३।
डरत भयो सो हिरदे बीच । बनजारे कर बेची नीच ।
तब ताने मुझ रूप निहार । शील खंडने को मन धार ।४४।
ताकर तैं भी पुन्य बसाय । शील बचो मेरो सुखदाय ।
सो वह पापी अति अज्ञान । मुझ पै ऐसे धरो अधिकान ।४५।

दोहा

सो पापी मुझको तबै, सौंपी तिनके हाथ ।
जे मानुष के रुधिरते, कंबल रंगे बिख्यात ॥४६॥
क्रमदाने के करनको, मुझ तन जोंक लगाय ।
श्रोणित काढ़ो कष्टदे, बहुत दिनन तक भाय ॥४७॥
अहो सेठजी क्रोधतें, कहा कहा नहिं जोय ।
हम से पापी जननको, पैंड पैंड दुख होय ॥४८॥

काव्य ।

इस अन्तर उज्जैन तनो पारस नरराई ।
ताके ढिग धन्न देव रहे नित मेरो भाई ।
सो भेजो इस देश नृपतने करि वकील वर ।

पुन्य उदय मोहि देख भूप कह लायो निजघर॥४६॥
सोमशर्म मम नाथ तासको सौंपी आई।
वेही बांध बसार कष्ट में होय सहाई।
रक्त कढ़नते सेत भयो तन क्रस अधिकारी।
लक्षपात को तैल वैद मम पीड़ निवारी। ५०।
तिस पीछे मुनि नाथ थकी सुनके जिन बानी।
तीन जगत सुखदाय शुद्ध सम्यक उर आनी।
तातें सेठ सुजान क्रोध में करो न भाई।
यह सुन अंगीकार कियो कोड़ो सुखदाई। ५१।
तातें इक घट और तात लेजावो अबही।
श्री मुनिके तन लाय पीड़ नासो उन सबही॥
तब यह श्रेणी नमस्कार कर घट लेआयो।
करके जतन अपार मुनों के तनमें लायो॥५२॥

सोरठा

बहुत दिनन तक येह, मर्दन मुनि तन पै कियो।
तब भई निर्मल देह, तप उपजावन सुख करन ५३॥
पीछे सेठ सुजान, भक्ति करी मुनि नाथकी।
तब तिष्ठे तिसथान, बरषा पूरी करनको॥ ५४॥

चौपाई

इस अन्तर इक दिन वो सेठ। रतनकुंभ इक जिन ग्रह हेठ।
मुनि देखत गाड़ो तत्कार। सुतको भय निज चितमें धार ५५
तब वह कुमरदत्त पापिष्ट। सप्त व्यसन नित सेवे नष्ट।
अघ पंडित वह पुत्र अयान। छिपकर तात क्रिया सब ज़ान५६
तब उन ह्यांते कुंभ उखाड़। महल चौकमें दीनो गाड़।
जब यह श्री गुरु चारितवन्त। यहसब कारज लखो तुरन्त ५७॥

तोपण धरो मध्यस्थ सुभाय । सुथिर मेरुसम ध्यान लगाय ।
होतभयो पूरन चौमास । तबै सेठको तजो अवास ॥ ५८ ॥
कियो बिहार पूछकर जबै । नगर बाह्य तिष्ठे गुरु तबै ।
फेर सेठ वह कलश नपेष । चितमें दुःखित भयो विशेष ५९॥
तब इहविध मन करो विचार । मुनि बिन कोय न जाननहार ।
सो घट जिसने लियो चुराय । वो देवेंगे मोह बताय ॥ ६० ॥
ऐसे निश्चयकर चित माहिं । आवत भयो मुनीके पाहिं ।
कहतभयो दोऊ कर जोर । तुम बिन चितलागे नहिं मोर ६१
तातें अब तुम दीन दयाल । नगरी में चालो गुणमाल ।
ऐसे मायाचारी बैन । कहकर लायो मुनि सुखदैन ॥ ६२ ॥
कहत भयो वह सेठ तुरन्त । कोई कथा कहो भगवन्त ।
मुनि बोले सुन बाणकपती । तुमहो श्रावक बहु शुधमती ६३
बहुत दिननके श्रावक सार । वृद्धकाय सब जानन हार ।
तातें जो कुछ कहने जोग । सोई भाषूं कथा मनोग ॥ ६४ ॥

दोहा

ऐसी सुन जिनदत तबै, अपनो अर्थ सुलीन ।
कथा कही ताही समय, सुनो नाथ परबीन ॥ ६५ ॥

चौपाई

नगर पदम रथ नृप बसु पाल । दूत एक भेजो दर हाल ॥
कछु कारजकी लिखके बात । जहँ जित शत्रु अयोध्यानाथ ।६६।
पथमें थी अटवी बिख्यात । तहँ पहुंचो तिरषातुर गात ॥
जल पायो नहिं मूर्छा लीन । तरु तल लेटो दुखमें भीन ।६७।
तब कोइ मरकट पहुंचो आन । कंठागत देखे इन प्रान ॥
जबही जाय तड़ाग मंझार । अपने तन कें लायो बार । ६८ ।
आकर इस तन पर निज बाल । छिड़क सचेत कियो तत्काल ॥

फिर इस आगे गमन सु करा । इखलायो यह सर जल भरो।६६॥
जब वह पापी दूत अज्ञान । इस बंदर के हन के प्रान ॥
ताकी खाल काढ़ जल भरो । फिर मारगको गमन सुकरो ।७०।

दोहा

हे स्वामी उस दूत को, बंदर मारन जोग ।
थो अक नाहीं तुम कहो, मुनि बोले नहिं जोग ॥७१॥
इमि कह कर वे शिव धनी, भाषी कथा अनूप ।
निरदोषक सूचक पनों, तामें गरभित रूप । ७२ ।

पायता

कोशांबी नगरी मांही । शिव शर्म भूप तिह ठांही ॥
कपिला नामा तिस नारी । रहे पुत्र विना दुख भारी । ७३ ।
एके दिन द्विज परवीना । अटवी में गमन सु कीना ॥
तहँ नकुल तनो शिशु पायो । ताको निज घरमें लायो ।७४।
निज तियतें बच इम भाषो । याको सुत सम तुम राखो ॥
ऐसे कह ताकर मांही । सो सौंप दियो हरषाई ॥ ७५ ॥
जो मोह अंध अधिकाने । सो क्या क्या काज न ठाने ॥
अब कपिला बहु हित लायो । घरको सब काज सिखायो ॥७६॥
इह न्योल शकति अनुसारे । जहँ भेजे तहँ पग धारे ।
इह विधि कछु काल गंवायो । तब कपिलाने सुत जायो ।७७।
एके दिन द्विजकी नारी । सुत सुवायो खाट मंझारी ।
नौलो राखो रखवारी । चावल छड़ने गइ नारी । ७८ ।
ताही छिन अहि इक आयो । ताने सो बालक खायो ।
तब नकुल क्रोध अति धारो । तिस विषधरको तब मारो ।७९।
आननके श्रोणित लागो । कपिला ढिग गयो सु भागो ॥
सो देखत चित्त विचारो । याने मेरो सुत मारो ॥ ८० ॥

दोहा

इमि नरिन्द्र कहतोभयो, सुन गहले इह बार ।
अपने रतन पिछान कर, लेश्रो अबै निकार ॥२६॥
तबहि सुबुद्धी सेठ सुत, अपने रतन निहार ।
बहुत मोलके छोड़कर लीने वही निकार ॥३०॥
सत्पुरुषनको पर दरब, दीखैं जहर समान ।
सो कदाचि नहिं करत हैं, अंगीकार महान ॥ ३१ ॥

सोरठा

सिंहसेन नर राय, चित्त विषय हरषाय कें ।
कर बाणिकपति थाह, दई सेठ पदवी बिमल ॥३२॥
राजा फिर रिसठान, पूछो अधिकारीन ते ।
रतन चोर दुज जान, ताको क्या कीजे अबै ॥३३॥

चौपाई

तब मंत्री बोले सुन ईस । मल्ल मुष्ट इह खावे तीस ।
अथवा सर्बस देय अबार । क्या गोबर खावे निरधार ॥३४॥
एही तीन दण्ड इस जोग । दीने नरपति देखत लोग ।
तबै मुश्रो पापी दुख पाय । आरत ध्यान हियेमें लाय ॥३५॥
धन लम्पट इह विप्र अयान । मकर दुर्गति कियो पयान ।
ऐसे जान भव्य जन जेह । हिरदे ब्रत धारो तुम एह ॥३६॥
कोड़ो कष्टनकी दातार । चोरी छोड़ देहु तत्कार ।
भगवत भाषित धर्म रसाल । ताको पालो सब भ्रम टाल ३७
अब श्रीप्रभाचन्द्र मुझदेव । सो कल्याण करो बहु भेव ।
असुर सुरेन्द्र खगेन्द्र नरेश । तिनकर पूजनीक परमेश ॥३८॥
भगवत भगति तजतनहिं कदा । संसय हरन बचन इम सदा ।
तिनकर भाषे बचन महान । हिरदे धारो सुखकी खान ॥३९॥

दोहा

ब्रह्मनेमी दत्त कर भई, पूरन कथा विशाल।

भव्य जीव बांचो सुनो, तज चोरी अघ टाल ॥ ४०॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषयचोरीदोषमें श्रीयभूतकी कथा समाप्तम्

॥ अथ नीलीबाईकी कथा प्रारम्भः ॥

मंगलाचरण ॥ सोरठा।

हितकारी भगवान, तिनके चरन सरोज को।

नमन करूं धर ध्यान, कथा शीलकी अब कहूं ॥ १ ॥

अनुव्रत चौथो येह, नीली बाईने धरो।

दृढ़ पालो धर नेह, कष्ट भयो पर नहिं डिगी ॥ २ ॥

चौपाई

एही भरतक्षेत्र जु पवित्र। तामधि लाट देश इक मित्र।

श्रीजिनवर को धरम उदार। फैल रहो तिस देश मझार ॥३॥

तहँ भृगु कच्छ नगर इक खरो। शुभ वस्तुन करके शुभभरो।

तामें राज करे बसुपाल। परजापाले सब भ्रम टाल ॥४॥

श्रीजिनदत्त नाम तिस सेठ। कोई वणिक तिस आन नमेट।

श्रीजिनचन्द्र चरनको दास। जिन दत्ता सेठानी तास ॥ ५ ॥

पण्डित दान करनमें लीन। ग्रह कारज में अति परवीन।

तिन दोनोंके पुत्री भई। नीली बाई संज्ञा दई ॥ ६ ॥

शीलवान गुणवन्त अपार। रूप अधिक निज तनमें धार।

बसे वनिक इक ताही ठौर। नष्ट बुद्धि मिथ्याती और ॥ ७ ॥

नाम समुद्रदत्त है तेह। सागर दत्ता नारी गेह।

सागर दत्त भयो सुत आन। प्रिय दत्त तिसमित्र सुजान ॥८॥

इस अन्तर नीली हरषाय। अलंकार मण्डित अधिकाय।

जिन मन्दिर में गई तुरन्त। पूजे श्रीजिनवर अरहन्त ॥ ९ ॥

कायोत्सर्ग धरे बड़ भाग । निरमलध्यान विषय चितपाग ।
वह सागरदत्त ताहि निहार । विह्वल चित्तभयो तिह बार १०॥
ऐसे कहतभयो निज बैन । क्या यह नागदत्ता सुखदैन ।
वा इह तनुजा सुरकी होय । अथवा खग पुत्री है कोय ॥११॥
भली काय सो भाग धरन्त । याके रूप तनो नहिं अन्त ।
तब प्रियेदत्त मित्र इम कही । तुम क्या याको जानत नहीं १२
श्रीजिनदत्त सेठ गुणगेह । तासु सुता इह सुन्दरदेह ।
मित्रतने इह सुनके बैन । सकल अंग में व्यापो मैन ॥ १३ ॥
मोह मिलेगो किह विधि येह । चिन्ता भूत लगो तिह देह ।
ताकर तन दुर्बल अधिकाय । होतभयो कछु नाहिं सुहाय १४

दोहा

हरि लक्ष्मीके बसि भयो, गंगा बसि महादेव ।
ब्रह्मा लखिकै उरबसी, भयो कामबस येव ॥ १५ ॥
कौन कौन इस दर्पने, बस कीने नहिं राय ।
सब कोई जीतत भयो, याकी कौन चलाय ॥१६॥
अपने सुतको दुखित लख, कहे बारिधिदत्त आय ।
अहो पुत्र जिन दत्तजी, जैनी है अधिकाय ॥ १७ ॥
श्रावक बिन अपनी सुता, काहूको नहिं देय ।
इमि कह दीनो तात सुत, कियो कपट सो येह ॥ १८ ॥

पद्धड़ी

ह्वै दोनो जिन मत मांहि लीन । ऊपरतें अंतरता मलीन ॥
तब जिन दत्त इनते हेत ठान । श्रावक किरियामें निपुन जान१९
अपनी पुत्री व्याही तुरंत । अंबुज समानसो चखु धरंत ॥
यह लेकर आये आपगेह । फिर बौध धरम सूंकर सनेह । २० ।
यह बात युक्तहै जग मंझार । पापीबुध धरम विषय नधार ॥
जैसे घोटकके उदर मांहि । भोजन जु खीर ठहरात नाहि ।२१।

दोहा

ऐसो सुन जिनदत्तजी, कीनो दुख अविकार।
बोधन कर के मैं ठगो, फिर मनयेम विचार ॥ २२ ॥

चौपाई

मेरी पुत्री नीली सार। मानो पड़ी सो कूप मझार ॥
अथवा काल ग्रसी है सोय। दुरजन संग दुखमें अवलोय ।२३।
अब नीली उन धाम मझार। होत भई पतिप्राण अधार ॥
जुदे गेहमें रहे सो नित्त। जिनवर धरम धरे निज चित्त ।२४।
नित जिनवरकी पूजा करे। पात्र दान देकर अघ हरे ॥
वरत शील उपवास करंत। धर्मी जनसे नेह धरंत ॥ २५ ॥
इमि तिष्ठे निज पतिके धाम। नित प्रति जिनवर भजे ललाम ॥
ऐसे सुसर देखके सबै। मन में येम बिचारी तबै ॥ २६ ॥
यह नीली सुन बंधक बैन। दर्शन करत यहै मत जैन ॥
तब इन कही सुता सुनलेह। बोधनको तू भोजन देह ॥२७॥
तिस पीछे भोजनके हेत। आये बौध बहुत जिम प्रेत ॥
तब नीलीने लिये बिठाय। निज दासीको येम कहाय ॥२८॥
लाओ इनके पैरातनी। जोड़ी तुच्छ कतरके घनी ॥
वह तब लाई आज्ञा पाय। मीठे भोजन माहि रलाय ॥२९॥
भोजन करवायो तिहवार। तबपे खाय गये तत्कार ॥
कर अहार वे चले तुरंत। मन मांही बहु हर्ष धरंत ॥ ३० ॥

दोहा

निज पनही देखी नहीं, मन तब भये उदास।
नीली से पूंछत भये, बे बंधक अघ रास ॥ ३१ ॥
तब नीली बाई कही, तुम हो ज्ञान बिधान।
अपने चित्त बिचार लो, पनही जिस अस्थान ॥ ३२ ॥

वे बोले हम को नहीं, हैगो इतनो ज्ञान ।
कहत भई तुम उदर में, देखो बमन सुठान ॥ ३३ ॥

चौपाई

कीनी बमन जु काहू जने । देखे टूक पगरखी तने ॥
मान भङ्ग बौधनको देख । ससुर आयकर क्रोध विशेष ।३४।
सागर दत्तकी भगनी जेह । महापाप चित धारत तेह ॥
नीली ऊपरकर बहु रोस । और पुरुषको लायो दोष । ३५ ।
साध जननको दोष लगाय।पापी जन चित भय न धराय॥
सारे प्रकट करी इह भाय । इह कुशीलनी है अधिकाय ।३६।
ऐसो दोष सुनों जिन कान। इह गुण ज्वाला कियो प्रवान॥
जब इन दोष नसैगो सही । करूं अहार अन्यथा नहीं ।३७।
इमि विचारकर जिन गृहजाय । प्रभु पद कंजनमें हरषाय ॥
दो प्रकार धर कर सन्यास । खड़ी मेरुवत जो गुण रास ।३८।
अहो बात इह सत्य निहार । जे सत्पुरुष जगत में सार ॥
तिनपै पड़े आपदा आय । सुख दुख विषै हजारो भाय ।३९।
नर सुरेश पूजित भगवान । तिनही को वे धारत ध्यान ॥
याके शील तने परसाद । नगर देवता जुत अहलाद । ४० ।
आई रैन विषै इस पास । नीली बाई ते बच भास ॥
सती शिरोमणि सुन बड़भाग। निज प्राणनको कर मत त्याग ४१
अपने चितमें धर हुल्लास । मैं अबही जाऊं नृप पास ॥
वा मुखया पर जानन सबै । तिनको सुपनो देहूं अबै । ४२ ।

दोहा

गोपुर सब इस नगर के, कीलूंगी इह बार ।
और बचन ऐसें कहूं, सुनो सबै चित्त धार ॥ ४३ ॥

अडिल

महासतीकोबायोपद जबही लगे। तबही खुले कपाट सबै जन दुख

अगे। यही बात तुम सुनो तबे वां जाईयो । अपनो बायों पद अंगुष्ठ लगाईयो ॥ ४४ ॥

इमि कह कर वह सुरी गई तत छिन सही । सबको सुपनो दे कपाट कीलत भई ॥ होत प्रभात लखे कीले गोपुर सबै नृप आदिक ने सुपनों याद कियो तबै ॥ ४५ ॥

सवैया इकतीसा

तब नर नायक बिचार मन माहिं ठान लीनी सब नर नारी नगर बुलायके । गोपुर तो बारम्बार तिनको छुवाय पद, खुले न कपाट तब रहे बिलखायके ॥ तुच्छ पुन्नी जन पास होय न महान काज एही बात सत्त सब जाने चितलायके । पीछे नीली को बुलाय शील कर शोभे काय पद के लगत गये पाट खुलवाय के ॥ ४६ ॥

चौपाई

जैसे बैद सलाई ठान । नेत्र मैल खोवे अधिकान ॥
त्यों नीली बाई सुखदाय । पगकर लिये कपाट खुलाय ॥४७॥
याको शील भयो परकास । नरपति आदिक जन लख तास ॥
हर्षित होय वस्त्र बहु आन । पूजन भये अधिक थुति ठान ।४८।
ऐसे मुखते बचन कहात । जैवन्ती हूजो तू मात ।
जिन चरनाम्बुज जगमें सार । भ्रमरी सम तू सेवन हार ॥४९॥
तुमरो शील महातम जोय । किस करके बरनन तिस होय ॥
ऐसे कहवे पुरके लोग । श्री जिन धर्म गहो जु मनोग ॥५०॥

छप्पय

श्री जिनवर जग चन्द्र सदा जय वन्त जगत में ।
देवइन्द्र नागेन्द्र बन्द नित रहें भगत में ॥
तिनकी गिरा महान करे सब जग उपकारी ।

तिसमें वरनो शील श्रेष्ठ पालो हितकारी ॥
सो कैसो यह वरत है, सुखको मूल सुहावनो।
याते कीरति जग बढ़े, भूल न इसे गंवावनो ॥ ५१ ॥

सोरठा

ऐसो श्री भगवान, दीजे सुर शिव लक्ष्मी।
कीजे सब कल्याण, पूरन कथा प्रबन्ध में ॥ ५२ ॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय शील प्रभावनामें नीलीबाई की शील गुण कथा समाप्तम्।

अथ कडार पिंगकुशीलनिषेधकथा २६

मंगलाचरण ॥ छप्पय ॥

जगत मांहे जे हैं पवित्र अरिहन्त जिनेश्वर।
बहुरि भारती माय खिरी जो प्रभु आनन कर ॥
तीजे गुरु निर ग्रन्थ इन्होंको सीस नवाऊं।
ब्रह्मचर्य में दोष कियो तिस कथा सुनाऊं ॥
जिस नाम कडार जु पिंग है, तिनने यह व्रत खण्ड कियो।
ताकर इसही लोक में, निन्दनीक होतो भयो ॥ १ ॥

पायता

नगरी कम्पिला जानों। नरसिंह नृपति बुधवानो।
सो धर्म कर्म चतुराई। तायुत महाराज कराई ॥ २ ॥
तिस सुमति सु मंत्री सोहे। बुध धरे विप्र जे जोहे।
तिसके धन श्री है नारी। प्रानों सेती अति प्यारी ॥ ३ ॥
तिन दोनों के भयो आई। इक पुत्र महा दुखदाई।
कडार पिंग तिस नामा। सो है अघही को धामा ॥ ४ ॥

दोहरा।

ताही नगरी के विषय, सुधी सेठ धर्मज्ञ।
नाम कुंवेर जु दत्त है, करे दान बहु यज्ञ ॥५॥

तिसके पूरब पुन्यतें, पंडित रूप निधान।
प्रियग सुन्दरी नामवर, नारी भई सु आन ॥६॥

चौपाई

मन्त्री सुत पापी बुध बिना। सेठ त्रिया देखी इक दिना ॥
गुणाकर मंडित सुन्दर काय। लखि विह्वल हूवो अधिकाय ॥७॥
जाकर तिष्ठो अपने धाम। छिन छिन ताको पीड़े काम ॥
तब इस माता आ इह पास। पूछो सुत क्यों भयो उदास ।८।
तब याने लज्जा तज दीन। मातासे बच कहे मलीन ॥
सेठ बधू जो मिलि है आय। तो मेरो जीवन है माय ॥ ९ ॥
काम अंधको है धिक्कार। लज्जा भयकर रहित विचार ॥
काज अकाज गिने नहि जेह। शुभ अरु अशुभ लखे नहिं तेह १०
एह बच सुन मंत्रीकी तिया। निजपतिते सबही कह दिया ॥
तब मंत्री सुनके तिय बैन। जानो पुत्र सतायो मैन ॥ ११ ॥
इमि विचार करके पापिष्ठ। कपट सहित बुध धारी नष्ट ॥
राजा नरसिंहके जा पास। करत भयो इह विध अरदास ।१२।
अहो नाथ माणि द्वीप मंझार। खग किंजल्प रहे अधिकार ॥
सो तुमनेभी सुन नरेश। पक्षी धरे प्रभाव विशेष ॥ १३ ॥
महा व्याधि दुर भिक्ष न सात। रोगमरी अरु भय सब जात ॥
सो मंगायलो देव तुरन्त। उन आये सुख है बहु भन्त ॥१४॥

दोहा

इस कारज में अति निपुन, सेठ महा बुधिवान ॥
भेजो कुबेर सुदत्तको, वह लावे पहिचान ॥ १५ ॥
सो राजा मूरख अधिक, मंत्री बच हिय धार ॥
भेजो उसही सेठको, खग लेने तत्कार ॥ १६ ॥

चौपाई

तब श्रेष्ठी निर्मल धीमान। निज रानीते भाषी आन ॥

हम जावें खग लेने काज। राजा हुकम दियो यह आज ॥१७॥
तब तिय बोली बचन रसाल। अहो ठगाये तुम गुण माल ॥
मंत्री सुत यह कियो समाज। मेरे शील खण्डने काज ॥१८॥
तातें तुम मत जावो स्वाम। यहां ही तिष्ठो अपने धाम ॥
ऐसे नारी बचन उचार। सुनके सेठ हिये निज धार ॥१९॥
भले महूरत मांहि जहाज। बिदा किये खग लाने काज ॥
छिपकर निज गृह आप सुआय। तिष्टन भयो महा सुख पाय।२०।
तब मंत्रीको तनुज अयान। पापी कामातुर अधिकान ॥
आयो सेठानीके गेह। मन मांही बहु धार सनेह ॥ २१ ॥
तब प्रियङ्गु सुन्दरी नार। चित्त मांहि बहु बिधि बुधधार ॥
भिष्टाधाम बिषय सो जाय। गुण बरजित परजंक बिठाय ॥२२॥
स्वेत वस्त्र ताऊपर डार। कोइन जाने ताकी सार ॥
ता ऊपर याको बैठाय। भिष्टा बिषय पड़ो सो जाय ॥ २३ ॥
जैसे नार कि नरक मझार। पड़त वेदना सहे अपार ॥
त्यों कडार पिंग दुख लीन। होत भयो इह महा मलीन ॥२४॥

सोरठा

कारागार मझार, राखो तिस षट मास लग।
इतने प्रोहन सार, फिरकर आये नगरमें ॥२५॥
तब नाना परकार, पत्ती अरु परलेय के।
मन्त्री सुत तन धार, कालो मुख तिसको कियो ॥२६॥
हाथ पांव बंधवाय, काष्ट पिंजरे में धरो।
सब जन येम कहाय, खग ल्यायो यह सेठजी ॥२७॥

चौपाई

नरपति आगे सेठ जु आय। लेय कडार पिंग दिखलाय ॥
यह पत्ती ल्यायो महाराज। अद्भुत रतन द्वीपतें आज ॥ २८ ॥

इसको नाम जु है कंजल्प । ऐसे खग दीखत हैं अल्प ॥
इमि हाँसी करके बहु भाय । नृपसौं सब वृत्तान्त सुनाय ॥२६॥
तब नरसिंह नाम भूपाल । क्रोध धरो हिरदे विकराल ॥
मंत्री सुतको गधे चढ़ाय । फेर दण्ड दीनों बहु भाय ॥३०॥
तब मंत्री सुतधर दुर ध्यान । पावत भयो शुभ्र को थान ॥
जे परनारी सेवें मूढ़ । ते निश्चय दुख पावें गूढ़ ॥ ३१ ॥
याते जे बुधजन हैं सार । त्यागन करो पराई नार ॥
जे भविजन जिन बर भावन्त । पालो शील सदा गुणवन्त ॥३२॥
ते पद पद पर पूजित होय । पाये संशय नाहीं कोय ॥
जे मनवचन कायको लाय । पाले शील सदा सुखदाय ॥३३॥
सुरशिव सुख पावें ते सही । ऐसे जिन बानी में कही ॥
अति पवित्र यह शील महान । देवइन्द्र याकी थुत ठान ॥३४॥

दोहा

इस विधि सुख दुख देखके, कीजे चित्त विचार ।
जामें सुख यश विस्तरे, सोई करनो सार ॥३५॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय ब्रह्मचर्य दोषमें कडार पिङ्गकी कथा समाप्तम् ॥ २५ ॥

अथ देवरतरक्ताशीलदोषीकीकथा ३०

मंगलाचरण ॥ दोहा ॥

तीन जगत अर्चत चरन, केवल नेत्र धरन्त ।
ऐसे श्री अरिहन्त को, नमकर कथा भनन्त ॥१॥

चौपाई ।

नगर विनीताको भूपाल । नाम देवरत रूप विशाल ॥
ताके रक्ता नारी जान । सो सौभाग्य रूपकी खान ॥ २ ॥
यह नरिंद्र लम्पट अतिरक्त । सदा काल नारी आशक्त ॥

शत्रु आयपुर घेर जु लीन । नारी रति चिन्ता नहिं कीन ॥३॥
धर्म अर्थ वर्जित जे लोग । न्याय रहित भोगत हैं भोग ॥
ते दुखही के भाजन होय । यामें संशय नाहीं कोय ॥ ४ ॥
तब याके जो हैं परधान । तिन विचारकर इह बिधि ठान ॥
याको सुत सुन्दर जयसेन । ताको राज दियो सुख दैन ॥ ५ ॥
काढ़ो नारी युक्त नरेश । सो चलियो तजके निज देश ॥
चलत चलत काननमें आय । तियको क्षुधा लगी अधिकाय ॥६॥
तबै देवरत दुखधर चित्त । जानत भयो पड़ी जु विपत्त ॥
तब काहूको लेकर मांस । देकर पूर दई तिस आस ॥ ७ ॥
फिर नारीको लागी प्यास । जल नहिं दीखत तहँ पास ॥
तब मूरख नरपति तत्काल । भुजा तनों शोणित जु निकाल ।८।
महा औषधी तामधि डाल । पानी रूप कियो तिह काल ॥
निज नारीको दियो पिलाय । मोह ठगो क्या क्या न कराय ॥९॥

दोहा

ता पीछे जमुना निकट, तरु तल नारी त्याग ।
आप गयो काहू नगर, भोजन लेने काज ॥१०॥

पद्धड़ी

तिस पीछे रक्तानार सोय । इक वाड़ी सींचन हार जोय ॥
सो हुतो पांगुलो अति विरूप । अनुराग करे वह मधुररूप ।११।
तिसते रक्ता इम बच बखान । हे पंग मोह इच्छो सुजान ॥
तब वह बोलो अतिही डरात । तुम सुभट शिरोमणि प्राणनाथ१२
जब रक्ता पापन इम बिचार । वाकोतो अबही देहुं मार ॥
तु किंचित भय मनमें न ठान । मोहि अंगीकारकरो महान ।१३।
जे दुराचार नारी धरंत । क्या क्या पातिक नाहीं करंत ॥
इतनेमें भोजन ले नरेश । आयो चित नेह धरे विशेष ॥ १४ ॥

दोहा

तब रक्ता चित्त कुटिल अति, दुराचार की खान ।
मायाधर निज चित्त में, रुदन कियो अधिकान ॥ १५ ॥
तब राजा बोलत भयो, क्यों रोवत बर नार ।
बोली रजू सिला भई, मैं पापन इह बार ॥ १६ ॥

चौपाई

सालगिरह दिन तुमरी आज । अब मोसूं किम बने सुकाज ॥
पुन्य बिना प्राणी है जेह । शोक उदधिमें डूबत तेह । १७ ।
ऐसे बच सुन विषयाशक्त । कहत भयो सुनि नारी रक्त ॥
एहो शोकको कारज कौन । तुम होते इह बनही मौन ।१८।
फिर बोली इह पापन नार । किंचितको करहूं इह बार ॥
ऐसे कह पुष्पनकी माल । घोट गला डालो तत्काल । १९ ।
जमनाके तट लाय तुरंत । डार दियो तामधि निज कंत ॥
फेर दुष्ट मन पंगुले पास । खोटो कर्म कियो अघरास ॥ २० ॥

दोहा

या अन्तर नृप देवरत, कोई करम पसाय ।
सरिता में वह तो थको, बाहर निकसो आय ॥

चौपाई

नगरी नाम मंगला जोय । तरु उद्यान तहां रहो सोय ॥
श्रीवर्द्धन नृप नगरी बीच । पुत्र रहित पाई तिन मीच । २२ ।
ताके मंत्री बुद्ध निधान । सब मिलके इन कियो प्रमान ॥
पट्ट बंध नामा गज राज । जिसको लावे मस्तक आज ।२३।
सोई राज करे इस पुरी । कुंभ देय छोड़ो तब करी ॥
जहां देवरत सूतो राय । तहँ करिंद्र यह पहुंचो आय ॥ २४ ॥
वाको करवायो स्नान । पीठ चढ़ाय लियो बुधवान ॥

नगर विषय लायो तत्काल । उत्सवयुत कीनों नरपाल ।२५।
ताके पूरब पुन्य उद्योत । तिसको आपद संपति होत ॥
तातैं श्री जिन भाषित पुन्न । सेवो भवि बिसरो मत छिन्न ।२६।
पुन्य नाम किसको है मीत । श्री जिनचंद्र चरनमें प्रीत ॥
पात्र दान व्रत ओषधि ठान । पुन्य नाम याहीको जान ।२७।
अरु नरधीश देवरत सोय । राज करे मन हर्षित होय ॥
ऐसो चितमें धारो सदा । नारी सुख देखो नहि कदा ॥ २८ ॥
जो दुरजनके पास ठगाय । सो सज्जनतैं भी न पत्याय ॥
जैसे दागो पयते कोय । छाछ फूंककर पीवे सोय ॥ २९ ॥
अब यह नरपति दान करंत । सबही जनको दे अत्यंत ॥
पण पंगुलेको देय न दान । ऐसो राज करे हित ठान ॥३०॥
इस अंतर अब रक्तानार । खारी माधि पंगलोको धार ॥
अपने मस्तक लियो चढ़ाय । सब जन आगे येम कहाय ।३१।

दोहा

मेरे तात अरु मात ने, दीनी या संग व्याहि ।
सो सेवा याकी करूं, ऐसे गूढ़ कहाहि ॥ ३२ ॥
नगर ग्राम आदिक विषय, भिक्षा मांगे जोय ।
सती कहावे आपको, धरे कुटिल मन सोय ॥ ३३ ॥

सोरठा

मांगत मांगत नार, आई नगरी मङ्गला ।
सब जन अचरज धार, इन दोनों को देख के ॥३४ ॥

छंद चाल

जिस नारी चरित पसाये । ब्रह्मादिक बहुत ठगाये ।
तो मूरख जन अधिकाई । ठगते कहो कौन सिखाई ॥ ३५ ॥
दोऊ गान करें बहु भाये । नृप द्वारे विषै सो आये ॥

तब द्वारपाल हरखाई । राजा से अरज सुनाई ॥ ३६ ॥
हो स्वामी सुन इह बारी । इक पंगु पुरुष अरु नारी ॥
बहु मीठे गान करन्ते । सब जन के चित्त हरन्ते ॥ ३७ ॥
सो सिंह पौल पे आये । ऐसे शुभ बचन सुनाये ॥
नृप सुन के इस की बानी । नहि देखो एम बखानी । ३८ ।
सब जन हठ कीनो भारी । देखो ही नृप इह बारी ॥
तब आडो पट करवायो । उन दोनों को बुलवायो ॥ ३९ ॥
निज नारी की में बानी । पहिचानी राय सु ज्ञानी ॥
तब कहत भयो में जानी । यह सती बड़ी अधिकानी । ४० ।

दोहा

यह कहकर बहु क्रोधधर, नृपने दई निकार ।
आप सुबुद्धि तासु में, चित बैराग सुधार ॥ ४१ ॥
अपने सुत जैसेनको, लीनों तहां बुलाय ।
या नगरीको तासुको, राजदियो हरषाय ॥ ४२ ॥

कवित्त

शीघ्र करी पूजा जिनवरकी भलीभक्तिते चित हरषाय। फिर सूरज मुनिवर ढिग जाकर दीक्षा लीनी मनवच काय ॥ जिनवर भाषित तप बहु कीनों निज आतममें चित्त लगाय । दे उपदेश भव्य गण तारे अन्त सन्यास धरो सुखदाय ॥४३॥

दोहा

कर सुलेखणा मरणको, पहुँचे स्वर्ग सुजाय ।
अधिक ऋद्धि अणमादिलह, पाई सुन्दर काय ४४॥

छन्द

निन्दनीक अरु दुष्ट चित्त दुखदायन नारी ।
ताको चरित अपार देवरत लख तिहबारी ॥

इन्द्र अनुव्रत देह, भोग तज दीक्षा धारी ।
वे मुनि सतमह में करो मंगल सुखकारी ॥२५॥
रक्तानारी की अबै पूरन कथा जुएह ।
लखकर भविजन मतकरो तियसेती अति नेह २६

इति श्रीआराधनासारकथाकोषविषय शीलदोषमें देवरतरक्ताकी
कथा समाप्तम्

अथ गोपावतीकी कथा प्रारम्भः ३१

मंगलाचरण ॥ अडिल्ल ॥

जगत पूज अरिहन्त सुखदाता सही ।
तिनको करूं प्रणाम सीस नाके मही ॥
सत्पुरुषन बैराग हेत बरनों कथा ।
गोपवती को चरित कहूं जिनवर यथा ॥ १ ॥

चौपाई

ग्राम पलाश विषै जिस धाम । ताको सिंहबलहै शुभ भाम ।
गोपवती ताके दुठ भाम । धारे कपट जुआठो जाम ॥ २ ॥
ऐकै दिन हरबल हरषाय । निज नारीते छिपकर जाय ।
एवम निखेट ग्राम में जाय । सिंहसेन तहँ एक रहाय ॥३॥
तिसकी कन्या रूप निधान । नाम सुभद्रा ताको जान ।
बिध बिवाहकी सबही ठान । ब्याही हरबलने तिह थान ।४॥
गोपवती सुन इह बिरतन्त । क्रोध अनिल तातन व्यापन्त ।
गई सुभद्रा गेह तुरन्त । माता ढिग देखी सोवन्त ॥ ५ ॥
दुष्ट चित्त इह तिस सिर काट । अपने घरकी लीनी बाट ।
हुवो सबेरो जब पव फाट । नारी सिर बिन देखी खाट ॥६॥
तबै सिंहबल दुखित गात । निज ग्रहमें आयो परभात ।
गोपवती मनमें हरखात । आव भगत कीनी बहु भांत ॥७॥

देतभई भोजन तब सार । हरबलको नहिं रुचो अहार ।
जाके चितमें दुःख अपार । ताको रुचो न भोजन बार ॥८॥
तब इह पापन उठ तत्काल । नार सुभद्राको ले भाल ।
थाल विषै दीनों तिन डाल । बोली अबतो भई रसाल ॥९॥
तब हरबल लख नारी सीस । डरो चित्तमें बिस्वा बीस ।
यह तो राक्षसनी सी दीश । इम कहि भागो इह भट ईश १०
गोपवती नारी अति नीच । लागी पाछे दशन सों भींच ।
भालो मारो पिय कटि बीच । तिस करताने पाई मीच ॥११॥
जे हैं चतुर पुरुष जगमाहिं । नारी चरित सुचित्त लखाहिं ।
कहैं नहीं बिश्वास कराहिं । कामनते वे भिन्न रहाहिं ॥ १२ ॥

सोरठा

अब श्रीजिनवर चन्द्र, जैवन्ते बरतो सदा ।
पुजे नर सुरवृन्द, तिनके चरन सरोजको ॥१३॥
मदन करी महमन्त, ताबस करनेको हरी ।
भव दुख नाश करन्त, स्वर्ग मोक्ष दायक सदा १४
मुक्ति तिया भरतार, सांति करै सब जगत में ।
मैं भाऊं इहवार, शान्त अर्थ हूजे प्रभू ॥ १५ ॥
सुनो अर्थ चितलाय, गोपवतीको चरित यह ।
जो है सुखकी चाय, तिस विस्वास न कीजिये १६

इति श्रीआरधनासारकथाकोष विषयगोपवती चरित कथा समाप्तम् ३१ ।

॥ अथ बीरबतीनारीकी कथा प्रारंभः ॥

मंगलाचरण ॥ सवैया इकतीसा ॥

मोक्ष सुख देनहार तीन जगत मांहिं सार वेद षट गुणधार अतिही पवित्र है । ऐसे अरिहन्त देव सुर नर करैं सेव जन उपकार करनेको महामित्र है ॥ तिनको नवाय भाल कहूं अब भ्रमटाल बीरवती नारी तनी कथा जो विचित्र है । सुन सत्पुरुष

तब मूसल लेकर भारी। मारो न्योला तत्कारी॥
फिर घर आकर अहि देखो। मनमें तब कियो परेखो॥८१॥

दोहा।

मूढ़ जनन की जो क्रिया, ताको हैं धिक्कार।
कहो सेठ उस नकुल को, मारन जोग बिचार॥८२॥
जबै सेठ कहतो भयो, जोग नहीं थी देव।
ऐसे कह अपनी कथा, कहन लगो फिर एव॥८३॥

पद्धडी

बानारस नगरी में निहार। भूपति जित शत्रु महा उदार॥
ताके वैद्य सु धनदत्त नाम। धनदत्ता ताके गेह भाम।८४।
धन मित्र पुत्र धन चन्द्र जान। नहिं वैद्यकको पढ़ियो पुरान।
कोई दिन पीछे वैद्य येह। सो मरत भयो इन तात जेह।८५।
नृपने मूरख इनको लखाय। और काहूको कियो वैद्य राय॥
इनकी आजीविका दूर कीन। तब होत भये इह दुःख लीन।८६
फिर विद्या पढ़ने चित्त धरन्त। चम्पा नगरी पहुंचे तुरंत॥
शिवभूत वैद्यको नमन ठान। वैद्यक पुरान पढ़ियो महान॥८७॥
है विद्याजुत चाले कुमार। पथ में अटवी दीरघ निहार॥
तामे दृग पीड़ित सिंह थाय। लखकर रोवो तिह थान आय।८८।

दोहा

लघु भ्राता भेषज तबै, लई परीक्षा काज।
बड़े भ्रातने बरजियो, तो पण कियो इलाज॥८९॥
केहरी रवके नेत्र में, लायो अंजन सोय।
ताही छिन पीड़ा गई, उठो सु हर्षित होय॥९०॥

सोरठा

भाषत भयो तत्काल, तिसी समय हरचंद को॥
हो मुनि दीनदयाल, कहो सिंहको जोगथी॥९१॥

ऐसे सुन मुनि चन्द्र, कहत भयो सुन सेठजी ।
योना जोग मृगेन्द्र, कहूं कथा मैं तुम सुनो ॥९२॥

काव्य ।

चम्पा नगरी विषै बसत दुज सोमशर्म वर ।
सोमल्या इक नार सोम शर्मा दूजी घर ॥
सोमिल्या के पुत्र भयो इक बहु सुखदाई ।
भद्र नाम इक बृषभ रहे ता नगरी मांही ॥९३॥
गेह गेहमें फिरत ग्रास तृण नित प्रति चरतो ।
शान्त चित्त नित रहे कभी बाधा नहिं करतो ॥
दूजी द्विज तिय बांझ पापको बीज सु बोया ।
सौक तनो सुत मार बैल के सींग पिरोया ॥९४॥
कहत भई दुठ चित्त पुत्र इन मारो अबही ।
दुज घाती यह बृषभ भयो नगरी में सबही ।
तब सब पुरके मांहि ग्रास याको न खुलावे ।
क्षुदावन्त यह बैल कहीं पैसन नहिं पावे ॥९५॥
तित ही एक जिनदत्त सेठ की है बर नारी ।
दोष लगो परपुरुष तनो ताको अति भारी ।
अपने आतम शुद्ध करन को धैर्य धार चित्त ।
लोह मयी इक पिंड अगन में लाल कियो अति ।९६।
देखें सब पुर लोग तहां वह बृषभ जु आयो ।
अपने दशनन मांहि पिंड तत्काल उठायो ।
तब सब जन इम कहो बृषभ निर्दोष यही है ।
यह शुद्धातम चित्त जनन ने एमचई है ॥९७॥

दोहा ।

इस प्रकार मुनिवर कही, सुनो सेठ मन लाय ।
बिन जानो मूरख सकल, दोष दियो अग्निकाय ।९८।

निर अपराधी धेनु सुत, ताको भोजन हान।
हुतो जोग उन जननको, कहो सेठ बुधिवान ॥९९॥

गीताछन्द

तब सेठ जिनदत्त इम उचारी सुनों मुनि नायक यही।
गंगा किनारे गर्त में गज पुत्र ऐक परो सही॥
जव विश्वभूत निहार तापस ताहि वेग निकारियो।
पल्ली विषै लाकर तुरत ही पोष कर तिस पालियो ॥१००॥
सो भयो दीरघ काय अतिही सुनों श्रेणिक रायजी।
ता तापसी से छीन गज वह लियो आप संगाय जी॥
अंकुश तनी जब घात देखी तोड़ बंधन भागियो।
तबही नृपति चर पकड़ने को तास पीछे लागियो ॥१॥
सो यह करिन्द्र ततच्छ चलकर तापसी को घर लियो।
ताने बहुत सम्बोध कर उन जननको फिर सौंपियो।
तब इह दुरातम नीच हस्ती तापसी मारो सही।
कहो नाथ उसको जोगथी यह जौन किरिया गज गही ॥२॥

दोहा

तब मुनिवर कहते भये, नहीं जोग थी बीर।
कथा एक अब हम कहैं, सो अब सुनिये धीर ॥ ३ ॥

सोरठा

गजपुर नगर मझार, विश्व सेन भूपति तनो।
बाग एक सहकार, पूरब दिश की ओरही ॥ ४ ॥
चील सर्प जुत आय, बैठी तरुके ऊपरे।
सर्प तनो विष पाय, इक फल पकियो शीघ्रही ॥५॥
तब बनपालक देख, भेट कियो भूपति तनी।
बिना काल तिस पेख, धरम सनेह रखतो भयो ॥ ६ ॥

सो फल दियो तुरन्त, रानीको नर नाथ ने ।
खायो फल विषवन्त, तबै प्राण तजती भई ॥ ७ ॥
राजा बहु रिसधार, सबै बाग कटवाइयो ।
देखो सेठ बिचार, वाको क्या इह जोग थी ॥ ८ ॥

दोहा

कह्यो सेठ नहिं जोगथी, वा राजाको येह ।
एक कथा अब मैं कहूं सो सुनिये गुणगेह ॥ ९ ॥

चौपाई

काहू अटवीमें जन कोय । देख सिंहको भागो सोय ।
एक बिटप पल्लीको सार । ताऊपर चढ़ियो तिहवार ॥ १० ॥
पंचानन तब गयो तुरन्त । तब पथ लीनो चित हर्षन्त ।
राजाके जन लेने कार । ढूंढत आये तिसही बार ॥ ११ ॥
तब यह बोलो मो संग चलो । तुमको तरु दिखलाऊं भलो ।
यह कहि वृक्ष दिखायो आन । जाकर इसके बचे पिरान १२॥
तब राजाके चाकर येह । छाया तरु तिन काटो तेह ।
सज्जन सम वह बिटप मनोग । कटवावन उसको थो जोग १३
कहो मुनीश्वर चित्त विचार । सब चरित्र तुम जानन हार ।
मुनि बोले उन जोग न कीन । अब इककथा सुनो परवीन १४

चाल सुन भाईरे की

कोसांबी नगरी विषे सुन भाईरे, हैं गंधर्व अनीक भूप सुन भाईरे, तहां सुनार इक रहत है सुन भाईरे । अंगार देव तिस नाम और सुन भाईरे ॥ १५ ॥

रतन उजालत है सही सुन भाईरे, भूप दई मणि एक सार सुन भाईरे, मुकट अग्रकी जानिये सुन भाईरे, लायो निज गृह मांहिं हर्षजुत भाईरे ॥ १६ ॥

ताही छिन जमदग्नि मुनी सुन भाईरे, आए चरजा काज धाम इस भाईरे, भक्ति नमन यानेकरी, सुन भाईरे, थापे वां जहि मणि उजालत भाईरे ॥ १७ ॥

सुनि मुखसे तिष्ठत भये, सुन भाईरे, आय गयो तिस पास छोड़ मणि भाईरे, सो मणि रक्त अनूपथी सुमभाईरे, निगलौ कौंच विहंग शीघ्र सुन भाईरे ॥ १८ ॥

तब मुनि बोले नाह जानकर भाईरे, दया अंग धारें गुरु अधिकाईरे, मणि नहिं देखो आय सोच भई भाईरे, स्वर्नकार इम चयो नाथ सुनभाईरे ॥ २० ॥

दोहा

हे मुनि बेग बतायदो, राजा की मणि सोय ।
नहीं हमारो कुटम्ब सब, ततत्क्षण नास जुहोय ॥२१॥
इहविध कही सुनारने, तो पण दया निधान ।
मौनधार मुनिवर तबै, तिष्ठें ताही थान ॥ २२ ॥

कड़खा

तबै परचण्ड रिस धार सुनारने इन्हीको मनविषय चोर जाना ।
बांधके खंभते मार बहुविधि दई और दुर्वचन मुखते बखाना ॥
होय धिक्कार इस मूढ़पनको सही मुनीका भेद नहिं उर आना
सर्व आचार विचार जाने नहीं द्रव्यको धिरक मत करे हाना

सोरठा

मुनि मारन उमगाह, काष्ठ खंड फैंकत भयो ।
लगी क्रौंच गल मांह । सो मणि उगली तुरतही २४
मानो मुनि जस येह, प्रगट भयो ताही समय ।
स्वर्णकार लख तेह, लज्जा जुत मन दुख धरो ॥२५॥
हाहाकर तिह बार, मुनिके चरनन चित धरो ।
निन्दा करी अपार, अपनी बहुविधि भूलकी ॥२६॥

दोहा

कहे सुनी सुन सेठजी, जैसे वै मुनि चन्द ।
जानत मणि न बताइयो, दया हेत गुणवृन्द ॥ २७ ॥
तैसे मैं तुम कलशको, जानतहूं विरतन्त ।
तो पण नाहिं बताय हूं, करो जो तुम्ह मन सन्त २८

अडिल्ल

तबै सेठ सुत छिपकर सब इह सुन लियो ।
कुंभ रतनको लाय पिता ढिग धर दियो ॥
फेर कहे इम बैन सुनो तुम तात जी ।
श्री मुनिवर को क्यों उपसर्ग करात जी ॥ २९ ॥
तिस लख सेठ जिनदत्त महा लज्जा गही ।
कुबेर दत्त भी मन पछतायो बहु सही ॥
मेरु समाने धीर तपोनिधि वे मुनी ।
पिता पुत्र सिर नाय बहुत मुख थुत भनी । ३० ।
उनही के चरनाम्बुज ढिग युग ता धरी ।
जग ते होय उदास सुजिन दीक्षा धरी ॥
स्वे परके बैतारक तप नाना करें ।
कर मनको परजारत अघ सब ही हरें । ३१ ।

सवैयो

तीनों मुनि नाथ नित भक्ति कर बन्दे हुवे शान्ति अर्थ हूजे हमें सदा सुख दायजी । जिन चंद्र भाषो ज्ञान तास के समुद्र मान सम कर तन शील बेला अधिकाई जी । नित देव इन्द्र कर पूजत पदारविन्द भविवृन्द तारनें की कीरत बढ़ाई जी । सोई दया के निधान कीजिये सबै कल्याण पातिक हमारे हानि हूजिये सहाई जी । ३२ ।

गीता

श्री मल्ल भूषण गुरु हमारे को मंगल नित नये ।
गुण निध सराहन जोग जग में कम्म अरि तिनने जये ॥
शोभायमान जो तिलकवत श्री मूल संघ महान हैं ।
श्री कुंद कुंद सु वंश मांही भये ए बुधिवान हैं ॥ ३३ ॥

दोहा

विद्यानन्द महान गुरु, तिन पट कमल समान ।
विकसावन को भानु सम, रत्न त्रय जुत जान । ३४ ।

सोरठा

तिन के शिष्य सुजान, ब्रह्म नेमिदत नाम है ।
तिन कीनों व्याख्यान, निरजन बानी के विषय । ३५ ।
तिनही के अनुसार, शिष्य गिरधारी लाल के ।
नेमी चंद हितधार, अर्थ बताय दियो हमें ॥ ३६ ॥
छंद गूंथ तब कीन, अपनी तुछ बुध ले यही ।
सुनो भविक परवीन, वखतावर अरु रतन ने ॥ ३७ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय भट्टारक श्री मल्ल भूषण के शिष्य ब्रह्मनेमिदत्त विरचितायां परिग्रह भयक्ता अधिकार ता विषय मणिवत तुकारी कथा समाप्तम्

अथ लोभ अधिकार कथा नं० ४३

मंगलाचरण ॥ दोहा

देव धर्म गुरु तीन इह, हैं मंगल दातार ।
सन्धि तीसरी वर्णाउं, दीजे बुद्ध जु सार ॥ १ ॥

सोरठा

नमूं देव अरिहन्त, सुख दाता त्रय जगपती ।
सुनो कथा बुध वन्त, कहूं लोभ अधिकार की । २ ।

चौपाई

कंपिल्ला नगरी इक बसे । रतन प्रभू नरपति तहँ लसे ॥
विद्युत प्रभा नारि तिस धाम । रूप स्वभाग सहित बर भाम।३।
तिसही नगरी में धीमान । जिन चरनाम्बुज भ्रमर समान ॥
राज मान पंडित अधिकाय । श्रावक जिनदत्त सेठ रहाय। ४।
बसत वानिक इक ताही ठौर । नाम पिनाक गंध तहँ और ॥
कोट बतीस द्रव्यको धरे । लोभ थकी खल भोजन करे ॥५॥
इह मति हीन द्रव्यको पाय । पाप उदै भोगे नहिं खाय ॥
इस किरपणके गेह मंझार । नाम सुंदरी नार निहार ॥ ६ ॥
तिनके सुत उपजो बिगुदत्त। लोभ सहित गृह तिष्टत नित्त॥
इस अंतर राजा ने ताल । खुद बायो इक अधिक विशाल।७।
तामें एक मंजूषा खरी । स्वर्ण शलाका सत ते भरी ॥
थी वह बहुत कालकी गड़ी । खोदत काहू जन ढिगपड़ी॥८॥
सो मजूर तब लई उठाय । लेकर निजग्रह पहुंचो आय ॥
पंक लिप्त नहिं जानी सार । तामें ते इक लई निकार ॥ ९ ॥
श्री जिनदत्त सेठ के पास । लोह मोल में बेची तास ॥
फेर सेठ कंचन मइ जान । पाप थकी तिस कांपे प्रान । १० ।

दोहा

तिसी सलाका की तबै, जिन प्रतिमा बनवाय ।
परतिष्ठा कीनी भली, तीन जगत हित दाय ॥ ११ ॥
सम्यक दृष्टी पुरुष जे, धरमातम बुध वन्त ।
वे ऐसे कारज करें, जासे करम नसन्त ॥ १२ ॥

पद्धता

फिर वही मजूर जुं आयो इक और सलाका लायो ।
जिनदत्त पास तस्कारी, तब सेठ सु एम बिचारी । १३ ।

यह परधन है दुखदाई । तृष्णा व्रत भंग कराई ॥
तातें इनने नहिं लीनी । तबहीं तिस फेर जु दीनी ॥ १४ ॥
जबही मजूर वो धायो । पिन्याक गंध पे आयो ।
ताने कंचन लख लीनो । लोहे को मोल जु दीनों ॥ १५ ॥
फिर तासे गिरा उचारी । बाकी ले आवो सारी ।
यह सुनी सेठ की बानी । दूजे दिन एक जु आनी ॥ १६ ॥

दोहा

इह बिध याके हाथ सब, दई शलाका जोय ।
दिन अठाणवें तक लई, एक एक कर सोय ॥१७॥
धन लोभी इह बनिक पति, सुतको लियो बुलाय ।
तासों भेद शलाक को, इन सब दियो बताय ।१८।
पिप्पल नामा ग्राम में, आप गयो वह साह ।
भगिनी की तनुजा तनो, हुतो तहां जो ब्याह ।१९।
एक शलाका ले गयो, पाप उदयते येह ।
भगनी पतिके देनको, नौते मांही तेह ॥२०॥

चौपाई

विष्णुदत्तको तब इन दई । ताने वह शलाका नहिं लई ।
राजाके चर थे तहँ सोय । या करते लीनी तिन दोय ॥ २१ ॥
ताकर भू खोदन उम गाय । तामें नृपकी छाय लखाय ॥
लिखे जु अक्षर थे इह रीत । सो शलाक सुबरनकी पीत ।२२।
ऐसे लखकर जन भयधार । दिखलाई नृपको तिह बार ॥
तब नरेश मनमें हरषाय । लीनों वही मजूर बुलाय ॥ २३ ॥
वासों पूछन कीनीं तबै । और बताओ बाकी सबै ।
जब वह कहत भयो सुन नाथ । इक बेची जिनदत्तके हाथ ।२४।
अरु पिन्याक गंधको दई । लोह तनो मैं जानी सही ।

तब नरिन्द्र जिनदत्त जो सेठ। ताको बुलवायो निज हेठ।२५।
तासो इह विधि नृपने चई। अहो शलाका तुमने लई॥
सेठ तबै सबही विरतान्त। कहत भयो तजके निज भ्रांत।२६।
पीछे श्री जिन बिम्ब मनोग। नृपको दिखलायो पुनि जोग।
देख नृपति मन भयो अनंद। जानो जिनदत है गुन वृंद।२७।
बस्त्राभूषण देय अनूप। सेठ बिदा कीनों तब भूप॥
फिर पिन्याक गंधको गेह। धन जुत लूट लियो नृप तेह।२८।
सब कुटुम्ब काराग्रह थान। डार दियो दे कष्ट महान।
देखो करि तृष्णा अधिकान। ले पर द्रव्य करी निज हान।२९।

दोहा

पीछे इह उस ग्रामते, आवे थो निज गेह।
पथ में सब बातें सुनी, नृपने कीनों जेह॥३०॥

कवित्त

तब पिन्याक गंध बानक पति मनमें कीनों येम विचार।
ए दोनों पगहैं दुखदायक इनही ने खोयो घर बार॥
इनही करके ग्राम गयो थो ऐसे मनमें क्रोध सुधार।
पाहन ते पग खंडनकर खर पहुंचो षष्टम नर्क मझार॥३१॥

दोहा

लक्षक नाम बिला विषै, उपजो लोभ बसाय।
छेदन भेदन आदि दुख, सहे कौन बरनाय॥३२॥

सोरठा

युत विवेक धीमान, न्यायवन्त इस लोभ को।
जानत जो दुखदान, जो चाहो कल्याण को॥३३॥

सवैया तेईसा।

सो भगवन्त सदा जैवन्त महा गुण बारिध है सुखदाई।

इन्द्र सु आन करें थुति गान नमें पद पंकज सीस नवाई ॥
तल दिखलावन दीपक सार गिरा तिनकी उज्जल अधिकाई।
दोष समस्त नसाय दिये भव बारज वृन्दनको बिगसाई ॥३४॥

दोहा

ऐसो श्री भगवान हैं, तिनको करूं प्रणाम।
दो मंगल मुझ दास को, जपूं नाम बसु जाम ॥३५॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय विन्धाक गंधकी कथा समाप्तम् नं०४२

अथ लुब्धकसेठकीकथाप्रारम्भः नं०४३

मंगलाचरण ॥ जोगी रासा ॥

तीन जगत गुरु केवल मंडित ऐसे श्री जिन स्वामी।
तिनकी भक्ति धरूं हिरदे में चरण करूं प्रणामामी ॥
लोभ तने अधिकार माहि की कथा कहूं चित लाई।
लुब्धक सेठ भयो धन लोभी ताने दुर्गति पाई ॥ १ ॥

चौपाई।

अंग देश चम्पापुर सार। नाम अभै बाहन भूपार।
पुंडरीका ताके बर भाम। बारिज नैनी दुति अभिराम। २।
प्राणों से प्यारी है जोय। तिनके घर उपजे सुत दोय।
गरुड़दत्त अरु नाग जु दत्त। मात पिताको प्यारे नित्त। ३।
तिसही नगरी मांहि बसाय। लुब्धक सेठ महाजन थाय।
पाप उदय धन लोभ अपार। नाम नाग बसवा तिस नार ।४।

दोहा

याके गृह में द्रव्य बहु, तब इन कीनो येम।
पत्त पत्नी के जुगल, बन वाये धर प्रेम ॥ ५ ॥
हय गय के जोड़े किये, ऊंट ऊंटनी युक्त।
भैंसा महिषी पशु सकल, पूंछ सींग संयुक्त। ६।

चौपाई

ए सब सुबरनके बन बाय । तिनमें मूंगे रतन जड़ाय ॥
पीछे एक वृषभ करवाय । तामें सघन दियो लगवाय ।७।
तिसके जोड़े हेत अयान । धन ढूंढ़नको कियो पयान ॥
करम जोग ते वर्षा घोर । भई सप्त दिन की तिह ठौर ।८।
सो इह लुब्धक अति हीं नीच । जावे नित गंगाके बीच ॥
बहुल कष्ट ते लावे दार । गट्ठे धर बेंचे बाजार ॥९॥
जे पुरातमा तृष्णावन्त । तिनके लोभ तनों नहिं अन्त ॥
कभी शान्तता धरे न चित्त । यह निश्चयकर जानो मित्त ।१०।
एक दिना रानी बड़ भाग । महल शिखर तिष्ठे जुत राग ॥
ताने देखो लुब्धक येह । सिरपे काष्ट धरे अति तेह ॥११॥
श्रमकर सहित लखी तिस काय । राजासे रानी बतलाय ॥
हो स्वामिन तुमरे पुर माहि । यह कोई दुखिया अधिका हि।१२।
दारिद जुत है कष्ट समेत । सिर पर बोझ स्वास अतिलेत ।
याको कछु धन देकर आज । तृप्त करो अबही महाराज ।१३।
दयावन्त अर जे गुणवन्त । दान देनकी बुद्धि धरन्त ॥
तिस रानी के वच सुन तबै । करुना नृप मन आनी जबै ।१४।
तिस बाणिकको लियो बुलाय। आप नृपति बच कहे सुनाय॥
जितनो धन तू चाहे बीर । तितनोले जाओ नहिं ढीर । १५ ।

दोहा

ऐसे नर नायक कही, सुनी सेठ तिह बार ।
कहत भयो मम घर विषय, एक बैल है सार । १६ ।
वा जोड़ी देखन विषय, मेरे चित में चाव ।
ताकर नृप यह दुख सहूं, धन को करूं उपाव ॥१७॥
तब नरिन्द्र कहतो भयो, हमरे बैल अनेक ।
तामें ते जो तुझ रुचे, सो ले जाओ एक । १८ ।

काव्य

भूपति के सब वृषभ देख कर सेठ उचारे ।
अहो देव मम बैल तुल्य कोऊ नहिं थारे ॥
राय कहे सुन भ्रात धेनु सुत तेरे कैसो ।
हम कूं देय दिखाय देंयगे तोकूं वैसो ॥ १६ ॥
तब ही लुब्धक सेठ भूप को निज गृह लायो ।
सुवरण को इक वृषभ बेग ही आन दिखायो ॥
देखत ही आश्चर्य्य वान हूवो नरनायक ।
तेरे बैल समान नहीं भाषे इम बायक । २० ।

सोरठा

सेठानी हरषात, रतन थाल भर लाइयो ।
दीनों पति के हाथ, कहो भेट नृप की करो । २१ ।
ताही छिन वह थार, निज कर लीनों सेठने ।
अहिफरण के आकार, होत भई अंगुरी सबै ॥ २२ ॥

दोहा

पाप उदय ते जीव इह, किंचित दान न देय ।
जो कदाचि प्रेरक मिले, तौ भी मन न करेय ॥ २३ ॥

पायता

तब राजा चित्त बिचारी । इह निन्दनीक अघधारी ।
फरण हस्त नाम उच्चारो । फिर निज गृह को पग धारो ।२४।
बहु तृष्णा सेठ पगो है । इह लोभ पिशाच ठगो है ।
तिस पाप उदय अति आया । इह विध चितमें ललचाया।२५।
जो दूजो बैल बनाऊं । तो चित में साता पाऊं ।
यह सोच गमन तब कीना । प्रोहन चढ दीप नवीना । २६ ।
सिंहल द्वीपादिक धायो । तहां क्रोड़ो द्रव्य कमायो ॥
फिर आवे थो निज धामा । बहु लोभ ग्रसो बसु जामा ।२७।

दोहा

तब याको मोहन फटो, उदधि विषय मझधार ।
बहुत कष्ट सह कर यही, मरत भयो तिह बार ॥ २८ ॥
निज दौलत भंडार में, भयो सर्प सो येह ।
पुत्रादिक को द्रव्य यो, करै लेन नहिं देह ॥ २९ ॥

पद्धडी

दीरघ सुतयाको गरुड़ दत्त । तिसने बहु क्रोधधरो सु चित्त ॥
इस अहिको जब मारो तुरंत । इन आरत ध्यान कियो अत्यंत ।३०।
मर चौथे नर्क गयो अज्ञान । बहु पाप उदै लियो शुभ्र थान ॥
अब देखो चतुर विचार येह । जिन धर्म बिना बहुदुख सहेय ।३१।
जन लोभ ठगो करे पाप घोर । भवदधि में पावत कष्ट जोर ।
यातें जे संत दयाल चित्त । हिरदेमें धर मग होय वित्त ३२॥
छोड़ो दुखको जो देनहार । यह क्रोध लोभ दीजे सुटार ।
उज्वल कीजे मनवचन काय । याहीतें बहुविध सुख लहाय ३३

सोरठा

अपनी शक्ति समान, पूजा दान सुनित करो ।
धरो जिनेश्वर ध्यान, यही शांति कारक सदा ॥ ३४ ॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषय लुब्धकसेठकी कथा समाप्तम् न० ४३।

अथ वशिष्ठतापसीकीकथा प्रा० ४४

अथ मंगलाचरण सोरठा ।

गणाधीश जिनदेव, दोष अष्ट दश रहित हैं ।
तिनको नमि बहु भेव, कहूं चरित्र बाशिष्ठको ॥ १ ॥

चौपाई

मथुरा नगर बसे बहु भाय । उग्रसेन तामें नर राय ।
ताके चितमें वास करन्त नार रेवती बहु गुणवन्त ॥ २ ॥

तिसही नगर विषय बड़ भाग । जिन पदाब्जमें अलिसम राज ।
ऐसे श्रीजिनदत्त महान । बसत सेठ अतिही धीमान ॥ ३ ॥
दासी एक रहे तिस धाम । प्रियगुलता है ताको नाम ।
इस अन्तर तापस इक आय । नाम वशिष्ठ तपे अधिकाय ४॥
जमनामें नित करे स्नान । पंचागन साधे अज्ञान ।
नगरीके मूरख जन जेह । भक्तिवान है पूजत तेह ॥ ५ ॥
पुरनारी जावें जल हेत । नमें प्रदच्छण ताकी देत ।
प्रियगुलता दासीको जबै । सखियोंने समझाई तबै ॥ ६ ॥
तो पण जैनी सेठ प्रसंग । नहीं नवायो याने अंग ।
तब याको गहके सब नार । तापसके पग दीनी डार ॥ ७ ॥
बोली चेरी तबै निशंक । धीमर सम इह तापस रंक ।
याके बच सुनके तापसी । क्रोध अनिलता उरमें धसी ॥ ८ ॥
वह दासी बहु हंस कर तास । चलीगई अपनी आवास ।
वह तापस उठके तिसकाल । राजसभा पहुँचो दरहाल ॥ ९ ॥
कहत भयो सुनिये महाराज । जिनदत सेठ दुखायो आज ।
लीनो नृपने सेठ बुलाय । ताको पूछो बैन सुनाय ॥ १० ॥
भव वर्जित यह सम्यक वन्त । कहत भयो सुन अवनी कंत ।
जो मैं याको कीर कहाय । तो ऐसेंही है नर राय ॥ ११ ॥
फिर तापस राजासे कही । याने नहिं इस दासी कही ।
तब नरेश इस बचकी हास । कर चेरी बुलवाई पास ॥ १२ ॥
देखतही तापस अज्ञान । क्रोध सहित इम बचन बखान ।
रे रगडे मैं द्विजको पूत । पवन भषूं अरु हूं अवधूत ॥ १३ ॥
ते पापन ऐसे इम कही । यह धीवर है निश्चय सही ।
तबै चेटका निरभय होय । कहत भई सुन तजकर कोय ॥१४॥
धीवर सफरी मारत आन । तू जलचरके हरत पिरान ।

तो मैं वामें अन्तर कौन। याते गहलीजे अब मौन ॥ १५ ॥
फिर झड़वाई जटा प्रचण्ड। तामें निकरे मछली खण्ड।
भूपति जिनमत लखो विशाल। इस तापसको दियो निकाल १६
मान भंग ते बहु दुखलीन। मथुरा तज इन गमन सुकीन।
आगे और सुनो व्याख्यान। यह अज्ञान महादुख खान १७॥

दोहा

गंगा गंधवती नदी, भयो जहां संयोग।
तहँ तापसि यह जायकर, धरत भयो बहु योग ॥१८

काव्य

सो केते एक दिनन बिषय गुरु बीर भद्रवर।
आये तिसही थान पांच सत संग मुनीश्वर॥
तामें ते एक ऋषी कहे सुनिये मुनि नायक।
ये तापसि तपघोर करत इम भाषे वायक॥ १९ ॥
ताके बच सुन सूर तबै बोले हित दाई।
जे अज्ञानी दयाहीन तिन तप क्या भाई॥
तापस येह बच सुने बहुत चितमें दुख पायो।
कहतभयो अज्ञान कौन बिध मोहिं बतायो ॥२०॥
तब आचरज कहे ज्ञान जो तू हिये धारे।
मरकर उपजे कौन ठौर वो गुरू तुम्हारे॥
बोलो तापस गुरू सदा तप करने हारे।
जब आई उन मीच तबै वे सुरग सिधारे॥ २१ ॥

दोहा

इम तापसकी सुन गिरा, बीरभद्र भगवन्त।
तान नेत्र कहते भये, अब सुन तू विरतन्त ॥ २२ ॥
तेरे गुरु सुरलोक में, नहीं गये तू जान।
उपजो इह इस काठ में, भस्म होत यह थान ॥२३॥

चौपाई।

तब तापस मन क्रोध सुआन। दार बिदारो तिसही थान।
तामें अहि निकलो तत्कार। मूरखकी चेष्टा धिक्कार ॥२४॥
सो वशिष्ट लख फणपनि जबै। शीघ्र गर्वको छोड़ो तबै ॥
श्री जिन भाषत सुन बच कान। भयो दिगम्बर श्रद्धा वान ।२५॥
एक दिना मथुरा ढिग आय। गोबर्धन गिरिपै तिष्ठाय ॥
मास उपासी येह मुनि चन्द। सहे परीषह बहु गुण वृन्द ।२६।
तप बलते विद्या तिस पास। आन करो ऐसे अरदास ॥
जो आज्ञा दो दीन दयाल। हम दासी करि हैं तत्काल ॥२७॥
लोभ पिशाच ठगो मुनि एह। करत भयो विद्या सुन लेह ॥
अबतो जाबो निज आवास। याद करूं जब आबो पास ।२८।
इस अन्तर नृप घोषन दई। भो पुरजन सब सुनियो सही।
ये बशिष्ठ मुनिवर गुण धार। ताको मैं दूंगो आहार ॥ २९ ॥
और इन्हें देवे नहिं कोय। ऐसे आज्ञा दीनी सोय ॥
मूरख करे जो भक्ति अपार। सो भी कष्ट तनी दातार ।३०।
अब मुनिवर पूरन कर ध्यान। चर्याको तब कियो पयान।
तादिन नृपको पट बंध करी। थम्भ उखार भगो तेह घरी ।३१॥
ताकर चिन्ता भूपति धार। भूल गयो देनो आहार ॥
क्षुधावन्त मुनि भिरमण कियो। पुरजनने भोजन नहिं दियो। ।३२।
भयो अलाभ तबै मुनि जान। वनमें आय धरो फिर ध्यान॥
दूजी बेर पारना दिना। करम योग इक कारज बना ॥ ३३ ॥
पुरमें दौं लागी अधिकाय। ताकर भूपति व्याकुल थाय ॥
भूल गयो भोजनको काल। मुनि वनमें पहुंचे तत्काल ॥३४॥
तीजी बार पारने काज। नगरी में आये मुनि राज ॥
इनके अन्तराय परभाय। जरा सिंधुको दूत जु आय ॥३५॥

ताकर उग्रसेन भूपार। मूरख व्याकुल थो तिह वार।
जिनकी ज्ञान रहितहैं बुद्धि। तिनके कारज होय न सिद्धि ॥३६॥
बहु उपवासन कर तन छीन। उलटे फेर गमन सू कीन॥
पुर बाहर चित व्याकुल होय। मूर्छा खाय पड़ो भू सोय ॥३७॥
वृद्ध पुरुष इक लख तिह घरी। क्रोध थकी बानी उच्चरी।
आप अहार देय नहिं राय। औरन को भी मने कराय ।३८।
ताते मुनि तप निध गुण खान। राजाने इह मारे जान॥
ऐसे सुन ऋषि वाको बैन। क्रोध अनिल व्यापो दुख दैन।३६।
बर्द्धमान पर्वत पै जाय। वे देवी सब लई बुलाय।
कहत भयो एहहै नृप नीच। ताकी कीजे अब तुम मीच ।४०।
वो देवी बोली तिह बार। जिन लिंगी मुनिवर हो सार।
ऐसो तुमको कहनो नाह। यामें पाप लगे अधिकाह ॥ ४१ ॥
तब मूरख बुद्धी रिसवन्त। ऐसे सुन फिर बचन भनन्त।
जन्मान्तर मुनि आज्ञा ऐह। पालनकीजे निःसन्देह ॥ ४२ ॥
इम सुनकर विद्या इम कही। परभवमें हम मारें सही।
फिर विचार मुनि दुखमें लीन। नृपने अन्तराय मुझ कीन ४३॥
सहित निदान छोड़ निज प्राण। गर्भ रेवती उपजे आन।
पापरूप यह क्रोध प्रचण्ड। शुभ कारज को करे कुखंड ।४४।

दोहा

अब इह रानी रेवती, भई छीन तन सोय।
लख भूपति पूछत भयो, क्यों तुम बपु कृष होय ।४५।
तब नारी कहती भई, सुनिये नाथ दयाल।
मेरे मनमें दोहलो, उपजो अति विकराल ॥ ४६ ॥

सोरठा

फिर नृप पूछो येम, कौन दोहलो चित बसे।
कहरानी धर प्रेम, तुम बांच्छा पूरन करूं ॥ ४७ ॥

तब बोली वो नार, इह वांछा मुझ चित बसे ।
तुमरो हृदय विदार, पान करूं श्रोणित तनो ॥ ४८ ॥

दोहा

पापी पुन्नी जीव जो, आवे गरभ मझार ।
तैसे तिस माता तनो, मन होवे निरधार ॥ ४९ ॥

पद्धडी

तब नृप मनमें करके विचार । पुतलो बनवायो निज आकार ।
महा बड़ंग तामें भराय । तिस वांच्छाको पूरन कराय ॥५०॥
कितने दिन पीछे नारि जेह । कुलनाशक पुत्र जनो सुयेह ।
जैसे बनके बांसनि मझार । वन्ही उपजे बन भस्मकार ॥५१॥
शिशु मुख देखन आयो नरेश । पेख्यो भृकुटी जुत क्रूर भेश ।
तिस बालकको अति दुष्ट जान । नृप उग्रसेन तब येम ठान५२
निज नाम तनी मुद्रा धरन्त । अरु तन सुकम्बल ले तुरन्त ।
काशीको मंजूषा मंगाय । तामें इन युत बालक धराय ॥५३॥

दोहा

जमना सरिता जाय कर, दीनो तिसे बहाय ।
दुष्टातम जे जीव हैं, किस को प्यारे थाय ॥ ५४ ॥

काव्य

इस अन्तर कौशांवी नगरी मांही जानो ।
गंगा भट मद कार रहे तहां एक अयानो ॥
ताके गेह मझार नाम राजोदरि नारी ।
जमना पै जल लेन गई सिर पै धर झारी ॥ ५५ ॥
ताने लखी मंजूष खोल देखी तिह भारी ।
निरखो जीवत बाल तबै मन साता धारी ॥
कंस नाम तिस धार फेर निज घर ले आई ।

पालै औठों जाम तैसे जाने सुख दाई ॥ ५६ ॥
अष्ट बरस को कंस भयो बिकराल चित्त अत।
पति पुत्रन से लड़े कलह उपजावत यह नित ॥
पापी जन जे होय कहो काको सुख दाई।
मात तात अरु भ्रात सबन को नांह सुहाई। ५७।
रुद्र चित्त इस जान कलाली काढ़ दियो तब।
सो सौरीपुर मांहि गयो बसुदेव पास जब॥
शिष्य होय कर शस्त्र शास्त्र विद्या भन लीनी।
यांही अवसर विषय कथा एक कहो नवीनी ॥ ५८ ॥

चौपाई

इस अंतर नृप सिंह रथ जान। जरासिंधुको अरि बलवान॥
दुष्ट चित वश होवे नहीं। चक्री सब सुभटन से कही॥ ५९॥
कोइ सूरमा पकड़े तास। ग्रह कर लावे मेरे पास॥
जीवं जसा तासुकी सुता। अपनी परनाऊं गुण जुता॥६०॥
सब सूरनमें सो सिरताज। मन बंच्छित पावे सो राज॥
ऐसे बच कह कर नर राय। पुर मांही घोषणा दिलवाय॥६१॥
यह घोषण सुनके बसुदेव। बड़े भ्रातकी आज्ञा लेव॥
पोदनपुर को चले तुरंत। साथ लई सेना बलवंत॥ ६२॥
पुर बाहर डेरे करवाय। आप होय कर सारथि बाह॥
छिपकर नगरी में परवेश। करत भयो बसु देव नरेश॥६३॥
ताकी गय शालामें जाय। हरको मूत्र गजन हूं प्याय॥
फेर करो बहु बिधि संग्राम। ततच्छण जीत लियो तिह ठाम।६४।
कंस सारथी थो जिहबार। दे आज्ञा बसुदेव कुमार॥
अपने करते तू बुद्धिवन्त। इस बैरी को बांध तुरन्त॥ ६५॥
तबै कंस चित क्रोध सुठान। बांध लियो सिंहरथ बलवान॥

अगन तनोहै तस सुभाय । बायु लगे अजुले अधिकाय ॥६६॥
तब बसुदेव जरासिंधु पास। आन करी ऐसी अरदास ॥
यह हर रथ लीजे महाराज। आप चरन ढिग आयो आज ।६७॥
लख चक्री मन भयो खुशाल। कहत भयो इम बचन रसाल॥
हो भट मेरी तनुजा सार। ताको तू कर अंगीकार ॥६८॥
जौन देशको तुझ अनुराग। ताको राज करो बड़ भाग।
तब बसुदेव कही तिह ठोर। हो स्वामी सुन बिनती मोर ।६९।
मैं नहिं बांधो है महाराज। कंस किये ये सबही काज।
जो चित तुमरे में भूपाल। सो दीजे याको तत्काल ॥७०॥

दोहा

जरासिंधु याको तबै, पूछो कुल अहबंस।
सुभटनमें सिरताज इह, बोलो इह बिधि कंस ॥७१॥

चौपाई।

मैं सेवक तुमरो नरराय। जान कलाली मेरी माय।
प्रति हरने इस लच्छण देख। चत्री तनुज सु याको पेख ॥७२॥
अवनीपर जे भूप उदार। तिनकी बुद्धि दिये अधिकार।
तबै कलाली लई बुलाय। पूछो इह सुत तेरो थाय ॥७३॥
ले मंजूष दीनी नृप हाथ। इसको पुत्र जानिये नाथ ॥
ऐसे सुन चक्री तिह बार। खोल मंजूष कियो निरधार ॥७४॥
उग्रसैनकी मुद्रा देख। प्रति केशव हराखियो बिशेख।
राज कुली तब याहि लखाय। जीव जसा दई परनाय ।७५।
फेर कंस दुठ जुत उन्माद। पूरब बैर कियो तिन याद।
उग्रसेन को देश महान। चक्रवर्त्ति से मांगो आन ॥७६॥
ताने दीनो हरषित चित्त। सो यह चालो युद्ध निमित्त।
कर संग्राम पिता को जीत। डारो पिंजरे अस तज नीत ।७७।

नगरीके द्रवाजे बीच । लटकायो ताले जड़ नीच ।
कांजीजुतको दोष अहार । खानेको नित दे दुखकार । ७८ ।
आप राज भोगे बहु भाय । चितमें क्रूरपनो अधिकाय ।
जे दुर्बुद्धी पुत्र अयान । या जगमें कुलनाशक जान ॥७९॥
या अन्तर अति मुक्तक नाम। भ्रात कंसके लघु अभिराम ।
यह संसारचरित्र निहार । श्री जिन दीक्षा लीनी सार ॥८०॥

दोहा।

तिस पीछे इस कंसने, बहु बिधि प्रीति जनाय ।
श्रीवसुदेवकुमार को, लीनो निकट बुलाय ॥ ८१ ॥
निज उपकारी जान के, अथवा गुरू निहार ।
भक्ति धार सन्मान कर, राखो निज आगार ॥ ८२ ॥
अब नगरी मृतकावती, देवसैन महाराज ।
धनदेवी ताके तिया, कुरुवंशन सिरताज ॥ ८३ ॥
ताके पुत्री देवकी उपजी सुन्दर काय ।
सो वसुदेवकुमार संग, दीनो कंस जु ब्याह ॥ ८४ ॥

पद्धडी

इस अन्तर इक दिनके मँझार रजुशिला भई वसुदेव नार ।
तब कंस भाम ताको जु देख । सो उत्सव कीनों अति विशेष ८५
ताही दिन अति मुक्तक सुनिंद्र । चर्या निमित्त आये योगिंद्र ।
जीवन जसा मुनिको लखाय । जोबन मदते इम वच कहाय८६
भो देवर नृत्य करो अवार । निज भगनीके ये पट निहार ।
मुनि बोले हे मुग्धे अयान । मोहि नृत्य करन नहिं जोगजान८७
तब येह पापन बहु हास कीन । मुनिवरको मारग रोक लीन ।
अत्यन्त दुखी जब होय साध । इम बरन कहे मतकर उपाध८८
देवकी पुत्र होवे महान । ताकर तुझ पतिको काल जान ।

तब कंसनार कर रिस प्रचण्ड । तिस पटके कीने युगम खंड८९
फिर जती कहे सुन नीच नार । तैं पटके खंड किये अबार ।
याते वो पुरुषोतम सुबाल । तुझ तात तनो भी जान काल ९०

दोहा ।

इम सुन चक्रीकी सुता, ह्वै कर दुखित अपार ।
शीघ्रगई निज धामको, जहां हुतो भरतार ॥ ९१ ॥
अज्ञानी जन हासकर, करैं पापको पुष्ट ।
ताको फल पीछे लहैं, दुखदाई अति नष्ट ॥९२॥

चालछन्द

एक कंस तिया अकुलाई । नैननमें नीर सुलाई ।
तब भूप कहे सुन नारी । चित व्याकुलता किम धारी ॥९३॥
सो मुनिवर के बच सारे । नृप आगे नार उचारे ।
यह सुनकर कंस अज्ञानी । जीवनकी आशा ठानी ॥९४॥
कर दुष्ट बुद्धि अधिकाई । बसुदेव पास तब जाई ।
नमकर इम गिरा उचारी । मेरो वर देहु अबारी ॥ ९५ ॥
बसुदेव याद जबकीना । सग्राम विषय वरदीना ।
यादवपति तबै सुनाई । मांगो सो पावो भाई ॥ ९६ ॥
तब कंस कहो इम टेरी । देवकी बहन जू मेरी ॥
ताके प्रसूत दिन आवे । जब मुझ घर सुत उपजावे ॥ ९७ ॥
ऐसो बर मांगो याने । ह्वै खुशी दियो तब ताने ॥
सत्पुरुष वचन निज पाले । दुख होवे तो उन टाले ॥ ९८ ॥

दोहा

प्राणन ते सुत अधिक हैं, सुत ते अधिके प्रान ।
सो दशरथ दोनो तजे, एक बचन परमान ॥ ९९ ॥
यह सुत करके देवकी, जानी सारी बात ।
ह्वै उदास पति पै गई, कहत भई यह भात । १०० ।

भो स्वामी या जगत में, पुत्र मरन दुख जोर ।
तातैं आज्ञा दीजिये, करूं तपस्या घोर ॥ १ ॥

सवैया इकतीसा

तब वसुदेव निज नार युक्त होय कर, गये उस वन मांहि जहां मुनि चन्द हैं । आमू को बिटप सार ताके तले निहार, ज्ञान नेत्र धारें तिष्ठ आनन्द के कंद हैं । भक्ति ठानी यदुपति सीस को नवाय तब, करी थुति येम तुम त्यागो जग धंद हैं। मेरे सुत कौन होय जरासिंधु नासकार, तास को बताओ जातें होय आनंद हैं ॥ २ ॥

दोहा

तब मुनि निज भगनी प्रतें, ऐसे बैन उचार ।
इस तरुवर सहकार की, तुम पकड़ो यक डार ॥ ३ ॥

कवित्त

तब वसुदेव नारने पकड़ी तिस तरु की इक सुन्दर डार ।
तीन युगम फल ऊपर लागे एक पड़ो सो भूम मझार ॥
अष्टम फल यक पक्क मनोहर सो ऊपरको गयो निहार ।
ऐसे देख निमित्त मुनीश्वर ज्ञान धार इम बचन उचार । ४ ।

सोरठा

अहो भव्य सुन धीर, तीन युगम सुत शिव लहे ।
एक होय बल बीर, जरासिंधु नासक सही ॥ ५ ॥
अष्टम पुत्र महान, तुमरो होवेगो भलो ।
अष्ट करम को भान, शिव सुन्दर छिन में बरे ॥ ६ ॥

चौपाई

ऐसे बच सुन आनंद कार । चित्त विषय इन कियो विचार ॥
मुनि बच निश्चय होवें सही । ऐसी सरधा हिरदे गही । ७ ।

फिर नमकर आये निज गेह। जिनवर धर्म करे जुत नेह।
इस अंतर देवक की सुता। कंस धाम तिष्ठी गुण जुता॥ ८॥
तहां जने जुग सुत पुनवान। तबै देव आसन कम्पान॥
अवधि बिचार आय इस धाम। लिये उठाय युगल अभिराम।९।
भद्दलपुर नगरी में जाय। श्री श्रुत द्दष्ट सेठ तहां थाय॥
अलका नाम तास के नार। ताके मृतक भये दो बार।१०।
तिनको निरजर लिये उठाय। बसुदेव सुत तहँ धरवाय॥
मृतक युगम सुत लाये तेह। धर दीने पर सूतक गेह।११।
पुन्यवान जे जगत मंझार। तिन रचा सुरकरें अपार॥
ताते हितकारी जिन धर्म। करो जो याते पावो सर्म॥ १२॥
पुन्य नाम जिसको है मीत। श्री जिन पूजन करो पुनीत॥
बरत आदि मंडित मुनि चंद। तिनको दान देन सुखकंद।१३।
दुष्ट चित्त फिर कंस अयान। मृतकबाल शिलपटके आन॥
जे जन पापी हैं दुखकार। तिनकी चेष्टाको धिकार॥ १४॥
इस अन्तर जु देवकी सोय। पुत्र जने ताने फिर दोय॥
वाही भांति करी सुर आय। रचा बहु बिधि चित हरषाय।१५।
फेर युगल तीजो शुभ गात। उपजावो सु देवकी मात॥
सुर ताही विध लेय तुरंत। अलका को सौंपे गुणवंत॥१६॥
वाके मृतक पुत्र इहां आन। कंस देख सिलपर पटकान॥
ऐसे भद्दलपुर के मांहिं। छहों बाल यह केलि करांहि।१७।
गुण उज्जल शिवगामी येह। सेठ सिठानी धारें नेह॥
वृद्धि होत सुखसे तिस गेह। आगे और कथा सुन लेह।१८।

दोहा

ता पीछे अब देवकी, सतवां सो सुत सार।
जनत भई भादों तनी, निस अष्टम अंधियार॥ १९॥

शत्रु दलनको अति बली, नवमो हरि पुनवान ।
ताही छिन बसुदेव ने, सिसु ले कियो पयान । २० ।

सोरठा

वर्षत झड़ बहु भेव, ता मांही लेकर चले ।
छत्र लेय बलदेव, बालक पै छाया करी ॥ २१ ॥
नारायण पुनि सार, देव वृषभ बन आइयो ।
दीपक लीने बार, सींग विषय धरके चलो ॥ २२ ॥

अड़िल्ल

गोपुर नगरी तने जड़े देखत भये । बासुदेव के चरन लगत ही खुल गयो । आगे जमना नदी बहे असराल ही । छूवत पद के गई उतर तत्काल ही ॥ २३ ॥

पहुंचे सरिता पार देव के मठ गये । देवी की मूरत पीछे छिपते भये । ताही छिन इन पुन्य जोग कर इम भई । नंद ग्वाल की नार यशोधा है सही ॥ २४ ॥

दोहा

सो इस देवी की सदा, सेव करत हरषाय ।
चंदन अच्छत पुष्प ते, पुत्र अर्थ नित आय ॥ २५ ॥
सो ताने तिस रात्रि में, सुता जनी इक सार ।
तबै यशोधा देखकर, क्रोध कियो अधिकार । २६ ।

पद्धड़ी

तिस पुत्री को ले नार कंत । देवी के मठ आये तुरंत ।
मूरत आगे कन्या धराय । ऐसी बिधके फिर बच कहाय ।२७।
हे देव सुता तुमरी सु एह । याको पालन तुमही करेह ।
इम कह कर पुत्री मेल दीन । फिर मंदर बाहर गमन कीन ।२८।
तब बुद्धिवान बसुदेव राय । तिसकी तनुजा लीनी उठाय ।

अपने सुनको रख देत पास। बाहर आकर इम बच प्रकास ।२६।
हे यशुवे तूले बाल चंद। देवी ने यह दीनों मुकंद ॥
सो लखकर लीनों अंक बीच। निज घर सुत लाई जुत मरीच।३०।
इस लोक विषय जे पुन्यवान। तिनके चरित्र सब अतुल जान।
अब वसूदेव बलदेव जेह। सुभगोत्तम आये आप गेह ॥ ३१ ॥

दोहा

पुत्री को परसूत थल, दै देवकी हात।
अब दुष्टातम कंस सुन, आयो शीघ्र रिसात। ३२।
पहुंचो सूतक थान में, देखी तनुजा येह।
तबै नाश कामल दई, भई सु चिपटी देह। ३३।

चौपाई।

अब गोकुल में कृष्ण कुमार। बृद्ध होत लीला कर सार ॥
कंस धाममें ह्वै उत्पात। भंग नक्षत्र भये अधिकात । ३४।
पड़त दामिनी नभते आय। इह लख कंस महा भय पाय ॥
तब निमित्तको जाननहार। शकुन शर्म नामा बुध धार। ३५।
तासों पूछो नृपति बुलाय। इह उत्पात होत क्यों भाय।
तब बोलो सुनिये तुम देव। इनको फल भाषत हूं एव। ३६।
गोकुल में तुम अरि परचंड। बृद्धि होत है अति बलबंड।
सो तुमको मारेगो सही। यामें मिथ्या रंचक नहीं ॥ ३७ ॥
इम सुनके निमतीको नाद। पहिली विद्या कीनी याद।
सो आई ततक्षण ता पास। कंस तबै तिनते इम भास ॥३८॥
हो देवी मो अरि जिस थान। ताके शीघ्र हनो तुम प्रान।
ऐसी सुन वे सुरी अयान। हरि मारनको उद्यम ठान ॥ ३९॥
प्रथम पूतना गई तुरन्त। निज अंचल कीने बिष वन्त।
तबै कान्हको प्यावो जाय। ताने कुच खेंचे अधिकाय। ४०।

मरन समान होय भग गई। काल सुरी जब आवत भई।
खगको रूप चोंच विकराल। मारनको धाई तत्काल ॥ ४१ ॥
जब मुरलीधर मारी मुष्ट। भागत भई पाप दुख पुष्ट।
यमलार्जुन देवी तीसरी। ऊखल ले आई रिस भरी ॥ ४२ ॥
गरुड़पती ने मारी जबै। वह भी भागी दुख ले तबै।
चौथी साकट विद्या आन। चरन घालते भगी अयान ॥४३॥
वृषा नाम देवी विकराल। क्रोध वन्त आई मनु काल।
मोहन ने गल तोड़ो तास। सोभी भागी लेकर त्रास ॥४४॥
षष्ठी विद्या अश्वा नाम। गल पकड़त भागी निज धाम।
सप्तम विद्या मेघेश्वरी। सात वर्ष तक वर्षा करी। ४५।

दोहा

तब गोबर्धन कर विषय, लियो मुरार उठाय।
ताको बस कछु नाचलो, सोभी गई पलाय ।४६।
काली नाम महा सुरी, अहिको रूप बनाय।
ताको जयकर कंजले, बाहर निकसे आय ।४७।

काव्य

आठों देवी हार कंसके पास गई तब।
कहत भई सुन कंस तास पै हम हारी सब ॥
इम कह आठों सुरी गई लज्जित है कर लख।
पीछे मोहन आय हने चानूर आदि मल ॥४८॥
फिर पापी इह कंस तास को वेग पछाड़ो।
दीनी बहु विध त्रास भूमिमें हनकर डारो।
गुण उज्वल नृप उग्रसेन छोड़ो तत्कारी।
दीनों ताको राज तबै मथुरा को भारी ॥४९॥

दोहा

फेर अर्द्ध चक्रेशते, हरि कीनों संग्राम ।
ताको हन त्रिय खंड पति, होत भये अभिराम ।५०।
श्री हरि बंश पुरानमें, इह सबही व्याख्यान ।
भिन्न भिन्न कर जानलो, अहो भव्य बुधिवान ।५१।

सवैया

इस लोक मांहि धर्मसे परान मुःखजे, खोटे कर्मके समूह ठाने हरषायके । तातें जे सुमन सार जगको लखो असार, पावो भव दधि पार करम नसाय के । सुर शिव देनहार जिन धर्म हिये धार, कभी न विसारो तुम मन बच कायके ॥ राग द्वेष के बसाय कौन कौन नष्ट नांह, भये अधिकाय भव्य जानो चित लाय के ॥ ५२ ।

दोहा

इह बशिष्ट तापसि तनी, कथा कही मैं बीर ।
सुनकर कोह निवारियो, छमा गहो जन धीर ॥५३॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय बशिष्ट तापसीकी कथा समाप्त नं० ४४

अथ लक्ष्मीमतीकीकथा प्रारम्भः नं० ४५

मंगलाचरण । सवैया तेईसा ।

लोक अलाक प्रकाशक ज्ञान धरे अरिहन्त सबै सुखदाई ।
मंगल रूप विराजत हैं नित पूजत इन्द्र नरिन्द्र सु आई ॥
सीस नवाय करूं परणाम धरूं तुम ध्यान जु होय सहाई ।
मान कथा बरनूं हितकार सबै भ्रम टार सुनो अब भाई । १ ।

ढाल एला पुत्र की ।

मागध देश जी सोहनो, लच्छमी नामक ग्राम ।
सोमदेव तहँ दुज रहे, ताकै श्री मति भाम ।
मान महा विष रूप है । २ ।

रूप सुभाग धरे तिया, जोबन मद अधिकाय ।
कुलको गर्ब करे महा, अवला क्रूर सुभाय ।
मान महा विष रूप है । ३ ।
सोमदेव धरमात्मा, विप्र शिरोमणि सार ।
धर्म नेह नित चित बसे, एके दिवस मझार ।
मान महा बिष रूप है ॥ ४ ।
पख उपवासी महा मुनी, तप रतनन के धाम ।
विप्र गेह आवत भये, समाध गुप्त ऋषि नाम ।
मान महा विष रूप है । ५ ॥
तिनकी भक्ति हिंय धरी, सोमदेव बड़ भाग ।
पड़ गाहे ताही समय, थापे जुत अनुराग ।
मान महा बिष रूप है । ६ ।
फिर निज तियतें इम कही, सुन प्यारी चित लाय ।
गुण मंडित ये साधवी, तू भोजन करवाय ।
मान महा विष रूप है । ७ ।
इम कहकर मन दुखलयो, भयो महा कोइकार ।
राजाने बुलवाइयो, तहां गयो तत्कार ॥
मान महा बिष रूपहै ॥ ८ ॥
मूरखनी नारी तबै, दियो नहीं आहार ।
आसन पर बैठी रही, आनन मुकर निहार ॥
मान महा बिष रूप है ॥ ९ ॥
गर्भकरो अघकारनी, मुख दुरबचन उचार ॥
कर गिलानि मुख देहकी, भेड़े जुगम किवाड़ ।
मान महा बिष रूप है ॥ १० ॥
घरमें बैठी पापिनी, बांधे कर्म अयान ।

अहो महा एह कष्ट हैं, या सम पाप न आन ॥
मान महा विष रूप है ॥ ११ ॥
चारित मंड तबै गुरू, सब आतम हितकार ।
शान्त चित्त समता लिये, बनको कियो बिहार ॥
मान महा विष रूप है ॥ १२ ॥
अहो बात इह युक्त है, पापातम जो जीव ।
तिस घर सम्पति आयके, जिम फिरजाय सदीव ॥
मान महा विषरूप है ॥ १३ ॥
मुनि निंदा करने थकी, अथवा मान पसाय ।
सप्तम दिन द्विजनी लयो कोढ़ उदम्बर काय ॥
मान महा विष रूप है ॥ १४ ॥
मुनि निंदा एक जग विषै, शांत हेत नहिं होय ।
रोग शोक दुख कारनी, विनै थकी सुखकोय ॥
मान महा बिष रूप है ॥ १५ ॥
पुरजन लख दुर्गंध को, सहने समरथ नांहि ।
कोउ सहत वो पापनी, काढ़ दई छिन मांहि ॥
मान महा विषरूप है । १६ ।
जाय तबै बनके विषै, अगन कियो परवेश ।
आरत ते तज प्रानको, गधी भई उस देश ॥
मान महा विषरूप हैं ॥ १७ ॥

दोहा

रजक धाम में जनम लहि, मिलो दूध तिस नाह ।
तब मरकर सूरी भई, तिसी ग्राम के मांहि ॥ १८ ॥
फिर तन तज कूकर तनी, पाई जुगे परजाय ।
दावानल में भस्म ह्वै, मरी महा दुख पाय ॥ १९ ॥

काव्य

हालाहल विष जगत मांहि दीखे दुखदाई ।
सो तो भक्षण श्रेष्ठ मरन इकबार लहाई ।
शील शिखर मुनिराय तनी जे निंदा ठाने ।
जन्म जन्म दुख लहे पापतें शुभ मति भाने ॥ २० ॥

चौपाई

सो कूकरनी तजिके प्रान । संविपाक निरजरा ठान ।
कच्छ नाम नगरी के तीर । नदी नर्मदा बहे गंभीर ॥ २१ ॥
ताके तट भई धींवर सुता । काड़ा नाम महादुख युता ।
तन दुर्गंध रोग की खान । किधौं पापकी मूरत जान ॥ २२ ॥
देखो मुनि निंन्दा परभाय । द्विजनी भई धींवरी आय ।
जनम जनम दुख लहो अत्यन्त । ताते जात गर्व तज सन्त॥२३॥
धींवर की अब तनुजा एह । नित प्रति नाव चलावत तेह ।
एक दिना गुरु दीनदयाल । ज्ञाननेत्र धारे गुण माल ॥२४॥
द्रुहनी तट देखे धरि ध्यान । कीरसुता नमि बोली बान ।
हे प्रभु मैंने तुमको सही । पहिले भी देखे हैं कहीं ॥ २५ ॥
यह सुनके मुनि शिव तिय कन्त । पूरबलों भाषो विरतन्त ।
अहो बालके तू द्विज सुता । लक्ष्मी ग्राम विषे मदजुता ॥२६॥
सोमदेव द्विजकी थी नार । लक्ष्मीमती नाम तू धार ।
हे मुग्धे मुझ निन्दा कीन । ताते पायो कोट मलीन ॥ २७ ॥
अग्नि भस्म है गधी जो भई । मर सूरीकी काया लई ।
फिर दो बार भई कूकरी । धींवरसुता भई वपु सरी । २८ ॥
ऐसे गुरुके बचन संभाल । जाती सुमरन पायो बाल ।
मुनि के चरणकमल शिरनाय । कहतभई बहुबिधि दुखदाय।२९।
हो मुनि मैं कर पाप प्रचण्ड । जौन जौन मैं पायो दण्ड ।

अब रक्षा कीजे योगिन्द्र । जाते दुखको मिटे प्रबंद । ३० ।
तबै समाधि गुप्त मुनिराय । याको भगवत धर्म सुनाय ।
देव इन्द्र कर पूजित सदा । क्षुल्लक ब्रत धारे है मुदा । ३१ ।
शक्ति समान करो तप घोर । मरके स्वर्ग गई अघ तोर ।
इस अन्तर कुण्डनपुर सार । भीषम नामा नृपति उदार । ३२ ।
नारी यशस्वती तिसके गेह । भूपतिको तासों अति नेह ।
सो इह नाम थकी चय बाल । भई सुता बहु रूप रसाल ॥३३॥
नाम रुक्मणी है सुखकार । बासदेव कीनी पट नार ॥
पुन्य थकी कन्या को लहे । आचारज ऐसे बच कहे ॥ ३४ ॥

छप्पय

जिन मत सेवत लहे भले कुल मांहि जनम जश ।
ज्ञान शास्त्र को लहें होत सम्पति जाके बश ॥
बिदुषन संगत करे बंध शुभ गति को ठाने ।
फेर लहे शिव धाम बसू अरि को सो हाने ॥
इम जान सकल अभिमानको, तजो बेगही भविक जन ।
जिन मतकी श्रद्धा करो, ताते पाओ सुजस धन ॥३५॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय लक्ष्मी मतीकी कथा समाप्तम् ॥४५॥

मायाशल्यपुष्पदत्ताकीकथा प्रारम्भः ४६

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

तीन जगत पति सार, श्री अरिहन्त जिनेश जी ।
कोड़ो सुख दातार, तिनको न्याऊं भाल निज ।१।
कहूं कथा अब येह, माया शल्य निवारनी ।
सुनों भव्य चित देह, ताते सब कल्याण है ।२।

चौपाई ।

अजतावर्त नगर अति शुच्छ । पुष्प चूल भूपति तहँ दच्छ ॥

नार पुष्पदत्ता तिस गेह। सदा सुहागन सुन्दर देह ॥ ३ ॥
एक दिना राजा धीमान। जती अमर गुरु भेटे आन।
तिनके निकट सुनो जिन धर्म। जो सुर शिवके देवे सर्म। ४।
मन बच काय करी त्रिय शुद्ध। संयम लीनो निर्मल बुद्धि।
अब इह पुष्पदत्ता नृप भाम। जाय ब्राह्मला आर्जा ठाम।५।
होत भई आर्या तिह घरी। शारीरक मूर्च्छा परि हरी।
कुल ऐश्वर्य गर्भ इस चित्त। धर्म तत्व तें उलटी नित्त। ६।
और अर्जका जे तप धाम। तिनको इह नहिं करे प्रनाम ॥
मूरख जनजे चेष्टा धार। ताको है बहु विधि धिक्कार ॥७॥
फेर पुष्पदत्ता इम कीन। तन सुगंध लाई मति हीन ॥
तबै ब्राह्मला आर्जा कही। ताको इह बिध जोग जु नहीं।८।
ताबच सुन माया जुत येह। बोली है सुगन्ध मुझ देह ॥
जिनके नहीं धर्म मन मांहि। ते समझाये समझे नांहि ॥ ९ ॥

दोहा

ऐसे माया शल्प धर, ब्रतका त्यागी काय।
पाप उदयते जन्म लहो, चम्पापुर में आय ॥१०॥
सागरदत्त जु सेठ के, दासी भई मलीन।
पूत मुखी तिस नाम है, उपजी दुखिया दीन ।११।

काव्य

अब श्री गुरु इम कहे सबै पंडित सुन लीजे।
यह संसार चरित्र जान माया तज दीजे ॥
कैसी है यह सल्य भवो दधि बेल समानी।
दुख उपजावन हार, जानकर त्यागो प्रानी ॥१२॥
पशू जन्मको देत शुद्ध कुल नाशन वन्हीं।
लक्ष्मी यश अरु रूप बड़ाई शुभ गत भन्नी ॥

ऐसे लख जिन धरम करम में सावधान जे ।
माया मन ते दूर करो जो चाहो सुख ते ॥१३॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय माया शल्य पुष्पदत्ता ने करी ताकी कथा समाप्तम् ४६

अथ मारीच चरित्र प्रारम्भः नं० ४७

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

सुख रूपी जे धान, तिन उपजावन मेघ सम ।
ऐसे श्री भगवान, हरष सहित जिन पद नमूं ।१।
पूरब श्रुत अनुसार, कहूं चरित्र मारीच को ।
सुनो भव्य चित धार, मिथ्याको अधिकार अब ।२।

दोहा

प्रथम भरथ चक्री भये, नगर अयोध्या बीच।
तिनके भव्यातम तनुज, आरज भये मरीच ॥३॥
इन्द्र चन्द्र नागिन्द्र कर, अर्चित पर अर्बिन्द ।
ऐसे श्री बृषभेष वर, गए कानन तज फन्द ॥४॥

चौपाई

एक दिना यह भरथ नरिन्द्र । समोशर्न में युत आनन्द ॥
प्रभुसे प्रश्न कियो सिरनाय । अहो नाथ मोहि देहु बताय ।५।
तुमसे तीर्थंकर ते ईश । और अबै होवे जगदीश ॥
तिनमें होनहार जन सोय । हैक नहीं इस थानक कोय ॥ ६॥
तब जिन केवल नैन विशाल । कहत भये बच सुन गुणमाल ॥
एह मरीच गुण उज्वलसोय । तुभ सुत अंत जिनेश्वर होय ॥७॥
यह बच सुनकर षट खंड पती । हर्षित चित्त भयो शुभ मती ॥
अरु मरीच भी सुनये बान । उर अज्ञान छयो तिस आन ।८।
सम्यक त्याग कुलङ्गी भयो । पर ब्राजक मत सांख जु गहो ॥

घोर बीर यह है संसार । तामें भ्रमन कियो बहु बार ॥ ९ ॥
जन अज्ञान प्रमाद बसाय । नाना गातेमें दुःख लहाय ॥
तातैं भव्य जीवजे साध । धर्म काज में तजो प्रमाद ॥ १० ॥
फिर ये मोह तने परभाय । बहुत काल भरमों दुखपाय ॥
मंद कषाय भई फिर चित्त । जैन धर्म को गहो पवित्त ॥ ११ ॥
नंद नाम उपजो नरपाल । जिन दीक्षा लेकर तत्काल ॥
षोडष भावन भाय मुनिंद । तीर्थंकर परकृत कर बंद ॥ १२ ॥
स्वर्ग सोलवें उपजे इन्द्र । भोग तहां नाना सुख वृन्द ॥
फिर चैकर पृथ्वी तल बीच । शुद्धातम वो जीव मरीच ॥ १३ ॥

दोहा

कुन्डनपुर नगरी विषय, श्री सिद्धार्थ नरिन्द्र ।
प्रिये कारनी मात के, उपजे बीर जिनिन्द्र । १४ ।
तीन लोक पूजत चरन, तीर्थंकर महाराज ।
बाल पने दीक्षा लई, तजके सकल समाज ॥ १५ ॥

पद्धड़ी छन्द

फिर घात कर्म को बास ठान । केवल पद पायो अति महान ।
सब देव इन्द्र नागिन्द्र चंद । इनके पद पूजें धर अनंद ॥ १६ ॥
भव्यनको सुर शिव सर्मदाय । ऐसो मारग दीनों दिखाय ॥
फिर सब अघातिया कर्म नास । शिवपुरमें कीनों आप बास । १७ ।
अब भव्य जीव चित मांह सार । जिनवच सरधान कियो अपार ।
जयवंत प्रवर्त्तो बर्द्धमान । नित प्रति देवे अद्भुत कल्यान ॥ १८ ॥

काव्य

जगनाथन कर पूज ज्ञान बारध अरिघाता ।
ऐसे श्री अतिबीर भव्य जन के हैं त्राता ॥
तिनकी भक्ति महान देव नर सुर खग के सुख ।

अनुक्रम तें शिव होत नाश सब ही कलेश दुख ॥
इह विधि श्री आदीसने, भरत नृपति सेती कही ।
श्री जिन बचन महान हैं, ताही विध होती भही ॥१६॥

इति श्री आराधना सार कथा कोष विषय मरीच की कथा समाप्तम् नं० ४७

घ्राणदोष गंध मित्रकीकथा नं० ४८

मङ्गलाचरण । सोरठा

तीन जगत हितकार, गुण बारिध श्री जिन नमूं ।
गंध मित्र की सार, कथा कहूं घ्राणाक्ष की ॥ १ ॥

गीता छन्द

नगरी अयोध्या में सुबुद्धि बिजै सेन नरिन्द्र जी ।
ताके बिजैमती नार सुन्दर पुत्र हो सुख कन्द जी ॥
जै सैन दूजो गंध मित्र सु नाम तिसको जानिये ।
लघु सुमुन आदिक गंध लम्पट अलि समान प्रमानिये ।२।
एके दिना नर नाथ ने बैराग मांही चित धरो ।
जै सेन को निज पद दियो अवषेष ताही छिन कियो ॥
लघु पुत्र को युवराज पद में थापियो तत्काल जी ।
जा आप सागर सैन मुनि ढिग सर्व संग प्रहार जी ॥३॥

चौपाई

गंध मित्र तृष्णाकी रास । बड़े भ्रात को दियो निकास ॥
अहो राज लक्ष्मी इह जान । पाप तनी जननी पहिचान ।४।
जिसमें है आसक्त अज्ञान । बंधु बर्ग के नासे प्रान ॥
इस अंतर जै सेन नरेश । राज भ्रष्ट है तजो स्वदेश ॥ ५ ॥
अपने मनमें करे उपाय । किह बिधि नास होय लघु भ्राय ॥
अब इह गंध मित्र नर राय । सरजू सरितामें नित जाय। ६ ।
सब नारन जुत केल करात । नासा इन्द्री बश अधिकात ॥

बहु प्रकारसे सुमन सुगंध । तिनमें लीन रहे मद अंध ॥ ७ ॥
यह वृतान्त सुनके जै सेन । भ्रात हनन इच्छा दिन रैन ॥
हालाहल के पुष्प मंगाय । तिस तटनी में दिये बहाय ॥ ८ ॥
यह मूढ़ातम मदमें भूल । सूंघत भयो बेबिष के फूल ॥
लीन भयो घ्राणेन्द्री बीच । मरके नरक गयो वह नीच ॥ ९ ॥
जे अच्छनके बश हैं जीव । तिनको नास जो होय सदीव ।
एकेन्द्री बश राजकुमार । मरके शुभ्र लहो दुख भार ॥ १० ॥

दोहा

तातें भव सुन लीजिये, मन बच काय लगाय ।
जे बस पांचों अच्छ के, तिन दुठ को बरनाय ॥ ११ ॥
ऐसे लख कर सुधी जन, जिन मत गहो तुरंत ।
सर्व भोग को छोड़ कर, ध्यावो श्री अरिहन्त ॥ १२ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय घ्राणदोष गन्धमित्रकी कथा समाप्त.

अथ कर्णेन्द्री विषयमें गंधर्व सेन्याकी

कथा प्रारम्भः नम्बर ४६

मङ्गलाचरण । छप्पय ॥

सर्व सुख दातार जिनेश्वर चरण कमल वर ।
तिनको हियमें धार जजूं मैं नमस्कार कर ॥
गंधर्व सेना नाम भई मूरखनी नारी ।
ताको चरित सुजान सुनो बरनूं हितकारी ॥
शुभ नगरी पाटल पुत्र में, गंधर्वदत्त नृप गुण युता ।
है गंधर्वदत्ता नार तिस, गंधर्वसेना तिस सुता ॥ १ ॥

चौपाई

कैसी है नृप तनुजा येह । गंधर्व विद्या जानत तेह ।
गर्व सहित परतिज्ञा धार । जो तुम जीते गान मंझार ॥ २ ॥

सोई मेरो होवे कंत । ऐसे निश्चय कर मदमन्त ।
जे आवे चत्री इस पास । जीत लेय तिन करे निरास ॥ ३ ॥
येही वार्त्ता सुन पंचाल । बुद्धिवान पाठक तत्काल ।
शिष्य पांच सौ लेकर संग । पोदनपुर ते चलो अभंग ॥ ४ ॥
पाटल पुत्र तने उद्यान । बाद हेत आयो सुख मान ॥
तरु अशोक तहँ एक निहार । ता तल शिष्यन प्रति उच्चार ५॥
जो कोई आवे इस थान । मेरो भेद कहो बुधवान ॥
इम कह सोय रहो तिहि ठौर । केई शिष्य चले पुर ओर ॥ ६ ॥
कौतुक मन माहीं धारन्त । नगर बजार गली पेखन्त ।
सुन नृप सुता चित्त हरषाय । उपाध्याय के ढिग तब आय ।७॥
शिष्यन ते पूछो तिस नाम । निद्रावन्त लखो तिस ठाम ।
वीन समोह धरो चहुं ओर । राल बहे ताके मुख जोर ॥ ८ ॥
ऐसे लख तिय करी गिलान । पूज अशोक गई निज थान ।
पाटक उठकर पेखत भयो । तरु अशोक किसने पूजियो ॥ ९ ॥
तब शिष्य बोले सुन महाराज । राजसुता आई थी आज ।
बोले गुरु चित में दुखपाय । क्या विरूप उन मोह लखाय । १०।
इम कहि नृपको नमियो आन । कन्या ढिग लीनो अस्थान ।
रही रात्रि पिछली पंचाल । बीन बजाई अधिक रसाल ॥११॥
सातों सुर गर्भित जुत सार । श्रवण सुनत मोही नर नार ।
ताको अद्भुत सुन के गान । राजसुता बिहबल अधिकान ।११।
सारंगवत चाली तत्कार । शीघ्रगमन ते कछु न निहार ।
महल शिखर तें पड़ी तुरन्त । महाकष्ट तें मीच लहन्त । १३ ।
भ्रमण कियो भव अटवी बीच । नाना जन्म धरे बहु नीच ।
देखो गंधर्व सेना येह । कर्णेन्द्रिय वश होकर तेह । १४ ।
मूरखनी दुखते तज काय । भ्रमण कियो जगमें अधिकाय ।

इह लख भविजन तजो तुरन्त । पांचों अंजनके सुत सन्त ।
करमबन्ध को कारज जान । दुख उपजावन बेलि समान ।
इम विचारकर जिनवर धर्म । हिरदेधारो तज सब भर्म ॥१६॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय कर्णेन्द्री विषय में गंधर्व सेना की कथा समाप्तम्

रसना इन्द्री विषयाशक्त भीम नृपति की

कथा प्रारम्भः नं० ५०

मङ्गलाचरण । अडिल्ल

केवल नैन बिशाल धरे भगवन्त जी ।
तिनको नमकर कथा कहूं रसवन्त जी ।
रसना बस ह्वै भीम नृपति वेदन लही ।
सुनकर भवि जन मन वैराग धरें सही । १ ।

पायता

कपिल्ला नगरी जानो नृप भीम महा अघ खानो ।
सो खोटी मतको धारी, सोम श्रीता के नारी ॥२॥
तिन भीमदास सुत जायो, फिर नन्दीश्वर व्रत आयो ।
कुल क्रमते जो चल आई, नृप घोषणा एम दिखाई ।३।
सुनलो पुरके सब लोई, करो जीव घात मत कोई ।
अरु आप मांस मंगवावे, रसना लंपट नित खावे ।४।
इन दिनमें पल मिलो नांही, नृप खाये बिन न रहाही ।
जो करे रसोई याकी, ता सेती नृप इम भाखी ॥ ५ ॥
पल बेग लाय तू भाई ; तब इह मसान में जाई ।
तहँते शिशु मृतक सुलायो, नृपको बनाय खिलवायो ।६।
पल को राजा कर भक्षण, सुख पायो बिधि अक्षण ।
फिर वाते बैन उचारी, इह मिष्ठ मांस अधिकारो ।७।

तू कितते लायो भाई, सो मोको देहु बताई ॥
जब अभय दान उन लीना, सब भेद तुरत कह दीना ।८।
तब नृपति चयो सुन लीजे, नित मांस यही मोहि दीजे ।
जब सूपकार अन्याई, लाडू बांटे अधिकाई ॥ ९ ॥
जो बालक रहे पिछारी, ताकों मारे अघकारी ।
राजाको नित्य खवावै, कोई नर भेद न पावै ॥ १० ॥

दोहा ।

पापी की संगति थकी, पाप रूप बुधि होय ।
जैसे नृप अघकार थो, सूपकार तिम जोय ।११।

काव्य ।

तब नगरी के लोग पाप इनको पहचानो ।
मंत्रिन के ढिग आय तिनों को भेद बखानो ॥
न्यायवान पर धान जनन को दुख सुन सारो ।
भीमदास नृप तनुज शुद्ध आतम अधिकारो ॥ १२ ॥
ताको थापो राज विषय उत्सव कर भारी ।
सो यह भूप महान हुवो परजा हितकारी ।
नगरी जन मिल सर्व सहित मन्त्री अधिकारी ।
सूप कार युत भीम देशतें दियो निकारी ॥१३॥

दोहा

पापी जनके सर्व ही, प्रजा पुत्र अरु मित्र ।
मंत्री आदिक बंधु जन, होवे निश्चय शत्रु ।१४।

छन्द चाल ।

तब भीम गयो वन मांही । तिस क्षुधा लगी अधिकाही ॥
तब सूपकार को मारो । निज भूख तनो दुख टारो ॥ १५ ॥
फिर पापी इह भरमायो । मेखल नगरी में आयो ॥
वसुदेव राय ने मारो । यह अधम नरक सिधारो ॥ १६ ॥

सोरठा।

धरम बुद्धि तज नीच, करम अरी के वश भये।
ते भव अम्बुध बीच, डूबत नाना दुख सहे ॥१७॥
ताते बुध जन सार, जैन धरम नित प्रति भजो।
श्रेष्ट सुःख दातार, शुभ कारज दूजो नहीं ॥ १८ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय मांस दोषमें भीम नृपति की कथा समाप्तम् नं० ५०

अथ नागदत्ता स्त्री ने शीलपाला

ताकी कथा प्रारम्भः नं० ५१

मंगलाचरण। मरहटा छंद

तीन जगत के पति सब पूजत ऐसे श्री अरिहन्त।
तिनके चरन कमल जुत नम के कहूं कथा रसवन्त ॥
भई नागदत्ता इक नारी, तिस को चरित महन्त।
सुन चित धारो शील सुपारो टारो अघ सब सन्त । १ ।

पद्धड़ी

यक देश अमीर महा विशाल। ता मधि नासिक नगरी रसाल।
तहँ बनक जु सागरदत रहाय। अहिदत्ता नारी तासु थाय ॥२॥
तिनके सुत सुंदर श्री कुमार। श्री श्रेणा तनुजा एक सार ॥
तब अहिदत्ता सो नार जान। नंद नाम ग्वाल सेरत अयान।३।
इक दिन इसके बचते गुवाल। दुख तनमें कह रहो घर कुचाल।
जब सब गोकुल को संग लेय। गयो आप चरावन सेठ येह।४।
सो रात्रि पाछलीके मझार। सागरदत बनमें नींद धार ॥
जब जाय गोप तहँ पापवन्त। काननमें सेठ हनो तुरन्त। ५।

दोहा

पर नारी लोभी पुरुष, गिने न काज अकाज।
तिनको जीवन बिफल है, धारत चित नहिं लाज ॥६॥

चौपाई।

अब यह नंद नाम गोपाल। अहिदत्ता जुत रहे खुशाल॥
दुराचार सेवे नित सोय। घरमें तिष्ठे हर्षित होय॥ ७॥
श्री कुमार यह देख चरित्त। लज्जा जुत चिंता दुख चित्त॥
थाकी माता सुतको देख। जानी मो चरित्त यह पेख॥ ८॥
तबै पापनी बहु रिस धार। नंद ग्वाल ते येम उचार॥
तू अब श्री कुमारको मार। जब सुखते तिष्ठे आगार॥ ९॥
तब गोविन्द पापमें लीन। रोग तनो मिस करो मलीन॥
पड़ा रहा सब तजके काम। पिछली रैन रही एक जाम।१०।
गोकुल सबले श्री कुमार। कानन गमन करन चित धार।
तब थाकी भगनी ने कही। भो भ्राता तुम सुनिये सही।११।
जैसे तात हमारो मरो। सो इलाज तुमरो भी करो॥
ग्वाल हाथ ते तुमरी मात। करवावेगी तुमरी घात॥ १२॥
ताते जतन करो वर बीर। साव धामन तुम रहियो धीर॥
ऐसे सुन भगिनी के बैन। जात भयो बनमें तिस रैन। १३।
तहां काठको दीरघ खंड। ताको अपने पटते मंड॥
आप छियो तरु पीछे जाय। करमें खंड लई भै दाय॥ १४॥
जब ह्वां आयो पापी ग्वाल। इन असते मारो तत्काल॥
फिर प्रभात गोकुल संग लीन। निज घर आयो यह परवीन।१५।
गोदोहन के समै मंझार। सुतते पूछो पापन नार।
अहो तनुज तुम ढूंढन काज। मैंने ग्वाल खंदायो आज॥१६॥
सो वो रहो बैठ केहि ठौर। तब सुत बोलो बचन कठोर॥
इस अस ते तुम पूछो मात। मैं नहिं जानत बाकी बात।१७।

दोहा

तब अहिदत्ता पापनी, श्रोणित जुत असि देख।
क्रोध धार मूसल तनी, सुतके दई विशेष॥ १८॥

तब दोनो भ्राता बहन, क्रोध बहुत मन ठान।
तिसही मूसल ते तबै, हने मात के प्रान ॥ १९ ॥

काव्य

सो दुष्टातम मरी दुःख लह नर्क सिधारी।
पापी पाप प्रसाद हनो जावे तत्कारी ॥
दुराचार को धिक धिक तिस बुद्धि अयानी।
कर के पाप प्रचंड लहे दुरगति अज्ञानी ॥ २० ॥

छप्पय

ताते भवि जन सुनो शीलमाही बहु सुख दाता।
बरनों श्री जिनदेव जगत जन को दुख घाता ॥
चित प्रसन्न करतार धरम की सिद्धि लहावो।
ताको पालन करो जास ते सुरशिव पावो ॥
सब देव इन्द्र जाकी सदा, स्तुति करें सु आयनित।
दुख पापक नासक सुजल, सुख दाता जानो पवित।२१।

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय नागदत्ता की कथा समाप्तम्

दीपायन मुनि की कथा प्रारम्भः नं. ५२

मंगलाचरण। कवित्त

कोड़ो सुख को देनहार बर तीन जगत पूजत भगवान।
तिनके चरन कमल को अर्चूं बहु बिधि भक्ति हियेमें ठान ॥
पूरब आचारज जिम भाषो तिन अनुसार करूं व्याख्यान।
दीपायन मुनिको चरित्र सब सुनो भवीजन देकर कान। १।

चौपाई

एक देश द्वारकापुरी। जिस लख नाक लोक दुत दुरी ॥
नेमीश्वर तहँ जंनमें आय। ताते पुर पवित्र अधिकाय ॥ २ ॥
तामधि बल नारायन सार। राज करत तिष्ठे सुख कार ॥

एक दिना यह दोनो भ्रात। श्री नेमीश्वर जग विख्यात। ३।
तिनके बंदनको अवनीश। पहुंचे उज्जयंत गिरि सीस॥
समोशरन में कियो पयान। बन्दे पद जिनके सुख ठान। ४।
अष्ट प्रकार द्रव्य सुच लीन। परम भक्ति धर पूजा कीन॥
अस्तुत करी बिबिध परकार। फेर सुनी बानी मन धार। ५।
हरषत ह्वै कर तब बलदेव। करी बीनती प्रभु से-एव॥
हे जगबंधु अहो जगदीश। केवल चखु धारी तुम ईश। ६।
करुणा सागर जगपति जान। लोक अलोक प्रकाशक भान॥
यह सुख दायक सम्पत सार। बासुदेव के उदै मंझार। ७।
कितने काल रहेगी नाथ। ऐसे प्रश्न करो नम नाथ॥
तब प्रभु बानी खिरी गहीर। बासुदेव जो तेरी बीर। ८।
ताकी संपत सर्म निधान। द्वादश वर्ष अवधि तिस जान॥
पीछे बिनस सर्व हो जाय। जादो मतते नास लहाय॥ ९॥
दीपायन मातुल जो तोह। ताकर भस्म नगर यह होय।
तुमरे करकी छुरी कराल। ताकर बासुदेव को काल। १०।
जरद कुमार हाथ तें सही। कोसम्भी बनमें जिम कही।
यह सुनके हल मूसल पती। मद मद्रा सामग्री जिती॥ ११॥

दोहा

नगर मांहते ढूंढ़ कर, सब लीनी मंगवाय।
उज्जयन्त के कुंज में, दीनी बेग गिराय॥ १२॥
दीपायन प्रभु बचन सुन, भयो जती दर हाल।
द्रव्य लिंग पूरब दिशा गमन कियो तत्काल। १३।

सोरठा

मूरख जन जग बीच, बहु उपाय को करत हैं।
प्रभु बच मेटन नीच, तो पण होय न अन्यथा॥ १४॥

गीता छन्द ।

बल भद्र तब निज कर छुरक घिस उदधिमें डारी सही ।
सो वारचर ने कर्म वसते पड़तही निगली वही ॥
वो छुरी परायन नाम धींवर पाय कर हरषाईयो ।
तिन देय जरद कूमार को उन बान बीच लगाईयो॥ १५॥

काव्य

बारे बरस बितीत जान दीपायन आयो ।
अधिक मास जो भयो तासको चितनहि लायो ॥
उज्जयन्त गिर निकट जोग आतापन दीना ।
होनहार हो जोय अवनि पर मिटे कभी ना ।१६।
ताही दिन के विषय पाप प्रेरत कुमार सब ।
भू मृत पै कर केल गमन कीनों गृह को तब ।
तृशावन्त जब भये तवै सरके ढिग आये ।
मद मिश्रित जल पाय बहुरि स्नान कराये ।१७।
नष्ट चेतना भये नैन मधि लाली आई ।
घूमन लगे कुमार सवै सुध तन विसराई ।
पहिले श्री बलभद्र देख दीपायन मुनि को ।
आड़ो इक पाखान कियो ऋषि हेत जतनको ।
तिस पत्थरकी बाड़ देख यह कुंवर मदोमत ।
लेकर बहु पाखान मुनी तन कियो अछादित ।१८।
अहो बड़ो है खेद पाप कारन यह वारन ।
माता बहन नहीं गिनत हियेकी सुध बुध टारन ।१६।

पद्धड़ी छन्द ।

यह सब वृतान्त सुन जुगमवीर। जबही आये मुनि निकट धीर।
कंठागत इस ऋषि को निहार। वहु छमा कराई बार बार।२०।

ताह नमं क्रोधवन्त। युग उंगली ऊरध कर तुरन्त।
वारन प श्री त्याग प्रान। भवनालय सुर उपजो सु ज्ञान।२१।
तासु च व चरित्र जान। अगनेश्वर चितमें क्रोध ठान।
बलदेव द्वार। पुर भस्म करो कीनी जु छार।२२।
चक्रपु
न शांति हेत। तज क्रोध क्षमा धारो सचेत।
वेद
जलती लखाय। युग भ्रात तबै बहु दुःख पाय।२३।
त्रिश
रिग्रह साथ लीन। जलदी बाहर निकसे प्रवीन।
करम
ति कानन मंझार। अघ उदै सर्व सम्पति निहार।२४।
मात
दै ते सुख लहाय। फिर पाप उदैते दुःख पाय॥
फल
न तज पाप येह। वृष में तुम धारो नितसनेह।२५।
पथ

दोहा

रे। श्री जिनराज की, पात्र दान उपवास।
व्रतादिक पालो सदों, यही धर्म जिन भास।२६।

चौपाई।

तर अब जरद कुमार। भीलरूप बनमें अघकार॥
ायक ते तत्काल। मुर मर्दनको कीनों काल॥ २७॥
ह जरद कुमार तुरंत। दक्षिण मथुरा गमन करन्त॥
लटे कर आगे। देखो मृतक हरी गुण धाम॥२८॥
विप्र निज
नन धे धरकर गमन कराय॥
तिल सरसों सम देव आयो इन पास॥ २९॥
ाता येह। भवको धार सनेह॥
बल देव। चरित दिखायो नाना भेव॥ ३०॥
शुद्ध बड़ भाग। भ्राता को छोड़ो अनुराग।
लेयकर सार। दग्धाक्रिया कीनी तिह बार।३१।
धर बैराग। जैन तत्व विदुषन बड़ भाग।

दीक्षा लीनी मन बच काय। दुस्सह तप कीने
तुंगी गिरपर्वत के भाल। कर समाध तन तज री सही।
नाक लोक में उपजो देव। तहां ऋद्ध पाई बसु
सो निर्जर अति दुति धारन्त। सीस करीट दिये
षट आभूषण धरत मनोग। भोगत नाना बिधिवे॥ १५॥
कोटक सुर आज्ञा शिर धरें। अपसर नृत्य गान
जाय मेरु कैलास पहाड़। बन्दे श्रीजिन चैत अ
पूजे जिन चरनाम्बुज सार। स्तुति करे बहु बिबि लायो॥
तिर्थंकर पर तिख तिष्टंत। तिनको बन्दे मन हरषन
पूरब पुन्य उदै जु महान। सुखते तिष्ठत अमर बि ।१६।
पुन्य जगत ते पार करन्त। चक्र सक्र पद मांह धर

सवैया इकतीसा।

ऐसे श्रीयमान बलदेव मुनि[illegible]य बर, नित प्रति
देहु भव्य गण को। सम्यक दरस ज्ञान चरित धरे,
सेवे जिन पद जिम भ्रमर सुमन को॥ सोत बपु
ज्ञान के उदधि सार, गुण रूपी मण जुत नासो मोह
चारित के चूणामन करत हरष मान, नमे सिर न
बसुधा तिन मुनि को। ३८।

दोहा

यह द्वीपायन मुनि तनी, [illegible]र मदोमत।
सुनके भवि चित शुद्ध [illegible] कियो अछादित। १८।

इति श्री आराधनासार कथा कोष में यह द्वीपायन मुनि की

अथ मद्दोष विषय पाद नाम

बिप्र की कथा प्रारम्भः नं० ५३

मंगलाचरण। सवैया तेईसा

समातदायक श्री जिनदेव करूं तिन सेव सदा चित लाई

ताह नमूं सिर न्याय कहूं जु कथा प्रति बोधनको सुखदाई ॥
वारन पान कियो अज्ञान सोई परीव्राजक दुःख लहाई ।
तासु चरित्र सुनो सब मित्र करो शुच चित्त तजो अघभाई । १ ।

चौपाई ।

चक्रपुरी नगरी सुख धाम । पाद नाम ब्राह्मण तिह ठाम ॥
वेद वेदांग सु जाननहार । परि ब्राजक मत धरे गंवार ॥२॥
विश्नु पदाम्बुज को अलयेह । गंगा न्हान चलो जुत नेह ।
करम जोग गयो मारग भूल । पथमें पहुंचो अटवी कूल ॥३॥
मातंगी देखी तिह ठोर । नृत्य गान करती अति जोर ।
पल भच्चे मदिरा में मन्त । ह्वै निशंक वनमें बिचरन्त ॥४॥
पथमें दुजको रोकत भई । पकड़ गिरा ऐसी बिधि कही ।
रे ब्राह्मण सुन चित्त लगाय । क्या तो मदिरा पान कराय ।५।
क्या पल भक्षण करो तुरंत । क्या नवीन तियको सेवन्त ॥
इन तीनों में एक अवार । करो विप्र तुम अंगीकार ॥६।
अरे मूढ़ जो नाहीं करे । तो आगे पद केह विध धरे ।
तोको जीवत जानन देत । गंगा में मंजन के हेत ।७।

दोहा

तबै विप्र निज शास्त्र को, हिय में करो विचार ।
तिल सरसों सम पल भखूं, तो उपजे अघभार ।८।

वक्तव परमत ।

तिल सर्षप मात्रं च मासं खादं तिय द्विजाः ।
तिष्ठन्तिनरके घोरे यावच्चन्द्र दिवाकरो ॥ ९ ॥

अर्थ चौपाई

तिल सरसों दाने सम होय । पल भच्चे ब्राह्मन जो कोय ।
वे दुख पावे नर्क निदान । जब लग तिष्ठे शशि अरु भान ।१०।

फेर विप्रने करो विचार । चांडाली भोगन नहिं सार ॥
काष्ट थकी बारुनि उपजंत । पीवन में नहिं दोष महंत । ११ ।
फिर प्राश्चित लेकर शुद्ध होय । यामें शंशय नाहीं कोय ॥
तबै मूढ़धी चितमें ठान । गुड़ आदिक ते इह उपजान ॥१२॥
पीवत भयो बुद्धि नस गई । खोल कोपीन फेंक तिन दई ॥
जिम पिशाच कर गिर सत खोय । त्यों यह नाचो लज्जा खोय ।१३।
दुष्ट संग कुल नाशन हेत । दुखदाई बुध त्यागो चेत ॥
फेर क्षुधा लागी अधिकाय । पाप उदै मति भिष्ट लहाय ।१४।
शीघ्र मांस को भक्षण करो । काम अगन कर तन इस जरो ॥
तबै कुबुद्धी विप्र अजोग । चंडाली संग कीनो भोग ॥
देखो मूरख तनो विचार । लख मद एको कारन सार ॥
ताको पीकर भयौ मलीन । फेर मांस को भक्षण कीन ।१६।
चंडाली संग रमियो दुष्ट । ऐसे लख कर पंडित सुष्ट ॥
कारन सुधकी बुध तज देय । मीठे पयते विष उपजेय ॥१७॥
ताके भक्षत नासे प्रान । कारन में न पगो बुधिवान ॥
देखो ब्राह्मन नित स्नान । करतो विश्नु तनो हिय ध्यान ।१८।
वेद वेदांग करे उच्चार । मद को कारन शुद्ध निहार ॥
अपनी बुद्धि करी तिन नष्ट । मद कारन जानो उत्कृष्ट ॥१९॥

दोहा

देखो बुध जन हिय विषे, द्रव्य तजे निज भाय ।
जहर रूप है परनवै, अन्य वस्तु को पाय ॥ २० ॥
ऐसो लख जिनवर कथित, सेवो ज्ञान महान ।
ताकर सुर शिव मिलत हैं, करें सबै कल्याण ॥ २१ ॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय मद्दोष विषय पाद नाम विप्रकी कथा समाप्तम् नं० ५३

अथसागरचक्रवर्तिकीकथाप्रारम्भः५४

मंगलाचरण ॥ चाल अहो जगत गुरुकी ॥

सुरनाथन कर पूजनीक प्रभु गणा धीशवर ।
ऐसे श्री अरिहन्त देवको नमस्कार कर ॥
वरनों सागर चरित्र सुनो भवि चित्त लगाई ।
दूजे इह चक्रेश भये जिन शिव तिय पाई ।१।
जम्बूद्वीप विख्यात पूर्व विदेह मझारी ।
सीता सरिता जान पश्चिम भाग हजारी ।
देश वत्सकावती तहां अति सुन्दर जानो ।
पृथवी नगर पवित्र राय जैसेन महानो ॥२॥
जैसेना पटनार रूप गुण धारे भारी ।
तिनके जुग सुत आय, भये सुन्दर अधिकारी ।
प्रथम नाम रतसेन दुतिय धृतसेन कहायो ।
करम जोग रतसेन कालने आय जु खायो ॥३॥
तब याको जो तात महा निरमल बुधि धारी ।
कियो पुत्र को शोक फेर मन ज्ञान विचारी ।
राज विषय धृतसैन पुत्र को थापो तबही ।
आप जाय जिन धाम करी बहु पूजा जबही ।४।
नाम महारत जान और मैथुन भूपाला ।
इत्यादिक संग लेय गये बनमें तत्काला ॥
मुनी जसोधर पास जाय इन दीक्षा लीनी ।
सोखी कायकषाय सबै इन्द्री जय कीनी ॥५॥
फेर धरो सन्यास सबै तन ममता त्यागी ।
अच्युत स्वर्ग मंझार भये सुर अति बड़ भागी ॥

नाम महाबलदेव सार वसु रिद्ध लहाई ।
नाम महा अतुराय भये सुर जाय तहांही ॥६॥
जिन चरनाम्बुज भृंग नाम मणि केत बरो है ।
जुगम अमर हरषाय बचन तहँ एम करो है ॥
हम दोनों में कोय प्रथम नर देही पावे ।
ताको दूजो देव बोध तप ग्रहन करावे ॥७॥

सोरठा ।

धरम राग जुत देव, बचन बंध होते भये ।
बाइस सागर येव, अच्युत के सुख भोगियो ॥८॥
पुन्य रहो कछु शेष, तबै महाबल सुर च्यो ।
उपजो कौशल देश, नगरी साकेता विषय ॥९॥

दोहा

भूप समुद्र विजै तहां, राज करै बलवन्त ।
सुबला नामा नार तसु पति प्यारी गुणवन्त ॥१०॥
तिन दोनों के पुन्य तें, सो सुर सुत उपजाय ।
सगर नाम षट खंडपति, सज्जन जन सुखदाय ॥११॥

चौपाई

सत्तर लख पूरबकी आय । साढ़े चार शतक धनु काय ॥
हाटिक वर्ण शरीर रसाल । लाचन रूप धरे गुणमाल ॥ १२ ॥
क्रमकर जोबनवन्त सु भयो । पुन्य उदय चक्री पद लहो ॥
षटखंड अवनी को भूपाल । नार छानवें सहस रसाल ॥१३॥
मुकट बन्ध सेवें नर ईश । ते सब जान सहस बत्तीस ॥
इत्यादिक इन बिभव अपार । कहते कवि पावें नहिं पार ॥१४॥
भगवत भगति हियेमें धरे । नाना बिधिके भोग सु करे ॥
पुत्र भये तिस साठ हजार । महा भव्य ये सकल कुमार ॥१५॥

देखो पुन्य कथा थकी इह जीव । नाना सम्पति लहत सदीव ।
ताते बुधजन यह मन धरो । जिन भाषित शुभ पुन्य सुकरो १६
इस अवसरमें इक बन सिद्ध । तामें तिष्ठे मुनि जुत रिद्ध ।
नाम चतुरमुख दीनदयाल । तिन पायो केवल बिध टाल १७॥
जिन पूजनको सुर समुदाय । इन्द्रनजुत आये हरषाय ।
तिनमें वह मणिकेतु सुजान । चक्री को महाबलचर मान १८॥
हर्ष सहित भाषे बच एव । अहो सुनो चक्रेश्वर देव ।
हम तुम दोनों अचुत मझार । प्रीति सहित इम कियो करार१९
जो पावे मानुष परजाय । दूजे देव सम्बोधे आय ।
ताते तुमने दीरघ राज । भोगो बहुबिधि पुन्य समाज ॥२०॥
अब दुख दाता भोग मलीन । छोड़ो बेग अहो परवीन ।
भगवत भाषित जग हितकार । सो तप कीजे अंगीकार २१ ॥
सावधान अब होय नरिन्द । शिव श्रीतें कर प्रीत अमंद ।
ऐसे सुर दीने उपदेश । इसे सुतन को मोह विशेष ॥ २२ ॥
ताकर यह नहिं भयो बिरक्त । जानी सुर यह भोगा शक्त ।
ऐसे मन में निर्जर आन । जात भयो अपने स्थान ॥ २३ ॥
काल लब्ध बिन काज न होय । बहु उपदेश देह जो कोय ।
ताते काल लब्ध बलवन्त । यह निश्चयकर जानो सन्त २४॥
इस अन्तर यक दिन मणिकेतु । चक्रीके सम्बोधन हेतु ।
चारन मुनिको रूप बनाय । तप ब्रत करके सोहे काय ॥२५॥
सगरतने चेताले बीच । आये यह मुनि सहित मरीच ।
भक्ति सहित जिन बिम्ब अराधि । तिष्ठे दिव्य तरुणतन साधि२६
सगर आन देखे मुनिचन्द । तरुण देह द्युति धरे अमंद ।
तब अचरज युत ह्वै चक्रीश । पूछो मुनिको नमकर शीस २७।
हो मुनिन्द यौवन जुत देह । तप लक्ष्मी किम धारी येह ।
गूढ़ातम चारन इम कही । हो पृथ्वीपति सुन अब सही ।२८।

दोहा

इस अवनीमें देखिये, जोबन चपला जेम ।
तन अत्यन्त अपवित्र है, भोग सर्पवत् तेम ॥ २९ ॥
तातैं दुस्तर भव उदधि, मोही जन भैदाय ।
भगवत तप नवका चढ़ो, तिरन तनी मोहे चाह ३०

पद्धड़ी

इत्यादिक शुभ बच मुनि उचार । चक्री सम्बोधन देत सार ।
तब चक्रधार सब समझ बूझ । पण मोह थकी कछु नाहिं सूझ ३१
पुत्रनको चित में अति सनेह । पड़रही फास गलबीच येह ।
ताकर मुर्छा त्यागी न जाय । तब अमर बिचार सुइगकराय ३२
संसार निकट याको न जान । मन खेद पाय सुरकर पयान ।
इस अन्तर इक दिनके मँझार । बिष्ठर तिष्ठे चक्रेश सार ३३ ॥
तब सारे सुत आये तुरन्त । नम भक्तधार इम बच भनन्त ।
भो तात अवनि में परम धीर । क्षत्री के सुतजे सूरबीर ३४ ॥
तिनको यह धर्म कहो पुरान । है पिता साध जो अर महान ।
ताको बसकर लावे उदार । नातर निरफल तरु सम निहार ३५
यातें हमपर होकर दयाल । कोई आज्ञा दीजे अवनिपाल ।
जाकर सफलित हमजन्म होय । सोई अब भाषो काज कोय ३६

दोहा

इम सुन षट्खंड पति कही, मीठे बचन अगाध ।
हो पुत्रो इस अवनि पै, मोको कौन असाध ॥ ३७ ॥
तातें यह आज्ञा तुम्हे भोगो लक्ष अपार ।
यह सुन के वे तनुज सब, तिष्ठे मौन सुधार ॥३८॥

चौपाई

पिता तने बच नाहिं उलंग । सब उठगये तबै इक संग ।

इस अन्तर औरे दिन विषै । सुभटोत्तम नमकर बच अखे ३९
अहो देव कोई काज महन्त । जो न बताओगे श्रीकन्त ।
तो हम भोजन पान न करें । इम परतिज्ञा सब हम धरें ४०॥
ऐसे सुनकर के भूधीश । मन विचार बच चये गरीश ॥
हो पुत्रो मेरे सुखकार । धरम काज बरते इक सार ॥ ४१ ॥

सवैया इकतीसा

अष्टापद शीश पै बहत्तर जिनेश धाम, श्रीयमान भरथ कराये हरषायके । कंचन रतन मई सोहत जिनेश बिम्ब तिन को जतन तुम करो अब जायके । परबत चारों ओरखाति का बनाओ जोर । गंग को प्रवाह डारो तिस मांही लायके ॥ ऐसी आज्ञा दई तात सुत भए हर्ष गात, चर्ण में नमाय मात गए सुख पायके ॥ ४२ ॥

दोहा

दंड रतन कर के खिनी, खाई परम अभंग ।
श्री कैलाश पहाड़ के, फेरी चहुंदिश गंग ॥ ४३ ॥

काव्य

ताही छिन बो बुद्धि मान मणि केतु अमर बर ।
संबोधन चक्रेश सहित आयो अवनी पर ॥
देखो सकल कुमार तबै सुर माया धारी ।
नागरूप कर भस्म किये सब ताही बारी ॥ ४४ ॥

दोहा

कोई स्थानक विषै, बुध सत्तम जे मित्त ।
हित कारन उर जान के, करे तबै जो अहित्त ॥ ४४ ॥

काव्य

फेर सबै जन सचिव सुनो कुमरन को मरनो ।
दुख सहने असमर्थ चक्र धरसैनहि बरनो ॥

चितवै जब मणिकेतु अवनिपति खबर न जानी।
मूवे सकल कुमार कोई इम कहे न बानी ॥ ४६ ॥
आप बिप्र तन वृद्धरूप कीनों तब निरजर।
आयौ नरपत पास शोक जुत व्याकुल मन कर ॥
कहत भयो चक्रेश प्रते तुम भू के रक्षण ॥
मेरे जुग सुत दुष्ट काल ने कीने भक्षण ॥ ४७ ॥
वे मेरे वर पुत्र जीव से प्यारे जानो।
हे प्रभु देहु छुड़ाय नहीं मम प्राण पयानो ॥
ऐसे करी पुकार वृद्ध ब्राह्मण तिह बारी।
पृथ्वी पति सुन एम कछू हंस गिरा उचारी ॥ ४८ ॥

दोहा

अहो बिप्र क्या मूढ़ तू, लखे न चित्त मंझार।
या पृथ्वी तल के विषय, सब भच्चे इह काल ॥ ४९ ॥
निर बाधक यह सिद्ध हैं, औरन दूजो काय।
समबरती को नित जयो, यह तू निश्चय जोय ॥ ५० ॥

चौपाई

अरु तेरी चित बांच्छा एह। काल निवारी निःसन्देह ॥
तो तू जिन दीक्षा धर धीर। निज आतमको हित कर बीर। ५१।
तब दुज कहे सुनो महाराज। आप महीपति सब सिरताज ॥
बचन कहे सो सतमें जोय। कालपूर किस कर नहिं होय ।५२।
मैं तुमसे कुछ भाषूं एव। चितमें मत धरयो नहिं देव ॥
प्राण हरणाये जम दुख कार। साठ सहस जिन भषे कुमार ।५३।
ऐसे याके बचन सुनंत। चक्री मूर्च्छित भये तुरन्त ॥
अहो कोई दुख बच कह हेत। सुनके को नहिं होत अचेत ।५४।

सोरठा

तब सज्जन जन आय, कर सीतो उपचार को।
चेत कियो नर राय, उठत भयो ताही समै ॥ ५५ ॥

जैसे जीव अनादि, मूर्छा जुत जग में भ्रमें।
गुरु वच अमृत स्वाद, कर के हेत सचेत जू॥ ५६॥

पायता

तब ही चक्रेश्वर जानो, संसार अथिर सब मानो।
मन वचन काय शुध कीनों, बैराग विषे चित दीनो॥ ५७॥
सब मोह पिशाच उड़ायो, भागीरथ को बुलवायो।
निज राज दियो बड़ भागी, ममता सब ही की त्यागी।५८।
दृढ़ धरम केवली स्वामी, सब ही के अन्तर यामी।
तिन चरन कंज ढिग धारी, दीक्षा भव नासन हारी॥ ५६॥
ताही छिन वह सुर धायो, अष्टापद गिरि ढिग आयो।
मूर्छित सचेत सब कीने, वच कहे हर्ष में भीने॥ ६०॥

दोहा

अहो पुत्र तुमरी मृतक, सुन चक्री दुख पाय।
राज लक्ष को छोड़कर, बन में गमन कराय॥ ६१॥
मैं तुम कुल को विप्र हूं, चिन्ता जुत मुझ प्रान।
ढूंढत ढूंढत आइयो, पाये तुम इस थान॥ ६२॥
ऐसे याके बचन सुन, साठ सहस सुकुमार।
तिनी केवली ढिग गये, लीनों संयम भार॥ ६३॥

चौपाई।

श्री कर जुत भागीरथ राय। तबै सभी मुनिको सिरनाय॥
भगवत भाषित सुन उपदेश। श्रावकके वृत कहे विशेष। ६४।
अब मणिकेतु प्रगट सुर येह। सगर आदि मुनि तप दृढ़ जेह॥
तिनको नमन कियो हरषाय। विनय सहित फिर बचन कहाय ६५
मैं सेवक जो किये अपराध। क्षमा करो तुम सबही साध॥
भक्ति सहित हम विनती कीन। सब वृतान्त भाषो परवीन॥६६॥

ऐसे मुनि सुन दीन दयाल। कहत भये सुन सुर गुणमाल ॥
तैने तो कीनो उपकार। तू हमरो है मित्र उदार ॥ ६७ ॥
धरम सनेही जो बुधिवंत। तिनही ते इह काज बनंत ॥
तातें इसमें रंचन दोष। तुम गुण रतन तने हो कोष ॥ ६८ ॥
तुम जिन चरन कमल अलिसार। हमको शिव सुख कारन हार ॥
ऐसे वच सुन सुर रसवंत। सब ऋषिगणको नामि बहुभंत ।६९।
काज सिद्ध करके अभिराम। फेर गयो सो अपने धाम ॥
इस अंतर वे सबही साध। जिनवर भाषित तप अपराध ।७०।

दोहा

जाय सिखर सम्मेद गिर, शुक्ल ध्यान को ध्याय।
मोक्ष अंगना पति भये, अष्टम छितमें जाय ।७१।
अब भागीरथ इम सुनी, सब मुनि शिवपुर पाय।
है विरक्त संसार ते, तब इम कियो उपाय ॥७२॥
वरदत्त सुतको राज दे, फेर करो जिन न्हौंन।
अष्टापद गिरि पै गयो, ताही छिन गुण भौन ॥७३॥

सवैया इकतीसा

तहँ शिव गुप्त नाम गुरु के निकट जाय, नयो चरनार बिन्द भक्ति धर उनको। तप लच्छ ग्रहण कीन आतम में चित्त दीन ज्ञान रस चाख लीन गहो पद मुनि को। गंगा के सुतट जाय आसन पदम लाय, तिष्ठत सुमेर सम नास मोह तिनको। तब हिये भक्ति ठान सकल सुरेश आन, छीरो दधि बार घट लाये कर धुनको ॥ ७४ ॥

दोहा

श्री भागीरथ मुनि तने, चरन कमल जुग सार।
सुरपति आन प्रछालियो, कोहो सुख दातार ॥७५॥

चौपाई ।

सो उस जलको अति परवाह । बहकर गंग मिलो सो आय ॥
तबते गंगा भागीरथी । प्रकटी जगत मांह सो अती ॥ ७६ ॥
ताही गंगा तट मुनिराज । श्री भागीरथ धर्म जहाज ।
तपकर जन्म मृत्यु जय लीन । शिवपुर मांही गमन सु कीन ।७७।
अब श्री सगर केवली जेह । जैवन्ते नित बरतो तेह ॥
केवल ज्ञान नेत्र धारन्त । सब सुरेश नित चरन नमन्त ।७८।
मोक्ष आंगनाके भरतार । परम तत्वके जाननहार ॥
ऐसेही सारे मुनिचन्द । नित प्रति सुख मोहि देह अमंद ।७९।

दोहा ।

द्वितिय चक्रधारी तनी, यही कथा रस लीन ।
बखतावर अरु रतनने, भाषा में कह दीन ॥८०॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय सगर चक्रवर्ति की कथा समाप्तम् नं० ५४ ।

अथ मृगध्वजकी कथा प्रारम्भः नं० ५५

मंगलाचरण ॥ चौपाई ॥

तीन लोक पति पूजत आन । ऐसे श्री अरिहन्त महान ॥
तिनको भक्तिसहित सिरनाय । मृगध्वज चरित कहूं अवगाय १

पद्धडी

रमणीक अयोध्यापुर विशाल । ताको श्रीमंधर अवनिपाल ।
ताके जित सेना विसद नार । तिनके मृगध्वज हूवो कुमार २
ताही पुरमें यह अभय दान । इक महिष प्रसिद्ध फिरे सो आन ।
एकै दिन पुस्कर बन मंझार । फिरतो सुछंद भप तिण दुवार ३
इस अन्तर मृगध्वज हरष युक्त । परधान सेठको पुत्र भुक्त ।
तिन क्रीड़ित देखो महिष तेह । पलमें आशक्त कुमार येह ४

निज चाकरते इम वच कहाय। पिछलोपद याको खंड लाय।
ताको पचायकर मुझ खुवाय। वो सेवक ताही विध कराय ५॥

दोहा

तब वह दुःखित माहिष अति, तीन चरनते धाय।
राजाके पदके निकट, पड़ो धरनि में जाय॥ ६॥

चौपाई

तब सीमंधर नरपति सार। जैन धरमको धारन हार।
पर उपकारी परम दयाल। मरतो भैंसो लख तत्काल॥७॥
ताको दिलवायो सन्यास। नमोकार शुभ मंत्र प्रकास।
ता प्रभावते महिष तुरंत। प्रथम सुरग सुर भयो महन्त॥८॥
पर उपकारी गुणकी खान। ते जगमांही विरले जान।
चन्द्रभान अरु सुर तरु बार। उपकारी इत्यादि निहार॥९॥
निश्चयकर श्री जिनवर धर्म। हितकारी नित देवे सर्म।
अब नरनायक सुन विरतन्त। चित में रोस धार अत्यन्त॥१०॥
सिद्धारथ मंत्री प्रति कही। तीनोंको अब मारो सही।
यही बारता सुनकर वेह। मंत्री सेठराय सुत जेह॥ ११॥
दत्त मुनीश्वरके ढिग जाय। दीक्षा लीनी मन वच काय।
अब यह मृगध्वज जो मुनिचन्द। जैन तत्व ज्ञायक तपवृन्द १२
शुकल ध्यानकर करमविनाश। केवल भानु कियो परकाश।
तीनलोक पूजे जिस चर्न। भये भवोदधि तारन तर्न॥१३॥
देखो पाप करत पर चंड। सो भी जीव होय गुणमन्ड।
तीन जगत अरचें करचाव। सो सब जान धरम परभाव १४
यह तो बात ठीक कर मान। जैन धर्म तें को अधिकान।
सो श्री मृगध्वज केवल धार। नित आराधे थके उदार॥१५॥
सो तुमरे मंगल विस्तरो। शिव लक्ष्मीकी प्रापति करो॥

कैसे हैं वे दयानिधान । केवल चखुधारी भगवान ॥ १६ ॥
जेते हैंगे भविजन सन्त । तिनको जगते पार करन्त ॥
देव इन्द्रकर पूजित नित्त । हितकारी वे महा पवित्त ॥ १७ ॥
सुख यश ज्ञान तने दातार । कविके दुख कीजे निरवार ॥
इह मृगध्वजकी कथा जु भई । पूर्वी चारजजी जिम कही ॥१८॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय मृगध्वज राजपुत्र की कथा समाप्तम् नम्बर ५५ ।

अथ परसरामकी कथा प्रारम्भः नं० ५६

मंगलाचरण ॥ अडिल्ल ॥

भव दधि तारक गणाधीश अर्हन्त जी ।
तिन के चरन सरोज नमो बहु भन्त जी ॥
अचरजकारी पर्सराम को चरित जी ।
ताहि कहूं अब सुनो भव्य धर चित्त जी ॥ १ ॥

गीता छन्द

नगरी अयोध्या परम सुन्दर तासुको है भूपती ।
तिस नाम कारतवीर्य जानो परम मूरख दुरमती ॥
तिस गेहमें परमावती तिस प्राण प्यारी लसत है ।
तिस नगरके ढिग तापसों की एक पल्ली वसत है ॥ २ ॥
तिन मांहि है जमदग्नि तापस रेणुका तिय जानिये ।
तिनके तनुज दो भये सुन्दर अति बली परमानिये ॥
इक स्वेतराम महेन्द्र दूजो बालवय क्रीड़ा करे ।
अरु रेणुका का भ्रात वरदत मुनि महा तपको करे ॥३॥

दोहा ।

इनकी पल्ली के निकट, तरु तल तिष्ठे आय ।
देख रेणुका भक्ति कर, चरनन में सिर नाय । ४ ।

चौपाई

अब वे श्री बरदत मुनिचंद । भाषत भये वचन गुण बृन्द ॥
अहो बहन सुन चित्त लगाय। सम्यक् करत महा सुखदाय ।५।
तीन जगत कर पूज पवित्त । दुरगति नासन जानो चित्त ।
सुर शिव बृच्छ तनो है बीज । याते भव भिरमन है छीज । ६ ।
देव हिये धर श्री अर्हन्त । गणाधीशवर वे भगवन्त ॥
राज दोषकर बरजित सदा । केवल मंडित शोभित मुदा ॥७॥
सुर नर नमें हरष धर पर्म । तिनकर भाषो उत्तम धर्म ॥
सोई दोनो लोक मझार । सुखदाता है दश परकार ॥ ७ ॥
इंद्र फनेंद्र चन्द्र ध्यावन्त । तीन जगत परसिद्ध महन्त ॥
अरु वोही गुरु दीन दयाल । संयम शील सहित गुणमाल ।८।
तिनही ज्ञान ध्यानमें रक्त । परिग्रह त्यागी श्री जिन भक्त ॥
हे भगनी मूरख मन तोह । तुम तप भव कारन जुत कोह ।१०।
सम्यक् ही सुख कारन जान । यही धरम ऐसे पहिचान ॥
गुणमंदिर मुनि पात्र पवित्र । तिनको दान दीजिये नित्त ।११।
सुखकारी जिन पूजन करे । शील पाल शुभ प्रोपध धरे ॥
एही धरम जान बड़ भाग । याही में तू कर अनुराग ॥ १२ ॥
तबै रेणुका सुन जिन धर्म । भ्राताने भाषो जो पर्म ॥
ताको धारो हर्ष समेत । सम्यक् रतन गहो सुख हेत ॥ १३ ॥

दोहा

सती शिरोमणि तासमें, कीनो आतम शुद्ध ।
मिथ्याभाव निवार के, धारी निर्मल बुद्धि ॥ १४ ॥

काव्य

याको सम्यक् सहित देख कर बरदत मुनिवर ।
धर्म राग हिय धार दई दो विद्या हित कर ॥

परसी नाम एक महा ऋद्ध बहु सुख की दाई।
दूजी काम सु धेन दई भगनी के ताई ॥ १५ ॥
तिस पीछे वे धीर जैन तत्वन के लायक।
इस को बहु सम्बोध गये बन को मुनि नायक॥
अबै रेणुका जिन पदाब्ज सेवत भृंगीवत।
सम्यक् मंडित धर्म नेह जुत तिष्ठे घर नित ॥ १६ ॥
इस अन्तर इक दिना कार्तबीरज नृप बन में।
आये गहन गईन्द हर्ष बहु धारे मन में॥
ताही छिन यह नार रेणुका भोजन कीनो॥
कामधेनु परभाय सहित रस पित को दीनो ॥ १७ ॥

दोहा

ऐसे लख भूपाल तब, भोजन भक्षो आप।
लोभ धार निज मन विषै, फेर कियो इम पाप ॥ १८ ॥
युद्ध ठान तापस हनो, ताही बन के बीच।
कामधेनु को ले गयो, जबरी ते वह नीच ॥ १९ ॥

सोरठा

दुष्ट जीव अधिकाय, अहिवत जानो जगत में।
पोषितभी दुखदाय, ततक्षण नासे प्राण को ॥ २० ॥

चौपाई।

अबै रेणुका सुत सुखदाय। संध्याको पल्ली में आय।
माता दुःखित देखी जबै। अरुवा मुखते बच सुन सबै २१ ॥
श्वेतराम शुभटोत्तम येह। जननीते फरसी को लेह।
लघुभ्राता भी लीनो संग। साकेतापुर गयो अभंग ॥ २२ ॥
कार्तिवीर्य को ताही जाम। मारत भयो जु कर संग्राम।
सो इह कुश्चित धी भूपाल। घोरनर्क पहुँचो तत्काल ॥२३॥

पापी जनकी गति यह होय । यामें शंसय नाहीं कोय ।
यह पापन तृष्णा दुखकार । ताको है बहु विधि धिक्कार २४॥
तिसमें है आशक्त सुजीव । कर अन्याय सहे कष्ट अतीव ।
देखो इस अन्याय पसाय । राजादिक भी नाश लहाय ॥२५॥
जैसे बात वहै परचण्ड । तामें गेंद उड़ें बल मंड ।
तहां सुसाकी कौन चलाय । निश्चय करके नाश लहाय २६॥
जब इह पर्सराम तिह थान । निज विद्याफल लहे अधिकान ।
कौशल्या में कीनों राज । भयो विख्यात नृपन सिरताज २७॥
पुन्य प्रसाद होय शुभ मति । सूर बीर पंडित श्रीपति ।
इह विधि भविजन हियमें चेत जिन भाषित पुनकर शुभहेत २८॥

सोरठा ।

परसराम नरपाल, प्रकट भयो अवनी विषे ।
ताकी कथा रसाल, अवसर पा बर्णन करी ॥ २६ ॥

इति श्रीआराधनासार कथाकोषविषय परसरामकी कथा समाप्तम् न० ५६ ।

अथ सुखमाल की कथा प्रा० ५७

मंगलाचरण सवैया ।

श्रीजिन स्वामतनो शुभनाम लिये अभिराम सदा सुखदाई।
संपति दायक पाप पलायक संकट बीच जुहोत सहाई ॥ ताहि
जजो सब और तजो सुभ जो वसुजाम नमों सिर नाई । हर्ष
थकी सुकमाल चरित्र कहूं भवि जीव सुनो चितलाई ॥१॥

चौपाई

कौसाबी नगरी सुखदाय । तहँ अतिबल नृपराज कराय ।
सोमसर्म प्रोहत है तास । नारि कास्यपी ताहि अवास ॥ २ ॥
ताके गृह उपजे जुत पूत । अगन भूत अरु बायजु भूत ।
बालक बयमें धर परमाद । विद्या कछु नाहिं कीनी याद ॥३॥

पुन्य बिना मुखपंकज बीच। नहीं भारती करे मरीच ॥
अब जो सोमशर्म परवीन। काल भई अहिने डस लीन ॥४॥
तब नरिन्द्र दुज के सुत देख। मूरख बुद्धी जान विशेख ॥
कुल क्रमते जो आयो चलो। सो वह पद इनको नहिं मिलो ॥५॥
मूरख दान मान नहिं वरे। सो सोश्रुषा ताकी करे ॥
अब यह द्विजके सुत दुख पाय। मान भंगकर लज्जित काय ॥६॥
तब इन यहांते कियो पयान। राज गृहीमें पहुंचे आन ॥
सूरज मित्र चचा के पास। नमकर सब बिरतान्त प्रकास ॥७॥
जब तिनने इनको ग्रह रत्त। दीनी विद्या कीने दत्त ॥
तब दोनों पढ़ ह्वै परवीन। निज घर आये विद्या लीन ॥८॥
जब ये नृप ढिग जाय तुरंत। अपनो गुण दिखलाय महन्त।
पिता तनो पद लीनों सार। सुखसे तिष्ठत निज आगार ॥९॥

दोहा

सरस्वती प्रसादतें, इस बसुंधरा मांहि।
क्या क्या सिद्ध न होत है, सबही सुःख लहांहि ॥१०॥

पद्धड़ी छन्द

इस अन्तर राज ग्रही मंझार। द्विज तिष्ठे सूरज मित्र सार ॥
ताको सौंपी इक छाप भूप। याने कर में धारी अनूप ॥ ११ ॥
संध्या तरपन करते महान। जल अर्ध लेय कर देत भान ॥
सो गिरी मुद्रिका कर्म भाय। सर मध्य जलजमें पड़ी आय ॥१२॥
तब खाली अंगुरी विप्र देख। भै भीत सो चितमें ह्वै विशेख ॥
जब गयो सुधर्माचार्य पास। वे अवधि ज्ञान जुत सुगुणरास ॥१३॥
तिनको नमके दुज प्रश्न कीन। मेरी मुद्रा खोई प्रवीन ॥
भो दया उदधि मुनिराज आप। किम हाथ लगे मोह भूपछाप १४

दोहा

तब श्री गुरु उत्तर दियो, सुनले द्विज बुधवन्त।
तुम्ह तडाग के कंज में, वो मुद्री तिष्टन्त ॥१५॥
ये बच सुनि भूदेव तब, ह्वै कर चित्त खुस्याल।
प्रातकाल उस कमलते, मुद्रा लई निकाल ॥१६॥

चौपाई।

फेर गयौ श्री मुनिवर पास। नमकर यह कीनी अरदास॥
भो योगिन्द्र बुद्धि धन खान। यह विद्या मोह देहु महान ॥१७॥
जातैं प्रश्न बनाऊं सार। मुझ पै कीजे यह उपकार॥
तब मुनि बोले दीनदयाल। यह विद्या जो परम रसाल ॥१८॥
जिन दीक्षा लीये बिन ऋद्ध। पृथवी तलपर होय न सिद्ध।
जब ये केवल विद्या हेत। दीक्षा लीनी भव दधि सेत ॥ १६ ॥
बारम्बार कहे इम बान। मोको विद्या दो भगवान॥
तब गुरु जिन भाषत जो ग्रन्थ। याह पढ़ाये किरपा पंथ ।२०।
पढ़कर सूरज मित्र मुनिन्द। चित में धरत भये आनन्द।
गुरु बच्न दीप तने उद्योत। मिथ्या अंध नास लह जोत ॥२१॥
धरम तत्वको जानो भेद। लोभ तनो तिन मूल उछेद।
जाको ऐसे श्री गुरु मिलें। ताके कारज क्यों नहिं फलें ॥२२॥
कैसे गुरु जग जन हितकार। श्रेष्ट पंथ दरसावन हार॥
अब गुरु आज्ञा ले बुधवान। जिन रूपी भये साधु महान २३
फिर यह सूरज मित्र दयाल। करत बिहार जन्तु रिछपाल॥
आये कोसांबी जिन वेश। अगन भूत गृह कियो प्रवेश ॥२४॥

दोहा

ताने नवधा भक्ति कर, पड़ गाहे मुनि चन्द।
अन्यदान देतो भयो, जो जगमें सुख कन्द ॥२५॥

छप्पय

वायुभूत लघु भ्रात तनुज ने बहु समझायो ।
तो पण मुनिको नमों नाह चित क्रोध उपायो ॥
निंदा रूपी वार बार इन भाषे बायक ।
शान्ति मूर्ति धर छमा गमन कीनों मुनि नायक ॥
अब होनहार दुरगति जिसे, सो समझायो भी सही ।
शुभ धर्म काज को छोड़कर, मूढ़ पाप रत है वही ।२६।

जोगी रासा ।

इस अन्तर सो पवित्र आतमा अगन भूत द्विज राई ।
सूरज मित्र मुनिके संग चालो पोंहचो बन हरषाई ॥
केती दूर जायकर तिष्ठे गुरु उपदेश बतायो ।
मन बच काय भयो बैरागी आतम में चित लायो ॥ २७ ॥
नगन दिगम्बर मुद्रा धारी । निज परको हितकारी ।
शत्रु मित्र तृण कंचन समझो गृह ममता परिहारी ॥
अगन भूत की नारी तबही सब वृतान्त सुन लीना ।
सोमदत्त चित्तमें अति दुख कर रुदन करो है दीना ॥२८॥
देवर पास जाय इह भाषी तू पापी अधिकाई ॥
बहु बिधि मुनिकी निंदा कीनी बंदन नाह कराई ।
ता निमित्त ते मेरे पति ने बन में दीक्षा धारी ।
ऐसे भावज बच सुन घोरी क्रोध अगन पर जारी ॥ २९ ॥
कटुक बचन भावज को भाषे महा दुष्ट तेह बारी ॥
नगन मलीन पास तू जाती इम कह लात जु मारी ॥
कोढ़ो कष्ट मई बच सुनकर बोली अबला बानी ।
जन्मान्तर में तुझ पग खाऊं ऐसे कहो निदानी ॥ ३० ॥

दोहा

मूरख जन जे जगत में, तिनको है धिकार।
क्रोध थकी शुभ काज हन, परभव देय बिगार ॥ ३१ ॥

चौपाई

अब यह वायु भूत पापिष्ट। मुनि निंदा इम करी गरिष्ट ॥
ताकर सप्तम छिन दुखपाय। कुष्ठ उदम्बर जुत भई काय ॥ ३२॥
तीन जगत मुनि पूजत जेह। धर्म मार्ग उपदेशक तेह ॥
तिनकी निंदा करे अयान। ते बहु विध दुख क्यों न लहान ।३३।
अब यह कुष्टी दुष्ट निदान। कष्ट थकी छोड़े निज प्रान ॥
कोसांबी नगरी तट धाम। गधी भई दुखित बसु जाम ।३४।
तहां ते मर तिस नगरी तीर। भई सूकरी मलिन शरीर ॥
फिर मर चंपापुर तत्काल। हुई कूकरी घर चंडाल ॥ ३५ ॥
बहुरि मरी निज पाप बसाय। तिसही मातंगी गृह आय ॥
तनुजा भई चक्षु कर हीन। तन दुर्गंध महा दुख लीन। ३६।
जम्बू तरु तल दुखित गात। औंधी पड़ी फलन कूं खात ॥
करम जोगकर बुद्ध निधान। अगनभूत मुनि निकसे आन ।३७।
तिसे देखकर दीन दयाल। गुरुसे पूछो न्याय सु भाल ॥
अहो बिचारी दीन जु एह। महा कष्टकर मंडित देह ॥ ३८ ॥
हे स्वामी अवनी के विषे। केह प्रकार यह जीवत दिखे ॥
तब श्री सूरज मित्र मुनिन्द। ज्ञान नेत्र धारत गुण वृन्द ॥३९॥
कहत भए सुन बचन अवार। वायु भूत लघु भ्रात तुम्हार ॥
धर्म कर्म ते रहित बिवेक। मेरी निंदा करी अनेक ॥ ४० ॥
ताके पाप थकी लह कुष्ट। मरकर गधी भई दुख पुष्ट ॥
फिर सूकर कूकर गति लई। अब अंधी चंडाली भई ॥ ४१ ॥
गुरुके बचन संभाल। अगन भूत ऋषि परम दयाल ॥

मातंगी ढिग जाय तुरन्त। पंच अनुवृत दिये महन्त॥ ४२॥
सुखदाता श्रावकको धर्म। ताको ग्रहन करायो पर्म॥
अब चांडाली वृत पालंत। कछूक काल बीतो इह भंत॥४३॥

दोहा

अब मर चम्पापुर विषै, नाग सर्म दुज गेह।
नाग श्री तिस नाम है, कन्या उपजी येह॥ ४४॥
एक दिना अहि पूजने, नाग वनी में जाय।
सेठ सुता मुन्त्री सुता, बहु कन्या संग थाय॥ ४५॥

अडिल्ल

तहँ इस नाग श्री के पुन्य प्रभाव जी। सूरज मित्र और अगन भूत मुनिरायजी॥ आये करत बिहार तिसी बन में सही शुद्ध भाव धर कन्या तिन पद को नई॥ ४६॥
तब लघु मुनि इस देख हर्ष चित में धरो। पूरबले संबंध थकी बहु हित करो॥ जब श्री गुरु ते पूछो इम उच्चार के। भयो नेह केहि काज इसे जो निहार के॥ ४७॥

दोहा

तब श्री सूरज मित्र जी, पूरबलो बिरतन्त।
अगन भूत प्रति सब कहो, सुन तिन बोध लहंत॥४८॥
नाग श्री को ता समें, पंच अनुवृत सार।
सम्यक् जुत देते भये, तिन कियो अंगीकार॥ ४९॥
फेर कहो सुन वालके, तेरो तात अयान।
छुड़वावे जो व्रतन को, तो दीजो हम आन॥ ५०॥

सोरठा

अहो जो मुनि निरग्रन्थ, पर उपकारी होत हैं।
दिखलावें शुभ पंथ, सत्य बात यह जग विषै॥ ५१॥

चौपाई

तब यह नागश्री हरषाय । भक्ति सहित नमकर मुनि पाय ॥
हर्षित चाली अपने गेह । तात प्रती सब भाषो तेह ॥ ५२ ॥
सुनकर विप्र कही ए सुता । हमरो कुल उज्जल गुण युता ॥
तातें मुनि भाषत व्रत त्याग । विश्नु धर्म में कर अनुराग ।५३।
ऐसे सुन नाग श्री कही । उनही को सौंपूं व्रत सही ॥
तब यह द्विज धर क्रोध महान । तिस कर गहचालो मुनिथान ।५४।
पथमें चलत चलत इम पेख । सूली ढिग इक जनको देख ॥
ताको बांधो थो कुतवार । कोलाहल बाजे अधिकार ॥ ५५ ॥
ऐसे लख कन्या गुणवंत । तात प्रती पूछो इह भंत ॥
अहो पिता इस जनको अबै । कष्ट देय क्यों मारे सबै ॥ ५६ ॥
बोलत भयो विप्र इम बैन । वणिक पुत्र थो एक वरसेन ॥
तानें अपनो धन समुदाय । धरो धरोहर या ढिग आय । ५७।
फिर मांगो ताने इस पास । तब याने मारो दे त्रास ॥
तातें राजा के चर येह । सूली पै हन हैं इस देह ॥ ५८ ॥
ऐसी सुन नाग श्रीवात । कहत भई अब सुनिये तात ।
येही व्रत मोकूं ऋषि चन्द । दिलवायो है आनन्दकन्द॥ ५९॥
ताको किम छुड़वावत आप । सुनकर फिर बोलो तिसबाप ।
हे पुत्री यहतो व्रत राख । बाकी और छोड़ इम भाख ॥६० ॥
तबही आगे कियो पयान । कारन और मिलो इक आन ।
एक मनुज बांधो इह देख । जन कोलाहल करत विशेख ६१॥
पूछत भई तात ते येम । कहो पिता कारन है केम ।
कहे विप्र इस नारद नाम । वनक कुबुद्धी अघको धाम ॥६२॥
सदा झूठ बोले अधिकाय । ठगा करे नित जन समुदाय ।
पाप उदै आयो इस आज । झूठो जान गहो नरराज ॥६३॥

क्रोधवान ह्वै कर नृप दत्त। इह विधि हुक्म दियो तलरच्छ।
रसनाकर पद याके छेद। ताते जन मारत देखेत॥ ६४॥

दोहा

नाग श्रीनिज तात तें, बोली बच तव येम।
सत्य बरत मोको दियो, तुम छुड़वावत केम॥६५॥
जब प्रोहत कहतो भयो, यह भी ब्रत रखलेय।
शेष वृत उस नगनकी, उलटे चलकर देय॥ ६६॥
यह विधि चलते पथ विषे, मिले जो कारन आय।
चारों लोभ कुशीलके, देखे दंडत काय॥ ६७॥

सोरठा।

नागश्री यह पेख, कारन सब पूछत भई।
उत्तर तात विशेष, देत भयो पथके विषे॥ ६८॥
फेर कहे द्विज राय, यह सब वृत तेरे रहो।
पण वाके ढिग जाय। बचन तर्जनाके कहे॥६९॥

अडिल्ल

फिर काहू के बालकको ब्रत देनही।
इम कहकर जुत सुता गयो जहँ मुनि सही।
अहो सत्य यह दुर्जन जानतन्यायही।
तों पण सज्जन विषे राग नहिं लायही॥ ७०॥
तब यह विप्र अयान क्रोधजुत चखुकरे।
दूर तिष्ठकर कटुक बचन इम उच्चरे॥
अरे नगन मुझ सुता देय बृत तैं ठगी।
जादू कीनो केम, जो तुझ माहीं पगी॥ ७१॥

दोहा

ऐसे बच सुन विप्र के, सूरजमित्र मुनिंद।
कहत भये ये कन्यका, हमरी है गुणाढ्न्द॥ ७२॥

तेरी पुत्री है नहीं, अहो सुनो दुजराय ।
इम कह नाग श्री प्रते, कहो सुता इत आय ॥७३॥

चौपाई

श्री भट्टारक के वच सार । सुनकर कन्या ताही वार ।
आय निकट बैठी गुणवन्त । तब बामन इम बचन भनन्त ७४।
देखो देखो यह अन्याय । कहतो कहतो पुरमें जाय ।
शशि बाहन नरपति के द्वार । बहुविधि कीनी विप्रपुकार ।७५।
अहो नाथ मुनि नगन मलीन । मेरी सुता छीन तिस लीन ।
ताके बच सुन नृप जन और । धरो हियेमें विस्मय जोर ।७६।
तब पुरजन जुत है नरधीश । आवत भये जहां मुनि ईश ।
भेटे ऋषि पदकमल महान । कौतुकजुत तिष्ठे तिस थान ।७७।
जब बामन बोलो दुख जुता । मेरी सुता जुमेरी सुता ।
भट्टारक जब येम बखान । चौदा विद्या दई महान ॥ ७८ ॥
हम नैया यक हैं नरपाल । ताते हमरी सुता रसाल ।
इम सुनकर बोलो अवनीस । भो स्वामिन सुनिये जगदीस ।७९।
जो तुमने इस विद्या दई । सो परकाश कराओ सही ।
तब वे श्रीमुनि भानु समान । बचन किरन करके तेहथान ।८०।
जग जन मूढ़ मोह तम युक्त । दूर करत बोले इम उक्त ।
सब जन देखतहैं तिहकाल । करत भये इम दीनदयाल ॥८१॥

दोहा

कन्या के सिर कर धरो, बोले मधुरी बान ।
बायु भूत मैंने तुझे, जो दियो विद्या दान ॥ ८२ ॥
ताको कर उच्चार अब, निज विद्या परकाश ।
सुनकर पूरबजन्म जो, पढ़ी हुती जो भाश ॥ ८३ ॥

चाल मेघकुमारकी देशी

इम सुनके राजा तबै जी, और नगर के लोग ।

चितमें अनुरज धर नमे जी, मुनिपद कंज मनोग ।
सयाने भेद सुननके भाव ॥८४ ॥
अहो मुनीश्वर जगपतीजी, करुणा आकर सार ।
अपनो संबन्ध सब कहोजी, यह कीजे उपकार ॥
मुनीश्वर तुम तारक संसार ॥ ८५ ॥
ज्ञान नेत्र धारक गुरूजी, भाषे वचन महान ।
वायु भूतके भवतने जी, पूरब जनम बखान ॥
ऋषीवर सबके संशय टार ॥८६॥
जब याके सब भव सुने जी, नृप पुरजन हित बार ।
विस्मय चित्त भये तबै जी लख संसार असार ॥
सयाने चित्त बैराग उपाय ।८७।
चन्द्र बाहन नर नाथ ने जी, राज सुतन के संग ।
जिन दीक्षाको आदरी जी, भये दिगम्बर अंग ॥
सयाने अति बैराग सुधार ॥८८॥
नाग शर्म ताही घरी जी, जिन भाषित सुन धर्म ।
मुनि पदधर अच्युत बिषय जी, देव भयो लह सर्म ।
सयाने श्री जिन धरम प्रसाद ॥८९॥
नग श्री दुजकी सुताजी, आरज के बृत ठान ।
तपकर षोड़ष स्वर्ग में जी, भयो अमर मृधिवान ।
सयाने या सम लच्छन कोय ॥९०॥

कवित्त ।

अबै अगन मंदिर पर्वत पर श्री गुरु सूरज मित्र मुनिन्द ।
अगन भूत जुत जाय तासपर करम नाश कीने जग चन्द ॥
केवल ज्ञान पाय भवि बोधे दरसायो शिव मग सुख-कंद ।
कोश कर्म हनि शिवपुर तिष्ठे जग जीवनकर नित प्रति बंद ।९१॥

सोरठा।

तीन लोक रिछपाल, वे दोनूं जिन केवली।
हम तुमको तत्काल, शिव सम्पत के अर्थ हो ॥९३॥

चौपाई।

इस अन्तर आवन्ती देश। उज्जैनी नगरी तहँ वेश॥
तामें पंच परम गुण भक्त। इन्द्रदत्त ब्राणक गुण युक्त ॥९४॥
रूप सौभाग्य धरेवर भाम। तास गेहमें गुणवति नाम॥
ता ललना के गर्भ मझार। नाग सर्भचर जो सुर सार ॥९५॥
षोडष नाक थकी चय आय। याके सुत उपजो सुखदाय।
नाम सुरिन्द्रदत्त बुधिवान। बालक वै बहु सुगुण निधान ॥९६॥
इस अन्तर अब ताही ठौर। सेठ सुभद्र रहै इक और॥
ताके तनुजा सुन्दर काय। नाम यशोभद्रा तिस थाय ॥९७॥
ताको परनत भये सुजान। सेठ सुरिद्रदत्त बिध ठान॥
सो येह दम्पति पुन्य संयोग। नाना बिधिके भोगत भोग ॥९८॥
श्री जिन चन्द्र कथित जो धर्म। तामें तत्पर है यह पर्म।
सुखसे तिष्ठत है निज थान। आगे और सुनों व्याख्यान ॥९९॥

दोहा।

एक दिना इस सेठ तिय, देखे श्री मुनिराय।
अवध ज्ञान धारक सुधी, तिने नमी सिर नाय ॥१००॥
विनती कर पूछत भई, मेरे कोई बाल।
है है अक नांही कहो, हे गुरु दीन दयाल ॥१॥

सोरठा।

तव मुनि भाषे बैन, हे पुत्री तुझ तनुज बर।
हावेगो सुख दैन, भाष्यो नम निश्चय थकी ॥२॥
और तेरो भरतार, बालक को मुख कंज लख।
निज दीक्षा को धार, ताही छिन बन जायगो ॥३॥

दोहा।

अरु जो तेरो पुत्रवर, मुने पद कंज निहार।
भोग छोड़ कानन विषय, जावेगो तत्काल ॥ ४ ॥

चौपाई।

इस अन्तर नाभ श्री जीव। स्वर्ग तने सुख भोगे सदीव ॥
चैकर गुण निधि महा पवित्र। भयो यशोभद्रा को पुत्र ॥ ५ ॥
तब सब परियन के समुदाय। बहु विधि के कीने उत्साय ॥
नाम धरो सुखमाल कुमार। सब जन मोहन रूप अपार ॥६॥
इस अन्तर श्रेष्ठी गुणवान। नाम सुरिन्द्रदत्त तिस जान ॥
सो लख सुतको आनन्द चंद। अपनो पद दीनों सुख वृन्द ॥७॥
जग हितकारी दीक्षा सार। लेत भयो सो ताही बार ॥
तिस पीछे सुखमाल कुमार। पुन्य उदै जोबन तन धार ॥ ८ ॥
बत्तिस कन्या रूप निधान। उत्तम कुलमें ते उपजान ॥
लावन मंढत जुत सौ भाग। तिनको परनी धर अनुराग ॥९॥
तिन जुत नाना भोग करन्त। महल त्रिषय सुखसों तिष्टन्त।
इस अन्तर अब सुनो बखान। करमन की गतिहै बलवान ॥१०॥

दोहा

माता श्रीसुखमालकी, सुतके मोह निशेष।
मुनि जनको निज द्वारमें, करन न देह प्रवेश ॥११॥

काव्य

इस अन्तर उज्जैनपुरी इक बानक आयो।
बेचनको तिह ठाम रतन कंठल शुभ लायो ॥
प्रद्योतन नरनाथ पास दिखलायो तबही।
बहुत मोलको जान फेर दीनों नृप तबही ॥१२॥
फिर लायो वह पुरुष, यशोभद्रा के धामा।

तिनने लियो तुरन्त दिये मुंह मांगे दामा ।
ताके बत्तिस टूक किये निज मन हर्षाई ।
सब बहुवनको तबै, पादका कर पहिनाई ॥१३॥
एक दिना यक चील पादका चोंच विषै धर ।
मांस जान ले उड़ी फेर डारी बेश्या घर ॥
गणका करमें धार भूप पै कियो पयानो ।
सब वृत्तान्तको जान नृपतिमन अचरज आनो ॥१४॥
तबै सुबुद्धीराय चित्तमें येम विचारी ।
कैसो है सुखमाल कुमर देखूं येह वारी ।
अभिप्राय शुभ धार सेठ के धाम सुआये ।
तबै सेठ तिय आव भगत करके बैठाये ॥१५॥

दोहा

नृप ढिग सुत तिष्ठाय के, सेठानी हरषाय ।
कियो आरतो तासमैं, थारी दीप धराय ॥१६॥
तब यह नृप सुखमाल के, लख आसूं जुत नैन ।
दीपक हार प्रकाशतें, व्याकुल चित नहिं चैन ॥१७॥

चौपाई

फिर भोजन करतो लखराय । यकयक तन्दुल चुनचुन खाय ।
तब नरेश ह्वै अचरजवन्त । सेठानी प्रति सब बिरतन्त ॥१८॥
पूछो ताने दियो बताय । सुनके भूपति येम कहाय ।
अहो सेठपति पुन्य विशाल, तुमहो आवन्ती सुखमाल ॥१९॥
फिर यह श्रीजुत भूप समेत । गये वापिका क्रीड़ा हेत ।
रतन मुद्रका सहित मरीच । पड़ी कुमरकी जलके बीच २०॥
तौभी मन नाहिं भयो उदास । धरो दुगुन आनन परकाश ।
क्रांतवान आभूषण धरें । वाही विधि शुभ क्रीड़ा करें ॥२१॥

ऐसे लख प्रद्योतन राय । चितमें बहुविधि विस्मय पाय ।
पुन्यतनी सामग्री येह । ताको भोगत निस्सन्देह ॥ २२ ॥

दोहा ।

इसके पूरब पुन्यकी, बहु अस्तुत उच्चार ।
जलत चित्त है नरपती गयो सो निज आगार ॥२३॥

सवैया इकतीसा

अहो धन धान धार सम्पत तने भंडार पुत्र मित्र औ क-लित्र रूप अधिकाइये । नानाविधि भूषण अनूप वस्त्र भागवन्त बांधव सुहितकारी जगमें लहाइये ॥ महल्ल अनेक खड़े भूप सन्मान करें हय गय आदिक सवारी जस गाइये । और तीन लोकमाहिं जेती हैगी सार वस्तु पुन्यरूपी बट सारी सेती सब पाइये ॥ २४ ॥

जातें बुधिवान जीव चित्तमें लखो सदीव दुख पाई खोटे पथ तत्तक्षण भानियो । सुर शिव लक्ष बीज जिन वर भाषो पुन्य ताको परकाश निज उर माहिं आनिये । सोई वृष जान येह तासमें लगायो नेह जिनवर भक्तिपूज दान तिन ठानिये । शील व्रत पालन उपवास पंच पाप त्याग इत्यादिक जग बीच पुन्य परमानिये ॥ २५ ॥

पद्धड़ी छन्द

इस अन्तर श्रीसुखमाल येह । सुख भोगत तिष्ठे आप गेह ।
अबै इनके मातुल जगत बन्द । गणधरनामा जो है मुनिन्द २६
जिन तत्त्व लखन पंडित दयाल । आचारजपद धारे विशाल ।
सुखमाल तनी तिस आप जान । तिष्ठे सुआय इसके उद्यान २७
धर जोग विराजे भै निवार । स्वाध्याय तनों करते उचार ।
सुन शब्द यशोभद्रा तुरन्त । इम द्वारपालप्रति बच भनन्त २८

पूरन इन जोग जबै निहार। तबही यहँ से दीजो निकार॥
इस अंतरवे ऋषिराज चंद। पूरनकर जोग त्रिया प्रबंध ॥२६॥

दोहा

फिर ऊरध पर गुप्त को, ऊंचे सुर व्याख्यान।
करन लगे वे जगपती, परम दया की खान ॥ ३० ॥
तामें अच्युत स्वर्ग की, देव आय अरु काय।
सुख संपत बरनी सबै, सुनी कुंवर चितलाय ॥ ३१ ॥

सोरठा

जाती सुमरन पाय, गयो निकट ऋषिराज के।
चरनाम्बुज सिर नाय, भक्ति सहित तिष्ठत भयो ॥ ३२॥
बोले दीन दयाल, अहो वच्छ सुन लीजिये।
तीन दिना में काल, तेरो है निश्चय थकी ॥ ३३ ॥

चौपाई

अब जामें तेरो हित होय। अहो सुबुद्धी कीजे सोय॥
ऐसे गुरुके बचन रिसाल। सुनके धीरबीर सुख माल ॥३४॥
गुण उज्वल शुधकर त्रिय जोग। तबही दीचा लई मनोग॥
सल्य रहित तज जगकी आश। प्रायोगमन धरो सन्यास ।३५।
अबवो अगन भूतकी नार। नाम सोमदत्ता दुखकार॥
कर निदान जगमें भिरमांह। फिर उज्जैनीके बन मांह। ३६।
भई स्यालनी जुत सुत चार। पाप उदै याके अधिकार॥
पूरब बैर थकी तेह थान। आय लगी मुनि पदको खान।३७।
अहो कष्ट हमको अधिकाय। यह निदान अघदेत अघाय॥
तातें भविजन तजो तुरंत। जो तुम चाहो शिवको पंथ ॥३८॥
सो सुखमाल मुनी पवित्त। मेरु समान करो दृढ़ चित्त॥
शत्रु मित्रमें धर समुदाय। सही परीषह येह अधिकाय ॥३६॥

तीजे दिन तजके निज प्रान। उपजे अच्युत सुरग बिमान॥
तहं नाना विधि ऋद्धि लहाय। सो मोपै किम बरनी जाय॥४०॥

दोहा

देखो भविजन चित्त धर, कहँ मन वंछित भोग।
कहां स्यालनी कृत भये, वहोत कठिन यह जोग॥४१॥
सत्पुरुषन को चरित जो, अचरज कारी जान।
ऐसे ही सुख भोगवे, फिर निज करत कल्यान॥४२॥

काव्य

अब यह अमर सुजान स्वर्ग अच्युत के मांहीं।
जिन चरनन को भ्रमर भयो तिष्ठे निज ठाहीं॥
सदा काल प्रभु भक्त धार भोगत निज सम्पत।
धर्म हिये धारन्त पापतें नित प्रति कम्पत॥४३॥
जिस थानक मुनिराय तजी काया पवित्र अति।
कोलाहल तिह ठाम कियो अमर न चित हरपति॥
तब संसारी दुष्ट जीव तहँ धाम बनायो।
महा काल तिस नाम कुतीरथ जग प्रगटायो॥४४॥
पुन्य ताही स्थान सुरन बहु भक्ति आन उर।
गंधत जल की करी बृष्टि ताही अवनी पर॥
तब ते सरिता गंधवती प्रकटी उत्तम अति।
महा पुरुष जहँ धाम धरतसो क्यों नहिं तीरथ॥४५॥

छंद मालती

देखो यह श्री मान सेठ बर भोगत भोग सदा सुखदाय।
फेर मुनीश्वरके बच सुनकर जानी अपनी किंचित आय॥
सब संपति तिय नेह तजो तिन भगवत भाषित तप चितलाय।
महा घोर उपसर्ग पसूकृत सह कर पाई निर्जर काय॥४६॥

दोहा ।

ऐसे श्री सुख माल मुनि, निर्मल बुध धारन्त ।
सत्पुरुषन समुदाय को, कीजे शांत अत्यन्त ॥ ४७ ॥

सोरठा

श्री सुखमाल चरित्त, कीनो बर्णन तुच्छ धी ।
सुनो सुमनधर चित्त, बखतावर रतना कहे ॥ ४८ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय सुखमाल चरित्र वर्णन समाप्तम्

सुकौशल मुनि जी की कथा प्रारंभः नं. ५८

मङ्गलाचरण । छप्पय

तीन जगत में हैं पवित्र अरिहन्त देव वर ।
सर्व भुवन उत्कृष्ट भारती मात कलुष हर ॥
और गुरू निरग्रंथ अष्ट विंशत गुणधारी ।
तिनके चरण सरोज नमन कर कहूं अबारी ॥
शुभ कथा सु कौशल मुनि तनी, सुनो भव्य आनंद धर ।
ताके प्रसाद सुख बिस्तरैं, बिघन सघन जावैं सुटर ॥१॥

सोरठा

नगर अयोध्या जान, प्रजा पाल भूपति तहां ।
गुण उज्वल अधिकान, साहस धारी अति चतुर ॥ २ ॥
ताके सेठ निहार, सिद्धारथ नामा बिमल ।
धन धान्यादिक सार, श्री जुत यह बानक पती ॥ ३ ॥
तिय बतिस तिस धाम, लावनरूप सौभाग्य जुत ।
सबै पुत्र बिन बाम, कर्म उदै ते सेठ के ॥ ४ ॥
सुत बिन नहिं सो हन्त, अबला इस ही जगत में ।
जो पगारूप अत्यन्त, बिफल लता सम जानिये ॥ ५ ॥

तिन नारनके माहिं, जयावती नामा सुघड़ ।
प्राणन ते अधिकाय, सेठतनी वह बल्लभा ॥ ६ ॥

छन्द चाल

सो पुत्रहेत बहु भेवा । नित करे जक्षकी सेवा ।
तव कोई कारण पायो, इन पुन्य उदै अति आयो ॥७॥
ज्ञानी मुनि पूछे आई । तब श्रीगुरु गिरा सुनाई ।
हे पुत्री कुश्चित देवा । तुम तजो तासकी सेवा ॥ ८ ॥
जिन धर्म विषै चित धारो । जाते जावे दुख थारो ।
तेरे दिन सप्तम माहीं । रहे गर्भ महा सुखदाई ॥ ९ ॥
सुनके श्री गुरुकी बानी । तिय चित्त विषै हुलसानी ।
जिन धर्म विषै मत धारी । पूजा कुदेव की टारी ॥ १० ॥
जाकी बांछा चित होई । अरु मिले कदाचित सोई ।
तो क्यों नहिं जन सुख पावे । निश्चय करके हरपावे ॥११॥

चौपाई ।

इस अन्तर कितने दिन बीच । तिन सुत जायो सहित मरीच ।
नाम सुकौशल रूप अगाद । पायो जैन धर्म परसाद ॥ १२ ॥
तब सिद्धारथ सेठ उदार । सुत मुख कंज देख तत्कार ॥
नाम जयंधर गुरु ढिग जाय । दीक्षा लीनी मन बच काय ॥१३॥
तबै जयावति ह्वै रिसवन्त । कियो विचार चित्त इह भन्त ॥
देखो बालक सुत जुत मोह । छोड़ गयो बानक पति सोह ॥१४॥
अथवा उनको जोगन एह । मुझपति को दीक्षा दी तेह ।
याते ऋषि पर कोप प्रचंड । ऐसी आज्ञा दई अखंड ॥ १५ ॥
अहो-हमारी पोल मझार । पैठन नाहिं पावे अमगार ।
द्वारपाल सुनके तिस घरी । सेठानी आज्ञा सिर धरी ॥ १६ ॥

कवित्त

अहो खेद हमको है दीरघ जे कुबुद्ध प्रानी गुण हीन ।
मोह वसाय छोड़ शुभ वृषको काज अकाज हिये नहिं चीन ।
ऐसे जन्म अन्ध के करमें चिंता मण आवे दुत लीन ।
ताको फेंक देय बिन जाने तैसे इस मत भई मलीन ॥ १७ ॥

अडिल्ल ॥

इस अन्तर सेठ सुकौशल जी सही ।
जोवन वन्त कुमार भये तन दुत गही ॥
बत्तिस कन्या गुण उज्जल अधिकाय जी ।
व्याही उत्तम कुल की चित हरषाय जी ॥ १८ ॥
नाना विधि के भोग करत तिन जुत सदा ।
सुख से तिष्ठत धाम विषै नित ही मुदा ॥
ये प्रानी सब पूरब पुन्य प्रभावतें ।
नाना सम्पत सुख लहे मन भावतें ॥ १९ ॥

सवैया इकतीसा

एके दिन माय धाय नारी जुत आप सेठ । मोह के शिखर पर शोभा को निरखते । तिसही समय मंझार विहरत अनागार, सिद्धारथ नाम आये भूम को लखत ते ॥ तब निज मात सेती पूछो हरषाय तिन, कौन येह दीखत हैं आतम में रत ते । जबै चित्त क्रोध धार बोली जयावती नार, फिर तसु कोई रंक खोय निज पति ते ॥ २० ॥

दोहा

इम माता को वचन सुन, कही सुकौशल येम ।
शुभ लच्छण यातन विषै, रंक बतावो केम ॥ २१ ॥

चौपाई

ताही समय सुनंदा भाय । सेठानी प्रति येम कहाय ॥

तुमको निंद नीक बच येह। कहते जोग नहीं सुन लेह ॥ २२॥
हे मुग्धे तेरो भरतार। थो गुण उज्जल सेठ उदार॥
सुन जयावती होय अधीर। कहत भई चुपकी रहो बीर ॥२३॥
नेत्र समस्या कीनी जबै। धाय मौन गह तिष्ठी तबै॥
दुष्ट तियामन धर्म न गहे। जैसे बन्हीं शीत न लहे ॥ २४ ॥
जबै सुकोशल जी निज नैन। माता धाय तनी लख सैन॥
बार बार चित कियो बिचार। जननी मोहि ठगो निरधार॥२५॥
ताही समै रसोईदार। कहत भयो भोजन है त्यार॥
अहो नाथजी मन के काज। चालिये देर होत महाराज ॥ २६ ॥
अम्बाने सब नार समेत। बिनती कीनी भोजन हेत॥
तब इह सुधी कहे सुन मात। इसी दिगंबर कीजो बात॥२७॥
सांच कहो तो भोजन करूं। नातरु अन्य सबै परिहरूं॥
जबै सुनंदा धात्री सार। पूरब सब बिरतन्त उचार ॥ २८ ॥

दोहा

सुनकर सेठ तुरन्तही, मन बैराग्य उपाय।
गयो तिन्हीं मुनिके निकट, चरनकमल सिरनाय ॥२९॥
भगवत भाषित वृष सुनो, गुरु मुखते सुखकार।
तास रूपको जानकर, तन धन अथिर निहार ॥३०॥

पद्धड़ी

तबही इनकी बत्तीस नार। दुःखित चित आई बनमझार।
तिनमाहिं सुभद्रा गर्भवन्त। निजउदर विषै बालक धरन्त ३१॥
तिस देख सुकोशलजी महान। उस उदरतिलक कर इम बखान।
जो बालक इसके होय जोग। सो मम पदवी पावे मनोग ३२
अब सोच त्यागकर मोह नाश। दीक्षा लीनी निज तात पास।
धर रूप दिगम्बर तपत काय। बहु सहे परीषह शुद्ध पाय ३३॥

जे महा सुबुद्धी धर्म वन्त । जिन पूरब पुन्य कियो महन्त ।
अपने हितमें निज सावधान । तिनको किम दुष्ट ठगे अयान ३४

दोहा

इस अन्तर इस मातको, भयो सुपुत्र वियोग ।
तिसही आरतमें मरी, करके बहु विध सोग ॥३५॥

चौपाई

मगध देश मों भिल्ल पहार । तापर पाय उदै तन छार ।
भई व्याघरी अति विकराल । तिष्ठ संग लिये तृय बाल ॥३६॥
देखो जयावती यह बाम । जिनवर को मत तज अभिराम ।
मोह पसाय नीच गतिलही । पसुपर जाय दुःखकी मही ३७॥
अब इह पिता पुत्र मुनिचंद । गुण मंडित विचरे सुखकंद ।
कर्म जोग तिस भूभृत पास । तिष्ठे जोग धार चौमास ॥३८॥
तीन भवन में इह उत्कृष्ट । जग हितकारी तिन बच मिष्ठ ।
पूर्ण योगकर धर्म जहाज । कियो बिहार गोचरी काज ३९॥
अब वह व्याघ्री आनन फार । इन सन्मुख आई ललकार ।
लख ताको जिन आगम भास । दोनो मुनि धारो सन्यास ४०
सो वो बाघन अधम अलीन । युगमुनिको तन भक्षणकीन ।
ऋषि समाधिजुत तजके प्रान । सरबारथ सिध लहो बिमान ४१॥
होनहार शिव तियके कंत । आवागमन रहित भगवन्त ।
सो हम तुमको वे जुग साध । दोशिव लक्ष्मी अव्या बाध ४२॥
फिर वह केहरिनी अघरास । भखो सुकौशल तनको मांस ।
करमें लक्षण सुन्दर देख । जाती सुमरन भयो विशेष ॥४३॥
पूरब भव सब आये याद । पुत्र हतो मेरो इह साध ॥
छोड़ दई ततक्षण तिस काय । बहु बिधि पश्चाताप कराय ॥४४॥
हाय हाय इह कष्ट अपार । मैं पापन मूरख अविचार ॥

भगवत भाषित मतको छोड़। भ्रमन कियो जगमें नहिं ओर ।४५।
ऐरे सम कोई दुष्टन आन। हने पुत्र अस पतिके प्रान ॥
ऐसे निज निंदा कर सोय। फेर सन्यास धरो शुध होय ।४६।
शुभ भावनते तज निज काय। प्रथम स्वर्ग में उपजो जाय ॥
देखो अचरजकारी बात। कहां मुनिन की कीनी घात ॥४७॥
कहां सुरग के सुख विलसन्त। यह जिन मतको अगम सुपंथ।
तातें भविजन सुर शिवदाय। जैनधर्म ध्यावो शुध भाय ॥४८॥

छप्पय

अतिशै कर बर ज्ञान भान प्रगटावन भू भृत।
ऐसो श्रीयुत मूल संघमें प्रगटे रविवत ॥
मेरे गुरू महान मल्ल भूषण सुखदाई।
भगवत भाषित सप्त भंग बानी जिन पाई ॥
सो भई उदधिकी लहर सम, एकान्त पक्ष मल नासनी।
अतिशय कर सम्यक रतन, ताकी सदा प्रकाशनी ॥४९॥
क्रोध रूप जल जन्तु सकलको नाश कियो तिन।
शोभित जिनवर वाक सुधाको पान करो जिन ॥
श्री भगवान मयंक तनो मत वृद्ध करो है।
तप वृत समकित युक्त सकल अघताप हरो है ॥
देदीप्यमान पुन रूप जो, लक्ष्मी ताकर सहित है।
श्री युत ऐसे गुरु मुझ तने, ब्रह्म नेमीदत कहत हैं ।५०।

सोरठा

पूरन कथा जु एह, श्री सुकौशल मुनि तनी।
सुनो भव्य धर नेह, तुच्छ बुद्धि वर्णन करी ॥५१॥

सवैया तेईसा।

यह अधिकार भयो सुखकार कहो मत द्वार सुभव्य निहारो।

ग्रंथ महान विषय लखके शुभ अर्थ जु नेमी चंद उचारो ॥
ता अनुराग रची रचना हम छन्द बनाय सवै भ्रम टारो ।
जे कबिसार सो लेहु सुधार यही उपकार करो जु हमारो ॥५२॥

सोरठा

सार सुधातम जान, इस तीजे अधिकार को ।
मत अनुसार बखान, कीनों बखतावर रतन ॥५३॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय सुकौशलजीकी कथा सम्पूर्णम्

अथ गजकुमारकृष्णाकेपुत्रकीकथा ५८

मंगलाचरण । गीता छंद

निज गुणनकर परसिद्ध निरमल देव श्री अरिहन्त जी ।
तिनके चरन अंबुज हिये धर नमतहूं बहु भन्तजी ॥
त्रिय जगतमें परसिद्ध हैं श्री गज कुमार तनी कथा ।
ताको कहूं सब सुजन सुनिये संस्कृत्त विषै यथा ॥ १ ॥

चौपाई ।

पुरी द्वारका है जुत ऋद्धि । श्री को धाम जगत परसिद्ध ॥
नेमीश्वरके जनम पसाय । है पवित्र नगरी अधिकाय ॥ २ ॥
ताको राज करे शुभ मती । नारायण त्रिय खंडको पती ॥
गंधर्व सेना ताकी भाम । गज कुमार सुत मानो काम ॥ ३ ॥
कैसो है यह कुंवर महान । शुभटनमें अग्रेश्वर जान ॥
निज प्रताप रवि किरन प्रसिद्ध । अरिमन रूप लता भइ दग्ध ।४।
इस अंतर पौदनपुर नाथ । अपराजित बलवंत विख्याथ ॥
हरिकी आज्ञा मानत नाहि । दुष्ट बुद्धि गर्भित अधिकाहि ।५।
तब मुकंदपुर घोषन दीन । जो कोई शुभटेश्वर परवीन ॥
अपराजितको पकड़ तुरंत । मोढिग लावे सो बलवन्त ॥ ६ ॥
तासों प्रीत करूं हित जोय । मन बंछित पावे बरसोय ॥

गज कुमार तब सुन यह बात। पिता पास आयो हरषात ॥७॥
नमस्कार आज्ञाले सुकुमार। पौदनपुर पहुंचो ततकार ॥
युद्ध करो तासों अधिकाय। जीवत पकड़ लियो वह राय। ८।
शीघ्र लाय दामोदर पास। सौंपत भयो तिसे गुण रास ॥
जो असाध्य वैरी नृप भौन। भले सुभट बिन जीते कौन ॥ ९॥

दोहा

तब ही श्री पति के निकट, कुंवर करी अरदास।
अब मेरो बर दीजिये, अहो तात सुख रास ॥ १० ॥
जो मन भावे सो करूं, सुनिये नांहिं पुकार।
जबै हरी ने बर दियो, हर्षित भयो कुमार ॥ ११ ॥

पद्धड़ी

अब कुंवर काम लंपट अपार। लज्जा तज बिचरेपुर मझार ॥
है रूपवंत पर नारि जेह। तिनको हठसे भोगत जु एह ॥१२॥
इस काम क्रियाको है धिक्कार। इह पाप तनों कारन बिचार ॥
जिसके प्रभावकर जगत जीव। लज्जा भय तज सेवें सदीव ॥१३॥

दोहा

पांसुल नामा बनकपति, सुरति नाम तिस नार।
रूप अधिक तिस देखके, मोहित भयो कुमार ॥ १४ ॥
सेठ तबै इन देखके, क्रोध अनिल प्रजुलानि।
नेत्र हीन सम धर विषै, तिष्टे मन दुख ठान ॥ १५ ॥

सोरठा।

राजपुत्रको येह, मनें करन समरथ नहीं।
बैठो अपने गेह, सब चरित्र देखत रहे ॥ १६ ॥

काव्य

इस अन्तर यक दिना ज्ञान केवल कर मंडित।

तीन जगतमें है प्रकाश तिस जोत अखंडित ॥
देव इन्द्र कर पूजनीक नेमीश्वर आये ।
द्वारापुरके निकट भव्य जन सुन हरषाये ॥ १७ ॥
वासुदेव बलदेव बहुत भूपति संग लेकर ।
जिन पद पूजन हेत चले हियेधर आनंद वर ।
तहां जायकर स्वर्ग मोक्षदायक जिन देखे ॥
अष्ट द्रव्य अतिसार लेय पद जजे विशेखे ॥ १८ ॥

दोहा

फिर प्रभुकी स्तुत करी, सबने वारम्वार ।
नमस्कार करके तबै, तिष्ठे ध्यान सुधार ॥ १९ ॥
तबही जिन बानी खिरी, कोड़ो सुःख दयाल ।
अनागार सागरको, भाषो धर्म रिसाल ॥ २० ॥
ताको सुनकर सुखित है, फिर स्तुतकर वंद ।
जिनवर भाषित धर्मसुन, को नहिं होत अनंद २१॥

चौपाई

अब यह गजकुमार सुन धर्म । मन वच काय तजो जग भर्म ।
किये पापकी निंदा ठान । मन आनो वैराग महान ॥ २२ ॥
भव वारिधिकी नाशनहार । भगवत दीक्षा ले तेहिवार ।
तपनिधि इकल बिहारी भये । उर्जयन्त कानन में गये ॥२३॥
धर समाध तिष्ठ जगचंद । निश्चल मेरु समान मुनिन्द ।
अब वह पांशुल सेठ अयान । गिरपै इनको तिष्ठे जान ॥२४॥
पहिलो वैर कियो सब याद । आयो शीघ्र जहां यह साध ।
उस पापी ने तिसही घरी । मुनि शरीरको पीड़ा करी ॥२५॥
लोह मई कीले परचण्ड । संध संध प्रति जड़े अखंड ।
पाप पुंज कर युक्त मलीन । अपने धाम गमन तब कीन २६॥

तब श्रीयोगीश्वर सुकुमार । जैन तत्वके जानन हार ।
सही वेदना तृणवत जान । कर समाधि छोड़े निज प्रान २७॥
नाक लोकमें कीनो गौन । तहँ तिष्ठे वे सुखके भौन ।
सत्पुरुषन को परम चरित्र । अचरजकारी है सुनि मित्र ॥२८॥
कहां वेदना को समुदाय । कहां समाधि विषै चितलाय ।
सोई वे मुनिचंद दयाल । शान्त अर्थ हूजे गुणमाल ॥ २६ ॥
कैसे हैं वे तप निधि देव । प्रभुके धर्म तनो सुनि भेव ।
दीक्षा लेकर भये मुनिंद । संयम व्रत पालो गुणवृन्द ॥ ३० ॥
जैसे संस्कृतमें कही । तेह प्रकार भाषा बरनई ।
यामें दोष न कवि को जान । देख लीजियेचतुर सुजान ॥३१॥

इति श्रीआराधनासार कथाकोष विषय गजकुमारके चरित्र की
कथा समाप्तम् नं० ५९

अथ पणकमुनिकी कथा प्रा० ६०

मंगलाचरण ॥ दोहा ॥

पूजनीक पंडितन कर, सुखदाता अरिहन्त ।
तिनके चरण सरोजको, नमकर कथ उचरन्त ॥१॥
पणक मुनीश्वरकी कथा, जग जनको हितकार ।
अब संक्षेप थकी कहूं, सुनके भवि हिय धार ॥२॥

पद्धड़ी

रमणीक पणीश्वर पूरब सन्त । तहां प्रजापाल भूपति लसंत ।
ताके सागरदत सेठ एक । पणिका सेठानीजुत विवेक ॥ ३ ॥
तिन दोनोंके आतम पवित्त । सुतभयो पणक अति स्वच्छचित्त ।
सो महासुबुद्धी भागवन्त । शुभ पथ चलन्त अघते डरन्त ॥४॥
इक दिन यह बुधधारी कुमार । श्रीवीर समोश्रृतके मझार ।

वंदनके हेत कियो पयान । रचना देखी दैदीप्यमान ॥ ५ ॥
मणिजड़त सुतोरण अतिविशाल । शुभमानस थम्भदिपे रशाल ।
बहु सोज सहत आनन्दकार । रतननके कूप लखे अपार ॥६॥
फिर गंधकुटी रचना अनंद । त्रिय पीठ सहित विष्टर दिपंत ।
तापर अलिप्त तिष्ठे जिनेश । जिमि पूरण शशि शोभा विशेश ७
त्रियेछत्र शीषपरजुत मरीच । तिनसम आभा नहिं जगत वीच ।
शुभ उज्जल चौसठ चमर सार । ढोरत जक्षादिक भक्तिधार॥८॥
नभते होवे वर सुमन वृष्टि । सुर दुंदुभि बाजे अति गरिष्ट ।
मघवादिक जजें पदारविन्द । ऐसे श्रीवीर जिनेन्द्र चंद ॥ ९ ॥

दोहा

तरु अशोक सब शोक हर, तिष्ठे जिनवर पास ।
कांति अधिकको कह सके, कोड़ो भानु प्रकाश ॥१०॥
मिथ्या ध्वान्त विनाशिनी, ऐसी गिरा महान ।
खिरत प्रभू आनन थकी, सुर दुंदुभी समान ॥११॥

चौपाई ।

नगन दिगम्बर जे मुनि चंद । सभा विषै तिष्ठे सुखकंद ।
भव जीवनकर स्तुति जोग । चौंतिश अतिशय लसत मनोग १२।
तीन भुवनमें उत्तम देव । नंत चतुष्टे गुण बहु भेव ।
मुक्तिश्री के वल्लभ सार । ऐसे प्रभुको पण्णक निहार ॥१३॥
भक्ति सहित परदक्षण तीन । देकर नमस्कार फिर कीन ।
बहु विधि स्तुत पूजा करी । बानी सुनी महा रस भरी ॥१४॥
अपनी आयु तुच्छ इह जान । सेठ तनुज मुन भये महान ।
जिन कल्पी हूवे तत्कार । ईर्जा पथजुत कियो विहार ॥ १५ ॥
तीरथ यात्रा करने हेत । गंगा तट पहुँचे जगसेत ।
नौका चढ़त भयो शिव मगी । मँझधारामें डूवन लगी ॥१६॥

तब इह शुक्लध्यान चितधार। सकल करमको कर निरवार।
केवल पाय मोक्षयुत हुये। आवागमन रहित वे भये॥ १७॥
वेई पणाक मुनीश्वर जेह। मेरु शिखर सम निश्चल देह।
कर्म अरी नाशक भगवन्त। मो शिव सम्पति देहु तुरन्त १८॥

दोहा।

देखो सागरदत्तको, पणाक नाम सुत येह।
वर्धमानको देख कर, अल्प आयू लख जेह॥ १९॥
मोह परीग्रह नास कर, भये दिगम्बर अंग।
करम काट शिवपुर गये, सो सुख देहु अभंग॥२०॥

इति श्रीआराधनासार कथाकोषविषय पणकमुनिकी कथासमाप्तम् नं० ६०

अथ भद्रबाहुजीकी कथा प्रा० ६१

मंगलाचरण॥ गीताछंद॥

जो जगतके प्राणीनको नित देत वर कल्याण हैं।
सुर असुर करत प्रणाम जिनको सो प्रभु भगवान हैं॥
तिनको नमन करके कहूं श्रीभद्रबाहु चरित्रही।
सब जननको हितकार है सुनके धरो भवि चित्तही॥ १॥
इक पुंडवर्धन देशमें शुभकोट सतपुर जानिये।
ताको पद्मरथ नाम भूपति बुद्धिवान प्रमानिये॥
जिस रायके द्विज सोम शर्मा नार श्री देवी भली।
तिन जुगनके सुत ऊपजो श्री भद्र बाहु महाबली॥२॥

चौपाई

सो बालक गुण उज्जल धरे। भद्र मूर्ति सब के चितहरे॥
इक दिन नगर बाह्य उद्यान। क्रीड़ा हेत गयो बुधिवान॥ ३॥
मुंजी बंधन कटि धारंत। बहुत बाल जुत मन हरषंत॥
वट क्रीड़ा तहँ करत कुमार। तिनमें भद्र बाहु तिह बार॥ ४॥

निज चतुराई कर की करी । तेरे गोली ऊपर धरी ॥
इस अंतर श्री बीर जिनिंद । मुक्त गये पीछे गुण वृंद ॥ ५ ॥
श्रुत केवली पंच भवतार । चौदे पूरब जाननहार ॥
तिनमें चौथे सुगुण निधान। गोवर्धन जी नाम महान ॥ ६ ॥
ऊर्जयंत गिर बंदन काज । जावे थे वे श्री महाराज ॥
सो कोटी सत्पुरुषन बीज । तिष्ठे मुनिगण सहित मरीच । ७ ।
भद्रबाहु जे क्रीड़ा करी । गोवर्धन जी लख तिह घरी ॥
अपने मनमें कियो विचार । यह होसी पंचम सुत धार ॥८॥
यह विध निमित ज्ञानते जान। सोमशर्म दुजके घर आन ॥
कहत भये मुनि विप्र उदार । भद्रबाहु तेरो सुत सार ॥ ९ ॥
जो तु हम को दे भूदेव । इसे पढ़ावें हम बहु भेव ॥
ऐसे सुन सुतको तत्काल । कियो विप्रने मुनिकी नाल ॥१०॥
तब श्री गोवर्धन मुनिचंद । शास्त्र पढ़ाये बहु सुख कंद ॥
निपुन करो बहु श्रुती मंझार। फिर भेजो दुजके आगार ।११।
सो इह भद्र बाहु घर जाय । मात पिता की आज्ञा पाय ॥
ग्रहको त्यागनकर बड़भाग । आकर गुरुके चरनन लाग । १२ ।
स्वर्ग मोच्च सुखकी दातार । दीक्षा कीनी अंगीकार ॥
द्वादशांग पढ़ भयो प्रवीन । काय कषाय करी अति छीन । १३ ।

दोहा

जे आतम ज्ञायक पुरुष, किम तिष्ठे ग्रह बास ।
जिन अमृत रस चाखियो, भावे विष किम तास ॥१४॥

कवित्त

करि समाधि गोवर्धन स्वामी सुरग विषै पहुंचे सुखदाय ।
ता पीछे अब भद्र बाहु जी शास्त्र नेत्र ते गुरुपद पाय ॥
संघाधिपति वे मुनि गुण जुत बचन रूप अमृत बरसाय ॥
भव्यरूप धाननको सींचत उज्जैनी पुर पहुंचे आय ॥ १५ ॥

दोहा

ताही छिन आहारको, भद्र बाहु मुनिराय।
नगर उज्जैनी में गये, श्रावक गेह लखाय ॥ १६ ॥
तहां बालक तिय गोद में, बचन अव्यक्त बखान।
जाहुर मुनि जी ह्यां थकी, यह गुरु सुनकरि बान ।१७।
भद्र बाहु स्वामी तबै, तत्व लखन को भान।
बात सत्य शिशु ने कही, इह विध चित में ठान ॥१८॥

सोरठा

बारह वर्ष प्रमान, पड़े इहां दुर्भिक्ष अति।
अन्तराय को जान, आये निज थानक विषै ॥ १९ ॥

काव्य

संध्या काल मंझार गुरु इम गिरा सुनाई।
अहो मुनीश्वर सर्व सुनो तुम चित्त लगाई॥
द्वादश वर्ष प्रमाण इहां दुर्भिक्ष पड़ेगो।
मुनि श्रावक को धर्म सबै ही नष्ट करेगो ॥ २० ॥
ताते हो तुम साध आयु मेरी तुच्छ जानो।
तिष्ठूंगो इस ठौर नहीं मुझ होय पयानो॥
तुम उद्यम को ठान सर्व दक्षिण दिशि जावो।
तप नाना बिधि करो सकल अघ पंक नसावो ॥२१॥

दोहा

ऐसे कह ताही समय, अपनो शिष्य महान।
नाम बिशाखाचार्य तिस, दश पूरब को ज्ञान ॥ २२ ॥
ताको संघको अधिपति, करत भये तत्काल।
दक्षण दिश जाने थकी, आज्ञा दई रिसाल ॥ २३ ॥

चौपाई

चारितकी रक्षाके काज। सब मुनि भेज दिये महाराज ॥

वे गण दच्चण दिशमें जाय । सुखसे तिष्टे आनंद पाय ।२४।
जे चालें गुरु बच अनुसार। तिनको होवे सुख बड़बार ॥
ता पीछे उज्जैनी पती । चंद्र गुप्त नामा शुभ मती ॥ २५ ॥
सब जतियनको लहो बियोग। तन धन अथिर लखे सब भोग ॥
भद्र बाहुके चरनन पास । भयो दिगंबर गुण की रास ॥ २६ ॥
अब इह भद्रबाहु श्रुत रत्व । श्री जिन चंद्र कथित जो तत्व ॥
तिन समभनको बिदुषन सार। परम सुबुद्धी चित अविकार ।२७।
उज्जैनीपुर के उद्यान । बटके बृक्ष निकट थित ठान ॥
क्षुधा तृषादि परीषह जोर । जीती तनकी ममता छोर ॥२८॥
सहित सन्यास प्रानको त्याग। उपजे स्वर्ग विषै बड़भाग ॥
वे श्री भद्र बाहु योगिन्द्र । दीजे मोह शुभ पथ सुखछन्द ॥२९॥
सोम सर्प नभ बंश महान। तामें उपजे भानु समान ॥
जैन धर्म बारध जु रिसाल। तास बढ़ावन चन्द्र बिशाल ॥३०॥
सो सत्पुरुषनके सुख करो। पाप पंक हर मंगल वरो ॥
वे पंचम श्रत केवल धार। करे कवीनुत बारम्बार ॥३१॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय भद्रबाहुकी कथा समाप्तम् नं० ६१

अथ सेठके बत्तीस सुतनकी कथा नं० ६२

मंगलाचरण ॥ चौपाई ॥

लोकालोक प्रकाशनहार। श्री सखज्ञ देव भवतार।
तिनको नमकर करूं बखान। बत्तिस सेठ सुत चरित महान ।१।

दोहा

कोसांबी नगरी सुभग, तामें बाणिक ईश।
इन्द्रदत्तको आदिले, भये सेठ बत्तीस ॥२॥
हुवे जगत बिख्यात इह, तिनके द्रव्य अगाध।
बत्तिसही सुत ऊपजे, समुददत्त को याद ॥३॥

चौपाई

गुण मंडित ये सकल कुमार। सम्यक रतन धरे अविकार।
जिन पदाम्बुज सेवनको अंग। सबै मित्रता धरे असंग ॥४॥
इस अन्तर त्रिय जग पूजन्त। केवल चखुधारी भगवन्त।
तिनकी स्तुति निर्जर करें। बहु विधि भक्ति हिये में धरें ॥५॥
ऐसे प्रभुके दर्शन पाय। सबै सेठ सुत चित हरषाय ॥
बहु विधि थुति जिनकी विस्तरी धर्म स्वरूप सुनो तिह घरी ॥६॥
फिर यह भव्य सराहन जोग। सुनके प्रभुके वचन मनोग।
अपनी आयु तुच्छ सब जान। भव नाशक दीक्षाको ठान ॥७॥
जैन तत्वके जाननहार। सहें परीषह समता धार ॥
इक दिन जमना सरिता तीर। सबै साध तिष्ठे बर बीर ॥८॥
प्रायोगमन धार सन्यास। तनते निस्प्रेही गुण रास ॥
तबही वृष्टि भई विकराल। नदी प्रवाह चढ़ो तत्काल ॥९॥

दोहा

सबै साध ताहीं समै, पड़े भंवर के मद्ध।
कर समाधि तन त्यागकर, देव भये जुत ऋद्ध ॥१०॥
सत्पुरुषन के चित्त जे, निश्चल मेरु समान।
कष्ट विषे अति सूरमा, करे न संयम हार ॥११॥

सोरठा

अब ए बत्तिस देव, स्वर्ग सुःख भोगत भये।
जिन पदाब्जकी सेव, करते तिष्ठे आप थल ॥१२॥

कवित्त

सो भगवन्त सदा जयवन्त चरित्र उदार धरे अधिकाई।
दुष्ट करें उपसर्ग महान तजें नहिं ध्यान गहे थिरताई ॥
सुःख निवास हनी जग फांस दिये भव बारिध भव्य तिराई।

सार महा त्रियलोक विषै जिनके पदको कवि शीश निवाई १३

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय दृढ़ शिशंत सेठी पुत्र की
कथा समाप्तम् नं० ६२ ॥

अथधर्मघोषमुनिकीकथाप्रा०नं०६३

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

धर्म तनो उपदेश, देनहार त्रिय जगपती ।
तिन पद नमि कहुं वेश, धरम घोष मुनिकी कथा ।१।

गीता छन्द

चम्पापुर में एक दिन श्री धर्म घोष महा मुनी ।
मासोप बासी पारनो कर बन विषै चाले गुनी ॥
तहँ करम जोग सुपंथ भूले तृषा कर पीड़ित भये।
लख हरत तृणा चहुं ओर वे ऋषि नदी गंगा तट गये ।२।
बर वृक्ष नीचे तिष्ठ के चित्त समाधान विषै धरो ।
ऐसे तपो निधि देखके गंगा सुरी जब इम करो ॥
एक सुरन घट भरि बारि निर्मल लायके मुमि पास जी ।
बहु नमनकर बच इम कहे जल पीजिये गुण रास जी ।३।

दोहा ।

तब मुनिवर ऐसे कही, सुनिये सुरी मनोग ।
यह जल हमको या समैं, पीवन नांहीं जोग ।४।

चौपाई ।

जब देवी चाली तत्कार । गई सु पूर्व विदेह मझार ॥
केवल ज्ञानीको सिर नाय । करी बीनती चित हरषाय ॥५॥
हे स्वामिन मेरो जल जेह । मुनिवर पीयो क्यों नहिं तेह ।
इसको कारन भाषो तेह । तब त्रिभवन पति बोले येह । ६ ।
हे मुग्धे सुर करतें कदा । मुनि अहार नहिं ले सर्वदा ॥

इम सुनि गंगा देवी तबै। श्री गुरु निकट आन कर जबै।७।
दशों दिशामें करी सुगंध। जल बरषायो जुत हिम गंध।
समाधान ह्वै कर मुनि चंद। शुकल ध्यान ध्यायो गुणवृन्द ८॥
केवल लक्ष्मी पाय मनोग। मोक्ष गये सबहनके जोग।
सो स्वामी हमको तुम अबै। निरमल सुख सम्पति दो सबै ९
कैसे हैं ते श्रीभगवान। केवल नैन धरें अधिकान।
जे भविजन हैं कमल समान। तिन बिकसावनको वर भान१०

दोहा

कर रेखावत सब लखे, लोक अलोक दयाल।
देव इन्द्र चित भक्तिधर, आन नवावत भाल ॥११॥
मिथ्यातम नासक सुरवि मन बंछित दातार।
चिंतामणि सम जगत में, भविजनको हितकार ॥१२॥
धर्म घोष मुनिकी कथा, कही ग्रंथ अनुसार।
पढ़ो सुनो सब प्रीतकर, नितप्रति मंगलकार ॥ १३ ॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषय धर्मघोषमुनिकीकथा समाप्तम् नं ६३

अथ श्रीयदत्तमुनिकी कथा प्रा० ६४

मंगलाचरण ॥ कवित्त ॥

केवल ज्ञानमई वर सम्पत ताके स्वामी श्रीअरिहन्त। तिन के चरन कमलको नमकर कहूं कथा अब सुनिये सन्त॥ श्रीयदत्त नामा शुभ मुनिवर सुर कृत जय उपसर्ग महन्त। सकल करम हनि ताही छिनमें शिव तियके वे भये सुकंत ॥ १ ॥

चौपाई

ये लावर्धन नगर बसन्त। नृप चित शत्रु अरिनको अन्त।
एलानाम भामिनी तास। पुत्र भयो श्रीदत गुणरास ॥ २ ॥

इस अन्तर कोशलपुर जान । नाम अंसुमत भूपति मान ।
अंसुमती ताकी है सुता । सहित सुभाग रूप गुण युता ॥ ३ ॥
ताहि स्वयम्बरमें श्रीदत्त । परनत भयो सुहर्षित चित्त ।
कीर एक तिय लाई संग । तासों राखत प्रीत अभंग ॥ ४ ॥
श्रीयदत्त नारीजुत होय । गृह मधि जूवा खेलत सोय ।
सो वो शुक चतुराई धार । श्रीयदत्त जीतो तिस बार ॥ ५ ॥
लीक एक काढ़े तिहबार दो काढ़े तियजीत मझार ।
तब श्रीदतकर क्रोध प्रचंड । उस शुकके कीनों दोखंड ॥ ६ ॥
सो बहु कष्ट थकी तज काय । पाई व्यन्तरकी परजाय ।
एकदिना श्रीदत बड़भाग । महल शिखर तिष्टे जुतराग ॥७॥
मेघ पटल को बिलय लखाय । है बिरक्त इम भावन भाय ।
बिना शोक इह है संसार । सबै बस्तु चपलावन हार ॥ ८ ॥
भोग भुयंगमके पण जेम । यह तन जल बुद बुदहै तेम ॥
इन बस्तुनमें मूढ़ अयान । प्रीत करतहै सब निज जान ॥९॥

दोहा ।

ऐसे सब संसार को, बहु बिधि अथिर बिचार ।
जिन दीक्षा लेतो भयो, मुक्त युक्त दातार ॥१०॥
इकल बिहारी होय कर, बिहरत नाना देश ।
भव्यन को सम्बोधते, दे जिन धरम बिशेश ॥११॥

सोरठा ॥

निज नगरी के तीर, शीत काल परचंड में ।
आये नगन शरीर, तिष्ठि कायोत्सर्ग धर ॥१२॥

काव्य

सोवो शुक को जीव भयो व्यंतर दुखदाई ।
मुनिवर ध्यानालीन देख तब कुमति उपाई ॥

पूरव बैर चितार पवन परचंड चलाई।
शीतल जलकी वृष्टि करी ऋषि पै अधिकाई ॥१३॥
तब वे श्री मुनिचंद चित्त में समता आनी।
शत्रु मित्र सम जान क्षमा हिरदे में ठानी ॥
असुर कियो उपसर्ग सह्यो धरके समाधि बर।
निश्चल मेरु समान, अवनिपर खड़े ध्यान धर ।१४।

दोहा।

शुकल तनें परभावतें, केवल ज्ञान उपाय।
सकल करम को, नाशके, अविनाशी पद पाय ॥१५॥

चौपाई

सो जित शत्रु पुत्र श्री मान। सहकर के उपसर्ग महान॥
केवल ज्ञान उपाय तुरन्त। मोक्ष गये वे श्री भगवन्त ॥१६॥
सो श्रीदत्त जिनेश्वर नित्त। मुझको दीजे भक्ति पवित्त॥
एही बर मांगत हूं सार। औरन बांछित कवि चित धार ।१७।

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय श्रीयदत्त मुनि की कथा समाप्तम् नम्बर ६४॥

अथवृषभसेनमुनिकीकथा। नं० ६५

मंगलाचरण॥ गीता छन्द॥

उत्कृष्ट आनन्दकर सुमंडित अतुल महिमा धरत है।
त्रिय जगत कर पूजित सदा सुर असुर नित थुति करत है॥
सो देव नित अरिहन्त जी तिन को नवन करि के अबै।
शुभ वृषभ सैन चरित्र बरनूं सुनो पावन जन सबै॥ १॥

चौपाई

पुरी उजैनी अद्भुत बसे। राय प्रद्योत तास में लसे॥
गुण उज्जल इक दिन बड़भाग। गज पकड़नको धर अनुराग।२।

मदोमत्त पठ बंध गयंद । ता ऊपर चढ़ चलो नरिन्द ॥
कर्म भायते वह सुंडाल । नृपको लेय भगो तत्काल ॥ ३ ॥
बहु दुःखित मन भयो नरेश । जानी दूर रहो मम देश ॥
इक तरुकी तब गह कर डार । लूंब रहो भूपति तिह बार ।४।
है स्वछंद विचरो गजराज । वृक्ष थकी उतरो महाराज ॥
सुंदर ग्राम नाम तिस पेट । तहां बसत जिन पाल सु सेठ ॥५॥
ताको कूप बनो अभिराम । ताढिग नृप कीनो बिसराम ॥
सेठ सुता जिनदत्ता नाम । जल भरबे आई गुणदाम ॥ ६ ॥
नर नायक ने ताके पास । मांगो पानी बचन प्रकास ॥
जिनदत्ता इनको अवलोय । जानो महा पुरुष इह कोय ।७।
आदरते जल पाय तुरंत । फिर घर आई चित हरषंत ॥
अपने तात पास तिह घरी । यह वृतान्त सब ही उच्चरी ।८।

दोहा

सुनते ही सो बनिक पति, नृप ढिग गयो तुरन्त ।
बहु आदर करके तबै, गृह लायो हरषन्त ॥ ९ ॥

सोरठा

सुख से कर स्नान, भोजन करवावत भयो ।
सेठ भक्ति बहु ठान, तब नरेश तिष्ठो तहां ॥ १० ॥

काव्य

किंचित दान जो देत कोई अवसर के मांही ।
कोड़ो सुख दातार होत है संशय नांही ॥
जैसे वर्षत मेघ मांहि वर बीज जु बोवत ।
सहस गुणो फल तास तनो निश्चयकर होवत ॥ ११ ॥

चौपाई

नृपके चर ढूंढत आय । ह्यां लख इनको बहु हरषाय ॥

नाना बिधि करके उत्साह। जिनदत्ता नृप तबही ब्याह ॥१२॥
पटरानी पद दियो तुरंत। ताजुत नाना भोग करन्त ॥
सुखसों तिष्ठत दंपत येह। बहु बिधि लीला ठानत तेह ।१३।
कितने एक दिन बीते ताम। गरभ धरो जिनदत्ता भाम ॥
देखो पश्चिम रैन मंझार। एक वृषभ सुंदर आकार ॥ १४ ॥
बहुरि पुत्रको जन्म महान। होत भयो बर सर्म निधान ॥
तब अवनीपति उत्सव करो। वृषभ सेन तिस नाम जु धरो।१५।
अरु याही के जन्म मझार। जिनवरको अभिषेक उदार ॥
अर्चन आदिक बहु बिध करी। दान बहुत दीनो तिह घरी ।१६।
ऐसे शुभ किरिया नित धार। अष्ट वर्ष को भयो कुमार ॥
जब नरेश सुख पाय अपार। पुत्र प्रती इम वचन उचार ॥१७॥

दोहा

हे उत्तम इस राज को, ग्रहन करो बड़भाग।
मैं जिन भाषित तप करूं, निज आतम चित पाग ।१८।

छन्द चाल

तब सुत बोलो इम बानी। हे तात सुनो तुम ज्ञानी।
इस राज विषै सुखको है। परलोक सिद्ध नहिं हाँहै १९॥
जब भूप कहे सुन प्यारे। शिव मिले न बिन तपधारे।
तिसको साधन सुन भाई। श्रीजिन तप दियो बताई २०
सुतकहे तात सुनलीजे। जो ऐसो निश्चय कीजे।
तो राज महा दुखदाई। हम किहिविधि ग्रहनकराई २१
मैं नेम कियो इहि बारी। चालूंगो तुमही लारी।
ऐसे बिध गिरा उचारी। भूपति सुनके तिस बारी ॥२२॥

दोहा

निज भ्राता बुलवायके, दीनो ताको राज।
पुत्र युक्त मुनिवर भये, सब समाज को त्याग २३ ॥

चौपाई

जब श्रीवृषभ सेनमुनिचंद । जिन भाषित तपकर गुणवृन्द ।
जग उत्तम निज कल्पी साध । होत भये ये बुद्धि अगाध २४
कोसांबी नगरी ढिग आय । परबतपै इक शिला लखाय ।
जेठ मास ग्रीषम परचंड । आतापन धर जोग अखंड ॥२५॥
सघुवै साध महा गम्भीर । तिष्ठे ध्यान धार बरबीर ।
इनको जोग देख भवि जीव । जिन मतमें रतभये अतीव २६

जोगमालती छन्द

एक दिना ए श्रीमुनि नायक जैन तत्वके जानन हार ।
चारित युक्त चले अहार को ईर्यापथ शोधित अविकार ॥
इनको नगरी में जातो लख बोध दास पापी अधिकार ।
ईर्षा करके तास शिला को लालकरी वन्ही पर जार ॥२७॥
साधोंका परभाव जो सुन्दर दुरजन जनको नाहि सुहाय ।
जैसे भानु प्रकाश विषै सुख उल्लूको उलटो दुखदाय ॥
कर अहार तप मंडित स्वामी आये सिलको तप्त लखाय ।
परतिज्ञा पालनके कारण धर समाधि तापर तिष्ठाय ॥ २८ ॥

दोहा

जैसे अगन प्रचंड अति, लागे तृणके बीच ।
त्यों निज काया जरत लखि, क्षमा सलिलतें सींच २९॥

कवित्त

मन वच काय शुद्ध अति कीने शुक्ल ध्यान ध्यायो मुनि चंद । ताही छिनमें केवल उपजो तीनलोक पूजत सुखवृन्द ॥ फेर सुबुद्धी शिवपुर पहुँचे होत भये तहँ आनंदकंद । मेरु शिखरते निश्चल जानो सत्पुरुषनको चरित अमन्द ॥ ३० ॥

ऐसो चित्त महा थिर जिनको तिस आगे सब

गिर तुछ जान। और गंभीरपने के सागर दीखत है जलबिंदु समान। ऐसे श्रीशोभायमान ते वृषभसैन केवल भगवान। ते अपने गुणरूपी लक्ष्मी हमको दीजे दया निधान॥ ३१॥

सोरठा

वृषभसेन मुनिचंद, बालपने में शिव वरी।
दीजे बुद्धि अमंद, हाथ जोड़ कवि बीनवे॥ ३२॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषय वृषभसेनमुनिकीकथा समाप्तम् ६५

अथ कार्तिकेय मुनिकीकथा प्रा० ६६

मंगलाचरण॥ अडिल्ल॥

केवल ज्ञान विशाल नेत्र धारन्त जी, है पवित्र सुखकार श्री अरिहन्तजी, ताहि नमनकर कार्तिकेय मुनिकी कथा, भाषत हूं मैं अबै कही आगम यथा॥ १॥

पद्धडी

कार्तिक नामा इक पुर महान। अनभित नामा भूपाल जान।
रानी तिस बीरमती मनोग। इक सुताभई तिन करमजोग २॥
कृतका नामा बहु रूपवन्त। तिस आनन लखकररत लजंत।
इक दिन नंदीश्वर पर्व जोय। कन्या प्रोषध संयुक्त होय ३॥
श्रीजिनको पूजन कर पवित्त। बर लई आशिका हर्ष चित्त।
सो दई तातके कर मंझार। नृप पापी चित्त बिकार धार ४॥
याकी जोबनजुत देख काय। इन लोभी बिप्र लियेबुलाय।
यह दुष्टातम कामी मलीन। तिनसेती इह विध प्रश्न कीन ५

दोहा।

हो बिप्रो मुझ गेहमें, उपजो रंभ मनोग।
सो तुम भाषो या समै किसके भोगन जोग॥६॥

तब मूरख दुज इम कही, सुनिये अवनी पाल।
तिसी रतन की प्रीतियुत, तुम भोगो तत्काल ॥७॥

चौपाई।

तापीछे इह पापी राय। एक मुनिवरसे पूछो जाय।
उन भाषी सुनिये राजान। कन्या बिन सब अपनो जान ८ ॥
तिनके बच सुन कामी येह। मानो बज्र हती तिस देह।
पापी जनको हितके बैन। बुरे लगें बहु विधि दुखदैन ॥९॥
तब धर मुनि पै रिस विकराल। अपने देशते दियो निकाल।
जबरी ते परनी निज सुता। कृतका नाम रूप गुणजुता ॥१०॥
जे पापी कामी अधिकाय। तिनके धरम लाज नहिं पाय ॥
अथवा सुध बुध नाही जोय। जाको दुरगति होनी होय ॥११॥
इस अन्तर केते दिन गये। कार्तिकेय सुत इनके भये ॥
बीरमती पुत्री शुभ अंग। होत भई बररूप अभंग ॥ १२ ॥
अब रोहेड़ नगर इक जान। ताको भूप क्रौंच बलवान ॥
ताने परनी अनभित सुता। बीरमती नामा गुण युता ॥१३॥
तासंग नाना भोग करन्त। सुखसे निज गृहमें तिष्ठन्त।
अब यह कार्तिकेय बुधधार। भयो चतुर्दश बर्ष मंझार ॥१४॥

दोहा।

एक दिना क्रीडा करत, देखत भयो जु एह।
नमि अमृत को आदिदे, सरब राज सुत जेह ॥१५॥
तिनके मातुल भेजियो, पट भूषण बहु भन्त।
तिने देख निज मातते, कार्तिकेय पूछन्त ॥१६॥

चौपाई।

हे माता मम माम महन्त। हमें कभी नहिं कुछ भेजन्त ॥
सो क्या कारन है कह माय। तिन सुन रुदन कियो अधिकाय १७

अहो पुत्र क्या भाषों तोह। होनहार सोई विधि होय॥
यह पापी तुम तात अयान। सोई जनक सु मेरो जान॥१८॥
कार्तिकेय सुनके यह बात। कहत भयो सुन लीजे मात॥
क्या काहूने मने न कीन। जो इन कारज कियो मलीन॥१९॥
तब वह बोली सुन सुतसार। श्री मुनि बर जो बारम्बार॥
तब यह पापातम रिसधार। ऋषिको दीनों देश निकार॥२०॥
फेर पुत्र पूछो निज माय। कैसे हैं वे श्री मुनि राय॥
कहत भई गुण मंडित साध। नगन अंग सब रहित उपाध॥२१॥
तत्व लखनको पंडित जेह। नायक धर्म तने है तेह॥
मोर पत्तका करमें धरें। दया युक्त शुभ मग पग धरें॥ २२॥
हाथ कमंडल गहें महन्त। सो मुनि दूर देश तिष्ठन्त॥
ऐसे सुनि माता की बान। तन धन जोबन अस्थिर जान।२३।
घर तज चलो तबै बड़भाग। पहुंचे गुरु ढिग जुत अनुराग॥
बड़ी भक्तिते नमो तुरन्त। दीक्षा लीनी चित हरषन्त॥२४॥
सप्त तत्व जानन को दक्ष। होत भये ये जग परतक्ष॥
नाना विधि तप करत महन्त। द्वादश भावनको सुमरन्त॥२५॥

दोहा

इस अन्तर इन मात जो, नाम कृत्तिका जान।
मरकर व्यंतरनी भई, देवी रूप निधान॥२६॥

चौपाई।

अब यह कार्तिकेय मुनि चंद। तप निधि विहरत धारि आनंद।
आये पुर रोहेड़ सुपास। गुण उज्जल अघ करे विनास॥२७॥
मावस जेठ समैं मध्यान। चर्याको पुर कियो पयान॥
तास समै इन भगिनी जेह। महल शिखर तिष्ठे थी तेह॥२८॥
बीरमती जानी तिह बार। यह मेरो भ्राता है सार॥

गोद थकी पद मस्तक ढार । आई भक्ति सहित तत्कार ॥२६॥
कहत भई सुन भ्राता सन्त । तेरे अर्थ नमन बहु अन्त ॥
ऐसो कह मुनिके पद दोय । गहकर पड़त भई अब सोय ॥३०॥
एक तो दीरघ भ्राता एह । दूजे अनागार गुण गेह ॥
युग कारन ये भये मनोग । अहो प्रीत उपजानही जोग ॥३१॥
ऐसे क्रौंच लखी निज नार । तबही श्री ऋषिपै रिसधार ॥
पापी इनको ताड़ो अंग । तब मुनि मूर्च्छा लही अभंग ॥३२॥
मिथ्यामत में पापी जीव । मोह राग बश भये अतीव ॥
जैन धर्मते धरे न प्रीत । क्या क्या नहिं ठाने बिपरीत ॥३३॥

सवैया इकतीसा ।

तब इन मात जीव व्यन्तरनी देवी सोय, आई ततक्षण निज सुत को निहार के। पड़े ऋषि चन्द देख धरके मयूर रूप, लिये जबही उठाय भक्तिं उर धार के। शीतल जिनेश धाम लाय मुनि राज जी को, दिये तिष्ठाय शुद्ध अवनि बिचार के। तहां यह साधु ताह छिन धरके समाधि, स्वर्ग लोक गए सब पातिक निवार के ॥ ३४ ॥

दोहा

तब बहु सुर तहां आयके, किये सु जै जैकार ।
कार्तिकेय तीरथ प्रकट, भयो सु अवनि मंझार ॥३५॥
बहन भ्रात के मिलनते, भयो प्रगट वो पर्व ।
जेठ अमावस के दिना, जग जन जानत सर्व ॥३६॥

चौपाई ।

श्री शोभायमान जिन चंद । तिनकर कथित शास्त्र शुभ वृन्द ।
सब संशयको नाशनहार । सुरग मोक्ष सुखको दातार ॥३७॥
ताको बुधजन सेवो सदा । एक छिनक भूलो नहिं कदा ॥

अब वे श्रीयमान भगवान। हमे सास्वते सुख दो दान।३८।
जिनको बानी उदय स्वरूप। तत्व दिखावन दीप अनूप॥
देवनकर पूजित सो मात। जाको नित ध्यावें मुनि नाथ।३६।

दोहा

सोई माता सरस्वती, जिन मुख भई प्रकाश।
सो मेरे हिरदे बसो, कवि की यह अरदास॥४०॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय कार्तिकेय मुनि की कथा समाप्तम्

अभय घोष मुनि की कथा प्रा० ६७

मङ्गलाचरण। काव्य

अमर ईश कर पूजनीक है गणपति नायक।
ऐसे श्री अरिहन्त जगत जन को सुख दायक॥
तिनको नमकर कहूं कथा अद्भुत रस मंडित।
अभय घोष मनि तनी सुनो सबही भवि पंडित॥१॥

चाल मेघ कुमार की

काकंदी नगरी भली जी, अभय घोष भूपार। अभैमती ताके तिया जी, नृप के प्रान अधार॥ रे भाई दुखदाई अज्ञान।

एक दिना पृथ्वी पती जी, गयो लखन उद्यान। तहँ धींवर एक कूर्म के जी, चतुपद बन्धन ठान॥ रे भाई दुखदाई अज्ञान

लकड़ी में लटकाय के जी, कंधे धर कर जात। ताको नरपति देख के जी, पाप उदय हरषात॥ रे भाई दुखदाई अज्ञान॥४॥

तब ही चक्र फिरायके जी, छेदे चारों चर्न। पापी जन परमादते जी, हते जीव बस कर्न॥ रे भाई दुखदाई अज्ञान॥

कच्छपमर सह कष्ट को जी, इस ही नृप के आय। चंड

बेग सुत ऊपजो जी, अद्भुत सुन्दर काय ॥ रे भाई दुखदाई अज्ञान ॥ ६ ॥

एक दिना पृथ्वीपती जी, अभम घोष बड़भाग । एह ग्रसत शशि देख के जी, चित्त धरो वैराग ॥ रे भाई तन धन लखो असार ॥ ७ ॥

मैं पापी दुष्टातमा जी, जैन तत्त्व प्रतिकूल । मोहरूप तम कर ग्रसोजी, ताकर मतराहि भूल ॥ रे भाई इह संसार असार।

नैन अंधवत मैं भयो जी, हित अनहित नाहिं चीन्ह। किह विध भव अम्बुध तिर जी, इम विचार बहु कीन ॥ नृपति ने तन धन ममत निवार ॥ ६ ॥

दोहा

फिर मन में निश्चय कियो, जिन भाषत तप सार ॥
जग में यह उत्कृष्ठ है, करो सो अङ्गीकार ॥ १० ॥

चौपाई

काल अनादि थकी मम संग। अष्ट कर्म दुठ लगे अभंग ॥
तिन्हें जीतकर शिव तिय हाथ। ताको गहि सुख लहो सनाथ ।११।
ऐसे चतुरातम नरपाल । कर बिचार मन में तत्काल ॥
चंड बेग सुत लियो बुलाय। ताको राज दियो हरषाय ॥१२॥
आप गये श्रीगुरु के पास । नमस्कार कर थुति परकाश ॥
कैसो है गुरु भवदधि सेत । जन्म जरामृत नासन हेत ॥१३॥
तिन ढिग अत्तन दंडन काज। दीक्षा तुरत लही महाराज ॥
नाना बिधि तप करते सार । जिन कल्पी ह्वै करो बिहार।१४।
भ्रमते भ्रमते दया निधान । आये काकंदी अस्थान ॥
तिष्ठे वीरासन धर धीर । सब जग पीहर गुण गम्भीर ॥१५॥
अब इनको सुत नृप तहं आय। चंड बेग पापी अधिकाय ॥
पूरब बैर थकी है वक्र । करमें तीक्षण लेकर चक्र ॥ १६ ॥

मुनि के कर पद कीने खंड। बहुत परीषह करी प्रचंड॥
अहो मूर्ख बुद्धी अज्ञान। धर्म हीन क्या पाप न ठान।१७।

काव्य

ताही छिन मुनि अभै घोष धर ध्यान शुकल वर।
केवल ज्ञान उपाय नास कीने जु कर्म अर॥
अविनाशी शिव धाम तहां छिन मांहि सिधारे।
सुर असुरन कर पूजनीक भये शिव तिय प्यारे॥१८॥
देखो जियकी शक्ति महा आश्चर्य धरत अति।
कहां भयानक कष्ट कहां शुभ ध्यान विषै रति॥
कहां मोक्ष स्थान परम पावन सुखदाई।
ताको पाय तुरन्त तहां वसु ऋद्धि लहाई॥१९॥

कवित्त

सो श्री अभय घोष मुनि नायक मोहादिक हतकर तत्काल।
सकल परीषह जीत शीघ्रही अविनाशी सुख लहो रसाल॥
ऐसे गुणयुत सत्पुरुषनकर सेव्यमान हैं तीनों काल।
तिनको कवि शिर नाय नमत हैं सोई सुखदो मोहि दयाल।२०।

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषय अभय घोष मुनि की
कथा समाप्तम् नं० ६७॥

अथ विद्युति चोरकी कथा प्रा० नं० ६८

मंगलाचरण॥ सवैया तेईसा॥

भव्यनको सुखदायक हैं त्रिय लोक विषय उत्कृष्ट घनेरे।
सो अरिहन्त जिनेश्वर के पद पर्म नमूं जुग सार उचेरे
विद्युत चोर तनी सुकथा वरनी जिमि पूरब सूर बडेरे।
ता अनुसार कहूं सुखकार सुनो अब मित्र कटें अघतेरे॥१॥

पद्धड़ी

एक मिथुला नगरी अति बिशाल। नृप नाम वामरथ बुधरिसाल
जम दंड नाम तलरक्ष जान। बिद्युत तस्कर ताही सुथान ॥२॥
सो सर्व कलामें निपुन जेह। चोरी में अतिही दक्ष तेह।
दिनमें तो तिष्ठे कष्ट युक्त। केवल श्वानक माया संयुक्त ॥ ३ ॥
अरु रात्रि विषै शुभ रूप धार। चोरी कर भोगत भोग सार।
इक दिन यह विद्युत चोर जाय। नृपहार निशा मांही चुराय।४।
परभात समैं नृप क्रोध लाय। यमदंड प्रती इम वच सुनाय।
कोई तस्कर निशिके मझार। मम ढिग आयो वर रूप धार।५।
मैं मोह्यो तिसकी कान्ति देख। वो हार लेय भागो विशेख॥
सो चोर सहित मम हार जेह। दिन सप्त मांहि लावो सु तेह।६।

दोहा।

नातरु तुम निग्रह करूं, इम भाषी भूपाल।
इम सुनकर तव नमन कर, चलत भयो कुतवाल।७।
जगत थकी ढूंढ़त भयो, सारे नगर मंझार।
कहीं न पायो चोर वो, षट दिन गये निहार ॥८॥

चौपाई

सप्तम दिन सूने स्थान। पोढ़ो तस्कर देखो आन ॥
पकड़ लियो तबही कुतवाल। राय निकट पहुंचो दर हाल।९।
कहत भयो सुनिये महाराज। पापी चोर लीजिये आज।
तब बिद्युत भाषी नम माथ। मैं तो चोर नहीं हूं नाथ॥१०॥
फिर कुतवाल कही सिरनाय। यही चोर निश्चय दुखदाय।
सभा लोग बोले तेह बार। हे नरपति सुनिये चित धार ॥११॥
इस कुतवार मिलो नहिं चोर। रंक पकड़ लायो है और।
नाहक इसको मारत आज। अपनी मृत्यु बचावन काज।१२।

ऐसी सुन यमदंड सु तेह । चोर सहित आयो निज गेह ।
माघमासमें शीतल छार । ताको तन छिरको अधिकार ॥१३॥
तापन ताड़न बंधन आद । बत्तिस दंड दिये जु अगाध ।
तब विद्युतचर बोले बात । मैं तस्कर नाहीं हूं भ्रात ॥ १४ ॥

दोहा ।

उठत भयो तल रक्त तब, संग लीनो वो चोर ।
राजा के दरबार में, गयो होतही भोर ॥१५॥
करी बीनती जायकर, सुन लीजे प्रभु आज ।
सब चोरन को मुकुट मणि, येही है महाराज ।१६।

छन्द चाल

मैं बड़ो चोर हूं नांही । तब तस्कर येम कहाही ।
चोरन को साहस भारी । किस सेती जाय उचारी ॥ १७ ॥
जब अभै दान नृप दीना । कहूं सांच बैन परबीना ।
तुम तस्कर हो अक नाहीं । सो मोको देहु बताई ॥१८॥
तब विद्युत येम बखानो । निश्चय मोहि चोर सु जानो ।
सांचो तल रक्त तु मारो । यामें कछु फेर न सारो ॥ १९ ॥

दोहा ।

जबै बामरथ नरपती, ह्वै कर अचरज वन्त ।
तास प्रती कहते भये, हे तस्कर गुणवन्त ॥२०॥

सोरठा ॥

तैंने बत्तिस दंड, सहे विविध परकार के ।
भयो न तन तुझ खंड, कारन कौन बताइये ॥२१॥

चौपाई

ताही छिन विद्युत चर सार । भूपति से इम वचन उचार ।
मैंने श्रीमुनिवर के तीर । नरक तने दुख सहे गहीर ॥ २२ ॥

ताके भाग कोड़वे जान । यह दुख नाहीं हैं राजान ।
ऐसे हम निज चित में धार । सहे दुःख बत्तीस प्रकार ॥२३॥
तब हर्षित बच भये नरिन्द्र । तुम वर मांगो हे गुणवृन्द ।
विद्युत जब बच कहे अखंड । मेरो मित्र जो यह जमदंड २४॥
ताको निरभय कीजे आज । येही वर मांगू महाराज ।
पूछे नृप है अचरज वन्त । तेरो मित्र इह है किह भन्त ॥२५॥
सो बड़ पारक है सुन धीर । दक्षिण दिशिमें देश अभीर ।
बेना नाम नदी तट जान । बेना तट पुर एक महान ॥ २६ ॥
है जित शत्रु तासको स्वाम । जयावती नामा तिस भाम ।
तिनके सुत विद्युतचर नाम । उपजत भयो सुमें अभिराम २७
तिसही नगरी में जमपास । कोतवार है बुद्धि निवास ।
जमना नाम तिया तिस गेह । सुत जमदंड भयो सो येह २८
आगे और सुनो गुण रास । हम ए पढ़े एक गुरु पास ।
मैंने सीखो चोर पुरान । इन कुतवाली विद्या जान ॥ २९ ॥

दोहा ।

तहं इस सेंती मैं कही, गर्भवन्त इम बात ।
जहँ कुतवारी तू करे, मैं चोरूं तहँ भ्रात ॥ ३० ॥
ऐसे सुन जमदंडने, कही गिरा तब येम ।
ऐसेही तुम कीजियो, यामें चहिये केम ॥ ३१ ॥

काव्य

तापीछे मुझ तात राज मोहि देकर भारी ।
करके निरमल चित्त जैन दीक्षा उन धारी ॥
तल रक्षक जब पास आपने सुतको तबही ।
निज पद देकर बुद्धिवान भयो मुनिवर जबहीं॥३२॥
फेर यही जमदंड छोड तहँकी कुतवारी ।

मेरे भयते करी चाकरी आन तुम्हारी ॥
सो परतिज्ञा यादकरी मैंने सुन राजा।
आयो तुमरे देश छोड़कर सकल समाजा ॥ ३३ ॥

दोहा

जिह विध हार चुराइयो, सो सब कही विशेष।
संग लेय जमदंडको, गये सुअपने देश ॥ ३४ ॥

सवैया इकतीसा

तहां वैराग परनाम धरके उदार जैन तत्व जाननमें विद्युत सुजान हैं। श्रीजिनके अगार जाय भूप तत्कार कियो अविशेष तोय लाय के महान है। देयनिज सुत राज तजके सबै समाज आतमको काज कियो कानन पयान है॥ लेय बहु राजनके पुत्र निज साथ तब भये मुनिराज तप तपत महानहै३५॥

दोहा

स्वर्ग मोच्छ दातार जो, सो तप कहो जिनेश।
ताही विध करते भये, यह योगेन्द्र विशेष ॥ ३६ ॥

गीता छन्द

अब भव्यनको सम्बोधते, संग पांच शतक मुनिंदजी।
कामादि ते बिरकत सदा नहिं वस्तुमें आनंद जी।
सो भ्रमत वे पहुँचे तहां इक ताम्रलिप्त पुरी जहां।
सब मोह पंक पखाल डारी ध्यान ध्येन धरैं महा ॥३७॥
इनको नगर परवेश करते देख चामुंडा सुरी।
सो आनकर कहतीभई तुम सुनो मुनिवर इहघरी ॥
जबतक हमारी काल पूजाको समापत है नहीं।
तबतक पुरीमें जाहुमति इसभांति तिन बानीकही ॥३८॥

दोहा

सो ए मने करे थकी, तो पण शिष्य समुदाय।
इनको बहु प्रेरत भये, तब ए गमन कराय ॥३९॥

नगरीके पश्चिम दिशा, कोट निकट तिष्ठाय ।
रैन समय सब शिष्यजुत, प्रतिमा ध्यान लगाय ४०॥

कछुसा छन्द

तबै चामुंड परचंड अति क्रोधकर आय मुनि निकट निज करी माया । किये कापोतवत हंस मंसादि बहु तिनों कर लिप्त इन करी काया ॥ जबै विद्युत ऋषी परम वैरागजुत सहो उपसर्ग नहिं चित्त डुलाया । शुक्ल परभावते कर्म अरि नाशकैं ज्ञान के बलते रवि तिन जगाया ॥ ४१ ॥

दोहा

शेष कर्मको नाशके, मोक्ष गये मुनिचंद ।
सो हम करपूजें थके, नित सुख देहु अनंद ॥ ४२ ॥

छप्पय

सो विद्युत चर नाम केवली को हम ध्यावे ।
इन्द्र नरेन्द्र खगेन्द्र अही पति सीस नवावें ॥
तिन किरीट उद्योग रतन बहु पंच प्रकारी ।
सो नख मुकट मझार रहे बहु बिध झलकारी ॥
ऐसे प्रभु शिव तिय प्रति करो, भये आवागमन निवारके ।
सो मङ्गल नित प्रति करो, कवि बिनती उरधारके ॥४३॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय विद्युत चोर की कथा समाप्तम्

गुरुदत्त मुनि की कथा प्रा० नं० ६६

मङ्गलाचरण । अडिल्ल

जे पर फुल्लित केवल लक्ष्मी धरत हैं ।
ऐसे पंच गुरों को नुत हम करत हैं ॥
तीन भवन में उत्तम मुनि गुरुदत्त जी ।
तिन को भाषूं चरित सुनो शुभ चित्त जी ॥ १ ॥

चौपाई।

हस्तनागपुर उत्तम थान। बिजैदत्त भूपति बुधवान॥
जैनधर्म में तत्पर सदा। परम बिवेकी तिष्ठत मुदा॥ २॥
ताके आणनते अधिकाय। बिजिया नाम नार सुखदाय॥
तिन दोनों के पुन्य संयोग। उपजे गुरुदत पुत्र मनोग। ३।
धीर वीर गंभीर उदार। लावन मंडित दुत अधिकार॥
कितने दिन बीते इह भंत। बिजैनाम भूपति गुणवंत॥ ४॥
निज सुतको सब देकर राज। श्रीगुरु चर्न नमूं निज काज॥
भयो दिगंबर मोह बिनाश। द्वादश बिध तप करत प्रकाश। ५।
अब इक लाट देश बिख्यात। तहां द्रोणमत गिर अबदात॥
चंद्रपुरी ताढिग शुभ बसे। चंद्रकीर्ति भूपति तहँ लसे॥ ६॥
नाम चंद्र लेखा तिस भाम। भव्यमती तनुजा गुणधाम॥
ताको गुरुदत नाम नरिन्द। ब्याहनको जांची गुण वृन्द।७।

दोहा

चन्द्र कीर्त भूपाल तब, दई न पुत्री येह।
तब गुरुदत बहु क्रोध जुत, चढ़यो सेना लेह॥ ८॥
चन्द्र पुरी को शीघ्र ही, जाघेरी तत्कार।
अब सुन भव्य मती तिया, याको रूप अपार॥ ९॥

चौपाई

गरुदत मांही धर अनुराग। कही तात सेतीं पग लाग॥
अहो पिता मोको इस संग। ब्याह देहु तुम सहित उमंग।१०।
चंद्र कीर्त नृपकर उतसाह। पुत्री याको दीनी ब्याह॥
तापीछे बहु जन मिल आय। गुरुदतसे इम बचन सुनाय।११।
अहो नाथ इस परबत भाल। एक सिंह तिष्ठे बिकराल॥
सो अतिपापी है बलवान। सब जनको भयदेत महान।१२।

ताकर ऊजड़ देश नरिंद । बसत नहीं यामें जन वृन्द ॥
ऐसे सुन ताही छिन जाय । संग लिये जु सजन समुदाय ।१३।
बेढ़ो कंठीरव को तबै । भाग गुफा मधि छिपियो जबै ॥
तब गुरुदत्त नृप काष्ठ मंगाय । गुफाद्वारमें ले अधिकाय ॥१४॥
तामें अगन दई पर जाल । मुवो सिंह लह कष्ट कराल ॥
तिसही चन्द्रपुरी के माहिं । भरत नाम इक बिप्र रहाहिं ॥१५॥
तिया विश्वदेवी तिस गेह । तिनके भयो कपिल सुत येह ॥
क्रूर स्वभाव धरत है सदा । शुभमति ग्रहन करत नहिं कदा ।१६।
अहो जु पूरब भव अभ्यास । सोई इस भव करत प्रकाश ॥
जे मूरख जन हैं जग बीच । वेही क्रिया गहत हैं नीच ।१७।

दोहा

इस अन्तर गुरुदत्त जी, भोगत भोग रसाल ।
स्वर्ण भद्र सुत तास के, उपजो बुद्धि बिशाल ॥ १८ ॥
अपने गुण कर सर्व जन, तृप्त किये अधिकाय ।
रूप सुभाग बली अतुल, उज्जल चित सुखदाय ॥ १९ ॥

पद्धड़ी

इस अंतर श्री गुरुदत्त तेह । जिन चरन कमलके भ्रमर येह ॥
कितने दिन राज कियो महान । फिर मन बैराग विषै सु ठान ।२०।
निज सुतको देकर सर्व राज । जिन दीक्षा लीनी तज समाज ॥
जिन तत्वलखन में बुद्धिवंत । जिन कलपी साधु भये महंत ।२१।
अवनीपर ऋषि करते निहार । क्रमते आये शशिपुर मंझार ॥
तिस कपिल खेतके बीच आन । ठाड़े श्रीमुनिवर धार ध्यान ।२२।
तब बिप्र कपिल पापी अयान । निज नारी प्रति इम बच बखान ॥
हो भामिनि भोजनकर तयार । तु खेत विषै लायो अबार ॥२३॥
ऐसे कहि करके दुष्ट चित्त । निज खेत विषै लख मुनि पवित्त ॥
तिनको भाषी सुन नगन काय । जो भोजन ले ममनार आय २४

चौपाई

ऐसी कहकर मूरख येह। दूजे खेत गयो सो तेह।
अहो मूढ़ जे प्राणी होय। मुनि मारग जानत नहिं सोय ।२६॥
ता पीछे वह दुजकी नार। भोजन लाई खेत मझार।
मुनिसे पूछा कित मम स्वाम। तब तिन मौन गहो अभिराम २७
जब तिन निज घर कियो पयान। दुःखितचित तिष्ठी अधिकान।
अब दुज क्षुधा लगी अधिकाय। क्रोध युक्त अपने घर आय २८।
नारी से भाषे कट बैन। रे रंडे तू है दुख दैन।
नगन पूछकर मेरे पास। क्यों नहिं भोजन लाई तास ॥ २६॥
सो डर कर बोली सुन कंथ। मैंने तो पूछी बहु भन्त।
सो निस्प्रेही धारे मौन। तब मैं गृहको कीनो गौन ॥ ३० ॥

दोहा

इह विध पापी कपिल जब, कीनों कोप प्रचंड।
मुनिबरके ढिग आयके, लायो काठ सुखंड ॥ ३१ ॥

सोरठा

चहूंओर कर कर बाड़, अगन लगाई तास में।
मुनि तन होय मिराड़, शुकल ध्यान ध्यायो तवैं ।३२॥
पायो केवल ज्ञान, सुर नर आये तिह घरी।
पुष्प बृष्टि बर खान, नभ सेती होती भई ॥ ३३ ॥

काव्य

तब यह ब्राह्मण चित्त विषै अति बिसमय पायो।
श्री गुरुदत भगवान तने पद निकट सुआयो ॥
सुर असुरन कर पूज सुनी बानी सुखदाई।
निंदा अपनी बार, बार कीनी अधिकाई ॥ ३४ ॥
महा भक्ति कर सहित हुओ यह मुनिबर तबही।

माया मिथ्या अग्र सोच नासी इन सबहा ॥
सत्पुरुषन का संग सदा जगमें हितकारी।
देखो बिप्र अयान ऋषीको तन परजारी ॥ ३५ ॥
कहा जती पद धर्म अहो यह अचरज भारी।
याते संगति साध तनी कीजे सुखकारी ॥
कुल पवित्र यह करे बहुरि आनन्द उपजावे।
कीरतिहै सुरराय मान फिर शुभगति पावे ॥३६॥

सवैया इकतीसा।

सोई गुरुदत्तभगवन्त जयवन्त नित इन्द्र चन्द्र आय नित बन्दे तिन पाय है। तीन जग माहिं सार सुखवेही दैनहार, शंसय तम नाशनको भानु सुखदाय है॥ निश्चल सुमेर सम मगन सुभाव माहिं, आतिमक रस चाख भये शिवराय है॥ तेई प्रभु नित प्रती दीजे सुखसार मोह दोऊकर जोड़ कवि शीशको नवायहै३७

दोहा

प्रभा चन्द्रगुरु दीजिये, मोको सुःख दयाल।
बखतावर अरु रतन की, कीजे नित प्रति पाल ॥३८॥

इतिश्री आराधनासार कथा कोष विषै गुरुदत्तमुनिकी कथासमाप्तम् नं० ६९

अथ चिलाती पुत्रकी कथा प्रा० ७०

मङ्गलाचरण ॥ कवित्त ॥

चमत्कार कर युक्त मनोहर केवल ज्ञाननेत्र धारन्त।
नंत चतुष्ठय मंडित सोहै छियालीस गुणजुत अरिहन्त॥
तिनके पद पंकज को नमकर अवै चिलाती सुत बिरतन्त।
कहूं सुनो अब भविजन सारे ताते पातक सकल नसन्त ॥१॥

चौपाई।

राज ग्रही नगरी सुखदाय। तास विषै उप श्रेणिक राय।

एकै दिन लीला कर युक्त। चढ़ो तुरङ्ग पीठ निज उक्त ॥ २ ॥
अस्व दुष्टसों पवन स्वरूप। गहन बनी में पटको भूप।
तिस अटवी स्वामी जम दंड। तिलकवती कन्या गुण मंड। ३।
तिस तिय को शुभ देख स्वरूप। कामबान पीड़ो इह भूप ॥
तब जम दंड कहे महाराज। जो याके सुतको दो राज ॥ ४ ॥
तो मैं कन्या व्याहूं सही। ऐसे उपश्रेणिक ते कही।
तब नरिंद्र आरे कर लई। तब वाने निज तनुजा दई ॥ ५ ॥
फिर आये निज नगर मंझार। भोगत भोग बिबिध परकार।
धरम अरथ अरु सेवत काम। सुखसे बीतत निशिदिन जाम ॥६॥
अब वो तिलकवती जो नार। ताके गर्भ रहो सुखकार ॥
उपजो पुत्र चिलाती नाम। सुन्दर रूप दूसरो काम ॥ ७ ॥
इस अन्तर अवनी को कन्त। निजतीते पूछो इह भन्त ॥
अहो हमारे सुत गुण भौन। तिनमें राजजोग है कौन ॥ ८ ॥
यह वच सुनकर जोतिस राय। कहत भयो सुनिये चितलाय।
जो इम कारज करे प्रचण्ड। सोई भूप होय बलबण्ड ॥ ९ ॥
बैठ सिंहासन पूरे भरे। इक तो कारन यह नृप हरे ॥
दूजे स्वानन के समुदाय। तामें बैठ खीर जो खाय ॥ १० ॥
तीजे अगनि मांहि ते जेह। छत्र चंवर गज निकसे लेह।
इन कारन ते जान नरिंद। सोई नृपति होय गुण बृंद ॥ ११ ॥

दोहा

ऐसे सुन शुभ दिन विषै, करन परीक्षा काज।
भेरी सिंहासन निकट, धरत भये महाराज। १२।
सबै सुतन को तब दियो, भोजन खीर भराय।
स्वान पान से तिन बिषै, छोड़ दिये भै दाय। १३।

॥ पद्धड़ी छन्द ॥

तब सब कुमार तज खीर पात। भागे स्वाननते अति डरात ॥
श्रोणिक तब बुद्धि करी प्रकाश। बै पातल लीनी आप पास ।१४।
इक पातल फेंक दई तुरन्त। सब स्वान जाय ताको भखन्त।
इतने यह भोजन करत धीर। फिर और फेंक दै तास तीर।१५।
इह बिध निज पेट भरी तुरंत। फिर बिष्ठर तिष्ठो हरषवन्त ॥
भेरी तबही दीनी बजाय। याकी बुधिको सबही सराय॥ १६॥
फिर अगन लगी अतिही कराल। बिष्टर गज चमर लिये निकाल।
कैसे हैं श्रेणिक बुध उदार। तीर्थंकर पदवी होनहार ॥ १७ ॥
उपश्रेणिक श्री निज़ चित्तजान। यह राज जोग श्रेणिक प्रधान।
माया जुत नृप जब दोष दीन। इन स्वान झूंठ खाई मलीन। १८।
जब देश थकी दीनों निकाल। श्रेणिक जी चालो हरष धार॥
है पुन्यवन्त जग मांहि जोय। तिनको बाधक नहिं होत कोय।१९।

दोहा

शुभटेश्वर श्रेणिक तबै, पहुंचे द्राबिड़ देश।
कांची पुर नगरी बिषै, तिष्टत है शुभ भेष ॥ २० ॥

काव्य

इस अन्तर बर धर्म लीन उपश्रेणिक नरपति।
भोगत भोग महान बहुत दिन बीते हरषति।
फेर चिलाती पुत्र तास को निज पद देकर।
भये यतीश्वर आप तबै जिन दीक्षा लेकर ॥ २१ ॥
जबै चिलाती पुत्र राज सिंहासन बैठो।
होत भयो अन्याय बिषै रत सो मत हेठो ॥
अहो हाय इह कष्ट महा दीषे दुखदाई।
करे राज अन्याय अहो रक्षक को थाई ॥ २२ ॥

चौपाई

अब इह केतक दिना मंझार। श्रेणिक आये निज आगार॥
पुत्र चिलाती दियो निकाल। आप भये तहँ के नर पाल। २३।
राजा सोई है बड़ भाग। परजा पाले जुत अनुराग॥
लक्ष्मी कीरति नासे जेह। सो तो राज जोग नहिं तेह। २४।
तब वह भागो तजकर देश। दीरघ अटवी कियो प्रवेश॥
तहां एक गढ़ बनबाय प्रसिद्ध। सेना जुत तिष्ठो ता मद्ध॥ २५॥
हासल आदिक निरभै चित्त। श्रेणित तब लेवैं सो नित्त॥
इसको भरत मित्र इक जान। ताको सखा और पहिचान ॥२६॥
तिसको मित्र और इक थाह। ता मुखतें बच सुन इह भाह।
राजग्रही में इस ही घरी। कन्या एक रूप रस भरी ॥ २७॥
ताको होत बिवाह अवार। सो तुम ले आवो तत्कार॥
इम सुन तबै चिलाती पूत। सुभट पान सों कर संयूत ॥ २८॥
नगरी मैं पहुंचो तिह काल। जहां बिवाहको मंजन काल॥
छलते कन्या हरी तुरंत। नाम सुभद्रा जो गुणवंत ॥ २९॥

दोहा

दुष्ट चित ताही समय, लेके भगो अयान।
श्रेणिक सुन बिरतन्त यह, घेरो तिस को आन। ३०।
कहत भयो ऐसे बचन, रे पापी दुखदाय।
इस कन्या को लेयकर, मो आगे कित जाय। ३१।

सोरठा

तबै चिलाती पुत्त, करन हार दुठ करम को।
ऐसे सुनि जु तुरत्त, कन्या को हनतो भयो॥ ३२॥
लही सुभद्रा मीच, भई व्यन्तरी सो तबै।
जबै चिलाती नीच, करम जोग भागत भयो॥ ३३॥

गीता छन्द

रमणीक जो बैभार पर्वत तास पै भग के गयो ।
तहा पान सौ ऋष राज जुत मुनिदत्तको भेटत भयो ॥
बहु भक्ति धर नुत करी बिनती अहो प्रभु मोको अबै।
दीजे अतुल दीक्षा तपोनिधि करूं आतम हित सबै। ३४ ।
जिन तत्व जानन हार श्री मुनि ज्ञान बारिध इम कही।
सुख देन हारी जैन दीक्षा हे सुबुद्धी ले सही ॥
निज आतमा को काज कीजे एही सार निहारिये ।
दिन आठ की तुझ आयु बाकी रही है उर धारिये ।३५।

दोहा

तबै चिलाती पुत्र यह, गुरु के बचन संभाल ।
जैन तपस्या आदरी, ताही छिन गुण माल ॥ ३६ ॥
प्रायोगमन सन्यास धर, तिष्ठो आतम लीन ।
श्रेणिक इह विधि देख कर, नमन कियो परबीन ॥३७॥
बारम्बार सराहना, इनकी कर अधिकार ।
और मुनिन को बन्दि कर, गयो सु निज आगार ।३८।

कडखा छन्द

इसी अन्तरे वही आन कर व्यन्तरी पूरबले बैर सब याद कीनें । पापनी चील को रूप धर चूंच ते मुनी के नेत्र जुग काढ़ लीनें ॥ बहुरि दिन आठ लों दीर्घ सर घावनी सर्व बपु मांहि तिन घाव दीनें । तबै मुनि राज जी आतमा लीन ह्वै करम परचंड तिन किये हीनें ॥ ३९ ।

सहित समाधतें देह को त्याग के गये सर्वार्थ सिद्धे मझारी। तहां सुख अतुल भोगत महा पुन्य तें फटक सम काय इक हस्त धारी ॥ आय ते तिस सागर तनी जिन लही भये अह

मिन्द्र आतम बिचारी। एक भव लेय कर जाय शिवपुर बिषै फेर आवागमन देह टारी ॥ ४० ॥

सोई श्री मान सुभटेश गुण निधि अतुल त्याग के मोह है अनागारी। प्रभु पद कंज में लीन अलि सम भये आय सुर असुर तब थुत उचारी ॥ महा उपसर्ग को जीत साहस थकी पुन्य में खरच को लेह लारी। लहो सुख जाय सर्बारथ सिद्धे बिषै सो प्रभु देह कल्याण भारी ॥ ४१ ॥

दोहा

बेही चिलाती पुत्र ऋषि, भवदधि तारन हार।
मेरे अरु सब भवनि के, कीजे मङ्गल चार ॥ ४२ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषै श्रेणिक महा मंडलेश्वर चिलाती पुत्र की कथा समाप्तम्। ७०।

धन्य नाम मुनि की कथा प्रा. नं. ७१

मंगलाचरण ॥ दोहा

सार धर्म धर्म उपदेश के, देन हार भगवंत।
तिन्हें नमन करि के कहूं, कथा महा रसवंत ॥ १ ॥
धन्य नाम मुनि की सुनो, सबै सु मन चितलाय।
ताते बहु सुख उपजै, दुरनय शकल पलाय ॥ २ ॥

चाल अहो जगत गुरुकी

जम्बू द्वीप बिख्यात पूर्व देह मझारी।
बीत शोकपुर जान धरे शोभा बहु भारी।
जामें नृपति अशोक लोभ धारे अधिकाई ॥
धान गाहने मांहि वृषभ मुखजाली लाई ॥ ३ ॥
और रसोईदार नारि जे हैं नृप केरी।
तिनके कुचन मंझार बट्ट बांधो इह बेरी ॥

मांगे बालक दूध तास को देन न देवे।
लोभ ग्रसत जो जीव पाप पुनको नहिं वेवे ॥ ४ ॥
फिर नृप आनन सीस रोग परचंड भयो है।
तिस के नाशन हेत भेषज पक्क कियो है ॥
भाजन में धरवाय भूप तिष्ठे तब ताही।
ताही छिन मुनिचंद आये पुण्य वसाही । ५ ।
रोग महा कर युक्त जगत उत्तम बड़भागी।
तपकर छीन शरीर निज आतम अनुरागी।
ऐसे निस्प्रह साधु देख राजा जु बिचारी।
जो मम रोग शरीर सोई इनके निरधारी । ६ ।

दोहा।

इम विचार कर नृप तबै, वो औषधि सुखदाय।
मुनि को दई अहार में, नविधा भक्ति कराय ॥ ७॥

चौपाई

द्वादशवर्ष तनो बह रोग। भेषज भख तन भयो मनोग।
जैसे सम्यक जुत जे बैन। ताकर मिथ्या नाशत ऐन ॥ ८ ॥
तैसे मुनि तन निरमल भयो। रोग उपाधि सबै मिट गयो।
अब नृप पूरन करके आव। मुनि के दान तने परभाव। ९।
भरत क्षेत्र में नगर प्रधान। चामल कण्ठ नाम सुख थान।
ताको निष्टसेन भूपाल । नंदीमति रानी गुणमाल ॥ १० ॥
तिनके गुणमण्डित शुभकाय। धन्य नाम सुत उपजो आय।
अब शिशु माताकी तज अङ्क। वृद्ध होत जिमि दूंज मयंक ।११।
तीन जगत जनको हितकार। ऐसे श्री नेमीश्वर सार।
के समोशर्न में जाय। चरनकमल नमियो बहु भाय। १२ ।
धरम स्वरूप सुनो धर नेह। सुर असुरनकर पूजित जेह ॥

धारो निज हिरदे के मांहि । यह तन धन जोबन थिर नांहि १३।

दोहा ।

फिर यह धन्य कुमार जो, अल्प आयु निज जान ।
प्रभु ढिग जिन दीक्षा लई, आतम में चित ठान ।१४।
पूरब कर्म उदै थकी, अंतराय अधिकार ।
इनके नित होतो भयो, मिलै न शुद्ध अहार ॥१५॥

कवित्त ।

तब इह धीर बीर योगीश्वर उग्र उग्र तपकर अधिकाय ।
भूतलमें बिहरत बिहरत ये क्रमते सोरी पुर ढिग आय ।
तहँ जमनाके पूरब तटपर आतमराम विषै मन लाय ॥
आतापन धर ध्यान मुनीश्वर तिष्ठत भये महा थिरकाय ।१६।
तब आखेट करनके कारन नाम चक्र भू नृपति तुरन्त ।
सरिताके तट ऊपर आकर इनको देखे नगन तपन्त ॥
जब पापी अपशुकुन बिचारो चित मांही धर क्रोध अत्यन्त ।
बान तने बींधी ऋषिकाया संध संध प्रति घात करन्त ॥१७॥
तिस छिन धन्य नाम ऋषि नायक शुद्ध ध्यान ध्यायो सुखरास ।
अष्ट करमकी छार उड़ाई अष्टम छित में कीनों बास ।
अहो धीर पन जो मुनिवर को कहो कौनते होत प्रकाश ।
घोर उपद्रवको तिन जीतो मोक्ष थान लीनो अरि नाश ।१८।

सवैया इकतीसा

अहो धन्य नाम मुनि राज जगतेश धन, भव दधि तारन को प्रोहन समान है । भव भय नाशनहार सबनके हितकार, तिन पद इन्द्र बृन्द पूजे नित आनहै । सार शिव तिय कन्त ज्ञानको दिखायो पंथ, चारितके चूड़ामणि दयाके निधान हैं॥ सोई साध आध व्याध नास हो अबार मेरी, नित प्रति देहु मोहि सासते महान हैं ॥ १९ ॥

दोहा

धन्य नाम मुनिकी कथा, सुनत उदंगल जाय ।
सुख सम्पति बाढ़े सदा, नित प्रति मंगल थाय ॥२०॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै धन्य मुनिकी कथा समाप्तम् न० ७१

अथ पांचशतकमुनिकी कथा प्रा० ७२

मंगला चरण ॥ सोरठा ॥

निज कल्याणक काज, श्री जिनके पद जुग नमूं ।
पंच शतक मुनि राज, तिनको चरित बखानहूं ॥१॥

चौपाई

दक्षण दिशमें भरत जु देश । कुम्भ कार कट पत्तन वेश ।
तामें दंडक नाम नरिन्द्र । नार सु वृत्ता रूप अमंद ॥ २ ॥
तिनके बालक नाम प्रधान । पापी धर्म परायन जान ।
इस अन्तर इक दिनके मांहि । पांच शतक मुनि जुत सुखदाहि ।३।
अभिनन्दन आचारज जोग । आये करत विहार मनोग ।
तिन ऋषि मांही खड्कहि साथ । बालक मंत्रीते कर बाद ।४।
स्याद् बाद नयकर जे लीन । तब तिस आनन भयो मलीन ।
जब मंत्री रिस धर अधिकाय । एक भांडको लियो बुलाय ।५।
तिसे मुनीको भेष बनाय । भूप तिया पै दियो पठाय ।
आप गयो राजाके पास । तासेती इम बचन प्रकाश ॥६॥
हो भूपति तुम तियते बात । देखो नगन करत हरषात ।
इम कह दिखला दियो तुरन्त । पापी मंत्री दुष्ट अत्यन्त ॥७॥

दोहा ।

फिर इह विधि कहतो, भयो सुनिये अवनी पाल ।
तुम इनके सेवक हुते, देखी इन की चाल ॥ ८ ॥

पद्धडी

ऐसे लखकर दंडक नरेश। मूरख मन क्रोध कियो विशेष।
तब सब मुनि गण घानी मझार। इह पेलत भयो कुबुद्धि धार।९।
दुष्टातम दुरगति जान हार। मिथ्याकर मोहि तजे अपार।
कोड़ो भवमें जो कष्टदाय। सो पाप करे निःसंक थाय।१०।

छप्पय।

ते सबही मुनि धीर बीर जिन बच के ज्ञायक।
सहके कष्ट प्रचंड वेग हुवे शिव नायक॥
सो वे साधू महान शान्त भवकी अब कीजे।
मोको अहो दयाल शीघ्र अष्टम श्री दीजे॥
कैसे हैं श्री जिन केवली, मेरु शिखरवत थिर रहे।
सब करम मैलको नाश कर, सदा सास्वते सुख गहे ११

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै पांच शतक मुनि की निर्वाण कथा समाप्तम् नं० ७२।

अथचाणिकब्राह्मणकीकथाप्रारम्भः ७३

मंगलाचरण॥ काव्य॥

अमरेशन कर पूजनीक जिन चरन कमल वर।
ऐसे श्री अरिहंत तिनो को नमस्कार कर॥
कहे कथा मन लाय विप्र चाणक की अबही।
सुनिये सुमन सुजान दुरित नाशत है सबही।१।

चौपाई।

पाटल पुत्र नगर इक थाह। ताको नंद नाम नर नाह।
ताके जानो तीन प्रधान। काव सुगंध सकटा शुभ खान।२।
कपिल पुरोहित है अभिराम। नाम देविला तिसके बाम।
प्राणोंते प्यारी अधिकार। बेद निपुण चाणिक सुत सार।३।

एक दिना राजा के पास । मंत्री काव करी अरदास ।
खंड मलेछ तने भूपाल । तुम पर चढ़ आये विकराल ॥ ४ ॥
भूपति कहे सुनो परवीन । जो उद्धित बैरी मद लीन ।
तिने द्रव्य दे करो निवार । तुम दीरघ वय धारन हार ॥ ५ ॥
ऐसे सुनकर निज बुध करी । शत्रु निवारे तिसही घरी ।
मंत्री बिन बिन से समाज । औरन हित मित नृपको राज ।६।
इस अन्तर इक दिन भूपाल । भंडारी पूछो तत्काल ।
कितनो द्रव्य तुम्हारे पास । तब तिन ऐसे बचन प्रकाश । ७।
हे स्वामी जो काव प्रधान । ताने द्रव्य तुम्हारे जान ।
शत्रुनको देकर अधिकाय । उलटे फेरे बुद्धि बसाय ॥ ८ ॥

दोहा ।

इम सुनि तब नृप रोस कर, सचिव काव तत्कार ।
सब कुटुम्ब जुत तासको, डारो कारा गार ॥ ९ ॥
किंचित मुख है जासु को, ऐसो अन्धो कूप ।
तामें भोजन पान तुछ, नित प्रति भेजे भूप ॥ १० ॥

सोरठा ।

राजा काके मीत, यही बात पर सिद्ध है ।
अहो बड़ी विपरीत, लखे न काज अकाज को ॥११॥

पद्धड़ी

तुछ भोजन लख कर काव येह । अपने कुटम्बसूं कहत तेह ।
नृप नाश करे परिवार युक्त । सोई जन यह भुंजे सु भुक्त ।१२।
तब सबही जन ऐसे बखान । तुमही इस लायक हो महान ।
इम सुनके काव सु बुद्धिवन्त । तिस कूप विषै भोजन करन्त ।१३।
ऐसी विधि बीते वर्ष तीन । इस सब कुटुम्ब नेमीच लीन ।
इस अन्तर फेर मलेछ राय । फिर कर चढ़ आये मद उपाय १४

तब नृपति बात पहिली संभाल। इस मंत्री को लीनें निकाल।
फिर सचिव सु पद दीनो तुरंत। याने वे फेरे अरि महन्त।१५।

दोहा।

अब इह मंत्री काव जो, चित में धर बहु रोष।
राय वंश नाशन निमित, फिरे रैन अरु द्योस॥ १६॥
किसी सहाई को लखत, अगन जेम प्रजुलात।
इम विचार नित प्रति करत, पै कछु नाहि बसात॥१७॥

चौपाई।

एक दिना अटवी में जाय। तहँ इक चाणिक विप्र लखाय।
ताके पाद डाभकी अनी। चुभते वेदन उपजी घनी॥ १८॥
यह ताकी जड़को बिनसात। देखत मंत्री पूछी बात।
किह कारन तुम खेदित भ्रात। तब चाणिक बोलो इह भांत।१६।
इसने मो पद बींधों आह। तातें याके मूल नसाह।
करके छार बहाऊं जाय। तब मेरे चित साता थाय॥ २०॥
ऐसे सुनकर काव प्रधान। कहत भयो तू सुन बुधिवान।
याको मूल शीश इक सार। तातें छिमा करो रिस टार॥२१॥
चाणक कहे सुनो चित लाय। जो बैरी होवे दुखदाय।
शीश ग्रहन नहिं ताको करे। तो चितमें किम साता धरे।२२॥

दोहा।

ऐसे सुनकर काव तब, मन में कियो विचार।
नंद राय के बंश को, इह नाशक निरधार॥ २३॥
याको अपनी लारले, आयो निज आगार।
विष्टर पै बैठाय कर, भोजन देवे सार॥ २४॥

चौपाई।

एक दिना चाणिक की भाम। यशस्वती बोली अभिराम।

अहो नाथ कपिलाको दान। नृप देवे तोलों बुधवान ॥२५॥
तब यह कहत भयो सुन नार। मैं करहूं अब अंगीकार।
सोवो मंत्री काव तुरन्त। भूप प्रती बोलो इह भन्त ॥२६॥
अहो स्वामि तुम लक्ष्मीवान। विप्रन को दो कपिला दान।
इम सुन राय कही उच्चार। विप्र बुलावो इसही बार ॥२७॥
तब प्रोहत को पुत्र सु एह। चाणक बुलवायो जुत नेह।
ऊंचे आसन के समुदाय। मंत्री ने तहँ दियो बठाय ॥२८॥
ऐसे बैठो इसे लखाय। माया जुत बच काव कहाय।
अहो सुभट राजा इम कही। एक सिंहासन छोड़ो सही ॥२६॥
तब तिन विष्टर छोड़ो एक। फिर दुज आये और अनेक।
तिनके मिसकर मंत्री तबै। इक इक करके छीने सबै ॥३०॥
चाणक रहित सिंहासन भयो। तब मंत्री ऐसे बच कहो।
हो भ्राता मैं करहूं केम। नृप ने हुकम दियो थो येम ॥३१॥
हृदै शून्य यह है भूपाल। अल्प बुद्धि दुठ चित्त कराल।
महलों तुमरो आसन जेह। सो भी मांगत है नृप तेह ॥३२॥
तातैं जावो अपने गेह। इम कह काढ़ो धक्का देय।
तब चाणिक धर शेष प्रचंड। नृपति बंश नाशन चित मंड ॥३३॥

दोहा।

ऐसे बचन पुकार के कहत भयो दुज सोय।
नंदराय के राज को, जो चाहत है कोय ॥ ३४ ॥
सो आवो मम साथही, इम कह गमन कराय।
तव इक छत्री संग इस, पीछे चालोधाय ॥ ३५ ॥

काव्य ॥

अब यह चाणक विप्र गमन करके ततकारी।
गयो मलेछन पास मिलो तिनते तिह बारी ॥

उन को बहु समझाय लेय कर अपनी लारी।
आकर पाटल पुत्र विषै नृप डारो मारी। ३६।
आप राज को पाय ठयो सिंहासन जबही।
बीतो काल विशेष प्रजा इन पाली सबही॥
अहो सचिव के कोप थकी याही जग मांही।
कौन कौन नर नाथ नाश को नाहिं लहाही। ३७।
इक दिन चाणिक भूप महीधर मुनिवर भेटे।
तिन मुखते जिन धर्म सुनत सब संशय मेटे॥
भयो दिगम्बर काय सुबुद्धी यह दुज तब ही।
करत तपस्या घोर परीषह जीती सब ही॥ ३८॥
पांच शतक मुनि राय शिष्य कर के इह मंडित।
बिहरत अवनी मांहि धरम बरसात अखंडित॥
जैनतत्त्व परबीन सु दक्षिण दिश को धाये।
तहां देश वनबास क्रौंचपुर के ढिग आये॥ ३९॥

दोहा

नगरी की पश्चिम दिशा, पड़कोटे के पास।
श्री चाणिक प्रायोगमन, तिष्ठे धर सन्यास। ४०।
पांच शतक मुनिराज जी, इन की चारों ओर।
तिष्ठे ध्यान लगाय के, तन की ममता छोर॥ ४१॥

पद्धड़ी

इस अन्तर और सुनो बखान। नृप नंद तनो जो थो प्रधान। तिस नाम सुगंध जु पाप लीन। तिन चाणकसों अति बैर कीन॥ ४२॥

सो क्रौंचपुरी नृप सुमत पास। मंत्री पद लह कीनो निवास॥ यह जिन मत तत्पर सुमति राय। मुनि आगम सुन चित हरष पाय। ४३।

सो गोष्ट बिषै आयो तुरन्त । सब मुनिवर वन्दे हर्षवत। फिर पूजा अष्ट प्रकार कीन । स्तुति कीनी आनंद लीन।४४।

अपने घर जात भयो महेश । अब वो सुगन्ध पापी बिशेष ॥ मिथ्या कर दुःखित भाव दुष्ट । सब मुनि वर पै कर कोप पुष्ट ॥ ४५॥

चहुं ओर उपल की अगन बाल । मुनि धीर बीर तन ममत टाल ॥ तिष्ठे सब सुकल सु ध्यान धार। बस करम अरी कीने जु छार । ४६ ।

सोरठा

तीन जगत हितकार, सिद्ध शिरोमणि सब भये ।
आवागमन निवार, सदा सास्वते सुख लहे ॥ ४७ ॥
वे सबही ऋषिराय, हमे शर्म दो मोक्ष को ।
जिन सम और न थाय, तापे मांगो जायके । ४८ ।

दोहा

कैसे हैं वे केवली, ज्ञान उदधि अविकार ।
सिद्ध थान तिन ने लहो, सह उपसर्ग अपार । ४९ ।
तीन भुवन पूजत सदा, ऐसो शिवपुर तेह ।
सुख अनन्द जहँ पाइये, तहँ तिष्ठे ऋषि येह ॥ ५० ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषै चाणक मुनि की कथा समाप्तम्

वृषभ सेन मुनि की कथा प्रा० ७४

मंगलाचरण अडिल्ल

श्री जिन चन्द्र महान सार त्रिभुवन धनी । और भारती माय ज्ञान वारिध मुनी ॥ तिन को नुत कर श्रेष्ठ कथा भाषूं अबै । वृषभ सेन मुनि तनी सुनो भवि जन सबै । १ ।

चापता

शुभ दच्छिण दिशा मझारी। नगरी कुणाल सुखकारी॥
तहँ वैशरवण भूपाला। सम दृष्टी बुद्धि विशाला॥ २॥
नित प्रति जिनमत सेवन्तो। बहु दया धरम धारन्तो॥
ताके है रिष्ट प्रधाना। पापी मिथ्यात निधाना॥ ३॥
है बात जोग इह भाई। चंदन तरु अहि लिपटाई।
मलियागिरि सम इह राना। मंत्री दुठ सर्प समाना॥ ४॥
इस अन्तर नगरी वारी। श्रीवृषभसेन हितकारी।
आचरज संग जुआये। भविजन के भाग पसाये॥ ५॥

दोहा

वेसरवण नर नाथ अब, मुनि गण आयो जान।
वंदन चालो हर्ष जुत, संग समाज महान॥ ६॥
भक्तिसहित उत्तम दरब, बहु विधि लेकर भूप।
तीन प्रदच्छण देयकर, पूजन करी अनूप॥ ७॥

चौपाई

फिर स्तुत बहु विधि उच्चार। नमकर तिष्ठो भूमि मझार।
तीन जगतमें जो हित दाय। ऐसो धर्म सुनो चितलाय॥८॥
भूपति हर्षित भयो विशेष। जैसे रंक लहैं विधि वेश।
अहो सुःख सम्पति भंडार। ऐसो श्री जिन मग सुखकार ९॥
ताको सुनकर भविजन जेह। क्यों नहिं हर्षित होवे तेह।
अब यह मंत्री मदकर अंध। गयो तहां तिष्ठे मुनिचंद॥१०॥
तिनते वाद करो बहु भाय। तबही हारो लज्जा पाय।
मान भंगते दुष्ट प्रधान। रैन समय छिपकर तहँ आन॥११॥
सब साधुन के चारों ओर। पापो अगिन प्रजारी जोर।
बहु उपसर्ग कियो दुख दाय। सो कबिसे किम बर्नी जाय १२॥

अहो जगत मैं दुर्जन नीच। दोष धरत हैं साधुन बीच।
आपी चपल तिनो पै जोय। फिर आपी मन क्रोधित होय १३॥

काव्य

तब वे श्रीमुनिचंद मेरुवत निश्चल सारे।
तिष्ठे आतम लीन वपू ममता निरवारे॥
शुकल ध्यान परभाव महा उपसर्ग जीत कर।
स्वर्ग मोक्ष में गये, साधु वे सकल कर्म हर॥१४॥
जे दुष्टातम जीव सन्तजनको दुखदाई।
निश्चय दुर्गति लहैं वेद में ऐसे गाई॥
और सुमन जे जीव महा शुभ गति को पावैं।
धरम तने परसाद बहुत विध सर्म लहावैं॥ १५॥

॥ सवैया इकतीसा॥

वेही सब मुनिराज जगमें जहाज सम, महा जो पवित्र ध्यान नगकी शरन हैं। सब तत्वको स्वरूप जाने महा बुद्धिवान, छमा के गहन हार जिमि यह धरनि हैं॥ देव इन्द्र बृन्द आय पूजत पदारविन्द शुभके करनहार कलुष हरन है। सहैं उपसर्ग घोर शुद्ध भाव धरैं जोर, बन्दे हम नुतकर तुमरे चरन है॥१६॥

दोहा

सुर शिव पदवीको लहो, वे गुण आकर साध।
ते सत्पुरुषन के विषै, मंगल देहु अवाध॥ १७॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोषविषै वृषभसेन मुनिकी कथा समाप्तम् नं० ७४

अथ तंदुलमच्छकी कथा प्रा० ७५

मङ्गलाचरण कवित्त॥

केवल ज्ञान विशाल धरे चख ऐसे स्वयंभू अति परमेश।
ताहि नमनकर सत्पुरुषन हित कहों कथा अब सुनो बुधेश॥

मनके दोष थकी अघ उपजत ताको लक्षण जान विशेष।
तंदुल मच्छ उदधि आतम में ताको वर्णन कहिये लेश ॥१॥

चौपाई

असंख्यात वारिध के अन्त । नाम स्वयम्भू रमण महन्त ।
तामें जोजन सहस प्रमान । पांच शतक चौड़ाई जान ॥२॥
ढाई सौ ऊंची तिस काय । ऐसो राघव मच्छ रहाय ।
ताके कर्न विषै है वास । तन्दुल मच्छ नाम है जास ॥३॥
कान तनो मल भक्षण करे । रुद्र भाव नित चितमें धरे ।
अब यह राघव वारिध बीच । बहु जन्तुनको खावे नीच ॥४॥
फिर निद्रा लेवे षट मास । मुख फाड़े ले दीरघ सांस ।
इक इक जोजन तिनकी काय । कछुआ आदिकके समुदाय ॥५॥
याके उदर विषै धस जात । फिर आनन बाहर निकसात ।
ऐसे लख यह तन्दुल मीन । पाप बुद्धि चित महा मलीन ॥६॥
अपने मनमें इम चितवन्त । यह राघव मूरख जु अत्यन्त ।
इसके मुखमें जन्तु अपार । आकर उलटे निकसत बार ॥७॥
तिनको भक्षण करे न मूढ़ । ऐसे भाव धरे बहु गूढ़ ।
जो मैं ऐसी पाऊं देह । एक जीव नहिं छोडूं ऐह ॥८॥

दोहा

अहो महा इह कष्ट है, दुष्ट चित्त जे जीव ।
तिनकी चेष्टा पाप में, है दुखदाय सदीव ॥९॥

सोरठा

सो वह तन्दुल मीन, मन विकल्पते मीच लह ।
पाप उदै दुखलीन, नरक सातवें के विषे ॥१०॥

काव्य

अहो पुन्य अरु पाप तनों मन कारन जानो ।

याते जे सत्पुरुष प्रभू बानी मन आनो ॥
ताबिन शुभ अरु अशुभ कौन विधि जानी जाई ।
याते शास्त्र महान जैन के सुनिये भाई ॥ ११ ॥
अहो भव्य तुम नित्य प्रभू बन दीपन जोहै ।
ताको चितवन करो शान्त ताते अति होहै ॥
याते मिथ्या ध्वान्त नसत है काल अलप में ।
छूटत मोह जंजाल बंध जो किये कलप में ॥१२॥

दोहा

देव इन्द्र भवि जनन कर, पूजनीक है येह ।
दुख नासे संसारको, सुर शिवको मग देह ॥ १३ ॥
इह जिन बानी रस भरी, भजिये तज परमाद ।
कंठ मालवत हिय धरो, जो सुख लहो अबाध ।

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै मानदोषमें तन्दुलमच्छकी कथा समाप्तम् नं० ७५

अथ सुभूमचक्रवर्तीकी कथा प्रा० ७६

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

रवि शशि अहिपति इन्द्र, तिनके पद नितप्रति जजे ।
ऐसे श्रीजिनचन्द्र, तिनको नम भाषूं कथा ॥ १ ॥

अडिल्ल

पुरी ईरषा पुरी तासको नरपती । कीर्त वीर्य तिस नाम धरत है शुभ मती ॥ याके महिलासार रेवती जानिये । अष्टम चक्री पुत्र सुभूप प्रमानिये ॥ २ ॥
बिजैसेन इक नाम रसोईदार है । भोजन करने विषै चतुर अधिकार है ॥ याने इक दिन ऊष्ण खीर भोजन दियो । चक्रवर्तको हाथ दग्ध ताकर भयो ॥ ३ ॥

नरनायक धर रोश सुथार उठायके। डारो इसके शीश मरो दुख पायके॥ भयो जुव्यंतर त्वार उदधिके बीचही। पूरब भव कर याद क्रोधजुत नीचही॥ ४॥

दोहा

तापसि को तब रूप धर, आयो चक्री पास।
मीठे फल अति पक्कही, देत भयो हित नास॥ ५॥
तिन फलको आस्वाद कर, नरपति कही सुनाय।
हो तापसि एक फल कहां, उपजत हैं बतलाय॥६॥

चौपाई

तब यह तापस माया धार। चक्रवर्त से एम उचार।
मेरे संग चलो महाराज। फल आराम दिखाऊं आज॥ ७॥
जब चक्री चाले तिस साथ। फल लोभी निज बुद्ध नसात।
अम्बुधमें पहुँचे तिहबार। तब परघट सुख बचन उचार॥८॥
रे रे दुष्ट महा अज्ञान। मद करतें नासे मुझ प्रान।
अब मम आगे ते दुखदाय। भाग कहां जाहै बतलाय॥९॥
तोको मारूंगो इह ठौर। फिर इम भाषे बचन कठोर।
जो जलमें लिखके नवकार। पगते मेटे इसही बार॥ १०॥
तो तोकों छोडूं दर हाल। नातर तुम जानो निज काल।
तब यह चक्री मूढ़ अत्यन्त। जानी प्रान बचे इह भन्त॥११॥
ताही विधि कीनी अघरास। सप्तम नरक लहो मरवास।
अहो जगतनें मूढ़ अनेक। रसना लंपट रहित विवेक॥ १२॥
तिनको है बहु विधि धिक्कार। चक्रीभी इह मतको धार।
औरनकी गिनती है कौन। पाप थकी पावें दुख भौन॥१३॥

दोहा

शोभायुक्त जिनेश मत, जे हिय धारत नाहिं।
ते चक्री सम दुख लहें, मरके दुर्गति जाहिं॥ १४॥

तेही जगमें धन्य हैं, जिन वच शुद्ध मनोग ।
हिरदे में नितप्रति धरे, वेही पूजन जोग ॥ १५ ॥

चौपाई

जे भविजन या जगमें सार । ते सम्यक हिये धरो उदार ।
कैसो है इह रतन सुढार । तीनलोकमें है हितकार ॥ १६ ॥
भव बारिधके दुख नासन्त। इन्द्रादिक कर पूज महन्त ।
नाना बिधि सुखको है हेत । गुण आकर सुर शिवको देत १७
श्रीजिनेन्द्र आनन ते कही । इस सम्यक की महिमा यही ।
तातें आश्रय याको करो । जाते शिव लक्ष्मीको बरो ॥ १८ ॥

दोहा

बसुगुणजुत ध्यावो सदा, पच्चिस दोष निवार ।
जाते सब कल्याण ह्वै, भय नाशे ततकार ॥ १९ ॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै सु भूमि चक्री की
कथा समाप्तम् नं० ७६ ॥

अथशुभ नामराजाकी कथा नं० ७७

मंगलाचरण ॥ गीता छन्द ॥

त्रय जगत की हितकार परमानन्द दायक जान के ।
ऐसे जिनेन्द्र सुचन्द्र के पद नमूं भक्ति जु ठान के ॥ १ ॥
बैराग दाता जो कथा बरनो अबै चित लाय के ।
शुभ नाम राजा की कथा बरनूं अबै चित लाय के ॥ २ ॥

चाल ।

मिथुला नगरी इक जो है । शुभ नाम नृपति तहँ सो है ।
ताके मनोरमा नारी । सो प्राणों ते अति प्यारी ॥ ३ ॥
गुण आकर सुत तिन धामा। उपजो सुदेव रति नामा ।
इक दिन ता नगरी मांहीं । गुरु ज्ञान युक्त अधिकाही ॥ ४ ॥

तिन नाम देव गुरु पाये । बहु संग सहित तहँ आये ।
तब नरपति सुन कर धायो । बहु भव्यनको संग लायो ॥५॥
जग पूज ऋषी के पाई । बन्दे बहु चित हरषाई ।
फिर धर्म सुनो सुख दाता । जो तीन लोक विख्याता ॥६॥
फिर विनती नृप उच्चारी । तुम ज्ञान नेत्र के धारी ।
तन त्याग कहां जाऊं गो । कैसी गति को पाऊं गो ॥ ७ ॥

दोहा ॥

तबै विचक्षण देव गुरु, आचारज उच्चार ।
हे राजन भिष्टा विषे, कीट होय निर्धार ॥ ८ ॥
जे मुनिवर तप के धनी, ज्ञान नेत्र धारन्त ।
तिन के चित में भय कदा, होत नहीं सुन सन्त ॥६॥

चौपाई ।

हे राजन जिम निश्चे होह । एते कारन मिल है तोहि ।
जब तू नगरी मांही बड़े । भिष्टा आनन मांही पड़े ॥ ६ ॥
छत्र भंग होवे तत्कार । ए लक्षण जानो निरधार ।
सप्तम दिन चपलाते मरे । तब तू कीट तनो बपु धरे ॥१०॥
इम सुनकर चालो भूपाल । अस्व तने खुरते तत्काल ।
भिष्टा मुख में पड़ी सु आय । छत्र भंग थयो पौन बसाय ॥११॥
अहो पाप जिसके उद्योत । कौन कौन कारन नहिं होत ।
सब ही अशुभ होत दिनरात । याते धर्म करो अबदात । १२ ।
अब इह राजा सुत बुलवाय । ऐसे बचन कहे समझाय ॥
मैं लहुं सप्तम् दिनमें मीच । उपजूगो भिष्टा के बीच ॥ १३ ॥
पांच बर्ण को कीट निहार । देखत ही तू दीजो मार ॥
ऐसे कह मरने ते डरो । लोह मजूष बिषै तन धरो ॥ १४ ॥
गंगा सरितामें तब जाय । सलिल बिषै बैठो भय पाय ॥
जब दिन सप्तम पहुंचो आन । पाप उदै ते याके जान ।१५।

दोहा

दीरघ मच्छ सु आयकर, दई मंजूष उछाल।
ताही छिन अम्बर थकी, बिजली पड़ी कराल। १६।
नृप मर भिष्टा घर बिषै, उपजो कीट तुरन्त।
गयो देवरत मारने, वो भागो भय वन्त। १७।

चौपाई

भिष्टा मांही छिपियो जाय। प्यारी लागी वो पर जाय॥
अहो कर्म जैसो रस देह। तैसो प्रानी भोगत येह॥ १८॥
जबै देवरत सुन बिरतन्त। होत भयो जगतै भयवन्त॥
जैन धरम को कर सरधान। फिर बैराग बिषै चित ठान। १९।
भयो मुनीश्वर यह बुधिवंत। पाई शुभ गति करम दहंत॥
देखो जगको चरित अपार। पिता कीट सुत शुभ गतिधार।२०।
सो जिनदेव करो कल्याण। इन्द्रन करवे पूज महान॥
जे जन चरन कमलके दास। तिनको सुर शिव देह अवास।२१।
अरु जिनके वच हैं जग सार। पाप उदधि ते तारन हार।
जे भवि नित प्रति हिरदें धरें। तिनके सकल उदंगल टरें। २२।

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय लुब्ध राजा की कथा समाप्तम्

अथ सुदृष्टि की कथा प्रारम्भः नं० ७८

मङ्गलाचरण ॥ सोरठा

तीन जगत पति आय, तिन की पूजन नित करे।
ऐसे श्री जिनराय, तिन पद पंकज नमन कर॥ १॥
कहूं कथा हितकार, नाम सुदृष्टि तनी अबै।
रतन कला में सार, भयो विचक्षण ये महा॥ २॥

पद्धड़ी

उज्जैनी नगरी अति बसंत। नृप प्रजापाल तामें लसंत॥

जिन चरन कमलको अलि समान। तियसती सुपरभा रूपखान ।३
तहां ही इक बसत सु दृष्ट नाम। सो रतन कलामें निपुन मान।
ताके बिमला नारी अयान। सो दुराचारनी पाप खान ॥ ४ ॥
एक बक्र शिष्य इस गेह बीच। याते आशक्त रहे सो नीच।
इक दिन सु दृष्टि निज नार संग। सो रमत भयो धर मन उमङ्ग ।५।
तब ही वो पापी बक्र आय। तिय कहन थकी इस हती काय।
सो मर सुदृष्टि निज कर्म जोग। निज तियके गर्भ बसो मनोग ६
अपने हि वीर्य में जाय येह। सुत उपजो सुन्दर तास देह।
तुम देखो अब जग को चरित्र। इस करम तनी गतिहै बिचित्र ७

दोहा।

नाना बिधके रूप धर, नृत्य करत यह जीव।
जैसे नट वासांगरकर, ठानत कला अतीव ॥८॥

काव्य।

इस अन्तर अब चैत्र मास आयो सुख कारी।
नृपति गये उद्यान करी क्रीड़ा जिहबारी ॥
टूटो तिय उर हार नाम क्रीड़ा बिलास जिस।
शभ रचना कर रचो क्रान्ति अति फैल रही तिस ९
तब भूपति सब नगर तने सोनी बुलवायो।
बेग बनावो हार बचन इम आप सुनायो ॥
काहू सेनहिं बनो हार वो है बिचित्र अति।
पुन्य बिना किमलहे पुरुष चतुराई की गति ॥१०॥

दोहा।

तब बिमला के पुत्र ने, देखो वोही हार।
जाती सुमरन होय कर, दीनों बेग संवार ॥११॥

सोरठा ।

ज्ञान कला अरुदान, पूजादिक शुभ कर्म जे ।
भानी लहे जो आन, सो पूरब अभ्यास ते ॥१२॥

चौपाई ।

जबनर नायक होय खुस्याल। कहत भयो निज बचन रसाल।
रे बालक इह सुन्दर हार। रचो विचित्र सुदृष्ट सुनार॥ १३ ॥
तैंने केम बनायो येह। तब इह बालक उत्तर देह॥
हो नरनाथ सुनो मम बान। मैं सुदृष्ट चर उपजो आन ॥१४॥
सब वृतान्त कहो समझाय। सुत नरिन्द चित में इमभाय।
इह संसार असार स्वरूप। तामें दुख हैं नाना रूप ॥ १५ ॥
इम बिचार कर अवनी कन्त। भये दिगम्बर मुनि गुण वन्त।
अरु विमला को सुत जिहधरी। मनवच काय शुद्ध तिनकरी १६
स्वर्ग मोक्ष की जो दातार। जिन दीक्षा लीनी तत्कार।
सो बिशुद्ध आतम तपलीन। बिहरत अवनी में परवीन ॥१७॥
भविगण को बोधत दे धर्म। काय कषाय करी कृशपर्म॥
क्रमकर सोरी पुर ढिग बीर। उत्तर दिशा जमना के तीर ॥१८॥
शुक्ल ध्यान कर करम प्रजाल। केवल पद पायो गुण माल।
लोक अलोक प्रकाश तुरन्त। फिर हवे शिव तिय के कन्त १९

दोहा ॥

सो स्वामी हमको अबै, शान्त अर्थ जगदीश।
हूजे ये बिनती करूं, चरन नवाऊं शीश ॥ २० ॥

कवित्त ॥

कैसे हैं केवल सम्पत जुत भव बारिधि के तारन हार ।
करम अरी नाशक बल मंडित मोक्ष भामनी के भरतार॥
देव इन्द्र पूजित चरणाम्बुज लोका लोक लखन दससार।

ऐसे प्रभु कल्याण अर्थ है तुम हम को सुख देहु अपार २१

इति श्री आराधना सार कथा कोष विषै सुदृष्टि का जीव मुनि होय मोक्ष गया ताकी कथा समाप्तम् ॥ नम्बर ७८ ॥

अथ धर्मसिंह नृप की कथा नं० ॥७९॥

मङ्गलाचरण । सवैया इकतीसा ॥

देवन के इन्द्र चन्द्र पूजते पदार बिन्द जजे अह मिन्द गण मन बचलाय के । शास्त्र कै समुद्र सार ज्ञान नेत्रधरन हार, कर्मन निवार वसे सिवपुर जायके । ऐसे भगवान आप्त करैं सब सुख प्राप्त, तिनको नमन कविकरे सिरनाय के ॥ धर्म सिंहजो नरेश ताकी कथा विशेष। कहूं हर शेष सुनो सुधी चित लायके ॥१॥

चौपाई ।

दक्षिणदिशि कोशल गिरिभाल। तहँ कोशल पुर नगर बिशाल ।
वीर सेन तामें राजेन्द्र । वीर मती रानी सुख वृन्द ॥ २ ॥
तिन दोनों के कर्म संयोग । चन्द्र भूत सुत भयो मनोग ।
चन्द्र श्री तनुजा गुण गेह। रूपभाग लावन जुत देह ॥ ३ ॥
कितने एक दिन मैं नृप सुता। जोबन वन्त भई दुत जुता ।
इस अन्तर अब कौशल देश । कोशल पुर तहँ नगर सुवेश ।४।
तामें धर्म सिंह नरराय । तासे याको भयो बिवाह।
अब इह राजन पुन्य प्रमान । पूजा दान करे अधिकान ॥५॥
सुख भोगत नाना परकार। रानी ज़त तिष्ठे आगार ।
एक दिना यह नृप बडभाग। दमधर मुन के चरनन लाग ॥६॥
तिन के मुखते सुन निजधर्म । देवन कर पूजित जो पर्म ।
तब चित में वैराग उपाय । भये दिगम्बर मन वचकाय ॥ ७ ॥

दोहा ॥

अब इन तिय को भ्रात जो, चन्द्रभूत तिस नाम ।
निज भगिनी दुःखित लखी, तब यह कीनो काम ॥८॥
धर्म सिंह मुनि रायको, जबरीतें घर लाय ।
सौंपो अपनी बहन को, जब मन में सुखपाय ॥ ९ ॥

पद्धड़ी ।

तिस पीछे यह मुनि बन मंझार । दिक्षा लै कर तप तपत सार ।
इस अन्तर चन्द्र सु भूत नीच । मुनिवर ने देखो बनी वीच ॥१०॥
गुण आकर ऋषि तब इम बिचार । इह मम तप भंग करहै अबार ।
ऐसे निश्चय कर बुधि निधान । व्रत रक्षा हेत कियो पयान ॥११॥
एक गज को मृतक लखो शरीर । तामें धंस कर तिष्ठो सुधीर ।
सन्यास मरन कर के महान । तन त्याग लहो शुभ नाकथान ॥१२॥

दोहा ।

अहो भव्य जन कष्ट में, व्रत रक्षन है जोग ।
जाते परभव के विषै, सुर शिव लहो मनोग १३

छप्पय ।

शोभा जुत श्री धर्म सिंह मुनि वर भव तारी ।
हम को मङ्गल करो बिपत नाशो दुखकारी ॥
कैसे हैं वे जती धर्म के रसिया नीके ।
करके तप परचंड करम अरि कीने फीके ॥
है प्रसिद्ध महिमा अतुल, जिन की तीनों लोक में ।
गुण रतन धार सन्यास को, जाय बसे सुर थोक में ॥१४॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय धर्म सिंह मुनि की कथा समाप्तम्

अथ वृषभ सैन मुनि की कथा ७०

मंगलाचरण ॥ दोहा

तीन जगत कर पूज जे, भुक्ति मुक्ति दातार।
ऐसे श्री अरि हन्त जी, भवि जन को हितकार ॥ १ ॥
तिन के चरन सरोज को, नम कर कथा बखान ॥
वृषभ सेन मुनि राज की, सुनिये सुमन सुजान ॥ २ ॥

चौपाई

पाटल पुत्र नगर दुतिवन्त। तामें सेठ महा धनवन्त ॥
निर्मल बुद्धी पुन्य बसाय। वृषभ दत्त नामा सुखदाय ॥ ३ ॥
ताके वृषभ श्री वर नार। रूप शील गुण धरे अपार ॥
तिन दोनूं के कर्म संयोग। वृषभसेन सुत भयो मनोग ॥ ४ ॥
श्री जिन चन्द्र चरनके वाँजे। तिन सेवन को अलियह आर्जे।
याको मातुल धन पत नाम। श्रीय कान्ता के शुभ बाम ॥ ५ ॥
तिनके रूप शील गुण जुता। नाम धनश्री है वर सुता ॥
सो बहु विधि कर के उत्साह। वृषभसेन को दीनी ब्याह। ६।
तासंग नाना विधि के भोग। पुन्य थकी पंचेंद्री जोग ॥
भोगत तिष्ट निज आगार। धर्म अर्थ जुत चित्त उदार ॥ ७ ॥

दोहा

एक दिना बुध वन्त यह, पूरब पुन्य पसाय।
दम धर मुनि भेटत भई, नमो चरन हरषाय। ८।
श्री जिनेन्द्र भाषत सुनो, धर्म महा हितकार।
तब ही चित बैराग धर, दीक्षा लीनी सार ॥ ९ ॥

पद्धडी

तब नाम धन श्री बाल जेह। याकी तिय रोवन लगी तेह ॥
जब धन पति ताको तात जाय। याको बन ते गृह बीच लाय ॥ १० ॥

जबरी ते ब्रत खंडन कराय। तब वृषभ सेन बहु दुःख पाय।
जे मोह युक्त प्रानी अयान। ते काज अकाज न चित्त ठान ॥११॥
जैसे मदिरा को पानकार। बहु पाप क्रियामें चित्तधार॥
अब वृषभसेन निज गेह थान। कारागृह वत तिष्ट सुजान।१२।
फिर कितएक दिनमें यह महंत। मुनि होत भयो गुणवन्त संत।
अब माया जुत याको जु माम। फिर इनको ले आयो सुधाम।१३।

दोहा

लोह भयी संकलन तें, इनको जड़ो शरीर।
तब इह मुनि मन के विषै, एम विचारी धीर ॥ १४ ॥

सोरठा

यह पापी दुख दाय, ब्रत भू भृत ते गेरहै।
ऐसो निश्चय लाय, जुत सन्यास तज प्रान को। १५।
यह मुनि सत्तम सार, पुन्य उदै सुर पद लहो।
जे सज्जन अधिकार, दुरजन पीड़ित शुभ गहें। १६।

दोहा

निर्मल बुद्धी सुमन जन, तिन को पीड़े दुष्ट।
तो भी जिन पद सेय कर, वे पावें सुख पुष्ट ॥ १७ ॥

सोरठा

ऐसे श्री मुनिराय, मातुल कृत उपसर्ग सह।
उपजे स्वर्ग सु जाय, ते हम को मंगल करो ॥ १८ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय वृषभसेन मुनि की कथा समाप्तम्

जैसेन नृप की कथाप्रारम्भः नं. ८१

मंगलाचरण। अडिल्ल

जै सम्पत दातार मोक्ष तिय के धनी। ऐसे श्री भगवान

तिनें तुरत कर धनी। श्री जैसेन नरिन्द्र तनी भाषूं कथा ।
जिम पुरान बरनई सुनो भवि जन जथा ॥१॥

चाल छन्द

श्रावस्ती नगरी सोहे । जैसेन नृपत ताको है।
ताके निय रूप धरन्ती । बीर सेना है गुण वन्ती । २ ।
तिन के निज कर्म बसाई । सुत बीर सेन उपजाई ।
नृप को गुरु मांस अहारी । शिव गुप्त बोध अवकारी ।३।
इह मिथ्यामत दुख दाता । नहिं देत जीव को साता ।
तातें याको धिक्कारी । हम देत जु बारम्बारी ॥ ४ ॥
इक दिन तिस नगरी मांही । मुनि संघ सहित अधिकाही।
श्री वृषभ नाम सुखदाई । आये भवि पुन्य बसाई ॥५॥

दोहा

तब नृप पुन्य उदय थकी, गयो ऋषिन के पास ।
श्री जिनेन्द्र को धरम सुन, भयो श्रावक गुणरास ॥६॥

चौपाई

अब जयसेन भूप बड़ भाग । जिनमतमें बहु धर अनुराग।
अपने राज विषे जिन धाम । ठौर ठौर कीने अभिराम ॥७॥
तिनकर अवनी शोभित करी । जिन मतकी महिमा विस्तरी।
तब शिव गुप्त बोध दुखदाय । भूप हतनको करे उपाय ॥ ८ ॥
या अन्तर पृथ्वी पुर बीच । सुमत नृपति पै पहुंचो नीच ।
तासेती भाषो विरतन्त । नृप जयसेन तनो जु अत्यन्त ॥९॥
तब वो बोध नृपति तिह घरी। इस बच सुनि मन चिंताकरी।
येक पत्र लिखवाय तुरन्त । श्रावस्ती पुर में भेजन्त ॥ १० ॥
सो जयसेन नृपत के पास । लेकर आयो ताको दास ।
तामें एम लिखो विरतन्त । बोध धर्म तुम गहो महन्त ।११।

बांचनहीं जै सेन जुराय। प्रत उत्तर यह भांत लिखाय।
मेरे श्रद्धा जिन मत तनी। निश्चयते निश्चय है घनी ॥१२॥
पाप तने कारन मत और। सो मैंने अब दीने छोर।
बोध धर्मको तो क्या बात। यह तो परतच्छ है अघपात ॥१३॥
अहो जासने जिनमत जान। सो क्यों मिथ्यामत चित ठान।
जैसे पवन तने परसंग। मेरु शिखर नहिं डिगै अभंग ॥१४॥

दोहा

तबै सुमत मनरोस कर, जुग भट जे बलवन्त।
तुम मारो जयसेन को, तिनते येम भषन्त ॥१५॥
सो नृप के बच सुनतहीं, श्रावस्ती पुर आय।
केते एक दिन तहँ रहे, कछु नहिं चलो उपाय ॥१६॥

पद्धड़ी ॥

तब उलटे भट चाले तुरन्त। जा सुमत प्रते भाषो वृतन्त।
हमने कीने बहु बिध उपाय। पण तिसको मार सके न राय १७
ऐसे सुन पापातम अयान। सब चाकर प्रति बच इम बखान।
कोई है तुममें बलवन्त भाय। जै सेन नृपतिको हने जाय ॥१८
ऐसे इसके बच पाप धाम। सुन राजपुत्र सुहि मार नाम।
सो कहत भयो सुन अवनि कन्त। मैं ताको मारूंगो तुरन्त १६
ऐसे कह अघकारी हिमार। पहुंचो श्रावस्ती पुर मंझार।
श्री वृषभ मुनीके पास जाय। दीच्छा लीनी धर कुटिल भाय २०

दोहा।

यह अघ पंडित गुरु निकट, तिष्ठे माया धार।
नृपति मारने के अरथ, निस दिन करे बिचार ॥२१॥

काव्य

इस अन्तर जै सेन भूप घर मातम सुन्दर।

मन में धर उत्साह गयो श्री जिनवर मन्दिर ।
प्रभुपद अर्चा कीन बहुरि श्री गुरुवर भेटे ।
अस्तुत बहु विध करी सरब अघ संचित मेटे ॥२२॥
ऐते जन समुदाय किये मंदिर बाहर सब ।
आय मुनी के चरन कमल ढिग तिष्ठो इह जब ॥
विनती कर नृप ज्ञान हेत नमियो सिर नाई ।
तब वह बोधहि भेष धार धारी अन्याई ॥ २३ ॥

दोहा

हत जै सेन नरिन्द्र को, मार भगो तत्कार ।
अहो बोध पापी महा, या जग में अधकार ॥ २४ ॥

चौपाई

तबही वृषभ नाम ऋषि चंद । ऐसो कारन लख दुख भून्द ।
हेया हेय सु जानन हार । मन मांही इम कियो विचार ॥२५॥
भूतल में भाखेंगे येह । मुनि ने हती नृपति की देह ।
याते दर्शन होय मलीन । ऐसे मन में निश्चय कीन ॥ २६॥
तब श्री चैत्याले की भींत । तापे अच्छर लिखे पुनीत ।
बोधमती पापी जु हिमार । माया जुत मुनि भेष सुधार ।२७
ताने यह जैसेन नरिन्द्र । मारो है निश्चय गुण वृन्द ।
इह विधि लिख कर श्री मुनिसार । छुरक घाति निज उदर विदार २८
मेरु शिखर वत निश्चल चित्त । धारो तब सन्यास पवित्त ।
सुरग विषै सुख उपजे येह । बहु विधि लाध लाहि सुंदर देह ।२९।
अब जय सेन तनो सुत आय । बीरसेन नामा सुखदाय ।
मृतक तात अरु मुनिको देख । मनमें दुखित भयो विशेष ।३०
फेर भींतके अच्चर माल । बांचे बीरसेन भूपाल ।
सर्व भेद लखके बुधवन्त । सुन श्रुति निज सुखते भाषन्त ।३१।

दोहा ।

श्री जिन भाषित धर्म में, कर निश्चे सर धान ।
मुनिवर की स्तुत करत, गयो सु अपने थान ॥ ३२ ॥

गीता छन्द ॥

दुष्टातमा जिन धर्म में बहु दोष लावत हैं सही ।
तौ भी सदा निर्मल रहैं यह अतुल महिमा इन गही ।
जिम बादरों में भानु आवत निज प्रकाशन तजतहैं ।
तिम धरम रविको अभ्र मिथ्या रोक नाहीं सकत हैं ॥३३॥
अब जिन श्री अरिहन्त तुमको सदा मंगल दो मुदा ।
जिनके चरन को सकल सुरनर भक्ति कर पूजत सदा ।
तिनको धरम पातक निवारन नास भव दुख करतहै ।
सुर मोक्ष दाता है जगत में सकल कालुष हरत है ॥ ३४ ॥

दोहा

सोई धरम हिये धरो, अहो भव्य धीमान ।
तन धन अथिर निहार के, कीजे निज कल्यान ॥३५॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषें वृषभ मुनि तथा जैसेन राजाकी कथा समाप्तम् नं० ८१ ॥

अथसकढालमुनिकीकथाप्रा०नं०८२

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

सरम तने दातार, तीन जगत हितकार ।
ऐसे जिन अविकार, तिन पद कंज नमूं अबै ॥१॥
कथा कहूंहित कार, श्री सकटाल मुनीश की ।
सुनों भव्य चित धार, ताते बहु कल्याण है ॥२॥

चाल मेघकुमार की

पाटल पुत्र नगर विषै जी नन्द नाम भूपाल ।

ताके मन्त्री जिन पती जी, नाम जान सकटाल ॥
रे भाई निर मल मत धारन्त ॥ ३ ॥
दूजो अह परधान है जी, वर रुचि नाम अयान ।
इन दोनों सच बन विषै जो, वैर रहे अधिकान ॥
रे भाई यह जग में दुखकार ॥ ४ ॥
एक दिना पुर वारने जी, सोहे जो उद्यान ।
तामें संग सहत मुनी जी, महा पद्म तप खान ॥
रे भाई आन बिराजे धीर ॥ ५ ॥
कैसे हैं ऋषि चंद वे जी, जैन तत्व जानन्त ।
तिन के ढिग जातो भयो जी, यह सकटाल तुरन्त ॥
रे भाई नमन कियो शिरनाय ॥ ६ ॥
फिर सुख कारी इन सुनो जी, धर्म सु दोय प्रकार ।
गुण उज्जल सुर वर भयो जी, यह मंत्री तिह बार ।
रे भाई तप कीनो अधिकान ॥ ७ ॥
पीछे गुरु की भक्ति तें जी, पढ़े शास्त्र अधिकाय ।
गुरु चरनन परसाद ते जी, आचारज पद पाय ॥
सयाने कीनों शुद्ध आहार ॥ ८ ॥
भवि जन को सम्बोधते जी, दे जिन धरम बिशाल ।
ईर्जा पथ शोधित मुनी जी, नासत जग जंजाल ॥
सयाने आये फिर तिह थान ॥ ९ ॥
सो यह वर्षा के समय जी, नंदराय के धाम ।
कर अहार बन को गये जी, तप मंडित अभिराम ॥
सयाने तिष्ठे ध्यान लगाय ॥ १० ॥
इस अन्तर पापातमा जी, वर रुचि जो परधान ।
पूरव वैर चितार के जी, कही भूप ते आन ॥
सयाने सुन लीजे महाराज ॥ ११ ॥

दोहा

मुनि धूरत शकटाल यह, भिक्षा मिसकर आय ।
तेरे महल विषै प्रभू, कर के गयो अन्याय ॥ १२ ॥
अहो जगत में दुष्ट जे, दुरगत जावन हार ।
क्या क्या अघ नहिं करत हैं, सब ठानें निरधार । १३ ।

चौपाई

नंदराय ताके सुन बैन । क्रोध युक्त कर रातें नैन ॥
तबही मुनि के मारन हेत । दुष्ट सुभट भेजे जिम प्रेत । १४ ।
अहो मूढ़ बुद्धी नर जेह । दुरजन कर वहकाये तेह ॥
भलो बुरो नहिं जानत कोय । कुत्सित काज करे मत खोय । १५ ।
या अंतर श्री मुनि सकटाल । भट आवत देखे जिम काल ॥
मंत्री की चेष्टा सब जान । तब सन्यास मरनमत ठान । १६ ।
सहित समाधि तजी निज काय । स्वर्ग लोकमें उपज्यो जाय ॥
अहो दुष्ट दुष्टाई करे । तौ भी सज्जन सुख विस्तरे ॥ १७ ॥
अब इह नंदराय तिह घरी । श्री मुनि वरकी प्रज्ञा करी ॥
इनको जानो तब निर्दोष । चित्त चेतकर छोड़ो रोष ॥ १८ ॥
महा पद्म मुनि के ढिग जाय । पूजे चर्न कमल चितलाय ।
भली सम्पदा को दातार । श्री जिन धर्म सुनो तिहबार । १९ ।
निज निन्दा गर्ही नृप ठान । पूजा दान करी अधिकान ॥
अहो पाप भई संगति पाय । खोटी बुधि धार अधिकाय ॥ २० ॥
फेर गुरुको पाय संयोग । वेही नर गहें धरम मनोग ॥
ताते भवि जन सुर शिव हेत । सेवो गुरु पद होय सचेत ॥ २१ ॥

काव्य

अबै ग्रंथ करतार कहैं सुन लो बुध मन कर ।
सम्यक दर्शन ज्ञान चरित तप रतन पुंज बर ।

सो आराधन दास बनी जिन सूत्र मंझारी ॥
प्रथम रची चितलाय ज्ञान वारिध के धारी ॥ २२ ॥
तिन ही के अनुसार करी गुरु प्रभा चन्द्र मम ।
उनही के परसाद कही बुध सारु अब हम ॥
मुक्ति सम्पदा हेत और यामें नहिं कारन ।
अथवा शुद्ध प्रयोग पुन्य संचय अघ टारन ॥ २३ ॥

सोरठा

कथा यही सुखकार, कहि बखतावर रतन ने ।
संस्कृत्त अनुसार, पंडित पढ़ो सुनो सदा ॥ ५४ ॥

इति श्री आराधना सार कथा कोष विषैं सकटाल मुनि की कथा समाप्तम्

अथ श्रद्धाधारी सत्य पुरुषन की कथा ८३

मङ्गलाचरण काव्य ॥

अति निरमल पर काश ज्ञान तिनको त्रयजगमें ।
ऐसे श्री अरिहन्त सीस नाऊं तिन पग में ॥
कहूं कथा सत्पुरुष जनन को है जो प्यारी ।
सुनो सुमन चितलाय जिन्होने श्रद्धाधारी ॥ १ ॥

चौपाई ॥

सोहे शुभ कुर जांगल देश । तामें हस्त नाग पुर वेश ।
विजयंधर ताको है स्वाम । विनयवती नामा तिस भाम ॥ २ ॥
तिस नरपति के सेठ महान । बृषभ सेन नामा बुधवान ।
नार बृषभ सेना सुखरास । गुण उज्जल सुत है जिनदास ॥ ३ ॥
इस अन्तर विजयंधर राय । कामा शक्त रहे अधिकाय ।
ताके गर्भ तने परसाद । उपजी तनमें दीरघ ब्याध ॥ ४ ॥
अहो काम सेवन जग मांहि । शांन्त अर्थ सो होवे नांहि ।
ताते बुध जन तजिये भोग । आतम कारज करो मनोग ॥ ५ ॥

जब यह नरपति बहु दुख पाय। वैदन को दिखलायो काय।
काहू नहिं जानो तिस भेद। ढूंडे सवै चिकित्सा वेद ॥ ६ ॥
अब इसको जो है परधान। श्रावक सिद्धारथ गुणवान।
गयो जहां तिष्ठे मुनि चंद। पादोषधि ऋध धरे अमंद ॥ ७॥
तिनके चरन कमल परचाल। गंधोधक लायो तत्काल।
सर्व रोग को नाशन हार। मुनि तन में उपजो सुखकार। ८।
श्रद्धादिक गुण धार नरिन्द। सो जल पीयो जुत आनन्द।
सबै ब्याधनासी तिहबार। जियरवि उदै नसे अंधियार ॥ ९ ॥

दोहा।

अहो मुनी के तप तनी, महिमा को बरनाय।
जिनके चरनोदक थकी, नसे ब्याध दुखदाय ॥१०॥

सोरठा ॥

फिर सिद्धारथ एह, वोही जल औरन दियो।
जेंथे दःखित देह, पीकर निर्मल तनभयो ॥ ११॥

काव्य ॥

ऐसे वे मुनि राज पाद औषधि ऋध धारी।
गुण वारिध जिन तत्व जानने में अधिकारी।
सब जीवन हित कार देत उपदेश अतुल बर ॥
सो मुझको कल्याण अर्थ हूजे निसि बासर ॥१२॥
अहो जिनेश्वर धर्म करम में रत जे प्रानी।
किंचित सरधा करत दुरित नासै दुखदानी॥
देव इंद्र षट खंड पती याही ते हो हैं ॥
याकी महिमा वर्न सके ऐसो कवि को हैं ॥१३॥

दोहा ॥

किंचित श्रद्धा देत यह, करे विशेष जो कोय।
केवल पर उद्योत घर, शिवपुर पावे सोय ॥१४॥

सोरठा ।

सोई श्रद्धा सार, कवि उर मे धारत सदा ।
यह सुखकी करतार, हमको हूजो नित प्रते ॥१५॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय श्रद्धा स्थान कथा समाप्तम् न०८२

अथ आत्मनिंदा उदाहरण कथा नं०८३

मङ्गलाचरण । कवित्त ॥

सरव इन्द्र चन्द्रन कर बन्दत जिनके चरन सरोज विशाल ।
ऐसे श्री अरिहन्त देव जिन तिनको ना करके निज भाल ।
जाने आतम निन्दा कीनी ताकी भाषूं कथा रसाल ।
पायो फल वाने सुखकारी सो सुनियो भवि सब श्रम टाल ।

चौपाई

काशी देश विषय सुखकार । नगर बनारस शोभा धार ।
तहां विशाखदत्त भूपाल । कनकप्रभा रानी गुणमाल ॥ २ ॥
अरु तहँ एक चतेरो बसे । नाम विचित्र तासुको लसे ॥
भाम विचित्र पताका यास । बुद्धिमती पुत्री सुखरास ॥ ३ ॥
इक दिन नरपति को जो धाम । तामें लिखत हुतो चित्राम ।
तब याकी जो सुता सुजान । भोजन लाई तिसही थान ॥ ४ ॥
याने अवनी लीला धार । मण मई अमनी शुद्ध निहार ॥
मोर पिच्छका की तिह धरी । मूरत एक बनाई खरी ॥ ५ ॥
तबही नरपति ताहि लखन्त । करते पकड़न लगो तुरंत ॥
जब कन्या जानी मन मांहि । यह राजा मूरख सक नांहि ॥६॥
तैसेही औरे दिन एक । चित्र लिखो इस सहित विवेक ।
नरपति को दिखलावत भई । देखत तिस मति बिस्मय थई ॥

दोहा

ताही छिन निज तात प्रति, बोली बच हर्षात ।
उठो विचक्षण बेगही, भोजन जो बन जात ॥ ८ ॥

इह प्रकार के वचन सुन, ह्वै चकित चित राय।
बुद्धिमती के मुख तरफ, लखन लगो बहु भाय ॥ ९ ॥

चौपाई।

जब कन्या जानो तिह थान। यह मूरखराजा अधिकान।
कूड़ प्रद्यान की फिर वार। पहले तो पटदियो उघार ॥ १० ॥
दूजो कूड़ विषै चित्राम। देखन लागा नृप तिह ठान।
जब भी जानो कन्या येह। मूरख नृप है बिन सन्देह ॥ ११ ॥
यह सब कारन लख नरपाल। बुद्धिमती परनी तत्काल।
हर्षित ह्वै पटरानी करी। सब अन्ते वर में तिह धरी ॥ १२ ॥
अहो जगत में जे भवि जीव। पु य उदय गुण लेह अतीव।
सोई करैं प्रकाश अपार। यामें जातेन भेद लगार ॥ १३ ॥
अब इन सेवा करन अनेक। आवें बहु तिय रहित विवेक।
चलती विरयां या सिर बीच। मार धौल जावें बे नीच ॥ १४ ॥
तब इह बुद्धि मती दुख पाय। छीण शरीर भई अधिकाय।
अपनो दुख काहू नहिं कहे। गह कर मौन सु बैठी रहे ॥ १५ ॥

काव्य।

इस अन्तर जिन धाम सर्व पापन को हर्त्ता।
तामें चैत्य मनोग सर्व सिद्धन के कर्त्ता ॥
तिन आगे यह बुद्धिमती बहु भक्त धार उर।
अपनी निन्दा ठान वीनती तबै येम कर ॥
अहो जिनेश्वर चन्द सुरग शिव के हो दायक।
तुमरे चरन सरोज नमत त्रय जग के नायक ॥
हे भगवान महान हीन कुल मैंने पायो।
काको दीजे दोष करम यह पूर्व कमायो ॥१७॥
ताते दीन दयाल शरन चरनन की लीनी।

दुःख अगन के नास हेत हो वृष्टि नवीनी ॥
काम क्रोध करलीन और जो देव जगत में। ।
तिनको कुश्चित जान तजी सब सेव भगति में ।१८।

दोहा ।

इह विघ निज निंदा करत, गई सो निज आगार।
सदा बैठ एकान्त में येही करत विचार ॥ १९ ॥
फिर नर नायक एक दिन, याते पूछो येम।
प्यारी दुर्बल केम तन, सो भाषो धर प्रेम ॥ २० ॥

सोरठा ।

तब याने कछु नाह। उत्तर दीनो भूप को।
बैठ रही घर मांहि, सुमरे जिन नायक सदा ॥२१॥

चौपाई ॥

इक दिन श्रीमति जिनवर गेह। गयो नृपति बंदन धर नेह।
पीछे पटरानी तहँ जाय। बिनती कीनी ताही भाय ॥२२॥
तब नरपति त्रित जानी येह। याको दुखको कारन जेह।
जब ही अन्ते पुर की नार। तिन को कीनो बहु त्रिस कार ॥२३॥
अतिशय करके ताही घरी। याको पट देदी फिर करी।
अहो भव्य जो चाहो हेत। सेवो प्रतिमा भक्ति समेत ॥२४॥
ता आगे निज निंदा करो। ताते बहु सुख को विस्तरो।
जिनपद भक्ति सदा हितकार। शभ कुल में उपजावन हार ॥२५॥
दुरगति नाशत शुभ गति हेत। परम्पराय मोक्ष पददेत।
सो वो भक्त रहो सबकाल। मेर हिरदे में गुण माल ॥ २६ ॥

दोहा ।

आतम निंदा जिन करी, तिन पायो फल सार।
तातें जे हैं सुमन जन, करो सु यह परकार ॥ २७ ॥

इति श्री आराधना सार कथा कोष विषै आत्म निंदा दृष्टान्त कथा समाप्तम्

अथ आत्म निन्दा कथा प्रा० नं० ८५।

मङ्गलाचरण ॥ दोहा ॥

सबै दोष नाशक प्रभू, सर्म तने दातार।
तिनको नम भाषूं कथा, निज निंदा जिनकार ॥१॥

पद्धडी ॥

नगरी साकेता के मझार। नृप दुरयोधन है न्यायधार।
श्री देवी नामा तास भाम। जुत प्रीत जु तिष्ठे आप धाम ॥२॥
ताही नगरी के बीच मान। रहे उपाध्याय सर्वोप जान।
ताके तिय बीरा नाम गेह। जोबन मंडित उनमत्त देह ॥३॥
अब बिप्र तनो इक शिष्य नीच। रहि आन भूत इस गेह बीच।
तिस संग रमै पापन अयान। पति वृद्ध जान कर हने प्रान ॥४॥

दोहा।

रात्रि अंधेरी के विषै, इह पापन अति नीच।
ताकी काय उठाय के, धरी छीतरी बीच ॥ ५ ॥
लेकर चली मसान में, ताको डारन येह।
तहँ को रक्षक देव इक, रोस युक्त भयो तेह ॥ ६ ॥

चौपाई।

सहित छीतरी मस्तक तास। कील दियो अर ऐसे भाष।
होत प्रात तू घर घर जाय। सब तियते निज भेद सुनाय ॥७॥
जो तैने कीनो अघ घोर। अपनी निंदा कर कर जोर।
तब तेरे मस्तक ते येह। छुटे छीतरी निःसंदेह ॥८॥
जब याने येही विध करी। उतर छीतरी भूं पै गिरी।
निज निंदा कर बारम्बार। भई सो निर्मल नगर मझार ॥९॥
तैसे ही जे भवि गण रास। निज निंदा ठानो गुरु पास।
पाप थकी उरके अधिकाय। जाते निरमलता बहु भाय ॥१०॥

अहो तनक सी फांस जो होय । बहु विध तन में सालत सोय ।
ताके निकसत ते सुख पात । आकुल तास बही मिटजात ॥११॥
तैसे ही जिन सूत्र उदार । ताकर मंडित श्री मुनि सार ।
तिन को चितवन कर बहु भंत । अपने दोष प्रकाशे संत ॥१२॥
निज गरहा कर सल्य निवार । श्री अरिहंत जजो सुखकार ।
ताते सब अघ होत बिनास । मङ्गल व्यापै नित प्रति तास ॥१३॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै गर्हाख्यान कथा समाप्तम् नम्बर ८५।

अथ सोमशर्म मुनि की कथा प्रा० नं० ८६

मंगलाचरण ॥ चौपाई ॥

सार धर्म दाता जिन धीश । तिनके चरननमें धर शीश ।
सोम शर्म मुनि तनो चरित्र। सुखदाता अब कहूं पवित्र ॥१॥
आलोचन गर्हा उपवास । निज निंदा व्रत जिन श्रुत भाष।
इन जोगन कर हत परमाद । पाप रूप तज जहर अलाद। २ ।
इस सम्बन्ध तनो जो कथा। बरनूं जिन आगममें यथा ।
ताको सुनो सुधी चित लाय। अमृत सम यहहै सुखदाय ।३।
पूरब दिशिमें देश वरिंद । देवी कोटपुर है सुख वृन्द ।
तामें सोमशर्म द्विज सार । वेद वेदाँग सु जानन हार ॥४॥
ताके सोमिल्ला बर भाम । तिनके सुत उपजे अभिराम ।
पहलो अगन भूत पहचान । दूजो वायु भूत गुणवान ॥ ५ ॥
ताही नगर रहे द्विज एक । विष्णुदत्त धनवान विशेष ।
ताके विष्णु कामिनी नार । निज ग्रह में तिष्टे सुखकार ॥६॥
अब यह सोमशर्म परवीन । तापर द्रव्य उधारो लीन ।
फिर यह एक दिना गुणवृन्द । भेट मुनि पद आनंद कंद ।७।
जिनवर धर्म सुनो दे कान । भयो दिगम्बर ममता हान ।
करत विहार विचक्षण जेह । देवी कोटपुर आयो तेह ॥८॥

दोहा ।

विष्णुदत्त दुज देख तिस, पकड़ लियो तिह बार ।
कहत भयो सुनलो मुनी, तुम धन लियो उधार ॥ ९ ॥
सो अब मोको दीजिये, रंचक देर न ठान ।
सुत तुम्हरे दारिद्र जुत, वे क्या देय निदान ॥ १० ॥

सोरठा ॥

जो नहिं धन तुम पास, तन अपनो अब वेचकर ।
दो मोको गुणरास । छिन विलम्ब नहिं कीजिये ॥११॥

काव्य ॥

ऐसे याके बैन सुने मुनि सत्तम जबही ।
बीरभद्र गुरु पास जाय इन भाषी सबही ॥
तब उन कहो मशान मांहि तप बेचो जाई ।
जो कोई लेवे मोल करज निज देहु चुकाई ॥१२॥
ऐसे गुरु के बचन सुनत चालो ततकारी ।
गयो मंडस्थल थान तहां इम गिरा उचारी ॥
कोई तप मुझ मोल लेहु तो वेचूं भाई ।
सुनते ही परतच्छ तहां इक देवी आई ॥१३॥
कहत भई सिर नाय अहो स्वामी सुन लीजे ।
धरम बस्तु है कौन जिसे बेचो कह दीजे ॥
तब बोले गुणवान मूल उत्तर गुण सारे ।
दश लक्षण जिन कथित धरम सो जान हमारे ॥१४॥

दोहा ।

ऐसे सुन अमरी तबै, हरषित ह्वै सिर नाय ।
प्रगट बचन कहती भई, भक्ति हिये में लाय ॥१५॥
प्रभू धरम जग बश करन, चिन्ता मणि सम येह ।
काम धेनु अमृत तनो, सुख रूपी है मेह ॥ १६ ॥

चौपाई।

अहो बहुत कहनेकर कौन। तीन लोकमें वृष सुख भौन।
हे सर्वोत्तम श्री मुनिचन्द। यह जिन धर्म महा गुणवृन्द।१७।
ताको मोल तुच्छ में जान। को समर्थ लेवे इम थान।
अहो जबै तुम दीक्षा धरी। बाल लोंच कीने जिह घरी।१८।
ताके लेश तनो जो मोल। देहूं मैं तुम देहु अतोल।
ऐसो कहकर तिसही थान। रतन पुंज दे दीप्य सु मान।१९।
देवी ने कीने तत्काल। फैली दश दिशि रस्म विशाल।
अहो जिनेन्द्र धर्म जग सार। को महिमा तिस वरननहार।२०।

दोहा॥

अब परभात समै भयो, विष्णुदत्त तहँ आय।
तप रूपी सम्पत तनो, देखो अति पर भाय॥२१॥
तबही मुनिपद कमल में, नम इम विनती कीन।
धन्य धन्य तुम धीर ऋषि, जैन तत्व परवीन॥२२॥

॥ सवैया तेईसा ॥

हे जग नायक दीन दयाल सु मोह विरक्त सदा तपधारी।
मोह ठगो निज करम संयोग जु सम्पत रूप महा वर पारी।
सो अब आप तने पद कंज कि सर्न लहूं अतिही हितकारी।
या विधि भक्ति अनेक धरी निज निंद करी द्विज राज अपारी २३

सोरठा।

मद वर्जित द्विज होय, आज्ञा गुरुकी पाय के।
दीक्षा लीनी सोय, स्वर्ग मोक्ष सुख दायनी॥२४॥

चौपाई

अहो धर्म कर आश्रित जेह। नाना विधि सुख पावत तेह॥
और भव्य थे जो बड़भाग। यह कारन लखके मद त्याग।२५।

श्री जिन चन्द्र तने मत मांहि। लीन भये मिथ्यात नसांहि।
अब वो रतन पुंज दुतिवान। तहँ श्रावक आये बुधवान ॥ २६ ॥
तीरथ कोट नाम तिस धरो। सर्व जगतमें परकट करो ॥
सुखदाता जिनवर के धाम। बनवाये अतिही अभिराम ।२७।
अहो साधु बुद्धी जे जीव। तेही धन्य धन्य जग पीव ॥
श्री जिन चन्द्र कथित तप सार। तीन लोक पूजित सुखकार ।२८।
भवदधि नाशक सुर शिवदाय। आराधो जो मन बच काय।
अब वो साध सबै अरिनाश। शिवपुर में पहुंचे गुणरास। २९।
तेई ऋषि हम तुम्हें अवार। सब संपत दीजे सुखकार।
इस प्रकार भाषी में कथा। जिम आगममें बरनी यथा ।३०।

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषयं सोम शर्म की कथा समाप्तम्

अथ कालाध्ययन कथा नं० ८७

मङ्गलाचरण ॥ सोरठा

सो भगवत को ज्ञान, तीन जगत में सार है।
धर कर तिन को ध्यान, कालाध्यन कथा कहूं ॥

चौपाई

इक दिन बीरभद्र मुनिचंद। जग जनको ते करत अनंद॥
जैन तत्व के जाननहार। तिष्ठे थे इक बनी मंझार ॥ २ ॥
रैन विषै जिन सूत्र मनोग। पढ़त हुते धर तीनो जोग।
ताही छिन श्रुत देवी आय। इन संबोधन को तिह ठाय ॥३॥
ग्वालनरूप करो तत्कार। मुखतें इह विध बचन उचार।
मिष्ट सुगंध तक्र सुखकार। लेहु लेहु इम करत पुकार। ४।
मुनके चारों ओरी फिरे। तब गुरु इह बिधि बच उच्चरे।
हे मुग्धे निशमें इस थान। कौन छाछ लेवे तुझ आन ।५।

दोहा

तब ग्वालन कहती भई, तुम मूरख क्या नांह।
शास्त्र अकाल विषे पढ़ो, इह विध वचन कहाय। ६।
जब नभ ओरी मुनि लखी, देखे उड़गन पात।
ह्वै प्रबुद्ध गुरु ढिग करी, आलोचन बहु भांत ॥ ७ ॥

पद्धड़ी

तिस पीछे औरे दिन मंझार। शुभ काल विषै पढ़ते निहार।
तबही देवी आनंद लीन। हरषित ह्वै कर बहु नमन कीन।८।
बर उज्जलद्रव लिये पवित्र। पूजे मुनिको धर भक्ति चित्त।
देखो जे गुण मंडित अतीव। ते क्यों नाहिं पूज लहैं सदीव। ९।
अब बीरभद्र गुरु गुण निधान। दर्शन अरु ज्ञान चरित्र ठान।
करके समाध तजके जु काय। शुभ गति पाई आनंद दाय।१०।

काव्य

तातै हो भव्य जीव शुद्ध मत के जो धारी।
सो तुम को कल्यान करो नित ही दुख टारी ॥ ११ ॥
कैसो है वो ज्ञान कहो जिन बर जग स्वामी।
शुभ कारक जग जीव मोहने को है नामी।
सुख संपत अरु स्वर्ग मोच्छ को देनहार वर।
दिखलावन सब गेह विषै दीपक प्रकाश धर ॥ १२ ॥

सोरठा

सब जन हित करतार, शोक पंक नाशक रवी।
ऐसो ज्ञान उदार, ताको हम नमि हैं सही। १३।

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय कालाध्ययन
व्याख्यान समाप्तम् नं० ८७

अथ अकालाध्ययन व्याख्यान

कथा प्रारम्भः नं० ८८

मंगलाचरण । गीता छन्द

सब जगतकर पूजित सदा शुभ ज्ञान नेत्र धरे सही ।
ऐसे जिनेश्वर चर्न को वंदन करो सिरधर मही ॥
अब संत जन सम्बोधने के अर्थ कथा सुहावनी ।
भाषों अकाल पढन तनी सुन लीजिये तुम शुभ मनी ॥१॥

चौपाई

शिव नंदी नामा मुनि एक । प्रचुर कर्म ते रहित विवेक ।
श्रवण नक्षत्र विषै स्वाध्याय । जानी गुरु मोहे दई बताय ॥ २॥
इसी भ्रांतते नित प्रति तेह । पढ़े अकाल रैनमें येह ।
इस मिथ्या जुत पाई मीच । भयो मच्छ इह गंगा बीच । ३ ।
जे भगवतकी आज्ञा तजें । सो दुरगति को क्यों नहिं भजें ।
इस अन्तर एके दिन मच्छ । सरिता तट गुरु देख प्रतच्छ ॥४॥
सुनियो जिन आगम सुखदाय । जाती सुमरनको जब पाय ॥
तब बिचार कीनों चित जोय । मैं जिन मतमें उलयो होय । ५ ।
पढ़न अकाल तेन परभाय । पाप थकी पाई यह काय ।
ऐसे निंदा कर बहु भन्त । भयो तबै ही सम्यक वन्त ॥६॥
पंच अणु व्रत लिये संभार । जिनमत कमल विषै चितधार ।
पुन्य रूप खरचीले संग । भयो देव अघ लहो अभंग ॥७॥

दोहा ।

अहो धरम परसादतें, क्यों नहिं स्वर्ग लहाय ।
मुनवर ते उपजो मयर, फिरवाई सुर काय ॥८॥

सोरठा ।

पढ़ो काल बुध वान, अहो भव्य जिनवर धरम ।
कर हिरदे सरधान, कोड़ों सुख दातार जो ॥ ९ ॥

दोहा।

धरके नित प्रति शक्ति सम, भक्त बिबिध परकार ॥
अराधो शुभ ग्यान को, जो पावो शिव सार ॥ १० ॥

छप्पय।

अहो भव्य भगवान कथित यह ज्ञान मनोहर।
ताको सेवो सदा सकल अज्ञानदूर कर ॥
कैसो है यह ज्ञान स्वच्छ सम्पति को दायक।
निरमल मूरत करे सदा जस को फैलायक ॥
अरु सुर नर खेचर भवन पति, ताकर पूजित है सदा।
शुभ शांत करन जग में यही, ताको नहिं भूलो कदा ॥११॥

इति श्री आराधना सार कथा कोष विषै अकाला ख्यान कथा समाप्तम् ॥

अथ विनयाख्यान कथा प्रा० नं० ८९।

मङ्गलाचरण ॥ दोहा ॥

देव इंद्र नागेंद्र नर, तिन के पूजित चर्न।
ऐसे श्री अरिहंत हैं, भव दधि तारन तर्न ॥ १ ॥
तिन को नमि करके कथा, कहुं भव्य हित कार।
शास्त्रविनय जिनने कियो, तिन सुख लहो अपार ॥ २ ॥

चौपाई ॥

वत्स देश मांही विख्यात। कोशांबी यह पुरी बशात।
ताको स्वामी है धन सेन। विष्णु भक्त मूरख जुग मैन ॥ ३ ॥
ताके लक्ष्मी की उन हार। नाम धन श्री सुन्दर नार।
श्री जिन चरन कमल को येह। भ्रमरी वत सेवे धरनेह ॥४॥
तिस ही नगरी में सु प्रतिष्ट। रहे भागवत अति पापिष्ट।
कुश्चित तप भगवत पट धरे। नृप आसन पैं भोजन करे ॥५॥

जमना सरिता के मधिजाय। जल थंभन विद्या पर भाय।
जल पै जाय करै यह मूढ़। मूरख भेद न जानत गूढ़॥
विस्मय बहु विधि चित में धरे। याकी सेवा नित प्रति करे।
अहो मूढ़ जन जे जगबीच। मूढ़ क्रिया में रत है नीच ।७।

काव्य॥

इस अन्तर वैताड़ तनी दक्षिण श्रेणी-वर।
है रथनू पुर चक्रबाल पुर अधिक मनोहर॥
विद्युत प्रभ नर धीश तहां श्रावक व्रत मंडित।
विद्युत वेगा नार धरे हरि भक्ति अखंडित ॥८॥
दंपति करत विनोद पुरी कोशांबी आये।
जमना सरिता तीर गये चित में हरषाये ॥
तहां माव के शीत विषै मिथ्या तज हरकर।
दुःखित वो सु प्रतिष्ठ लखो बैठो जल ऊपर ॥९॥

दोहा।

ऐसे लख कर के तब, विद्युत वगा नार।
ताकी परशंसा करी, मुखते बारम्बार ॥१०॥

पद्धड़ी॥

तब विद्युत प्रभ खगधीश सन्त। रानी से इह विधि वच कहन्त।
हे प्यारी तेरे पास आय। दिखलाऊं इस मूरख प्रभाय ॥११॥
इमकह जुग कर मातंग वेश। ले मलिन चाम धोवें विशेष।
ताकर सब सलिल कियो मलीन। तबही बंधक मन रोष कीन ॥१२॥
मुखते बोलो हा कष्ट जोर। ऊपर स्नान कियो बहोर।
फिर जाप करन लागो तुरन्त। मूरख क्या क्या नाहीं करन्त ॥१३॥
फिर याके परखन को प्रवीन। वो भी जल दूषित बहुरि कीन।
जा कोश कम्प है दूर जाय। पै ऊपर तिष्ठो दुखित काय ॥१४॥

दोहा ।

इह विध दम्पत तेन जहां, यूंही कियो बहु बार ।
तब मंजन अरु जाय तज, भजो मूढ़ दुख धार ॥ १५ ॥

चौपाई ।

अब ए दम्पति बन के मांहि । क्रीड़ा महल नृत्य अधिकाय ।
नभते असवारी चालन्त । इत्यादिक दिखलाय तुरन्त ॥ १६ ॥
इम लख बंधक अचरज धार । मन में इह बिधि करत विचार ।
देखो सुर विद्या धर जेह । ऐसी चेष्टा करत न तेह ॥ १७ ॥
जैसी इन चंडालन पास । विद्या तिष्ठत है सुखरास ।
जो कदाचि मेरे पै होय । ठगा करूं में सब ही लोय ॥ १८ ॥
इम विचार कर इन के पास । आन करी ऐसे अरदास ।
हो भ्राता तुमरो कित धाम । किह विध क्रिया करो अभिराम ॥ १९ ॥
तुमरी चेष्टा लख बुधिवंत । मेरे आनंद भयो अत्यन्त ।
ऐसे सुन बोलो चंडार । क्या तू हम जानत नहिं सार ॥ २० ॥
हमरी जात जान मातंग । गुरु पद सेवे सदा अभंग ।
तिन तोषित करके पे सार । विद्या दीनी सुख करतार ॥ २१ ॥
तिस ही विद्या के परभाय । यह किरिया कीनी अधिकाय ।
तब बंधक बोलो इम बैन । मोको विद्या दो सुख दैन ॥ २२ ॥

दोहा ।

तब मातँग सों इम कही, तुम उत्तम कुल सार ।
वद वेद अंगन तनो, जानत हो ब्यवहार ॥ २३ ॥
विद्या गुरु की भक्ति विन, किह विध आवे बीर ।
याते तुम को सिद्ध नहिं, होवे साहस धीर ॥ २४ ॥

सोरठा ।

जो धर भक्ति अगाध, कर अष्टांग इह विधि कहो ।

जीवूं तव परसाद, तो विद्या देवै सही ॥२५॥
तब बंधक सिरनाय, ताही विध करतो भयो।
जब दम्पत हरषाय, दे विद्या निज थल गयो ॥ २६ ॥

अडिल्ल ॥

अब इह बंधक सुन्दर विद्या पाय के। नाना क्रीड़ा कीनो चित हरषाय के। भोजन समै उलंघ भूप ढिग आइयो। तिन पूछी भगवान देर कहँ लाइयो ॥ २७ ॥

तब इह अनरथ बादी लम्पट इम कही। हो नरिन्द्र मम बैन सुनो चित देस ही। बहुत काल जो मैं ने सुन्दर तपकरे। ताकर ब्रह्मा हर हरि भक्ति विषै भरे ॥ २८ ॥

आकर मेरे पास करा पूजा भली। फेर गये निज धाम चित्त धरके रली। अब मम आवन जातन होत आकास में। ताते आयो ढील धार तुम पास में ॥ २९ ॥

दोहा।

तब धन सेन नरेश ने, कही प्रात गुरु आय।
मोको सबै दिखाइयो निज चेष्टा सुखदाय ॥ ३० ॥
तब बोली दिखलाय हूं, तुमको प्रात जु काल।
इम कह भोजन कर तबै, जात भयो तत्काल ॥३१॥

चौपाई।

दूजे दिन नृप सभा मझार। आकर इह कपटी तिह बार।
ब्रह्मादिक को रूप महान। दिखलावन को उद्यम ठान ॥३२॥
तितने ही दम्पति खग वेह। धर चंडाल रूप को तेह।
आये सभ्भ विषै हरषाय। लखकर बोध यही दुख पाय ॥ ३३ ॥
कहत भयो इह जुग विकराल। कितते आये दुष्ट चँडाल।
ऐसी गिरा जो इन उच्चरी। विद्या नष्ठ भई तिहघरी ॥ ३४ ॥

तब नरिन्द्र बोलो सुन नाथ। कारन कौन भयो कहो बात।
तब उसने सारों विरतन्त। भूपतिसे भाषियो तुरन्त ॥ ३५॥
तब दम्पति नृपको शिरनाय। निज विद्या लीनी हरषाय।
लेय परीक्षा इसकी जबै। अपने धाम पधारे तबै ॥ ३६ ॥
इक दिन नृप धन सेन सुगात। सभा सिंहासन पर तिष्ठात।
ताही छिन वे जुग मातंग। आये नृप ढिग पुलकित अंग ॥३७॥
देखनही नरपति तत्काल। भक्ति सहित नायो निज भाल।
कहत भयो ह्वै हर्षित गात। तुम प्रसादते जीवूं नाथ ॥ ३८॥

सोरठा

तब विद्युत प्रभराय, विनय सहित इस के वचन।
सुनके चित हरषाय, अपनो रूप प्रकाशियो ॥ ३९ ॥
विद्या दीनी सार, तबही नृप धनसेन को।
गये सु निज आगार, दंपति बहु सन्तुष्ट ह्वै ॥ ४० ॥

दोहा

अहो गुरों की विनयते, को कारज नहिं होत।
तातैं गुरु के पद जजो, येही भव दधि पोत ॥ ४१ ॥
ऐसे लख धन सेन नृप, और भव्य तिह बार।
विद्युत बेगा खेचरी सम्यक ब्रत हिय धार ॥ ४२ ॥

काव्य

अहो और भी भव्य जीव निर्मल मन धारी।
निस दिन गुरु को विनय करो सुर शिव सुखकारी।
जिनकी भक्ति महान सबै कारज की कर्ता।
सोई हमारे चित्त रहो नित प्रति दुख हर्ता ॥ ४३ ॥
वेही गुरू पवित्र सदा निज आतम ध्यावें।
आप तिरें भव सिन्धु और को पार लगावें ॥

देव इन्द्र पद कमल जजैं तिनके हितकारी।
जिनवर नये पुरान तास में विनय उचारी ॥ ४४ ॥
तिनही के अनुसार सदा तिष्ट मुनि नायक।
सोई विनय पवित्त धरैं जैनी सुखदायक ॥
जिन के लक्ष्मी कीर्त्त क्रान्त ज्ञानादिक सारे।
होवैं निकट तुरन्त प्रीत नाना विस्तारे ॥ ४५ ॥

दोहा

ऐसे गुरु के चरन को, बन्दौं बारम्बार।
जातैं सब कल्याण है, बढ़े बुधि अधिकार ॥ ४६ ॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै विनियाख्यान कथा समाप्तम् नं० ८८॥

अथअवग्रहाख्यानकथाप्रारम्भः नं० ८९

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

सुखदाता अरिहन्त, तिन पद शीस नवाय के।
निज हितकार अत्यन्त, कहूं कथा उपधान की ॥ १ ॥

चाल छंद

अहिछतपुर में नृप जानो। वसुपाल चतुर अधिकानो।
जिन भक्ति हिये अधिकारी। गृह शोभे वसुमति नारी ॥ २ ॥
इक दिन भूपति बड़ भागी। जिन धर्म विषै धी पागी।
जगमें उत्तम अधिकाई। दै दीप्य मान सुखदाई ॥ ३ ॥
हैं सहस कूट जिन धामा। बनवायो अति अभिरामा।
तामें अघ नाशन हारी। शोभायमान अधिकारी ॥ ४ ॥
प्रतिमा प्रभु पारश केरी। पधराई क्रान्ति घनेरी।
भवि ताको पूजें ध्यावें। पुनि संचय पाप नसावें ॥ ५ ॥

पद्धड़ी ॥

इस अन्तर लह नृप हुकम सार। गंजो नामा जो लेप कार।

पल भच्ची बहुत कला निधान। दिनमें प्रतिमाके लेप ठान ।६।
सोरात्रि विषै बोलेप जोय। गिर पड़ा करे नित परत सोय।
तब राजादिक जनको तुरन्त। पीड़ा जुत भय उपजे अत्यन्त।७।
जब खेद खिन्न भूपाल होय। कारन नहिं जानो जात कोय।
इक दिन यह गंजो लेपकार। अपने चित माही इम बिचार।८।
है देवा धिष्ठित चैत्य येह। यामें जानो नाहीं सन्देह।
जब जाय मुनीश्वर चरन पास। इह विधको नेम लियो सुखास ९

दोहा

जोलौं मेरो काज यह, होवे नाहि रसाल।
तौलौं मांस सबै तजो, मैंने दीन दयाल ॥ १०॥

सोरठा।

यह परतिज्ञा धार, फिरके लेप लगाइयो।
तब ठैरो सुख कार, लख राजा सुख पाइयो ॥११॥

चौपाई

जो यमनेम धरे नर कोय। तिनही के कारज सिध होय।
तब नृप वस्त्राभूषण सार। लेपकार को दिये अपार ॥ १२॥
बुध सत्तम कारज सिध हेत। सेवो ज्ञान भवोदधि सेत।
सो कैसो है ज्ञान महान। श्री जिन भाषित सर्म निधान।१३।
अतिशय कर ताको मुनिराज। नित प्रति सेवत धर्म जहाज।
सुर नर विद्याधर शुभ चित्त। भक्ति सहित पूजत हैं नित्त। १४।
सर्व सिद्ध कर्त्ता यह जान। ताको सेवो भक्ति मन आन॥
सोई ज्ञान श्रेष्ट सब काल। मम हिरदे तिष्ठो गुणमाल ।१५।

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय अवमाहात्म्यान की कथा समाप्तम्

अथ बहुमान कथा प्रारम्भः नं. ८१

मंगलाचरण ॥ जोगी रासा

उज्जल केवल ज्ञान धरत वर जग जनको सुखदाई।
ऐसे श्री अरिहन्त जिनेश्वर तिनें नमूं सिरनाई ॥
कथा कहूं बहु मान तनी अब सुनो सुमन जन सारे।
तातें नित कल्याण सु बरते दुख दारिद परिहारे ॥ १ ॥

दोहा।

काशी देश विख्यात में, बानारसी विशाल।
तातें तिष्ठे शुद्धधी, वृषभ ध्वज भूपाल। २।
ताके पूरब पुन्य तें, वसू मती शुभ नार।
धरे रूप लावन्य अति, नृप को तासों प्यार ॥ ३ ॥

चौपाई

इस अंतर गंगा तट लसे। ग्राम पलाश नाम शुभ बसे।
तहां अशोक ग्वाल बुधवंत। ताके गोधन गेह अत्यन्त ॥ ४ ॥
सहस घड़े घृत सेती भरे। वर्ष प्रते नृप भेट सु करे॥
गोप तनी इक नंदा नार। वाह्य भई कर मन अनुसार। ५।
पुत्र रहित नारी को जोय। गोप तनो चित रुचे न सोय।
अहो रूप शीलादिक धरे। पण सुत बिन तिय नेह न करे। ६।
जिम फल बरजित बेल जु कोय। ताकी शोभा किह विध होय।
तैसे गोपर है जु उदास। पुत्र तनी राखे नित आस ॥ ७ ॥
फिर कितने इक दिनन मझार। पुत्र अर्थ मुनि ठान गुवार।
दूजी नार सु नन्दा नाम। परनत भयो तबै अभिराम। ८।
अब दोनों नारनके मांह। नित प्रति कलह रहे अधिकाह॥
तब यह ग्वाल महा परवीन। अर्ध अर्ध घर बांट सु दीन। ९।

अब वो नंदा पहिली नार । कुंभ पान से घृत के सार ॥
नृपकी भेट करन के हेत । दान मान जुत पतको देत ॥१०॥

दोहा

दुती सुनन्दा कामनी, रूपादिक मद तास ।
ताके गोधन को सदा, पय पीवत सब दास ॥ ११ ॥
ताते घृत किंचित भयो, ताके गेह मंझार ।
नृप के देन समै विषै, घृत मांगो तब ग्वार ॥ १२ ॥

सोरठा

जब नट गई तुरन्त, मेरें घृत घर में नहीं ।
गोप भयो रूषवन्त, काढ़ दई इस नार को ॥ १३ ॥
नंदा सुख दातार, अपने पुन्य प्रसाद तें ।
गृह मध द्रव्य अपार, ताकी मालकनी भई ॥ १४ ॥

काव्य

ऐसे ही जन और जैन कारज के मांही ।
दान मान नित करो कदेही भूलो नांहीं ॥
शोभा जुत जिन चरन कमल सुर शिव के दायक ।
अतिशय जुत वर धरम तथा तिनही के वायक ॥१५॥
अथवा गुरु पद कंज और सज्जन हित दाई ।
तिनको कर सन्मान भक्ति ठानो अधिकाई ॥
ताही ते यश ज्ञान लहो अवनी के ऊपर ।
अतिशय कर दै दीप्य मान सुख होत बिनय कर ॥१६॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय बहु मान कथा समाप्तम्

अथ निन्हव कथा प्रारम्भः नं. ८२

मंगलाचरण । कवित्त

जिस भगवतके ज्ञान भान में सूक्ष्म सकल पदारथ जेह ।

कर रेखावत दीखत हैं सब एक समै में निःसन्देह ॥
तिनके चरन कमलको नमिकर निन्हव कथा कहूं अब श्रेह।
जाके पढ़ते पातिग नासे ताको सुनो भव्य धर नेह ॥ १ ॥

चौपाई

देश अवंती शोभावान। पुरी उज्जैनी ता मधि जान ॥
नृप घृत सेन तास में सार। मलियावती नाम पट नार ॥२॥
ताके चंड प्रद्योतन नाम। उपजो सुत बर गुणको धाम ॥
रूप भाग लावन अधिकाय। पायो पूरब भव के दाय ॥३॥
इस अंतर शुभ दत्तन देश। बेना तठ पुर तामधि वेश।
सोम शर्म तहँ द्विज विख्यात। सोमा नारी जुत तिष्ठात। ४।
तिनके गुण विद्या को धाम। काल सदीव पुत्र अभिराम ॥
सो उज्जैनी नगरी आय। मिलो भूपते गुण दिखलाय। ५।
तब हर्षित होकर महाराज। सोंपो सुत पढ़ने के काज।
अब यह द्विज को पुत्र सुजान। याहि पढ़ावे बहु हित ठान ॥६॥
सुन्दर लिखन अठारे भाय। नृप सुत को दीने सिखलाय।
आवे काल सदीव सुजान। है पवित्र आलस बुधि वान ॥७॥
देश मलेछ तनी लिय सार। सिखलावे यो राज कुमार।
ताको कठिन चित्त में जोय। पढ़ी गई नहिं तापे सोय ॥८॥
तब द्विज रिष जुत बचन बिख्यात। कह कर मारी याके लात।
सो राजा को पुत्र अज्ञान। कहत भयो मुख ते इम बान ॥९॥

दोहा।

गुरु लात तुमने दई, ताकर दुःखित देह।
अहो राज जब मैं लहूं, काटूं तुम पग येह ॥१०॥
अहो बात यह युक्त है, बालक मत कर हीन।
होत सबै जानत सही, हेया हेय न चीन्ह ॥ ११ ॥

पद्धरी।

अब यह गुण उज्जल विप्र सार। नृप सुत को दे विद्या अपार।
दक्षिण दिशको कीनो पयान। फिर भयो दिगम्बर बुद्धिवान।१२।
इस अन्तर अवधृत सेन राय। निज सुत को राज दियो बुलाय।
अरु आप महा वैराग्य धार। तप ग्रहण कियो आनन्द कार।१३।
अब चंड प्रद्योतन राय सोय। तापे मलेछ की लिप्त कोय।
आई पत्री उन काज अर्थ। ता बांचन कोई नहिं समर्थ॥ १ ४
जब नरपति ले निजकर मझार। आपहि बाची हिय हर्ष धार।
तबही निज गुरु को यादकीन। तिन निकटगयो यह अति प्रवीन

दोहा।

युग पद की अर्चा करी, नमन कियो सिरनाय।
भक्ति ठान हिरदे विषै, तिष्ठो भूप लखाय ॥ १६ ॥
अहो श्रेष्ट गुरु को वचन, सदा भव्य हित कार।
जैसे औषध कटुक है, करे रोग निरवार। ॥१७॥

चौपाई।

अब श्री कालस दीन मुनिंद। जैन सूत्र जानन गुण वृंद।
कोई भव्य स्वेत सन्दीव। ताको दीक्षा दे जगपीव ॥१८॥
फेर विहार कियो महाराज। आरज जन सम्बोधन काज।
धर्म वृष्टि करके अधिकाय। विहरत विपुलाचल पर आय।१६।
तहँ शोभा जुत श्री महावीर। समो शरन में राजत धीर।
सुख दाता सबके रिछ पाल। नंत चतुष्टय गुण जुत माल।२०।
तिन की भक्ति बन्दना करी। काल सदोव मुनी तिह घरी।
निरमल भाव किये अधिकाय। फिर तिष्ठो मुनि कोठे जाय॥२१॥
अब मुनि स्वेत सदीव नवीन। समोशरन बाहर थिति कीन।
आतापन तहँ ध्यान लगाय। तिष्ठे आतम में लव लाय॥२२॥

ताही छिन श्रेणिक भूपाल। समोशर्नं ते निकसत काल।
स्वेत सदीव मुनीको देख। नुत कर पूछत भयो विशेष ॥२३॥
तुमरे गुरु को है ऋषि चंद। मोहि बताओ अवगुण वृंद।
तब उन कही श्री महावीर। मेरे गुरु हैं हे नृप धीर ॥२४॥
ऐसे बचन कहत तत्काल। स्याम शरीर भयो तम जाल।
फिर नृप समोशरनमें जाय। गोतम ऋषिते प्रश्न कराय ।२५।
कृष्ण शरीर भयो मुनि तनो। ताको कारन प्रभु अब भनो।
जब श्री इन्द्र भूपति इम कही। हे नर धीश सुनो अब सही ।२६।
वाने मुझको नाम छिपाय। ताते स्याम भई तिस काय।
ऐसे सुत भूपति गुण रास। आयो तबही इन मुनि पास ।२७।
भक्ति सहित शुभ बचन बखान। सम्बोधन कीनो अधिकाय।
तब श्री स्वेत सदीव महन्त। निज निन्दा कीनी बहु भन्त ।२८।
निरमल शुकल ध्यान चित धार। चार घातिया करम निवार।
लोका लोक प्रकाशक भान। ऐसो पायो केवल ज्ञान ॥२९॥

दोहा

तीन जगत कर पूज है, फिर पहुंचे निरवान।
आतमीक सुख भोगवें, आवागमन सुहान ॥ ३० ॥

काव्य

अहो भव्य गुरु नाम कदेही नांहि छिपावो।
सदा काल हिय धरो स्वर्ग शिव को जो पावो ॥
वो श्री स्वेत सदीव केवली, मुझको अब ही।
भवसागर ते काढ़ दीजिये, शिव सुख सबही ॥ ३१ ॥
कैसे हैं वे ज्ञान सहित गुण निध सुखदायक।
देव इन्द्र खगधीश नमें तिन चर्न सहायक ॥
भव्यन को भव पार करन को पोत समाने।
नंत चतुष्टय युक्त दोष अष्टादश भाने ॥ ३२ ॥

दोहा

तिनके पद अरविंद को, कवि नावे निज भाल ।
सबै उदंगल टार के, दीजे सुःख विशाल । ३३ ।

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय निन्हवाख्यान की कथा समाप्तम्

अथ व्यंजन हीन कथा प्रारम्भः नं. ८३

मङ्गलाचरण । दोहा

श्री जिनेन्द्र के पद कमल, बन्दौं शीश नवाय ।
व्यंजन हीन कथा कहूं, भविजन को हित दाय ॥

अडिल्ल

मगध देश में राज ग्रही नगरी भली । बीर सेन नरधीश कुनय नाशक बली । ताके सुन्दर नार बीर सेना कही । सिंह नाम सुत तिनके ग्रह उपजो सही ॥ २ ॥
सोम शर्म तहं पाठक शास्त्रन को धनी । तापै सिंह कुमार पढ़त विद्या घनी । इस अन्तर इक देश सुरम्य महान है । ता मधि पोदन पुर बहु समे सुथान है ॥ ३ ॥

दोहा

ताको नरपति सिंह रथ, ता ऊपर रिष धार ।
बीरसेन भूपति चढ़ो, जा पहुंचो तत्कार ॥ ४ ॥

चौपाई

तहां पहुंच पत्री सुध हेत । निज ग्रह भेजी हर्ष समेत ।
ता मांही लिखियो इह भंत । यह कारज करना बुधिवंत ॥५॥

संस्कृत--सिंघे,ध्यायियितव्या ।

भाषा--सिंघ पुत्र को पढ़ावना । तब वो पढ़नेवाला विचार करता भया ! इस शब्द मेंधिस्मृत चिंतायां इस धातु का प्रयोग है । ऐसा जानकर कहता भया, राजादिक विषै चिन्ता

करे। सिंह पुत्र को मत पढ़ाबो, ऐसे अकार का लोप करते सन्ते उस के बांचने में भ्रम होता भया, तब सिंह पुत्र को न पढ़ाया सो आचारज कहें हैं मूर्ख की चेष्टा को धिक्कार है।५।

चौपाई।

अब वो बीर सेन नर राय। निज नगरी आयो उमगाय॥
जिस कारन नहि पढ़ो कुमार। सो सबही जानी निरधार।६।
तब नृप क्रोधधार परचंड। पढ़नहार को दीनों दंड॥
देखो आलस है दुखदाय। यातें अर्थ काज नस जाय॥७॥
जैसे भेषज गुण नहि धरे। तन बेदन कहो किह बिधि हरे॥
तिम अच्चर गुण व्यंजन हीन। पढ़त नहीं जे शुद्ध प्रवीन॥८॥

दोहा

तातें अच्चर शुद्ध कर, अथवा अर्थ विचार।
पढ़ो सदा धीमान नर, जो चाहो सुख कार॥९॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषे व्यंजन हीन कथा समाप्तम्

अथ अर्थ हीन कथा प्रा० नं. ६४

मंगलाचरण। काव्य

सब मंगल में पूजनीक जिन के पदाब्ज वर।
अर्चे देव सदीव तिनों को नमस्कार कर॥
ऐसे श्री अरिहन्त देव को ध्या कर के अब।
अर्थ हीन की कथा कहूं सुनि लीजे भवि सब॥१॥
देश विनीता विषै अयोध्या नगरी जो है।
वसूपाल भूपाल वसू मति नारी सो है॥
तिनके चतुर कुमार भयो वसु मित्र नाम तिस।
गुण उज्जल एक गर्ग नाम पाठक बर बुध जिस॥२॥

चौपाई

इस अंतर आवन्ती देश। तामधि पुरी उजैनी बेश॥

बीरदत्त ता मांहि नरिन्द । नाम बीरदत्ता गुण ब्रुन्द ॥ ३ ॥
याने बसु पाल नृप तना । मान भंग अब कीनो घनो ॥
तब बसु पाल क्रोध चितधार । याके पुर पहुंचा तत्कार ॥ ४ ॥
तहँ कितने दिन करे मुकाम । कागज भेजा घर अभिराम ।
निज तिय अरु अधिकारी जेह । तिनपे लिख भेजी बिध येह ।५।
संस्कृत--पुत्रो अध्यायितव्यो सौ वसु मित्रोति ॥

दूजी बात यह लिखी

संस्कृत—सालिभुक्तं मसिस्पृक्तं, सर्पियुक्तं दिनं प्रती ।
गर्गोपाध्याय कस्योच्चे, दीयते भोजनाय चः ॥

याका अर्थ । चौपाई

सुत वसु मित्र पढ़ाइयो नित । गर्ग नाम पाठक जो पवित ।
ताको भोजन तंदुल घीव । लिखन हेत मिस देव सदीव ॥६॥
इम लिख हलकारनके हाथ । भेजो पत्र अयोध्या नाथ ॥
बांचनहार प्रमाद बसाय । मूरख उलटो अर्थ कराय ॥ ७ ॥

दोहा

कहत भयो यामें लिखो, पुत्र पढ़ा जो मित्त ।
पाठक को स्याही मिले, घृत तन्दुल दो नित्त ॥ ८ ॥

सोरठा

तब मूरख चर जेह, घृत चावल स्याही मिले ।
भोजन देवे तेह, घृत तन्दुल मिश्रित सदा ॥ ९ ॥

पद्धड़ी

इस अन्तर वो अब अवनिपाल । फिरके घर आयो मन खुस्याल ।
तब पाठकको बुलवाय लीन । बहु समाधान पूछो प्रवीन ॥१०॥
सो कहत भयो सुनिये नरिन्द । तुम पुन्य थकी ममहै आनंद ।
पण तुम कुलते आयो चलन्त । मिस जुत्त भोजन है भूमकंत ।११।

तिस खानेकी समरथ न मोह। ऐसे नृप सुन चित धार कोह।
रानीसे पूछो सब वृत्तान्त। उन दिखलायो कागज तुरन्त।१२॥
तब बांधनहार लियो बुलाय। ताको दंड दीनो दुःखदाय।
सिर मूँड गधे असवार कीन। निज देश थकी सिरकाढ़ दीन।१३

दोहा

याते जे साधू पुरुष, सर्व शास्त्र परवीन।
उलटो अर्थ जु मत करो, है प्रमाद में लीन ॥१४॥

चौपाई

ताते श्री जिन भाषित बोध। करनहार कीरत परमोद।
ताको सेवो भविजन चेत। सदा काल बहु भक्त समेत।१५।
तातैं सुख सम्पत अधिकान। अरु पावो तुम निरमल ज्ञान।
यह विध अर्थ हीनकी कथा। बरनी कविने आगम जथा। १६।

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषै अर्थ हीन की कथा समाप्तम् नं०९४

अथ व्यंजन अर्थहीन कथा प्रा० नं० ९५

मंगलाचरण ॥ दोहा ॥

उज्जल केवल ज्ञान जुत, नमूं देव अरिहन्त।
व्यंजन अर्थ सु हीनकी, कहूं कथा सुन सन्त ॥ १ ॥

चाल मेघकुमार की

कुर जांगल शुभ देश में जी, गजपुर नगर उतंग।
महा पदम नृप तासुको जी, जिन पदाब्जको भृंग।
सयाने पद्म श्री तिस नार ॥ २ ॥
रूप अनूपम तासु को जी, जिन भाषित वृषकाज।
ताको भावे चित विषै जी, नित प्रति सुगुण समाज ॥
सयाने और सुनो चितलाय ॥ ३ ॥

देश सु रम्य विषै लसे जी, पोदनपुर सुख थान ।
सिंहनाद तहँ नरपती जी, तिसपर क्रोध सु ठान ।
ए राजा चढ़त भयो बलधार ॥ ४ ॥
ताके पुर में जाय के जी, देखो श्री जिन धाम ।
सहस थंम तामें लसे जी, सहस कूट जिस नाम ॥
अनूपन सुख दाता जग बीच ॥ ५ ॥
बंदन कीनी भूप ने जी, धरम राग उर धार ।
मन विचार करनो भयो जी, ऐसो जिन आगार ।
अनूपम सुखदाता जग सार ॥ ६ ॥
करवाऊं गजपुर विषै जी इह विधि निश्चय ठान ।
पत्री लिखकर भेजयो जी, तासें देय बखान ।
सयाने तुम कीजो इह भांत ॥ ७ ॥
संस्कृत ॥ महास्थम्भ सहस्रस्य कर्त्तव्यःसग्रहो ध्रुवं ।
अर्थ । चाल । सहस थंम दीरघ भलेजी, बेग करो इक ठौर ।
पढ़नहार तब इम पढ़ो जी, तामध व्यंजन छोड़ ।
रे भाई सुनलो तुम धर भाव ॥ ८ ॥
संस्कृत ॥ स्तम्भ सहस्रकम् ।

अथ दोहा

याको अर्थ जो है यही, सहस अजा एक थान ।
इकठे करके पुष्ट अति, कीजो तुम बुधवान ॥ ९ ॥
तब अधिकारी जनन ने, अजा किये अति पुष्ट ।
मूरख की चेष्टा सदा, देवे बहु विधि कष्ट ॥ १० ॥

चौपाई

इस अन्तर महा पदम नरेश । पोदनपुरते आय स्वदेश ।
मंत्रिन प्रति पूछी तब राव । हम लिख भेजो सो दिखलाव । ११ ।

जबै छाग दिखाये आन । देखत ही अति रिष नृप ठान ।
सर्व जननके मारन काज । आज्ञा देत भयो महाराज । १२ ।
तब सबही जन इम बच भाष । अहो नाथ सुनिये अरदास ।
हमतो कारज करने हार । हमरो दोष न लख भूपार ॥१३॥
जिहि विधि बांचन हारे कही । सोई हमने कीनी सही ।
तब नरपति धर क्रोध प्रचंड । पढ़नहार को दीनों दंड ।१४ ।
अहो तत्व के जाननहार । साधु पुरुष जे जगत मंझार ।
ज्ञान ध्यान शुभ कारज मांह । रंच प्रमाद करो तुम नांह ।१५।

काव्य ।

ऐसे भविजन जेह जैनके बचन जानकर ।
भै मोहादिक करन हार कीजे प्रमाद दुर ॥
कोड़ो सुख दातार धरम कारज नित भावो ।
ज्ञान ध्यान निज यज्ञ विषै निज बुद्धि लगावो १६॥

दोहा

याही ते तुमरे सदा, होवेंगे कल्यान ।
आलस बैरी त्याग के, शुद्ध पढ़ो धीमान ॥१७॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोषविषै व्यंजन अर्थहीनकी कथा समाप्तम्

श्रीमतधरसेनाचार्य पुष्पदंतभूतबल

महा मुनिकी हीन अधिकवर्णके सम्बन्धमें कथा प्रारम्भः नं० ६६

मंगलाचरण । गीता छंद

जे ज्ञान केवल नेत्र धारे जगत कर पूजित सदा ।
ऐसे श्रीअरिहन्त के वर चरन बन्दौं है मुदा ॥
अब हीन अधिके वर्ण सम्बन्ध में भाषूं कथा ।
भविजनन को सुख करन हारी कही ग्रंथविषे जथा १

सोरठा

सोरठ देश मंझार, उर्जयन्त गिरवर भलो।
ता मधि गुफा सुढार, नामचंद अति सोहनी ॥२॥
तामें इन्दु समान, जैन तत्त्व जानन सुधी।
आचारज गुण खान, नाम जास धरसेनजी ॥ ३ ॥
तुच्छ आय निज जोय, इम बिचार कीनो तबै।
विच्छत शास्त्रन होय, कागज इक लिखियो जबै ४

कवित्त

अंध्र देशबेनातट पुरमें जिन यात्रा करने गुणवन्त।
आयेथे महान आचारज तिनपै लिख भेजो इह भन्त॥
दो मुनि पंडित अरथ निपुन अरु बैनबीन थिर चित महन्त।
शास्त्र प्रगट करनेके लायक मेरे ढिग भेजिये तुरन्त॥ ५॥
ऐसे पत्र विषै लिखभेजो ब्रह्मचारी के हाथ दयाल।
जैन धुरन्धर स्वच्छ आतमा सोलेकर पहुंचो तत्काल॥
वो पत्री बांचत ऋषिनायक मन माहीं अति होय खुस्याल।
हो नवीन सिख भक्ति विषै दृढ़ धरमविषै राशी गुण माल ६
पुष्पदन्त इक जान दिगम्बर दुतियभूत बल बुद्धि निधान।
सर्व शास्त्र उद्धार करनको, जिन समरथ दैदीप्य सुमान॥
जिनको भेज भये आचारज तिनै पहुंचन ते पहिले जान।
रैन समय धर सेन मुनीश्वर इह बिध स्वप्नलखो सुखखान॥
दो नवीन गोपुत्र भक्तिजुत मेरे चरण पड़े हैं आय।
ऐसे लख आनन्द हियेधर परफुल्लित हूवे अभिकाय॥
होत प्रभात उठे इम भाषत सत्पुरुषन के जे समुदाय।
तिन सन्देह निवारन हारी जैवन्ती हूजो श्रुतिभाय॥८॥

चौपाई

अब युग मुनिबर सहित मरीच। आवत भये गुफाके बीच।

भक्ति सहित गुरुके पद दोय । थुतिकर बन्दे हर्षित होय ॥९॥
तब गुरु तीन दिना पर्यन्त । इनकी यथायोग्यकर सन्त ।
तिस पीछे शुभ मंत्र प्रवीन । दियो एकको अक्षर हीन १०॥
दूजे को इक बढ़ती वर्न । दियो बताय परीक्षा कर्न ।
फिर विद्या साधन के काज । बनमें भेजदिये महाराज ॥११॥
धी आकर वे चलते भये । ऊर्जयन्त पर्वत पै गये ।
तहं श्री नेम जिनेश्वर तनी । सिद्ध शिला जो शोभित घनी१२
ता ऊपर युग ऋषि मनसेत । तिष्ठे विद्या साधन हेत ।
जिनके वर्ण हीनथो मंत्र । आई कांडीसुरी जयन्त ॥ १३ ॥

दोहा

अधिक वर्नजुत मंत्र जिन, जपो जुचित्त लगाय ।
आई देवी दांतली, तिनपै अति हर्षाय ॥ १४ ॥
जुत विरूप देवी लखी दोनूं शिष्यन तेह ।
मनमें कियो विचार हम, देवरूप नहिं येह ॥ १५ ॥

पद्धड़ी

तबही व्याकरण तने परभाय । हीनादिक अक्षर शुध कराय ।
बहु युक्ति सहित साधन करन्त । अति देवी सिद्ध भई तुरन्त१६
जबही युग मुनि गुरु वर्णपास । आकर सब चरित कहो प्रकाश ।
ऐसे सुनकर धर सेन सूर । आनन्द तने हिय धर अंकूर १७॥
इन जतियन को गुण पुंज जान । सिद्धान्त पढ़ाये प्रीतठान ।
यह दोनों गुरुके भक्त सार । नितप्राति करते सेवा अपार १८॥
दढ़कर पुरान जिन धरमधीर । सिद्धांत रचे अतिही गंभीर ।
जैसे इन ग्रंथ किये उधार । तैसेही जनकरो प्रीतसार ॥ १९ ॥

छप्पय

श्रीजुत ऋषिवरसेन ग्रंथ वारिध वर जोहै ।
अरु श्री पुष्प सुदन्त भूतबल मुनिवर सोहै ॥

तीन जगत हितकार सुरन कर पूजित नामी ।
मेरी बुद्धि दयाल करो जिन मतमैं स्वामी ॥
शुभ सुर शिवदायक आपहो, विघन समूह निवारिये ।
कल्याणकरो सब भव्यनके, सबै उदंगल टारिये ॥ २० ॥

इतिश्रीआराधनासार कथाकोषविषय श्रीमतधरसेनाचार्यपुष्पदन्तभूतबल महामुनिकी कथा समाप्तम् नं० ९६ ।

अथ औषधदान बासुदेव की कथा ९७

मङ्गलाचरण ॥ काव्य ॥

सरब अमर अर इन्द्र जजें इनके पद वारज ।
ऐसे श्री अरिहन्त देव जिन तारे आरज ॥
तिन को नमकर कहूं कथा सु वृत ऋषि केरी ।
सुनो सबै चितलाय कटे तातें भव फेरी ॥ १ ॥

चौपाई

देश सुराष्ट्र विषै अभिराम । महा पुरी द्वारा वति नाम ।
उपजे श्री हरवंश मझार । कृष्न नाम नारायण सार ॥२॥
तामे राज करे बड भाग । जिनमत में धारे अनुराग ।
सतभामा दिक सहस अनेक । प्रान पियारी सहित विवेक ॥ ३॥
तीन खंड के सुरनर राय । इन की सेव करें सिरनाय ।
छपन कोट तास परिवार । सुख से तिष्ठे गेह मझार ॥ ४ ॥
अब श्री नेमीश्वर जिन ईस । तिष्ठे उर्जयन्त गिरि सीस ।
इम सुन के बंदन के काज । कृष्न आदि चाले महाराज ॥५॥
मग में सु व्रत तप निधि साध । छीन शरीर सहित बहु व्याध ।
ऐसे लख मुकुंद बुध धार । धरम राग हिरदे अविकार ॥६॥
जीवक नाम वैद्यसे पूछ । भेषज मिश्रित मोदक स्वच्छ ।
सब के घर में धरे बनाय । जाते मुनि को रोग पलाय ॥७॥

दोहा ॥

जब अहार लेने गये, गुण उज्जल वो साध।
मोदन भक्षन थकी सबै, नासी तनकी व्याध॥८॥
तब हर भेषज दानते, भवनाशक सुखकंद।
तीर्थंकर पिह कत तनो, कीनो उत्तम बन्ध ॥ ६ ॥

अडिल्ल ॥

महा पात्र को दान सदा ही सुखकरे। अहो बात यह जोग भक्त सबते सिरें। कौन वस्तु दुर्लभ तिन को जगके विषै। सबही सुल्लभ जान श्री गुरु इम अखै ॥१०॥

काव्य ।

इस अन्तर इक दिना व्याध वर्जित मुन नायक।
देखे तबै मुरार हरष जुत भाषे बायक ॥
हे स्वामिन जगदीश कुशल है तुम तन मांही।
निस्नेही वे साध बचन इह भांत कहाई ॥ ११ ॥
हे राजन इह देह अशुच नाना रंग धारे।
छिन में रूप निधान छिनक दुरगंध अपारे॥
ऐसे सुनत मुकंद चित्त में हर्ष बढ़ायो।
स्तुति करत अपार फेर अपने पुर आयो ॥ १२ ॥
हुतो वैद्य हर साथ नाम जीवक तिह बारी।
सुन के मुनि के बैन चित्त में येम विचारी॥
मेरो गुण इन साध कछू हरि तें नहिं भाषो।
ऐसे निन्दा ठानि सत्य उर मांही राखो ॥१३॥

दोहा ।

फिर मर कर आरत थकी, नदी नर्मदा धीर।
तहँ मरकट उपजत भयो, दीरघ लहो शरीर ॥१४॥

मूरख जन मुनिवर क्रिया, रंच नहीं जानन्त।
निन्दा करन थकी लहे, खोटी योनि अनन्त ॥१५॥

चौपाई।

इस अन्तर अब वे ऋषि राज। वृक्षतले तिष्ठे महाराज।
परियंकाशन ध्यान सुधार। तब उस तरुकी टूटी डार ॥१६॥
लगी हृदय मांही तत्काल। दियो विदार उरस्थल साल।
जब ही कपि से देखो आन। जाती सुमरन पायो ज्ञान ॥१७॥
तब सब क्रोध भाव तज दीन। बहु कपि तहाँ इकट्ठे कीन।
और वृक्ष की लता अनेक। लाये मरकट सहित विवेक ॥१८॥
तिसे सशांस लपेट तुरन्त। जतन सहित काढ़ी हरषन्त।
उस शरखर को दूर बगाया। पूरब संसकार परभाया॥ ॥१९॥
फेर औषधी लाय महान। घाव विषै लाई बुधवान।
धर्म तिनो हियधर अनुराग। ताते पुन्य लहो बड़भाग ॥२०॥

दोहा।

पूर्व भव अभ्यास जो, सुख कारी जन ठान।
सोई इस भव में करे, सबही की बान ॥२१॥
अवध नेत्र धारक मुनी, पुरब लो विरतन्त।
मरकट को बतलाय के, सम्बोधियो तुरन्त ॥ २२ ॥

चाल छंद ॥

तब इह वानर बुध वन्तो। गुरु के वच सुन हरषन्तो।
फिर जिन वृष सुर शिवदाई। तामें इन चित्त लगाई ॥२३॥
सम्यक्त अणु व्रत धारे। विधते कपि हिय में धारे।
पाले दिन सप्तम ताही। फिर कर सन्यास सुख दाई ॥२४॥
शुध भावन काया त्यागी। सुर भयो महा बड़ भागी॥
बो प्रथम स्वर्ग के माही। नाना विधि ऋद्ध लहाही ॥ २५ ॥

जो जिनमतमें चित लावे। वह क्या क्या सुख नाहिं पावे।
देखो कपि सुरगति पाई। इस वृषते को अधिकाई ॥ २६ ॥

दोहा।

ताते यह जिन धर्म अब जयवन्तो जग होय।
जा प्रसाद प्रानी लहे, नर सुरके सुख सोय ॥२७॥
फिर शिव पदवी मिलत है, याही के परसाद।
ताते भविजन जतन ते, ध्यावो तज परमाद ॥२८॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय गुणपणा में ओषध दानाश्रित वासुदेव की कथा समाप्तम् नं० ९१

अथ हरिसेन चक्रवर्तीकीकथाप्रा०

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

केवल नैन विशाल, जे भगवत धारत सदा।
तिनें नवाकर भाल, कहूं कथा हरिसेनकी ॥ १ ॥

चौपाई।

अंग देश जगमें विख्यात। पुरी कंपिला तहां बसात।
तामधि सिंहध्वज भूपार। गुण उज्वल है बप्रा नार ॥ २ ॥
तिन दोनोंके पुन्य प्रमान। सुत हरिसेन भयो बुधिवान।
सुभटनमें अग्रेश्वर सार। सत्पुरुषन कर मान्य उदार ॥ ३ ॥
दाता भोक्ता लक्षणवन्त। इत्यादिक गुण धरे अत्यन्त।
अब इनकी जो विप्रामाय। अरहत धर्म धरे अधिकाय ॥४॥
जिन पद अम्बुज भृंगी जेम। सेवे नितप्रति धर बहु प्रेम।
नंदीश्वरके परव मंझार। करवावे सुत सब अधिकार ॥ ५ ॥
अब नृपकी जो दूजी भाम। मत उद्धत लक्ष्मी मतिनाम।
मिथ्यामति गिरसत तिहघरी। भूपतिसे इम विनती करी ॥६॥
अहो नाथ इस नगरी बीच। ब्रह्माको रथ सहित मरीच।
पहिले भ्रमनकरे सुखदाय। पीछे जिनको रथ निकसाय ॥७॥

दोहा

तब राजाने इम कही, ऐसेही विधि होय।
यह वृतान्त वप्रा सुनो, चित में बहु दुख जोय ॥८॥
धरम नेह हिय धार के, करो प्रतिज्ञा येम।
पहिले जो जिन रथ भ्रमें, तो भोजन नहिं नेम ॥९॥

सोरठा

जे सत्पुरुष महान, तिनके वृषही शरण है।
जे कुश्चित अज्ञान, ते मिथ्या मगमें पगे ॥१०॥
तब हरषेन महान, भोजनको आवत भयो।
माताको दुख जान, घरसेती निकसो जबै ॥ ११ ॥

गीता छन्द

चलके सुविद्युत चोरकी पल्ली विषै पहुंचत भयो।
तिह देखके दुष्टातमा शुक बचन इह विधके चयो ॥
हा अहो चोरो याही पकड़ो भूपको सुत इह सही।
यह सुनतही शुकमारने झट पंथकी गैला लही ।१२।
फिर चालके सतमनू तापस तनी पल्लीमें गयो।
तहँ इन्हें आवत देखके, यक कीरने अति सुखलयो।
मनमें विचारो लसत आकृत जासु नरकी अति भली।
तामें अधिक गुण बसत निश्चय येम चित धरकेरली।१३
इम बचन बोलो सुनो तापस जातराज कुमार है।
तुम करो पाहुन गत इन्हीं की बड़ो पुरुष उदार है॥
इह सुनत ही हरिषेन पहिले शुक तनी बातें कही।
फिर पूछियो मेरो जु आदर क्यों करावत है सही ।१४।

दोहा

तब इन के बच कीर सुन, कहत भयो हरषाय।
तुम राजा के पुत्र हो, सुनिये चित्त लगाय ॥ १५ ॥

चौपाई

जो सुक तुम देखो नर नाथ। सो मेरो हैगो वह भ्रात ॥
मोको पालो तपसिन सही। उन औरनकी संगति लही।१६।
मैं तो इनके सुनूं सु बैन। वो बट पारनके दिन रैन ॥
सो संसर्ग तनो परभाव। देख लियो तुम ने नर राव।१७।
इस अंतर सत मनु बिख्यात। हुतो सु चम्पापुरको नाथ।
नागवती रानी तिस जान। जन्मेजय सुत उपजो आन।१८।
मदनावली सुता गुण गेह। रूपशील वर धारे तेह ॥
निज सुत को दे राज अवन्य। भयो तापसी यह सत मन्य ॥१६॥
अब जन्मेजय को इक दिना। निमती आय बचन इम भना ॥
मदनावली कन्यका जोय। चक्री के पट रानी होय ॥ २० ॥
तब राजा सुन कियो बिचार। ज्ञानी बैन होत सत सार ॥
कोट कल्प जो जावे सही। तोऊ अन्यथा होवे नहीं ॥ २१ ॥
इस अंतर इक उंड्र सुदेश। तहां कलाकल नरपत वेश।
ताने सुनी वारता सोय। यह कन्या चक्री तिय होय। २२।
तबही जन्मेजय के पास। मदनावलि जांची गुण रास।
जब बाने दीनों यह नाह। सुन उन क्रोध धरो अधिकाह।२३।

दोहा

शीघ्र आय चम्पापुरी, बेढ़ लई नर राज।
काम अंध जे पुरुष हैं, क्या क्या करें न काज । २४ ।
तबै काल कल जुद्ध नित, करन लगो दुख धाम।
नागवती इम देख कर, करत भई यह काम ॥ २५ ॥
निज पुत्री को साथ ले, पथ सुरंग तत्काल।
नागवती निकसत भई, आई बनी मझार। २६।

पद्धड़ी

जहां तापस है सतमन्यु नाम। तासे कहके बिरतांत भाम।

तिष्ठी ताकी पल्ली मझार । अब और कथा सुन चित्त धार ।२७।
इस कन्याको हरषेन देख । चितमें अनुराग धरो विशेष ।
अरु कन्या भी इन मुख निहार । विहबल ह्वै कर तन काम धार २८
मूरख तापस इह बिध लखंत । हरषेन निकाल दियो तुरंत ॥
तब बुद्धिमान सुकुमार येह । मन में निश्चय इम धार लेह । २९ ।
जो इह तिय पाऊं कर विवाह । तो भक्ति सहित कर के उछाह ।
निज देश विषे जिनके आगार । करवाऊं बहुत उमंग सार । ३० ।
योजन योजन प्रति भूप बीच । श्री जिन पधराऊं जुत मरीच ।
ऐसी परतिज्ञा चित्त ठान । अरु आगेको कीनो पयान । ३१ ।

दोहा ।

अहो बात यह योग है, जो सुर शिव के पात्र ।
ते जिनवर की भक्ति में, लावत धन मन गात्र । ३२ ।

काव्य

इस अंतर इक सिंधु देश में सिधु तटपुर है ।
नाम सिंह नद भूप धन मती नारी वर है ।
सिंधु देवि को आदि पुत्र का सत सुखदाई ।
लावनता वे धरे रूपगुण जुत अधिकाई । ३३ ।
तिन कन्या को देख निमत्ती गिरा उचारी ।
चक्रवर्त की नार श्रेष्ठ होवे यह नारी ॥
अब हरषेन कुमार गये तिस देश मंझारी ।
सुनके सब बिरतान्त राग इन चित में धारी ॥ ३४ ॥

दोहा

अब वे सिन्धु नदी विषे, गईं न्हान बड़भाग ।
ऐसे सुन हरषेन तहँ, पहुंचे जुत अनुराग । ३५ ।
वसि कर मस्त करिन्द्र कूं, परनी वे सब नार ।
सुख से तिष्ठे महल में, यह हरषेन कुमार ॥ ३६ ॥

चौपाई

इस अंतर इक रैन मझार। बेगवती कोई खेचर नार॥
इनको रूप देख अधिकाह। हरले चली गगनके मांह ॥ ३७॥
भये सचेत कुमार तुरंत। देखी उड़गन की बहुपन्त॥
क्रोध सहित भाषे बच गाज। बांधी मुठी मारन काज॥३८॥
तब खगनी बोली कर जोर। हे स्वामिन सुन बिनती मोर॥
रूपाचल पै सुखको धाम। सूर्योदय पुर अति अभिराम॥३९॥
ताको बुद्धिवान गुणमाल। नाम श्रीन्द्र धनु है भूपाल।
जाके बुद्धिमती पट नार। पुत्री जे चंद्रा अविकार। ४०।
सब पुरुषनमें काढ़त दोष। ऐसे गुण उज्जल बुध कोष।
और शतक कन्या तिस संग। तिष्ठत हैं सब सुंदर अंग। ४१।
राजाको प्यारी अधिकाय। एक दिन निमती वचन सुनाय।
होनहार चक्री की नार। यह कन्या बहु पुन्य भंडार॥४२॥
तब मैंने तुमरो चित्राम। लिख कर दिखलायो अभिराम।
देखतही वह विहवल भई। तातें चलकर परनो सही॥ ४३॥
ऐसे हर्ष सहित बच भाष। लेकर चलत भई आकाश।
पहुँची नृपति तने बर गेह। इनको लख हर्षित सब तेह ४४॥

दोहा

इनके ब्याह समै विषै, आये चम्पु संयूत।
गंगाधर अरु महीधर, कन्या मातुल पूत॥ ४५॥
तिनने कर संग्राम बहु, चौदह रतन उदार।
नव निधिके स्वामी भये, इह हरषेन कुमार॥ ४६॥

चौपाई

तिनको जय कर कन्या वरी। फिर निज ग्रहचाले तिह घरी।
बहु बिभूत लेके निज लार। ब्याही मदनावली सुनार॥४७॥

कंपिल्ला नगरी में आय । जिन यात्रा कीनी अधिकाय ।
पूरी जननीकी सब आश । ब्रह्माको रथ कीनों नाश ॥ ४८ ॥
निज प्रतिज्ञाके अनुसार । करवायो श्रीजिन आगार ।
जे जन हैंगे पुन्यनिधान । तिनके शुभ बरते अधिकान ॥४९॥

सवैया इकतीसा

सोई जिनराज जयवन्त होय सर्वकाल देव इन्द्र चन्द्र कर पूजित सदीव है । जिन भाषो वृषसार तास धरलेय पार तोड़ जग जारभये शिव तिय पीव है ॥ गुणरूपी रत्न कोष रहित अठारे दोष जगके प्रकाशबे को चन्द्र सुखसीव है । ऐसे महाराज को नमाऊं भाल श्रम टाल, हूजिये दयाल सुख देवे जो अतीव है ॥ ५० ॥

दोहा

यह चक्री हरिषेनकी, कही कथा हित दान ।
सबैं अमंगल नाशिनी, करत सबै कल्यान ॥ ५१ ॥

इति श्रीआराधनासार कथाकोषविषै हरिषेनचक्रीकी कथा समाप्तम् नं० ९८ ॥

अथ कृष्णनारायणकीकथा प्रा०

मंगलाचरण दोहा

सुर असुरन करके सदा, पूजनीक जिनचंद ।
तिन पद नम भाषूं कथा, हियमें धर आनंद ॥१॥
परजीवन के गुणनके जे ग्राही बुधिवान ।
ताको वर्णन अवसुनो, मन बच देकर कान ॥ २ ॥

पद्धड़ी ॥

इक दिना विषै परिथम सुरेश । धरमानुराग धरके विशेष ।
निज सभा विषै कीनों बखान । गुणग्राही जन जगमें महान ३॥
जो तजकर भारी दोष जीव । किंचितभी गुण गावैं सदीव ।

सो उत्तम हैं त्रय जग मझार। इन वर्णन कीनों बहुप्रकार ४॥
तब सभा माहिं ते देव एक। सिरनाय सुपूछो जुत विवेक।
हो स्वामिन इस भू मध्य कोय। अबभी ऐसोको पुरुष होय ५।
जब इन्द्र कही सुर सुन सुलेव। द्वारामतिमें है वासुदेव।
गुण उज्वल नोमें हरि निहार। ते हैं गुणग्राही जगमंझार ६॥

दोहा

तवही सुरत जनाक को, आयो भूमधि सोय।
लेन परीक्षा कारने चितमें हर्षित होय ॥ ७ ॥
नेमीश्वर को बन्दने, जाते हुते मुरार।
तवही सुर माया करी, पथमें तिसही बार ॥८॥

चौपाई

मृतक स्वानको रूप बनाय। कीनों दुर्गंधित निज काय।
इसकी लख दुर्गंध अपार। हरिसेना भागी ततकार ॥ ९ ॥
तब वह सुर दूजो बपु कीन। बूढ़ो द्विज बनके परबीन।
कृष्ण पास आ इम बच भाश। यह कूकर दुर्गंध निवाश।१०।
सुनके बासुदेव इम कही। हो भूदेव देख तू सही।
याके रदन सुपंकतिवान। उज्वल सोहें फटक समान ॥ ११ ॥
ऐसे बच सुन परम रसाल। तजके सुर माया जंजाल।
परगट ह्वै चित हरषितवन्त। कहत भयो सबही बिरतन्त।१२।
पूजा अस्तुति हरिकी ठान। फेर गयो अपने अस्थान।
और भव्यभी जगत मंझार। जिनवर भक्ति हियेमें धार॥१३॥

दोहा

दोष पराये छोड़ कर गुण गहलीजे नित्त।
जाते सुख सबही लहो, जस उपजे सुन मित्त १४॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषै गुणग्रहण कथा समाप्तम् नं० ९९।

अथ मनुष्यभवपै दशदृष्टान्तकथा प्रा०

मंगलाचरण अडिल्ल

उज्वल केवल ज्ञान सहित जिनचन्द जी। तिन पदाब्ज को नमूं सुधर आनंदजी ॥ मानुष भव अति उत्तम श्रीजिनवर कहा ॥ ता ऊपर दृष्टान्त कहूं दुर्लभ महा ॥१॥

गाथा

चोलय पासय धम्मं जूवर दणाणि मणि चक्कंचा।
कुमं युग परमाणू दश दिहंता मणुय लम्भे ॥२॥

सोरठा ॥

चोलक या सक धान, दुत्तर तन अरु सुन्य गिन।
चक्रकूर्म जुग मान, परमाणू जुत दश भये ॥३॥
पहिले सुनमन लाय, चोल्लक को दृष्टान्तही।
जाते संसय जाय, धर्म राग चित में बढे ॥४॥

काव्य।

तीन जगत कर बन्दनीक नेमिश्वर स्वामी।
ते पहुचे निरबान, कर्म हनि के वसु नामी।
तिन पीछे एक देश बिनीता तामें सोहे।
नगर अयोध्यासार सुरंन के मन को मोहे ॥५॥
ता मांही ब्रह्मदत्तनाम, अन्तम चक्रेश्वर।
जाके हैं एक सहस भट्ट सूरन अग्रेश्वर।
नार सुमित्रा जास पुत्र वसुदेव नाम जिस।
सो मूरख अधिकान जानियो चक्री नें इस ।६।
सहस भट्ट तें मीच लही तिस पीछे इसको।
सेवा में अति शिथिल जान पद दियो न तिसको॥
अहो सम्पदा राज मानता निध सुख दाई।
सेवा बिन जग मांहि ,कोई जल नाहि लहाई ॥७॥

दोहा ।

अब इस मात सुमित्र का, तृण की कुटी मंझार ।
सुतको पाले आस जुत, जतन थकी निर्धार ॥ ८ ॥

चोपाई ॥

अबै सुमित्रा याकी माय । कमर विषै लड्डू बंध वाय ।
गमना गमन सिखावे येव । क्रमकर बृद्धि भयो बसुदेव ॥९॥
तब किंचित चक्री की सेव । करन लगो चित दे वह भेव ।
इस अन्तर अब षट् खँड कन्त । ताको हयले गयो तुरन्तं ॥१०॥
वाजी दुष्ट चपल अधिकाय । चक्री को डालो बन माय ।
तहां क्षुदा तृषा अति लगी । मनकी सुध बुध सबही भगी ॥११॥
तब पहुंचो बसुदेव सुजाय । भोजन दे तृपतायो राय ।
अहो दियो जो औसर थान । तुच्छ भी देवे सुःख महान ॥१२॥
चक्रवर्तितब पूछन कीन । तूहै कौन कहो परवीन ।
तब शिरनाय कही इन बात । सहस्र भट्ट को सुत मैं नाथ ॥१३॥
ऐसे सुन कर याके बोल । कर कंकण तब दियो अमोल ।
फिर कर आगे अवनीपाल । नगर अयोध्या में तत्काल ॥१४॥

दोहा

कोट पोल तैं इम कही, तुझ कर कंकण सार ।
जात रहो है पथ विषै, ढूंढ लाव तत्कार ॥ १५ ॥
तब इह ढूंढन तहँ गयो, जहँ ज्वारी बहु भेव ।
कंकण की तहँ बारता, करत गहो वसुदेव ॥ १६ ॥

चौपाई ॥

यांको लायो चक्री पास । ताही देख नर पति वचभाष ।
हे बसु देव जो तुझ चित चाह । मांगे वेग मैं देह उमाह ॥१७॥
तब तिन कही सुनो भू नाथ । मैं नहिं जानूं जानेमात ।

तातें अब निज गृह में जाय । पूछ वेग मांगूं गो आय ॥१८॥

दोहा ।

निज जननी ते पूछ कर, मांगत भयो सु येम ।
चोल्लक भोजन नाथजी, दीजे धरकर प्रेम ॥१९॥
ब्रह्मदत्त पूछत भये, वह भोगन किम होय ।
ताको भेद बतायदे, सो देऊं मैं तोय ॥२०॥

चौपाई ॥

तब वसुदेव कही सिरनाय । पहले तुमरे घर में जाय ।
बहुत बड़ाई जुत असान । पट भूषण भोजन सन्मान ॥ २१ ॥
पाऊं इह विधि ते मैं सार । फिर अन्तेवर कीजे नार ।
याही विधि भोजन दे तेह । मुकुट बन्ध भी इस विध देह ॥२२॥
अस इन को परियन समुदाय । नगर सेठ आदिक बहुभाय ।
मोको भोजन दे इह भन्त । हुकम तुम्हारे ते भूकन्त ॥ २३ ॥

दोहा ॥

अहो भव्य इन वस्तु की, ताको प्रापत जोय ।
होवे तौ अचरज नहीं, चित में धारो कोय ॥ २४ ॥
पण यह मानुष भव विमल, नष्ट होय जिह वेर ।
तिस मिलनो दुर्लभ महा, पृथ्वीतल पै फेर ॥२५॥
इह विधि भविजन जान कर, कुश्चित मारग त्याग ।
श्री जिनभक्ति हिये धरो । नित प्रति जुत अनुराग ॥२६॥

इति श्री अराधनासार कथा कोष विषै चौल्लक दृष्टान्त कथा १ समाप्तम् ॥

अथ यासक दृष्टान्त कथा प्रा० ॥१०१॥

मङ्गलाचरण ॥ चौपाई ॥

मगध देश के मध्य महान । सत्त द्वार पुर शोभावान ।
ताको सत्त द्वार भूपाल । भुजबल धारी अरिको साल ॥ २७ ॥

नगर कोटके शतक दुवार। करवाये मन हर्ष सुधार।
एक एक गोपुर मधि जान। ग्यारे ग्यारे सहस प्रमान ॥२८॥
थम्भ लगाये अधिक अनूप। तामधि अस्थानक सुखरूप।
बने छानवे शोभावान। एक एक थम्भन प्रति मान ॥२९॥
सब अस्थानक सें हरषाय। दूतकार नित खेलें आय।
इक दिन शिवशर्मा भूदेव। सब ज्वारिन प्रति भाषी एव ॥३०॥

काव्य

अहो सुनों मैं दाव एक गेरूं इह वारी।
जो होवे मम जीत जिते तुम होगे ज्वारी॥
जीतो अपनो द्रव्य मुझे देवोगे अबही।
वे बोले हम देहि देयंगे तोको सबही॥ ३१ ॥
तबही इह दुजराज लेय पांसे कर मांही।
डारे भूके मध्य कर्म वश जीत लहाही॥
सब को द्रव्य मंगाय लियो ताने तत्कारी।
अहो कठन इह जोग महा दीखत है भारी ॥३२॥

दोहा

जो कदाचि इह बात सत, होवे तो हो जाय।
पण मानुष भव अति कठिन, नष्ट भयो न लहाय।३३।
कोड़ो ज्वारिन को दरब, जो लागे तिस हात।
ताते यह मानुष जनम, अति दुर्लभ है भ्रात॥ ३४ ॥

सोरठा

याते भविजन जेह, शुभ मारग में बुध धरो।
सो शुभ पथ सुन लेह, जा विधि श्री जिनने कही।३५।

चौपाई

भगवत चरन कमलकी सेव। भक्ति सहित कीनों बसु भेव।

पात्रदान दीजे सुखरास । संयम शील करो उपवास ॥ ३६ ॥
येही पुन्य जानिये भव्य । याको नित प्रति पालो सर्व ।
फिर इह दुल्लभ है परजाय । ताते वृष सेवो चित लाय ॥३७॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषै याचक दृष्टांत समाप्तं ।

अथ धान्यक दृष्टान्त प्रारम्भः १०२

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

अब धानक दृष्टान्त, सत्पुरुषन हितकार जो ।
करूं संक्षेप बखान, सुनके चित में धारिये । ३८ ।
जम्बू द्वीप समान, गरत एक खुदवाय के ।
योजन सहस प्रमान, गहराई ताकी करे । ३९ ।
तामधि सरसों डार, भरें सिखा तक तासु को ।
फिर दिन दिन प्रतिसार, एक एक कर काढ़ियो ।४०।
जो कदाचि बस काल, सब सरसों निकसे सही ।
तो यामें गुणमाल, विसै चित धारो नहीं । ४१ ।

दोहा

पण तुछ पुन्नी जीव को. यह मानुष पर जाय ।
नष्ट भई फिर ना मिले, जानो मन बच काय ।४२।
ताते श्री जिन चन्द्रने, कहो पुन्य हितकार ।
ताको आशय नित करो, जो पाओ भव पार ।४३।
इस धान्यक दृष्टान्त की, कथा कहूं सुन मीत ।
ताके सुनते धरम में, उपजत है अति प्रीत । ४४ ।

चौपाई ।

देश बिनीता अधिक दिपन्त । पुरी अयोध्या तहां बसन्त ।
तामें परजापाल नारिन्द । सुख से तिष्ठतहै गुण वृन्द ।
इस अन्तर राजगृहिनाथ । नाम जास जितशत्रु विख्यात ।

चढ़ो अयोध्या लेने काज। संग लेयकर सकल समाज ॥४६॥
ऐसी सुन नृप परजापाल। सब जन प्रति भाषी तिह काल।
तुम सब जन इक ठौर मंझार। धान एकट्ठौ करो अबार ॥४७॥
सबही जन तब सुनत प्रमान। अपनो अपनो धान सु आन।
नृप भंडार विषै तत्कार। कियो एकट्ठौ संख्या धार ॥४८।
इस अन्तर मद जुत जित शत्रु। आयो कौशलपुरी पवित्र।
है समर्थकर हीन नरेश। उलटो फेर गयो निज देश ॥४९॥
तब परजा के लोगन आन। नृपसेती मांगो निज धान।
जब नरनाथ कही इम बान। अपनो अपनो लेहु पिछान।५।
अहो महान कठिन यह बात। जो कदाचि जन हर्षित गात।
दैवयोगते निज निज अन्न। काढ़े तो अचरज नहिं मन्न ५१
पण मानुष भव दुर्लभ येह। नष्ट भयो पावे नहिं तेह।
ऐसे लखकर सज्जन जीव। धर्म विषै मन धार सदीव ॥५२॥

इति धान्यक दृष्टांत ३ समाप्तम्

अथ दूत दृष्टान्त प्रारम्भः १०३

चौपाई ॥

सत्तद्वारपुर अद्भुत बसे। पांच शतक गोपुर तिस लसे।
इक इक दरवाजे प्रति सही। पांच पांचसौ शाला कही ॥ ५ ॥
इक इक शालामें तज सांच। दूतकार खेलें सत पांच।
तिनमें चपी नाम इक जान। सब ज्वारिन में है परधान।५४।

दोहा

ताने सबकी कौड़ियां, जीत लई तत्कार।
तब वे तज जूवा गये, दशहो दिशा मंझार ॥ ५५ ॥
कर्म जोगते फिर मिले वो ज्वारी समुदाय।
तो अचरज नहिं लाइये, पण सुनिये चित्तलाय ५६॥

यह मानुष भव अति कठिन, जो कदाचि नश जाय।
तुछ पुन्नीको ना मिले, कोटक भवके मांह ॥५७॥

सोरठा

और सुनो हितकार, जूवेको दृष्टान्त अब।
ताही नगर मंझार, निरलच्छण ज्वारी बसे ॥ ५८ ॥

पद्धड़ी

सो पाप उदै सो जान भीत। सुपनेमें भी नहिं लहत जीत।
अरु जो कदाचि सबद्भूत कार। तिनको जीतें यह छिनमझार५९
तिनकी बराटका कर गहन्त। फिर तिनहींको देदे तुरन्त।
सब चलेजाय वे हर्षमान। दशहू दिशिको वे कर पयान॥६०॥
अरु फिरवो कर्मतने प्रभाव। मिलजावें तो अचरज न लाव।
पण इहमानुष भव अतिमहान। गयो हाथ न आवे फिर सुजान६१

दोहा

तातें निज कल्याणके, हेत महा यह धर्म।
सेवो भावजन चित्तदे, जो पावो शिव शर्म ॥ ६२ ॥

इति जूवा दृष्टान्त समाप्तम्॥

अथ रत्नदृष्टान्त प्रारम्भः नं० १०४

सोरठा

भव सम्बोधन हेत, रतन तनो दृष्टान्त अब।
कहों सुनो दे चेत, इह मानुष भव अति कठिन ।६२॥

काव्य

प्रथम भरत चक्रेश सगर मघवा जो बखानो।
सनतकुमार सशान्त कुंथ अरु जिनवर जानो॥६३॥
अष्टमभयो सुभूम फेर महापद्म जान सत।
फिर उपजे हरषेन और जयसेन ब्रह्मदत्त ॥ ६४ ॥

इन द्वादश चक्रेश तने वरजे चूड़ामन ।
रतन जुपृथ्वी काय, लिये देवन हर्षित तन ।
दैवयोग कर रतन रासिवे सर्व अवनि पर ।
इकठे होय तुरन्त, तोहु चित बिसमय मतधर ॥६५॥

दोहा

पण तुछ पुन्नी जीवको, मिले न नर भवफेर ।
इह दुर्लभ कर जानिये कही गुरन इस टेर ॥ ६६ ॥
तातें भगवत धरमको सेवो नित बुधवन्त ।
जातें बहु कल्याण है सुर शिव सुख विलसंत ॥६७॥

इति रत्नदृष्टांत समाप्तम्

अथ स्वप्नदृष्टान्त प्रा० १०५

दोहा

स्वप्नतनो दृष्टान्त अब, सुनो सबै चितलाय ।
यह मानुष भव अति कठिन, श्रीजिनवर दरसाय ६८॥

चाल छंद

शुभ देश अंवती जोहै, जहँ पुरी उजैनी सोहै ।
जहां काठ भार नित लावे । यक हलक मनुष कहावे ॥ ६९ ॥
इक दिन वो बनको धायो । बहु काष्ठ भार धर लायो ।
भयो खेद खिन्न अधिकाई । तबही तिस निद्राआई ॥ ७० ॥
तिन सुपनो येक लखायो । पद चक्रवर्त को पायो ।
पाछे तिस नार जगायो । फिर काठ अर्थ बन आयो ७१॥

दोहा

ऐसे सोवत के विषै, भयो हुतो चक्रेश ।
फेर जाग कर काठको, लेन गयो निज भेश ॥७२॥

तब वो षटखंड पति तनी, रही विभूत न कोय ।
तैसे मानुष भव कठिन, मिलनो दुर्लभ जाय ॥७३॥

इति चक्रीश स्वप्न दृष्टांत समाप्तम्

अथ रत्नदृष्टान्त प्रा० १०६

चौपाई

वाइस थम्भ बने दृढ़सार । थंभ थंभ प्रतिचक्र निहार ।
इक इक चक्रविषे बुधवान । आरे सहस सहस परमान ॥७४॥
इक २ छिद्र आरे की ओर । ताको सुभट फिरावें जोर ।
कोई बैठ थम्भके माल । राधा बेध करे तत्काल ॥ ७५ ॥
जो कदाचि निज पुन्य बसाय । विधवा जाय तो अचरजनाय ।
ताकी कथा सुनो परबीन । काकन्दी नगरी इक चीन ॥ ७६॥
ताको द्रुपद नाम भूपाल । द्रुपदी सुता रूप गुण माल ।
ताके श्रेष्ठ स्वयम्बर थान । आये अरजुन कलानिधान ॥८७॥
तिनमें राधा बेध अनूप । कर व्याही द्रुपदी शुभ रूप ।
पुन्य उदय नासे सब दुःख । क्यों नहिं होवे जगमें सुःख ७८
अहो काज यह सब होजाय । तो विस्मय चितमें नहिं लाय ।
पण यह मानुप भव सुख गेह । अति दुर्लभ है जग में येह ॥७९॥
पुन्य विना पावे नहिं जीव । ताते धरम जो करो सदीव ।
वृष हीते होवे कल्याण । एही देवे सुर शिव थान ॥ ८० ॥

इति रत्न दृष्टात समाप्तम् ॥

अथ कूर्म दृष्टान्त प्रारम्भः नं० १०७

दोहा ।

कूर्म तनो दृष्टान्त अब, कहूं पूर्व अनुसार ।
याको भवि जन चित धरो, नरभव कठिन निहार ॥८१॥

अडिल्ल ॥

नाम स्वयम्भू रमण उदधि सबके परे। तामधि कच्छप एक सु दीरघ तन धरे। निज काया के चर्म तने परभायजी। भ्रमन करे जल के ऊपर अधिकाय जी ॥८२॥

सहस वर्ष में तन के चरम विषै कही। सूक्ष्म छिद्र मझार भान देखो सही। फिर कदाचि उस छिद्र उसी खग कोतही। देखन चाहे तो फिर ब्योंत बने नहीं॥ ८३ ॥

दोहा ॥

जो कदाचि तिस छिद्र में मारतण्ड दरसाय।
तो अचरज मानों नहीं, पण दुर्लभ यह काय ॥ ८४ ॥

इति कूर्म कथा समाप्तम् ॥

अथ युग दृष्टान्त प्रारम्भः नं. १०८

दोहा ॥

अब युग को दृष्टान्त इक, और सुनो चितलाय।
सुमन सु हिरदे में धरो, दुर्लभ नर पर जाय ॥८५॥

चौपाई ॥

दोय लक्ष योजन परमान। ऐसो लवण समुद्र महान।
तिस के पूरब भाग मंझार। गाड़ो को जवो चित धार॥ ८६ ॥
तास कीलका जो छुटजाय। फिर मझिम के उदधि सु आय।
कर्म जोग ते कीली एव। छिद्रविषै आये स्वय भेक ॥८७॥
तो अचरज जानो नहिं मीत। पण मानुष भव परम पुनीत।
छूटे ते फिर मिले न एह। इम जानो भवि निः सन्देह ॥८८॥

इति युग दृष्टान्त समाप्तम् ॥

अथ परमाणू दृष्टांत प्रा० १०६

दोहा ॥

अब दशमी दृष्टान्त शुभ, परमाणु को येह।
कहं सुनो तुम चित्त दे, इम दुरलभ नर देह ॥ ८६ ॥
दंड रतन चक्रेश को, चार हस्त को जोय।
परमाणु सब तास को, खिरी काल वस सोय ९०॥

चौपाई ॥

जो कदाचि परमाणू वेह। किसी दंड में आवें तेह।
तो विस्मय नहिं करो सुजान। पण मानुप भव दुर्लभमान।९१।
ऐसे लखकर पण्डित सार। पुन्य विषै चित बारम्बार।
धारो कोड़ो सुख जो होय। यही भवा नल कोहै तोय ॥९२॥
यह मानुप भव की परजाय। हितकारी फिर मिलेन आय।
अहो सुमन सुनिये दे कान। को ओ भव है दुरलभ जान ॥९३॥

काव्य ॥

इम विचार कर पुन्य रूप सम्पत के कारन।
जिन भाषित बृष सार हिये में कीजे धारन।
ताहीते सुख होय सबै निश्चय कर भाई।
भाषी श्री गुरु एम सुनो भवि चित्त लगाई ॥ ९४ ॥

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै मनुष्य भव्य के दश दृष्टान्त की कथा समाप्तम्

अथ भावानुरागरक्ताख्यानकथानं० ११०

मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

सुखदाता जिनसार, तिन पद नम भाषूं कथा।
भावन के अनुसार, राग लीन फल पाइये ॥ १ ॥

दोहा

अब आवन्ती देश में, पुरी उजैनी नाम।
धरम पाल ताको नृपति, धरम श्री तिस भाम। २।
और ताहि नगरी विषै, सेठ सु सागर दत्त।
नार सुभद्रा तास के, जिन पदाब्ज में रत्त॥ ३॥

चौपाई

तिन दोनोंके पुन्य प्रभाय। नागदत्त सुत उपजो आय।
जिन पद अम्बुजको फल येह। धरमी जनते धरे सनेह॥ ४॥
सेठ तिसी नगरीमें और। नाम समुद्रदत्त तिन गौर।
सागर दत्ता नारी तास। सुता प्रियंग श्री गुण रास। ५।
ताको नागदत्तने जान। परनो विध बिवाह को ठान।
पूजादान आदि आचार। करके निज कुलके अनुसार॥ ६॥

काव्य॥

इस अन्तर इक नागसेन नामा जन कोई।
नागदत्तकी नार तनो अभिलाषी होई॥
दुष्टभाव कर सहित बैर चित मांहि विचारे।
तिष्ठे अपने धाम विषय कुश्चित धी धारे॥ ७॥
एक दिना यह नागदत्त पोसे कर मंडित।
पहुंचो श्री जिन गेह धर्म रुचि धरे अखंडित।
जहां हर्षकर युक्त ध्यान व्युत सर्ग लगायो।
नागसेन पापिष्ट इने लख के तहँ आयो॥ ८॥
निज उरको ले हार धरो इन पगतल पापी।
कपट धार कर चोर चोर इम गिरा अलापी।
अहो दुष्ट अघ लीन क्रोध बशजे जग मांही।
कौन २ विपरीत करत संकत है नांही॥ ९॥

दोहा

इह वृतान्त तल रक्त सुन, झट जिन गृह मधिजाय।
इनके पगतल हार लख, कही भूपतें जाय ॥ १० ॥

पद्धड़ी

तब नरपति है कर क्रोध लीन। ताके मारनको हुक्म दीन।
तब नागदत्तके हनन हेत। तल रक्त गयो जहँ भूप रेत।११।
जबही असि लेकर हाथ बीच। इन कंठ विषे वाही जो नीच।
तब नागदत्त के पुन्य जोग। उर हार भयो उज्जल मनोग १२
दशहो दिश जाकी रश्मिसार। बहु फैल रही आनन्द कार।
ताही छिन ह्वै सुर हर्ष लीन। स्तुति जुत सुमन सुवृष्टि कीन १३
देखो साधनको अप्रमान। सत्कार करत सुर असुर आन।
जे सम्यक दृष्टी धर्म वन्त। ते सबहीकर पूजित महन्त ॥१४॥

दोहा।

इम वृतान्त को देखकर, नर नायक हरषाय।
धरम तनी महिमा अतुल, करत भयो बहु भाय। १५।

चौपाई।

नागदत्त नृप धर्म सुपाल। जिन दीक्षा लीनी तत्काल।
ऐसे और भव्य जन जेह। धर्म विषै रुचि धरो सनेह ॥१६॥
सो श्री जिनवर जग दधि सेत। हो मम कर्म शान्तिके हेत।
कैसे हैं वे श्री भगवान। तीन जगत कर पूज महान ॥१७॥
तिनकर भाषित जो वर धर्म। सोई सुखकारी है पर्म।
तिसहीके परसाद बसाय। पावो शिव सम्पत अधिकाय।१८।

इति श्री आराधनासार कथाकोष विषै भावानुराग रक्ताख्यान
कथा समाप्तम्

अथप्रेमानुरागरक्ताख्यानकथानं० १११

मंगलाचरण ॥ दोहा ॥

दोष सहित जिन धीशवर, वृष नायक भगवान ।
तिनको नम भाषूं कथा, धरम राग जिन आन । १ ।

चौपाई

देश बिनीतामें सुख थान । साकेता नगरी दुतिवान ।
नृप सुवर्ण वर्मा तिस तनो । सुवरण श्री नारी रत मनो। २ ।
ताही पुरमें अति धनवन्त । जिनवर धर्म विषै रत सन्त ।
धर्म विषै रागी धीमान । नाम मित्र सेठ गुण खान ॥ ३ ॥
एक दिना जुत प्रोषधि वास । रैन समै निजही आवास ।
निर्मल मन जुत सोहे पेम । निश्चय ऊभो सुर गिर जेम ॥४॥
ताही छिनमें निर्जर कोय । लेन परीक्षा आयो सोय ।
याकी तिय अरु धनु समुदाय । हरत भयो निज ऋद्ध पशाय ५
तौभी ध्यान थकी नहिं चिगो । निज आतम के रसमें पगो ।
ऐसे इनको साहस देख । सुर चित धरके हर्ष विशेष ॥ ६ ॥
कोडो सुखकी जो दातार । करके स्तुत बारम्बार ।
सुर परकट है कर परवीन । नभगामी विद्या तिन दीन ॥७॥

दोहा

बहु स्तुतिकर स्वर्गको, गयो अगना पीव ।
इस प्रभाव को देखके, और भव्य बहु जीव ॥८॥
जैन धर्म में रत भये, तज मिथ्या दुख खान ।
कोई तो श्रीमुनि भये, केई श्रावक बुधिवान ॥९॥

छप्पय

केई सम्यक सार रतन कर हूवे मंडित ।
निश्चय ते निज तत्त्व जान वृष गहो अखंडित ।

हो भविजन जिनचंद तनी पूजा नित कीजे।
याहीके परभाव भवो दधिके तट लीजे ॥
अब ऐसे श्रीभगवान की, स्तवनकर मनलायके।
और तिनहीको चितवन करो, मनवच काय लगायके १०

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषैप्रेमानुरागरक्ताख्यानकथा समाप्तम्

मज्जानुराग रक्ताख्यान कथा प्रा० ११२

मंगलाचरण ॥ सवैया इकतीसा ॥

सर्वदेव इन्द्रअहिपतकर पूजनीक, जिनके पदारविन्द शोभित महान हैं। समोशर्न माहिं सब तत्वको प्रकाश करें, ऐसे अरिहन्त गणाधीश भगवान हैं ॥ तिनको नवाय भाल भाषिये कथा रसाल, जिन कलपाभिशेष कियो हर्ष आन हैं। ताने पायो समेसार दिये सब अघ टार, सुनो भव्य चितलाय लहो जो कल्याण हैं ॥ १ ॥

चाल छंद

उज्जैनी नगरी माही। नृप सागर बुध सुख दाही।
अरु ताही पुरी मंझारी। युग सार्थ वाह गुणधारी ॥२॥
जिनदत्त नाम इक को है। वसुमित्र जान दूजो है।
कैसे है ए बनजारे जिन भक्ति हिये अति धारे ॥ ३ ॥
अभिषेक जिनेश्वर केरो। तामें अनुराग घनेरो।
आर्यावर्त दान करे हैं। श्रावक के बरत धरे हैं ॥४॥
ए चले बनज चित धारी। सो उत्तर दिशा मंझारी।
अब सीर बनीके माहीं। पथ भूलगये युग ताही ॥५॥
तहं भलो पुरुष इक आयो। तिन शुभ उपदेश बतायो।
यह प्रभु सुमरत बड़भागी। कलशाभिषेक अनुरागी ॥६॥

तबही सन्यास जुग धारो। सबही ममत्व परिहारो।
ताते भविजन सुन लीजे। सुख दुखमें धी शुभकीजे ७

अडिल्ल

इस अन्तर इक सोमशर्म दुज धाइयो। दिशाभूल तिसही बन माहीं आइयो। बहुत कष्ट ते भ्रमत गयो इन पासजी। बनजारे आपस में वृष इम भाषजी ॥८॥

दोष रहित अरिहन्तदेव केवल धनी। तिन भाषित शुभ धरम कहो दश लाच्छनी। नगन दिगम्बर परिग्रह त्यागी गुरु भले। शील विषै दृढ़ ज्ञान ध्यान तप में रले ॥ ९ ॥

अहो जीव यह निश्चय नयते जानिये। सिद्ध समान स्व रूप हिये में आनिये। भवि अभव्य जुग भेद धरे नितही सही। कर्माश्रित संसार दिशा श्रीजिन कही ॥ १० ॥

दोहा

करम रहित शिव तिय धनी, भवि होवे तत्कार।
इह विध धरम स्वरूप शुभ, भाषें थे जिह वार ॥११॥
तिन मुखते इह धर्म विध, सुनी सबै दुजराय।
मिथ्या मारग त्याग के, जिन शाशन चितलाय १२।

चौपाई

तबही सोमशर्म दुज येह। धरि सन्यास सुतिष्ठो तेह।
चितमें ध्यावत श्रीभगवान। इन्द्र चन्द्रकर पूजित जान ॥१३॥
वहु उपसर्ग जीत सुधभाय। प्रथम स्वर्ग में उपजो जाय।
तहां बहु ऋद्ध लही सुखखान। अणिमा महिमा आदिक मान१४
ह्वां सेती वहु सुर बड़भाग। जिन पद सुमरत तनको त्याग।
नृप श्रेणिक है अभयकुमार। सुत उपजो अंतम तन धार १५
धीर वीर जगको मोहन्त। महा बुद्धि धारी गुणवन्त।
ना सरवर दूजो नाहिं कोय। ऐसी महिमा धारे सोय ॥१६॥

दोहा

अब वो दोनूं बनकपती, तज समाधिजुत काय ।
भये सुरग सो धरम में, अमर रिद्ध बसु पाय ॥१७॥

काव्य

अहो श्रीअरिहन्त देव केवल पद धारी ।
हम तुमको बहु सुःख देत निरमल अधिकारी ।
कैसे हैं भगवान स्वयम्भू शिव रमनी वर ।
देव इन्द्र चक्रेश खगी पूजें नित नुतकर । १८ ।
तिनकर वरनत धर्म जगत को है हितकारी ।
कष्ट विषै जे जजें तिनें देवें सुख भारी ॥
तातें आश्रय करो भव्य याको चित मांही ।
सकल अमङ्गल टरें भीत व्यापे कोइ नाहीं ॥ १९ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय भक्तानुराग रक्ताख्यान की कथा समाप्तम् ॥

धर्मानुराग रक्ताख्यान कथा ११३

मङ्गलाचरण । दोहा ॥

लोकालोक प्रकाश जुत, निरमल केवल ज्ञान ।
ता धारी अरिहंत जिन, तिनको नमन सुठान ॥ १ ॥
धरम राग जिनने कियो, ताकी कथा विशाल ।
कहूं भव्य सुन लीजिये, सुख बारिध अघ टाल ॥ २ ॥

पद्धड़ी ।

शुभ देश अवंती मध्य जान । उज्जैन नगर दैदीप्य मान ॥
ताको धनवर्मा है नरेश । धन श्री नारी ता गेह वेश ॥ ३ ॥
तिनके सुत उपजो गर्भवन्त । तिस नाम लकुच अतिमदधरंत ।
अरिवृन्द मान वही प्रचण्ड । तिस नाशनको इह घन अखण्ड ॥

अब काल मेघ यकसबर राय। इन देश बहुत पीड़ितकराय।
तब लकुच बहुत मन रोष धार। तातें संग्राम कियो अपार ॥५॥
फिर भीलपतीको बांध लीन। निज पिता पास लायो प्रवीन।
तब जनक पास वर लेह येह। अन्याय करन लागो सुतेह ॥ ६ ॥

दोहा।

निज पुर की नारन तनौ, शील भंग अधिकाय।
करन लगो इह दुष्ट चित, कामी बुद्धि नसाय ॥ ७ ॥

चोपाई।

अब इसही पुरके मध जान। पुंगल नाम सेठ धनवान॥
तास तिया है चाल मराल। नाम नागधर्मा सुख माल ॥ ८ ॥
तास विषै इह राजकुमार। होत भयो आशक्त अपार।
तब पुङ्गल बानक इम देख। क्रोध अनिल चितधरो बिशेप। ९।
तास सहन को समरथ नाहि। घर में तिष्ठे बहु सुख बाह।
इक दिन लकुच हर्ष मन ठयो। बनमें क्रीड़ा करन सु गयो। १०।
तहँ निज पूरब पुन्य प्रभाय। श्री यतींद्र देखे सुखदाय।
तिनके ढिग पहुंचे ततकाल। चरनन मांहि नवायो भाल ॥

दोहा।

उन मुख अम्बुज ते सुनो, श्री जिन भाषित धर्म।
ह्वै विराग जत शीघ्रही, दीक्षा लीनी पर्म ॥ १२ ॥
फिर बिहार करते थके, पुरी उजैनी आय।
महाकाल बनके बिषै, तिष्ठे ध्यान लगाय ॥ १३ ॥

काव्य।

तबही पुंगल सेठ इनों को आयो जानों।
क्रोधवंत ह्वै रात्रि समय तिन कियो पयानों॥
बैरा जोग ते लोह मई कीलें अति भारी।
संध संध प्रति जड़े दुष्ट चित दया न धारी ॥ १४ ॥

जब इह श्री मुनिचंद जैन मारग के ज्ञाता ॥
क्षमा सलिल ते क्रोध अनिल सींची जगत्राता ।
सहकर अति उपसर्ग तिनों ने शुभ गति पाई।
चित्र विचित्र चरित्र होत भविजन को भाई । १५ ।
सोई लकुच मुनिन्द सदा जयवन्ते हूजे ।
भगवत चन्द्र सुरस्म ध्यान ते रिश ग्रीषम जे ॥
बड़े कष्टको जीत सुःख पायो जुज्ञान बल ।
गुण रत्ननकी खान ज्ञान वारध अति निरमल ॥ १६ ॥

इति श्रीआराधनासार कथाकोषविषै धर्मानुरागरक्ताख्यान की
कथा समाप्तम् नं० ११३

अथ दर्शनाच्यवनकी कथा प्रा०

मंगलाचरण ॥ दोहा ॥

सरव दोष करके रहित, जिनाधीश भगवान ।
कहूं दर्शाच्यवन की, कथा नमन तिन ठान ॥ १ ॥

चौपाई

नगर पाटलीपुर विख्यात । अतिशय कर पवित्र अधिकात ।
तामें परमेष्ठी पद रक्त । जिनदत्त नाम सेठ जिन भक्त ॥ २ ॥
जिनदासी तिय तिस आवास । पुत्रभयो तिनके जिनदास ।
गुण उज्वल आतम अविकार । श्रीजिनवरको भगत अपार ३॥
इस अन्तर अब इह जिनदास । चितमाहीं बहुधर हुल्लास ।
सुवरण दीप गयो उमगाय । संग लीने बानक समुदाय ॥४॥

दोहा

तहँ ते द्रव्य उठायके, आवे यो जिन धाम ।
मारगमें मिथ्या मती, कालदेव तिस नाम ॥ ५ ॥

सोरठा

कहत भयो सो एव, निज मुखते ऐसे कहो।
नहिं अरिहन्त सुदेव, नहीं जैनवृष भू विषै॥ ६ ॥
जो भाषो इहि भांत, तो तुमको छोडूं अबै।
नातरु करहूं घात, यह निश्चय सब जानलो ॥७॥

पद्धड़ी

तब ऐसे सुन जिनदास आद। मस्तक कर धारे कर प्रमाद।
बहु भक्ति ठानकर इम उचार। श्रीवर्द्धमान को नमस्कार ॥८॥
अरु कहत भये रेदुष्ट देव। अपने मनमाहीं जान येव।
जे केवलरूपी ज्ञान मान। धारत हैं तेही देव मान ॥ ९ ॥
और सब मतमें उत्कृष्ट जान। त्रयजगपूजित जिनमतमहान।
ताहीछिन इह जिनदास सार। सबआगे कथाकही उचार ॥१०॥

दोहा

ब्रह्मदत्त चक्रेशने, मेटो शुभ नवकार।
ताकर पहुंचो नगर में, देखो हिये विचार ॥११॥

कवित्त

ताही छिन उत्तर वासी अनावृत्त यक्षाधियसार। निज आसन कंपितही आये क्रोधवान ह्वै कर तत्कार॥ काला सुर कुश्चित पापीके चक्रथकी दई मुकुट मंझार॥ सो भागो जबही दुःखित ह्वै बड़वानलमें धस्यो लवार॥ १२॥

बहुरि सुरी लक्ष्मी तहं आई चितमें धरम राग बहु ठान। सबको पूजो अरघ देयके कीनों बहु बिध आदर मान॥ जे भविजन सम्यक अधिकारी तिनके चरण कमलकी आन। को को पूजा करत नहीं है सबही ठानत भक्ति महान॥ १३॥

दोहा ।

ता पीछे जिनदास को, आदि सर्व भवि जीव ।
पुन्य थकी निज धाम में, तिष्ठत भये सदीव ॥ १४ ॥

चौपाई

इस अन्तर जिनदास सुसेठ । इक दिन अवधि सहित मुनि भेट
पूछत भयो सीस निज नाय । स्वामी दीजे मोहि बताय ॥१५॥
कालनाम मिथ्याती देव । मोको दीनो भय किहि भेव ।
तब मुनिचंद प्रथम भव तनो । हुतो वैर सो कारन भनो १६
सुन करके यह सम्यक वन्त । श्रद्धायुत तिष्ठो गृह सन्त ।
अहो भव्य जन दर्शन सार । ताको सेवो वारम्बार ॥ १७ ॥
कैसो है यह रतन अनूप । हितकारी शिवपुरको भूप ।
अति पवित्र सुख देय महान । ताते बुधजन श्रम सब हान ।
याहीको सेवनकर मीत । जो सुखपावो परम पुनीत ।
इह विधि दर्शनमें दृढ़ जेह । तेई पावे सुर शिव गेह ॥ १८ ॥

इति श्रीआराधनासार कथाकोष विषै दर्शनाचलनकी कथा समाप्तम् नं० ११४

सम्यक्के महात्म्यमें जिनमतीकी

कथा प्रारम्भः नं० ११५ ।

मङ्गलाचरण ॥ दोहा ।

देवेन्द्रन करके सदा, पूजनीक जिनचंद ।
तिनको नमि भाषूं कथा, शुभ सम्यक गुणवृन्द ॥१॥

चौपाई

लाट देश देशन परधान । तामें गलगोद्रहपुर जान ।
तामधि जिनदत्त सेठ महन्त । जिनदत्ता नारी गुणवन्त ॥२॥
तिनके रूप भागकर जुता । भई जिनमती नामा सुता ।
पूरब पुन्यतने परभाय । इह प्रानी शुभ रूप लहाय ॥ ३ ॥

तिसही पुरमें मिथ्या मती । नागदत्त इक बानक पती ।
तिया नागदत्ता तिस गेह । रुद्रदत्त सुत सुन्दर देह ॥ ४ ॥

दोहा

एक दिना यह नागदत्त, गयो जिनदत्त के पास ।
कन्या निज सुत कारने, मांगो धर हुलास ॥ ५ ॥

काव्य

तब बानक जिनदत्त इसे मिथ्याती जानो ।
पुत्री दीनी नाह जबै इह कियो पयानो ॥
माया मनमें धार गयो श्रीगुरु पै जबही ।
समाध गुप्त के पास लिये श्रावक व्रत तबही ॥ ६ ॥
इम लख के जिनदत्त दई पुत्री तत्कारी ।
करके व्याह तुरन्त फेर मिथ्या बुध धारी ॥
खे पापी अघ लीन तिनोंकी कुमत न नाशे ।
अहिको दीजे दुग्ध तौऊ वह जहर प्रकाशे ॥ ७ ॥

चौपाई

अब यह रुद्रदत्त दुठ भाय । जिन नारी ते इम बतलाय ।
धर्म महेश्वर जो सुखकार । करले तूभी अंगीकार ॥ ८ ॥
ऐसे सुनतेही जिन मती । मानो देह वज्रकर हती ।
जिन पदाब्ज की भ्रमरी येह । कहत भई स्वामी सुनलेह ।९।
हितकारी श्रीजिनवर धर्म । इन्द्र चन्द्रकर पूजित पर्म ।
सुखदाता किम छोड़ो जाय । अहो नाथ समझो चितलाय १०
तुमभी मिथ्या मगको त्याग । जिनवर मग में धारो राग ।
इम आपस में निज वृष वाद । रहा करे निज कलह उपाध ११

दोहा

अहो बात यह जोग है, अन्य धर्म परभाव ।
घरमें कलह सुनित रहे, किंचित सुख नहिं थाय १२॥

निज निज धर्म प्रकाश तें, बीतो दीरघ काल ।
एक दिन तिसही पुर विषै, कर्म जोग विकराल १३॥
भीलनको समुदाय जो, दुष्ट चित्त अधिकाय ।
क्रोध सहित ह्वै कर तबै, दीनी अगन लगाय ॥१४॥

काव्य

तब नगरी के विषै, भयो, कोलाहल भारी ।
दुःखित चित बिलखात फिरें तहं नर और नारी १४॥
अहो जनन के प्रान विषै संकट जब होवै ।
तब आधीर्यता धरे हियेकी शुध बुध खोवै ॥ १५ ॥
तबै जिनमती नार कहै सुनिये अब स्वामी ।
जिसको देव महान सकल अवनी में नामी ॥
शान्त करे इहबार अगनको बेग बुझावें ।
ताको हम तुम बेग महन करके सिर नावें ॥ १६ ॥

दोहा

तबै रुद्रदत्त इम कही, याही भांत प्रमान ।
सब जन को साखी कियो, रुद्र मती अज्ञान ॥१७॥

चौपाई

तब यह मूरख मती अयान । धरके महादेव को ध्यान ॥
करमें अर्घ लेय ततकार । शान्ति हेत दीनी जलधार । १८ ।
तबही अगन महा परचंड । मंद भई नहिं जले अखंड ॥
फिर चतुरानन आद कुदेव । तिनको अर्घ दिये बहु भेव । १९ ।
तौ भी अगन त्रास नहिं गई। अधिक अधिक कर पूजित भई ॥
अहो दुष्ट जे मिथ्या मती । तिनके शान्त होत नहिं रती ।२०।
ता पीछे यह जिनमति नार। धर्म विषै जिस प्रीत अपार ॥
श्री परमेष्ठी को धर ध्यान। अर्घ दियो निर्मल चित्त ठान ।२१।

तिनके चरण कमल को नई। आनन ते बहु थुति तिन चई।
अपने बन्धूवर्ग बुलाय। एक थान सब दिये बिठाय ॥ २२ ॥
चित्त विषै सुमिरो नवकार। तिष्ठी कायोत्सर्ग सुधार ॥
तबही वो वन्ही बिकराल। शान्त भई पुर में तत्काल ॥ २३ ॥

दोहा ॥

ऐसो श्री जिनमत तनों, अतिशै देख तुरन्त।
रुद्रदत्त को आदि बहु, मन में हर्ष धरन्त ॥ २४ ॥
श्री जिनेंद्र को नमन कर, श्रावक भये महान।
सम्यक की श्रद्धा करी, त्यागी मिथ्या बान ॥ २५ ॥

अडिल्ल।

अहो जिनेश्वर धर्म जगत में सार है। ताकी महिमा स्वग मोक्ष दातार है। ऐसो को बुधवंत तास बरनन करे। पंग पुरुष किमि मेरु शिखर पर पग धरे ॥ २६ ॥

सोरठा ॥

जैसे जिनमति नार, सम्यक की रक्षा करी।
तैसे विदुषन सार, शर्म हेत रक्षा करो ॥ २७ ॥

॥ छप्पय ॥

देखो वो जिन मती दृढ़ सम्यक वंती।
जिन पद्माब्ज की भक्ति विषै जिन अती रमंती।
प्रभु बच के अनुसार सदा जाकी पवित्र मति।
स्वर्णरत्नकर पूजनीक भई सुर गण कर अति।
अब ऐसे भवि जन जानकर, जिनमत में निश्चै करो।
जातें जगमें पूजा लहो आवागमन सुपरहरो ॥२८॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषै सम्यक्त्व महातम में
जिनमती की कथा समाप्तम्

सम्यक्त अङ्ग में रानी चेलना और
राजा श्रेणक की कथा

मङ्गलाचरण । गीता छंद ।

जो सकल असरन कर सदा वर पूजनीक महान जी ।
ऐसे श्री अरिहंत जिनवर तासुको धर ध्यान जी ॥
भाषूं कथा सम्यक्त महिमा की अबै चित लायके ।
श्रेणिक नृपति तिय चेलना की सुनो भवि हरषायके ।१।

चाल अहो जगत गुरुकी ।

मागध देश विख्यात पुरी राज ग्रही जानो ।
परजा को हितकार तहां उपश्रेणिक रानो ॥
गुण मण्डित तिस भाम नाम सुप्रभा जु सो है ।
तिनके पुत्र अनेक तासु मधि श्रेणिक जो है॥ २ ॥
धीर वीर गम्भीर महादानी सुखवंतो ।
शुभटोत्तम अति दत्त सकल जनको मोहंतो ॥
इस अंतर इक राय नाम जिस नाग धरम है ।
देश मलेच्छ अधीश रहत सब धरमकरम है ॥ ३ ॥
ताने पूरब बैर थकी बाजी दुखदाई ।
उप श्रेणिक के पास दुष्ट मन भेट पठाई ॥
सो है अति परचंड चलायो चाले नांही ।
थांमें से चालन्त यहै बिधि रीत गहाई ॥ ४ ॥
इक दिन ताकी पीठ चढ़ उप श्रेणिक राजा ।
सो तुरंग तत्काल तिनों को लेकर भाजा ॥
महा बनी के बीच नृपति को लेकर डारो ।
तहां जमदंड किरात धरे जमवंत अकारो ॥ ५ ॥

विद्युत मती जु नार तास के गेह मझारी।
निलकवती इक सुता भई तिन के द्युतकारी।
ताको लख नरनाथ भयो बिहवल अधिकाई।
काम अगन तन दहो सबै शुध बुध बिसराई॥ ६॥

दोहा

तब किरात पति पै गयो, उप श्रेणिक भूपाल।
याची तनुजा तासु की, सुन्दर रूप बिशाल॥ ७॥
जबै भील कहतो भयो, इस सुत को दे राज।
तो व्याहूं तुम को अबै, यह कन्या महाराज॥ ८॥

चौपाई

सो नरपति अंगीकार कर लई। ताने तबही कन्या दई॥
फिर आये निज पुरी मझार। भये बहुत बिध मंगल चार॥ ९॥
तिलकवती संग भोगत भोग। फिर सुत उपजो काम संयोग॥
शुभटोत्तम अतिही बलवान। नाम चिलाती पुत्र सु जान॥ १०॥
इक दिन उपश्रेणिक परवीन। मन में इम विचार तिन कीन॥
मेरे पुत्र बहुत सुखदाय। तिनमें कौन सुराज कराय॥ ११॥
जबही निमती लियो बुलाय। तासे प्रश्न कियो हरषाय॥
सो वह कहत भयो सुन नाथ। जो तुम करि है इतनी बात।१२।
बिष्ठर बैठ बजावे भेर। भोजन करे जु कूकर घेर॥
अगन लगतही लेय निकार। बिष्ठर चमर छत्र सुंडार।१३।
जो इतने कारज कूं करे। सोई नृप पद निश्चय वरे॥
ऐसे सुन निमती के बैन। उप श्रेणिक चित पायो चैन।१४।
लैन परीक्षा हेत नरेश। ताही बिध सब करी बिशेष॥
तिनमें श्रेणिक कहि बुधिवंत। यह सब कारज कियो तुरंत।१५।
अहो बुद्ध कर मन अनुसार। पावे प्रानी जगत मझार॥

लाख सयान पठाने कोय । तो पण होनहार सो होय ॥१६॥
इम लख उप श्रेणिक महाराज। जानी श्रेणिक कर है राज॥
राज चिलाती देने काज । नर नायक चित्त माया साज।१७।
श्रेणिक प्रती गिरा इम अखी । श्वान झूंठ को तैंने भषी॥
इम कह देश थकी भूपाल । काढ़ो श्रेणिकको तत्काल। १८।
सो इह चलत चलत बुधिवान। पहुंचो नंद ग्राम मध्यान॥
तहां दुज राज मान मद युक्त। इनको दीनों नांही भुक्त ॥ १६ ॥

दोहा

काढ़ दियो निज ग्राम ते, चलो महा दुख पाय ।
परिब्राजक के मठ विषै, पहुंचो सुन्दर काय ॥ २० ॥
विष्णु धरम को ग्रहणकर भोजन करो तुरन्त ।
फिर दच्छण दिशि को चलो, यह श्रेणिक गुणवंत ।२१।

पद्धडी

अब और कथा बरनूं महान। एक कांचीपुर दै दीप्य मान ॥
तामें वसु पाल नरेन्द्र सार। तिय वसू मती ताके आगार ।२२।
तिनके वर जोबन रूपवान । बसु मित्रा पुत्री गुण निधान॥
तिसही पुरमें दुज शोम सर्म। नृप को मंत्री धरे विष्णु धर्म ॥२३॥
ताके सोम श्री गेह बाम । अति चतुर सुता अभै मति नाम॥
इक दिन गंगा ते शोम शर्म। घर आवे थो कर पितृ कर्म। २४ ॥
पथमें श्रेणिक दुज रूपधार। या सेती मिल इम बच उचार॥
हे माम तुम्हारे कंध शीष। कहो मैं चढ़ चालूं गुण गरीश ॥२५॥
और तुम मेरे कंधे उदार। चढ़ कर चालो मगके मंझार ॥
इस भांत सु पुर पहुंचे तुरंत । इम बच सुन दुज भयो सोचवंत ।२६।

दोहा

कई बावरो पुरुष यह, ऐसे निश्चय जान ।
मोन धार के पथ विषै, आगे कियो पयान ॥ २७ ॥

चौपाई

फिर आगे देखो इक ग्राम। बोलो कंवर सुनो हो माम।
बसत कहो अरु उजड़ी येह। तब तिन कछु नहिं उत्तरदेह २८
फिर आगे इक तरु तल भाय। छत्र शीष पै धरो उभाय।
मारग में तिन लियो समेट। फिर पहुंचे सरिताके हेट २९॥

दोहा

पगमें पनहीं पहन के, उतरो ताके पार।
मारग में निजकर विषै, लेकर चलो कुमार॥३०॥
फिर एक नारी देख के, कहत भयो सुन माम।
बंधी खुली बतलाय मो, यह दीखत जो भाम॥३१॥

चौपाई

फिर आगे इक मृतक निहार। तब इन श्रेणिक बचन उचार।
जीवत है अरु मरो सो येह। उत्तरदे नाशो सन्देह॥ ३२॥
आगे शाल खेत इक देख। तब फिर पूछन कियो विशेष।
अहो पूज यामें फल सार। दियो अरु देशी बोवनहार॥३३॥
इत्यादिक यह श्रेणिक सन्त। सोमशर्म ते बचन भनन्त।
तब तिन ग्रहलो याको जान। मौनधार कछु नहीं बखान ३४
कांचीपुर नगरी के पास। इसे ठाड़ दुज कियो अबास।
जब याकी तनुजा बुधवन्त। अभैमती बोली हरषन्त॥३५॥
तीरथ करके आये तात। ये काकी अरु काहू साथ।
सोमशर्म दुज इहविध कही। मुझको आवत पथमें सही ३६॥
अद्भुत रूप धरे जन एक। मिलो बटोही रहित विवेक।
आयो है ममसंग सो आज। तिष्ठत है इस पुरके बाज ३७।

दोहा

तब कन्या कहती भई, वो गाहिलो केह भन्त।
जब भाषो भूदेवने, पथको सब बिरतन्त॥ ३८॥

काव्य

जब कन्या बुधवन्त तेल जल तुच्छ लेयकर ।
भेजो चेरी हाथ कहो न्हाकर आवो घर ॥
जबही चतुर कुमार सलिल में तेल मिलायो ।
ताको वपुमें लाय, बहुरि भोजनको आयो ॥३९॥
जबै पंक के पंथ बुलायो याको तबही ।
आवत भये कुमार चरन भये लिप्त जो सबही ॥
तबै नार दियो वार तुच्छ धोवन के कारन ।
बांस खंड करलेय कियो याने मल टारन ॥ ४० ॥
पीछे उसपै थकी धोय पग माह पधारो ॥
जब इक विद्रुम लाय धरो जिस छिद्र हजारों ।
कन्या बोली सुनो चतुर पोवो गुण यामें ।
निज चतुराई थकी पोय दीनों इन तामे ॥ ४१ ॥

सोरठा

तबै अभैमति नार, चित में अति हर्षित भई ।
श्रेणिक को तत्कार, परमो उत्सव ठान के ॥ ४२ ॥
जे हैं पुन्नी जीव, पैंड पैंड मंगल लहैं ।
व्यापे सुःख सदीव, श्रीगुरु ऐसे उच्चरें ॥ ४३ ॥

चौपाई

इस अन्तर अब सुनो सुजान । सोमशर्म कोई द्विज बुधवान ।
पथ भूलो अटवी में जाय । जिनदत निकट धरम तिन पाय ४४
कर सन्यास तजे निज प्रान । प्रथम सुरगसुर भयो महान ।
तहंते चयकर सुर अभिराम । कांचीपुर श्रेणिकको धाम ४५॥
अभयमती की कूख मंझार । सुत उपजो शुभ अभयकुमार ।
कैसो है इह चर्मशरीर । शुभटोत्तम वर गुण गम्भीर ॥ ४६ ।

शिवरूपी लक्ष्मीको कन्त । होनहार यह कुंवर महन्त ।
अहो तासकी महिमा सार। कोकवि जगमें करे उचार ॥४७॥
या अन्तर कांचीपुर ईश । वसूपाल नामा गुण धीश ।
विजयहेत तिन करो पयान । मगमें देखो श्रीजिन थान ।४८॥
एक थम्भके ऊपर सोय । अद्भुत छवि वरने कवि कोय ।
देखतही मन हरषो राय । पत्र एक तबही लिखवाय ॥ ४६ ॥
निज पुर सोमशर्म के पास । भेजो नर पर धर हुल्लास ।
तामें वर्न लिखे थे येह । एक थम्भ पै श्रीजिन गेह ॥५०॥
सुखदाता सुन्दर तत्काल । करवाना तुम विप्र विशाल ।
सोमशर्म पायो नहिं भेद । तब चितमें बहु उपजो खेद ॥५१॥

दोहा

अब श्रेणिक बुधवानने, देखी पत्री ताम ।
सब वृतान्त को जानके, करवायो जिन धाम ॥५२॥
भलो ज्ञान चातुर्यता अद्भुत कला अपार ।
पुन्य बिना नहिं पाइये, इस नरलोक मझार ॥५३॥

पद्धडी

फिर नरपति आयो नगर बीच । देखो जिनमंदिरजुत मरीच ।
सन्तुष्टवान है के तुरन्त । बसु मित्रा तनुजा रूपवन्त ॥५४॥
श्रेणिकको दीनी जुत उछाह । तिन विध विवाह ते लई ब्याह ।
अब कथा सुनोतिहुंजोगलाय। यहविधिश्रेणिक निजराजपाय५५
अब उप श्रेणिकनरपति सुजान । अपने चितमें वैराग आन ।
निजराज चिलाती पुत्र दीन । अरु आप मुनीपद ग्रहनकीन ५६
अब राय चिलाती पुत्र जेह । बहु करनलगो अन्याय येह ।
जे हैं नृपेन्द्रकेसचिव मुख्य । एह विध लखकर चितभयोदुख्य ५७

दोहा

तिन सबने इक पत्र लिख, भेजो श्रेणिक पास ।
देखतही उस पत्रको, इहां आयो गुणरास ॥५८ ॥
बांचतही तिस पत्रको, श्रेणिक मन हरषाय ।
दोनों नारि बुलायके, सब वृतान्त समझाय ॥५६॥

सोरठा

तुम आयो मम पास, पांडु कुटी केढिग सही ।
इम कह धर हुल्लास, गमन कियो ताही समय ॥६०॥
आयो निजपुर बीच, तब सब जन हर्षित भये ।
काढ़ चिलाती नीच, आप राजमें तिष्ठयो ॥ ६१ ॥

चौपाई

इस अन्तर अब अभैकुमार । मात प्रते पूछो इक बार ।
अहो तात मम तात महान । कौन ठौर तिष्ट बुधिवान ॥६२॥
अभैमती बोली सुन पूत । तेरो पिता जु गुणसंयूत ।
पांडु कुटी नीचे विख्यात । राजग्रहीको राज कारात ॥ ६३ ॥
हम अम्बा के मुखते जान । कौतुक सहित चलो धीमान ।
नंदग्राममें पहुंचो आय । तहँ कारन इस भांति लखाय ॥६४॥
सब विप्रनपर कोप नरेश । भेजोहुतो जो इम आदेश ।
हो विप्रो इक कूप बिशाल । पै जुत ममढिग भेजो हाल ६५॥
जो नहिं भेजोगे तुम अबै । निश्चय मारे जावो सबै ।
ऐसे सुन नृपको आदेश । द्विज व्याकुल चित भयो विशेष ६६
तिनते अभयकुमार भनंत । तुम व्याकुल तिष्ठों किह भन्त ।
तब उन कारन दियो बताय । जब इन युक्ति दई सिखलाय ६७
याके बचते धारहु लाश । श्रेणिक प्रति भेजो अरदाश ।
अहो नाथ नगरीके बा:र । तिष्ठे कूप महा रिस धार ॥ ६८ ॥

हम ने बहुत कहो समझाय। तौ पाणीता मन एक न आय।
जैस पुरुष भाम बसि होय। तेम कूपिका बसि है सोय। ६६।
यातें अब अवनीं के राय। एक बापिका देहु पठाय॥
तिसही पीछे कूप सु तेह। तुम पर आवे निःसन्देह॥ ७०॥

दोहा

ऐसे इन की बीनती, सुन नृप मौन लहाय।
अहो सुःख पावें नहीं, जे धूरत अधिकाय॥ ७१॥
फिर चित में रिष धार के, भेजो एक गयन्द।
याकी तोल बताय दो, हो विप्रो गुण वृन्द॥

चौपाई

अभै कुमार तने परसाय। सब दुज कीनो एक उपाय॥
नवकामें गज कूं बैठान। सलिल तनो तिन करो न पान।७३।
फिर तरनी में भरे पखान। तिनको तोल चित्तमें आन॥
नृप पै लिख भेजो तत्काल। जितनो तोल हुतो सुंडाल। ७४।
फिर श्रेणिक विप्रन पै रोष। इम आज्ञा भेजी लख दोष॥
कूप जो पूरब दिशा मझार। पश्चिम में कर देहु अवार॥७५॥

दोहा।

तब कुमार के कहनते, उलट बसायो ग्राम।
नरपति को दिखलाइयो, पश्चिम कूप ललाम। ७६।
फिर नरपति इक मेष को, दीनों तहां पठाय।
मोटो दुबलो ह्वै नहीं, हुकम दियो इह भाय। ७७।

पद्धडी

तब सब दुज ह्वै चित में उदास। आये श्री अभै कुमार पास।
तिन कहन थकी इक बाघ लाय। ताढिग बांधो मींढो चराय।७८।
फिर नरपति ने लीनों मंगाय। वैसो ही लख कछु ना बसाय।
फिर इक आज्ञा भेजी तुरंत। घट में इक पेठा यो महंत। ७६।

दोहा

तब कुमार के कहन ते, पैठो कुम्भ मझार ।
तुच्छ धरो फिर बृद्ध करि, भेज दियो नृप द्वार ।८०।

सोरठा

अब श्रेणिक नरराय, इम आज्ञा भेजत भयो ॥
बालू डोर बनाय, मो ढिग लावो बेगही ॥ ८१ ॥
कहत भयो दुजराज, आज्ञा पाय कुमार की ॥
जैसा द्यो महाराज, तिस सदृश हम भेजदें ॥ ८२ ॥

दोहा ।

नृप श्रेणिक मन रोष धर, हुकम दियो इत्यादि ॥
प्रति उत्तर इन सब दियो अभैकुमार प्रसाद ॥ ८३ ॥

चौपाई

है नरनायक विस्मयवन्त । फिर निज चित में बहु हरषन्त ।
पत्र एक भेजो तिन पास । तामें एक विध हुक्मप्रकास ॥ ८४ ॥
जो जन तुम में चतुर कहाय । ताको मो ढिग देहु पठाय ॥
पण ऐसी विध आवे सोय । रैन न होय नहीं दिन जोय ॥८५॥
नहिं मारग नहिं ऊबट मांह । पैदल बिना सवारी नांह ।
इत्यादिक सुनके सुकुमार । करो गमन संध्याकी बार८६॥
सकट विषे छींको लटकाय । तामधि आप सुबैठो जाय ।
पैयो एक लीक के बीच । एक उबट मारग में खीच ॥ ८७ ॥
यहिबिध पहुंचो नृप के पास । सभा माहिं जहँ खडे खवास ॥
तिनमें ऊभो माया रूप । सिंहासन पै देखो भूप ॥ ८८ ॥

दोहा

नमन करो याने तबै, तब नृप हृदय लगाय ।
कुलको दीप सुपुत्र यह, पुर में प्रकट कराय ॥ ८९ ॥

कांचीपुर ते नार जुत बुलवाई भूपाल ॥
अभैमती वसु मित्र का, सो आई तत्काल ॥ ९०
पुत्र आदि संयुक्त यह, सुख से तिष्ठे भूप ।
इस अन्तर इक वारता, और सुनो शुभ रूप ॥ ९१ ॥

चौपाई ॥

सिंध देश में नगर विशाल । चेटक बुद्धिवान भूपाल ।
समदृष्टी जिनभक्ति धरन्त । नार सुभद्रा रूप अत्यन्त ॥ ९२ ॥
तिन दंपति के कर्म बसाय । सुता सात भइ सुंदर काय ।
प्रियेकारनी पहिली जान । तिस महिमा को करे बखान ॥ ९३ ॥
ताके सुत उपजे जिनचंद । अन्तम तीर्थङ्कर गुणवृन्द ॥
दूजी मृगावती बरसती । तिस लख रति लाजत है अती ॥ ९४ ॥
तीजी भई सुभद्रा नाम । प्रभावती चौथी अभिराम ॥
पंचम नाम चेलना कही । पष्ठी जेष्ठा शुभ मत गही ॥ ९५ ॥
सती चंदना जग विख्यात । भई सप्तमी सुन्दरगात ॥
सहे बहुत उपसर्ग अघोर । रक्षा करी शील की जोर ॥ ९६ ॥
अब यह चेटक नाम नरेश । सब तनुजा में मोह विशेष ॥
यातें इनके शुभ चित्राम । करवाये नृपके अभिराम ॥ ९७ ॥

दोहा ॥

सातों के पट लायके, चित्रकार बुधवन्त ।
दीने नृप के कर विषै, लखकर यह हरषन्त ॥ ९८ ॥

काव्य ॥

सुता चेतना तनो पट्ट नृप कर जब लीनों ।
ताकी जंघा बीच एक तिल तिनने चीन्हों ॥
देखतही रिसवंत भयो तब चित्रकार पर ।
ताने जुग कर बैन तबै भाषे इम नुतकर ॥ ९९ ॥

अहो देव मम कर्न विषै लेखन जो थाही।
ताकी विंदु मनोगपड़ी या पटके मांही ॥
ताको मेटन करी नाथ मैंने कई बारी।
फिर वाही आपड़ी तबै मैं एम बिचारी ॥ १०० ॥

दोहा ॥

ऐसो लच्छन तासके, होवे जंघा बीच।
यह निश्चय करके प्रभू, मैंने दीनों खींच ॥ १०१ ॥
इम कह पट भूषण विविध, दीने नृप हरषाय।
सत्पुरुषन को हरष जो, कभी न निष्फल जाय ॥ २ ॥

चौपाई।

इस अन्तर इह भूप उदार। श्रीजुत तिष्ठे निज आगार।
नितप्रति श्रीजिनवर के गेह। पूजा करे सहित बहु भेव ॥३॥
तिसही थानक वो चित्राम। सती चेलनाको अभिराम।
फैलावन देखनके काज। सदा हर्षजुत यह महाराज ॥ ४ ॥
इक दिन यह चेटक भूपाल। बहुत चम्पु लेकर निज लार।
काहू कारन किये पयान। आये राजग्रहे उद्यान ॥ ५ ॥
तहँ करके स्नान मनोग। फिर पट पहिरे उज्जल जोग।
भू मैं चित्रपट्ट फैलाय। प्रभुकी पूजन कीनी राय ॥ ७ ॥
इह विधि करतो श्रेणिक देख। मनमें विसमय धरो विशेष।
वाके निकट जो वर्ती लोग। तिनसे बचन भने नृप जोग ॥७॥
अहो कहो इह कारन कौन तुमरो भूप करत है जौन।
तब तिन दीनों उत्तर सार। सुनलीजे श्रेणिक भूपार ॥ ८ ॥
सात सुता याके अभिराम। तिनको है इह शुभ चित्राम।
तिनमें ब्याही कन्या चार। जुग कन्या वर जोबनधार ॥ ९ ॥
चेलन जेष्ठा जग विख्यात। रत रम्भावत तिनको गात।
बाल चन्दना तिष्ठत गेह। इह विधि जानो निःसन्देह ॥१०॥

दोहा

ऐसे सुन श्रेणिक तबै, जुग कन्याको रूप ।
तिनमें है आशक्त मन, मंत्रिनप्रति कहो भूप । ११ ॥
सब प्रधान जातेभये, अभयकुमार के पास ।
नमस्कार करके तबै, इम कीनी अरदास ॥१२॥

सोरठा

हे कुमार जुग कन्या सार । चेटक नृपको रूप अपार ।
तुमरे तात याचनाकीन । मन बिरोधते तिन नहिं दीन १३॥
इह तो कारज करन तुरन्त । सो अब क्या कीजे बुधवन्त ।
ऐसे सुनके कुवर सुजान । सचिवन प्रति बच एम बखान १४॥
तुम चिन्ता मत करो पुनीत । मैं करहूं यह कारज मीत ।
इम कह पिता तनों वर रूप । आप लिखो पट मांहि अनूप १५
सार्थ वाहको रूप बनाय । पहुंचो पुरी बिशाला जाय ।
तहँ उपाय कर वह चित्राम । कन्याप्रति दिखलायो ताम १६॥
देखतहीं वे मोहित भई । मनकी शुध बुध सब तज दई ।
तब सुरंगपथ अभयकुमार । लेकर चलतभये तत्कार ॥१७॥
तबै चेलना कपट समेत । जेष्ठा भेजी भूषण हेत ।
आप हर्षते याकी साथ । आई जहं श्रेणिक नर नाथ ॥१८॥

दोहा

ताने बहु उत्साहते, परनी यह गुण गेह ।
सब अन्ते वरके विषै, भई शिरोमणि येह ॥ १९ ॥
विष्णु भक्ति नर नाथ है, इम जिनमतमें लीन ।
मत बिवाद निशदिन करत, आपसमें परबीन ॥२०॥

कवित्त

या अन्तर श्रेणिक नर नायक रानीप्रति अब येम उचार ।

हे प्यारी पति देव तुल्य है ताते मन वच मानो सार ॥
मेरे गुरु बंधक सुखदायक ताको दीजे वेग अहार ।
विनय सहित इम कही चेलना देऊंगी मैं नाथ अवार ॥२१॥
ऐसे कहके बौध बुलाये मंडपमें दीने बैठाय ।
तब वे मौन सहित तहं तिष्ठे कपटयुक्त बहु ध्यान लगाय ।
जबै चेलना उनते पूछो कहा करतहो तुम यह भाय ॥
भाषी उन जब ध्यानधरें हम विष्णुधाम में पहुंचे जाय २२।

दोहा

तब इन मंडपके विषै दीनी अगन लगाय ।
बायस जिमये बौध सब, भागे बहु दुख पाय ॥२३॥
ऐसे लख नृप इम कही, तुम चितभगत जुनाह ।
तो मारन तपसीनको, कहो जिनागम मांह ॥ २४ ॥

सोरठा

ऐसे सुन तिहबार, उत्तर दीनों चेलना ।
सुनलीजे भरतार, मम विनती मन लायके ॥ २५ ॥

चौपाई

जब इन ध्यान धरो महाराज। सब शरीर तज मलजुत आज ।
पहुंचे विष्णु धामके माहिं । यामें शंसय रंचक नाहिं ॥ २६ ॥
तब मैं कीनो इन उपकार । ह्वांही तिष्ठे लह सुखकार ।
याते दीनी अगन लगाय । भव दुख इनको जो मिटजाय २७
जो मम बचकी होय प्रतीत । एक कथा अब सुनोपुनीत ।
ऐसे कह उन मत अनुसार । नाग कथा भाषी तिहबार ।२८।
ताको बरनन पूरब करो । ग्रंथ बढ़नते इहां नहिं धरो ।
ऐसे सुनके नृप धरि मौन । उत्तर रहित ठयो निज भौन ॥२९॥
एक दिना नृपकानन जाय । हेत शिकार सुचित उमगाय ।

तहं आतापन जोग समेत । ऋषी यशोधर भवदधि सेत ॥ ३० ॥
तिन देखत चितमें रिष धार । इह मम काज विघन करतार ।
मारूं इनको अत्र इह थान । इम कह छोडु दिये बहु स्वान ॥ ३१ ॥
वे कूकर अति दुखकी रास । दे पर दच्छणा बैठे पास ॥
यह लख श्रेणिक कोप समेत । छोडे सायक जेम परेत ॥ ३२ ॥
तबै बान लागत परमान । भई सुमन माला सुख खान ॥
अहो ऋषिनको तप परभाय । कहो कौन पै बरनो जाय ॥ ३३ ॥

दोहा

ता छिन सप्तम नर्क की, तेतिस सागर आय ।
श्रेणिक की बंधती भई, दुष्ट करम परभाय ॥ ३४ ॥
तब नरनायक एम लख, तज खोटो अभिप्राय ।
मद तजके तिन चरन में, तिष्ठो सीस नवाय । ३५ ।

पद्धडी

ताही छिन मुनिको जोगसार । पूरण हूवो आनन्द कार ॥
तब पुन्य उदय श्रेणिक नरेश । तिन मुखतें धर्म सुनो विशेष ।३६।
उपशम सम्यक जब ग्रहन कीन । निज निंदाते भई आप छीन ।
राहि प्रथम नरककी आय आन । जो बरस चौरासी सहस मान ३७
देखो इस सम्यकको उद्योत । तिस धारनते क्या क्या न होत ॥
कहँ तेंतिस सागरको प्रमान । कहँ वर्ष चौरासी सहस मान ।३८।
फिर चित्र गुप्त मुनिवर दयाल । तिनके पदको नृप नाय भाल ॥
क्षय उप सम सम्यक युक्त होय । निज गृह तिष्ठो सब पाप खोय ।

चौपाई

ता पीछे श्री वीर जिनन्द । जिन पद कमल हरत बहु फंद ॥
तिन प्रसादते पाई सार । चायक सम कित शिव दातार ।४०।

कीनों तीर्थंकर पद बन्द । तीन जगत पूजत सुख कंद ॥
तातें तीर्थंकर भगवान । होवेंगे धर पंच कल्यान ॥ ४१ ॥
यह सब सम्यकको परभाय। देखो भवि जन चित्त लगाय ॥
स्वर्ग मोक्षको बीज निहार। तज विलंब कर अङ्गीकार ॥ ४२ ॥
देव इन्द्र चक्री पद देय। दुख समूह को नाश करेय ॥
पंडित जन कर सेवित सदा। भव्य जीव भूलो नहिं कदा।४३।
सप्त तत्व वरनें भगवान। ताको निश्चय सम्यक मान।
याविधि सुत श्री सागर मुनी। वरनन कीनी तिम हम भनी।४४।

दोहा

सती चेलना की कथा, इह विधि पूरन जान।
भव्य जीव बांचो सुनो, धर सम्यक सरधान ॥ ४५ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय चेलना व श्रेणिक महाराज की कथा सम्यक अंग में समाप्तम्



अथ प्रीतं कर रात्रिं भोजन त्याग

कथा प्रारम्भः नं० ११७

मङ्गलाचरण । सोरठा

श्री जिनदेव महान, और भारती मायजी ।
गुण उज्जल गुरमान, नमस्कार कर के अबै ॥ १ ॥
कहूं कथा विख्यात, रात्रि अहार सु त्याग की ।
जाने जन सुख पात, सोई अब सुन लीजिये ॥ २ ॥

पद्धड़ी

वृष हेत रैन भोजन तजंत । दोऊ लोक समारत ते महंत ।
सो कीर्त कान्त यश शान्त पांत । बहु दीर्घ आय वर सुख लहात ३
जे भखें रैन में जन अहार । ते दारिद्री होवें अपार ।
अरु पुत्र रहित ह्वै नेत्र हीन । बहु रोग ग्रसत तन लह मलीन । ४ ।
कैसे हैं रजनी भुक्त येह । बहु कीट पतंगन जन्तु गेह ।
जे मांस तनें त्यागी प्रवीन । याको त्यागो चित पाप चीन । ५ ।

दोहा

जो श्रावक किरिया निपुन, रहे घड़ी दो भान ।
जुग घटिका दिन चढ़े तक, तजे सबै अन पान ॥ ६ ॥

श्री समन्तभद्र स्वामी ने कहा है:—

श्लोक—अन्होमुखेऽवसाने च यो द्वे द्वे घटिके त्यजेत ।
निशा भोजन दोषज्ञो यात्यसौ पुण्यभाजनम् ॥ ७ ॥

सवैया इकतीसा

जोई भवि जीव तजें रैन को अहार पान, औषधि तम्बोल फल आदिक न खात हैं । आन बने कष्ट जोर तौ भी नहीं नेम छोर, रहें दृढ़ चित्त सोई पुन्य को लहात हैं ॥ तेई पावें

इक वर्ष मांहि षट् मांस ब्रत, तास तनी महिमा कहो कांप कही जात हैं । सोई सम कित वन्त परम पुनीत सन्त, वोही धरमज्ञ वोही जग विख्यात हैं ॥ ८ ॥

चौपाई

अब श्री जैन सूत्र अनुसार । कहूं कथा भवि जन हितकार।
श्री मत प्रीतंकर बड़ भाग । होत भये रजनी भख त्याग । ६ ।
येही भरत क्षेत्र शोभन्त । तामें मागध देश दिपन्त ॥
सार सम्पदा को स्थान । जैन धर्म कर भरो महान ॥ १० ॥
तामें सुप्रतिष्ठ पुर वसे । नृप जैसेन तास में लसे ॥
परजा पाले धर अनुराग । धर्म न्याय धारी बड़भाग । ११ ।
ताही पुर में सेठ बसन्त । नाम कुवेर दत्त बुधवन्त ॥
श्री जिन चरन कमलको दास । धन मित्रा तिय तिस आवास १२
एक दिना इन पुन्य प्रभाय । ज्ञान नेत्र धारी मुनि राय ।
आये सागरसेन उदार । तिनको दीनो शुद्ध अहार ॥ १३ ॥
फिरकर जोड़ पूछियो येम । हे स्वामी भाषूं धर प्रेम ।
कोई पुत्र हमारे धाम । होवेगो अक नाहीं स्वाम ॥ १४ ॥
जो सुत नहिं उपजे हम घरें । तो अघ नाशक दीक्षा धरें ॥
इह विधि ते करके अरदास । नमस्कार कर तिष्ठो पास ॥ १५ ॥
तब श्री मुनिवर भाषे बैन । महाभाग तुम्ह सुत सुख दैन ।
धीर वीर वर चर्म शरीर । वंश शिरोमणि गुण गम्भीर ॥ १६ ॥
उपजेगो तुमरे ग्रह आन । इम सुन दम्पति चित हरषान ॥
अहो सुधासम श्री गुरु बैन । सुनके कौन लहे नहिं चैन ॥१७॥

दोहा ।

इस अन्तर वो बनकपति, निज तिय जुत बड़ भाग ।
जिन मंजन पूजा करत, देत दान जुत राग ॥ १८ ॥

निज गृह में सुखसो रहत, बीते कित एक मास ॥
फिर अनंद दायक तनुज, उपजो बहु गुन रास ॥ १६ ॥

पद्धरी

कैसो है बालक चंदसार । परयन मन अम्बुध वृन्दकार ।
और सब जनको उपजे अनन्द । मुलके यहसेशुजव मंद मंद २०
तातें सब जन गह हर्ष चित्त । पीतंकर नाम धरो पवित्र ।
निज गुणकर वृद्धभयो सुबाल । दोयजशशिसम जिमगतिमराल २
निज रूपथकी जीतो अनंग । सो भाग थकी भूतल अभंग ॥
वर चर्म अङ्ग धारे कुमार । तातें इस बलको कौन पार ॥ २२ ॥
जब पंच वर्ष के भये एह । तब मात तात धरके सनेह ।
गुरु निकट सौंप यों कर उछाह । पढ़नेके हेतशुचित उमाह ॥२३॥
कर वर्ष विषै यह बाल चंद । विद्या रूपी सागर अमंद ॥
गुरुभक्तिरूप नवका मझार । तामें चढ़ पारभयो कुमार ॥ २४ ॥

दोहा

सब विद्या पढ़के निपुन, धर्म वृद्धि के हेत ।
नित प्रति श्रावक जननको, यह उपदेश सुदेत ॥ २५ ॥

सोरठा

इम सुनके भूपाल, लखके आनंदित भयो ॥
सुवरण आदि रसाल, दीने याको प्रीति कर ॥ २६ ॥

चौपाई

इस अन्तर प्रीतङ्कर येह । जोवनवंत भयो गुण गेह ।
तब चित में इमकियोबिचार । सत्य रूप सम्पति अधिकार ॥२७॥
जबलों निज पौरुष परभाय । लाऊं बेग न लक्ष कमाय ।
तौलों पानपात्र आहार । हम करिहैं इम निश्चय धार ॥२८॥
ऐसे चितवन कर बुधिवान । महा मानधर करो पयान ॥

दीपान्तर ते लह बहु लच्छ । सुख से निज ग्रह आये दच्छ ॥२९॥
और जु पुण्यतने परसाद । सबही सुलभ कमला आद ॥
कछु भी दुल्लभ तिनकूं नाहि । ऐसे भवि जानो चितमांहि३०
या अन्तर जयसेन नरिंद । प्रीतंकर को लख गुण वृंद ॥
दई विवाह तनुज गुण भरी । नाम तासु पृथ्वी सुन्दरी ॥ ३१ ॥
अर्ध राज जैजै बच ठान । याको दीनो शरमनिधान ॥
और दीप दीपान्तर तनी । उपजी तिय इन परनी घनी ॥ ३२ ॥
फेर बहुत सेठन की सुता । विध विवाह परनी गुण जुता ॥
याको बरनन परम विशेख । महा पुरान मैं लीनो देख॥ ३३ ॥

दोहा

अब प्रीतंकर बुद्धिधर, राजादिक सम्राज ।
पुन्य उदय भोगत भयो, इह गुनियन सिरताज ॥ ३४ ॥
प्रीत सहित गुण सप्त शुभ, नवधा भक्ति धरन्त ।
सुख कारन मुनि चन्द को, नित प्रति दान करन्त ॥३५॥

सोरठा ।

श्री जिन यज्ञ महान, न्होन पूर्व करतो भयो ।
जो सुर शिव सुखदान, दुरलेश्या की नाशनी ॥ ३६ ॥

चौपाई ।

श्री जिन मन्दिर चैत्य मनोग । सप्त क्षेत्र इत्यादिक जोग ।
सोई सुख दाता कणजोय । मणि पियूष कर सींचत सोय ॥३७॥
पर उपकार विषै चितपाग । शील विषै दीखत अनुराग ।
जे पण्डित अतिकला निधान । तिन की गोष्ट विषै परधान ॥३८॥
जो श्री जिनवर भाषो धर्म । तामें बुद्धि लगावत पर्म ।
निज परजा पालत धीमंत । सुखसे तिष्ठे राज करंत ॥ ३९॥
अब वे सागर सेन मुनिंद । नाना विधि तपकर गुणबृंद ।

कर सन्यास विध तज के प्रान । लोकोत्तर पहुचे गुणखान ॥४०॥
अब नगरी बाहर उद्यान । तिष्ठे जुग चारण मुनी आन ।
रजू मती अरु विपुल मतीय । धरें ध्यान निरमल जगपीय ॥४१॥
तब प्रीतंकर सुन तत्काल । बहु बिभूति लेके निजनाल ।
और भव्य जन के समुदाय । तिन जुत तहँ पहुंचो हरषाय ।४२।

दोहा ॥

अष्ट द्रव्य लेकर विषै, तिन के चर्न उदार ।
पूजे याने भक्ति युत, फिर भू मस्तक धार ॥४३॥
तप रूपी वारिध अगम, वे दोनों मुनिचंद ।
तिनते धरम स्वरूप वर, पूछो धर आनंद ॥४४॥

सोरठा ।

प्रीतंकर बड़भाग, विनय सहित तिष्ठत भयो ।
गुरुपद में चित पाग, नीचो मस्तक तिन कियो ॥४५॥

काव्य ॥

तबै बड़े मुनिराज शब्द गम्भीर मिष्ठवर ।
कहत भये सुन भव्य धर्म युग विधतू उरधर ॥
मुनि श्रावक को भेद श्री जिनचंद बतायो ।
तीन जगत हितकार सरब भव्यन मन भायो ॥४६॥
तिन दोनों में जती धरम निश्चय भवितारी ।
क्षमा आदिक दश भेद भावना तप अघहारी ॥
अब श्रावक को धर्म सुनो कुछ कर्म निवारन ।
जाते सुरपद लहे बहुरि शिव पदको कारन ॥४७॥

पद्धड़ी ।

पहिले ही सम्यक ग्रहन जोग। वसु अंग सहित निरमल मनोग ।
शिव बीज श्रेष्ठ सुख देनहार।पचीस दोष बरजित उदार ॥४८॥

अरु जे बुध धनि हैं भव्य जीव। मिथ्यात बमन करिये सदीव।
जिस मिथ्या बंधन ते अत्यंत। जग में भिरमन यह जन करंत ॥४६॥
तातें जिन भाषित सार तत्व। तामें निश्चय करहोय रत्व।
मिथ्या नाना दुख देनहार। ताको तज दीजै बार बार ॥ ५० ॥
अरु भगवत भाषित जे पुरान। तिनको सुनधी निरमल सुठान।
मदमांस मधू फल पंच जेह। तिन त्याग करो बुधधार नेह ॥५१॥

दोहा॥

जिसके भक्षण ते सदा, दुख पावत यह जीव।
दुरगति दायक जानके, तज दीजिये सदीव ॥ ५२ ॥
पंच अणु व्रत नित गहो, शिक्षा व्रत चव जान।
तीन गुणो वृत उर धरो, जो चाहो कल्यान ॥ ५३ ॥

चौपाई।

मांस तने त्यागी नरजेह। इन वस्तुन को तजो सनेह।
रजनी भुक्तन करो सुजान। यामें बहुत जंतु की हान ॥ ५४ ॥
चर्म विषे तिष्ठो घृत वार। तेल हींग इत्यादि निहार।
सप्त व्यसन त्यागो गुण रास। इन ते धनजस कूल है नास ॥५५॥
कंद मूल बहु बिधि संधान। नौनी आज्य छोड़ धीमान।
बारछान ये विधते सदा। यामें आलस करो न कदा ॥ ५६ ॥
देवो भवि तुम नित प्रति दान। पात्रन को बहु भक्ति सुठान।
औषध शास्त्र अभै आहार। सुख को बीज यही उरधार ॥५७॥
सोई पात्र तीन शिव पीव। मुनि श्रावक सम दृष्टी जीव।
तिन के विषै दियो जो दान। बट वत फैलत है सुख खान ॥५८॥
श्रावक श्री जिनको अभिषेष। करो सु विधतें पूज विशेष।
अथवा पंचामृत ले घनो। न्हौन करावो प्रतिमा तनों ॥५९॥
देवन करके पूजित होय। सुर शिव पावो अघ सब धोय।

चैत्य चिता ले अधिक मनोग। सुख निधि वनवावो अतिजोग।६०।

दोहा।

फिर परतिष्ठा कीजिये, बहु बिधि जुत उत्साह।
तामें द्रव्य लगाईये, जो दुरगति नसजाय ॥ ६१ ॥
इत्यादिक भवि कीजिये, वृष में चित्त लगाय।
अन्तस लेखन मरन कर, प्रभु पद पंकज ध्याय ॥ ६२ ॥

पद्धडी।

भो भव्य धर्म इह जुग प्रकार। ताको चित धरिये बार बार।
इम सुन प्रीतंकर हरषपाय। करजोड़ सुनुत बिनती कराय ॥६३॥
हो स्वामी जग रक्षक दयाल। मम पूरब भव कहो सु गुणमाल।
ऐसे सुन ज्ञान सु चखु धरन्त। तब कहत भये सुनतू वृतन्त।६४।
इस सुप्रतिष्ठ पुर के उद्यान। श्री सागर सेन मुनीस आन।
तिन बंदन को नृप आदिजाय। भेरी मृदंग बाजे बजाय॥ ६५ ॥
तिन चरन कमल की पूजठान। नमिथुत कर सब आये सु थान।
ताही छिन पुर में मृतक एक। तिस थानक लाये जन अनेक।६६।
सो गेर गये वन के मझार। तहं इक जम्बुक इस बिध निहार।
तिस खाने में आशक्त सोय। इस को खाऊं इम चित्त जोय॥ ६७ ॥

सोरठा।

इम बिचार वहस्याल, जहँ बाजे बहु बजत हैं।
तहँ आयो तत्काल, इसको लख गुरु चिन्तवै ॥६८॥
निकट भव्य इह जीव, ब्रत को ग्रहन करे सही।
ह्वैगी शिव तिय पीव, करुणा कर बच इम कहे। ६६।

काव्य

रे गीदड़ तें पूर्व जन्म में पाप कमायो।
श्री जिन वृष को तजो तास कर इह भव पायो॥

अब भी तुम्हरे मन बाचै मृतक खाने की इच्छा ।
सो ताकूं धिक्कार बहुरि इम दीनी शिक्षा ॥ ७० ॥
हे मूरख अब छोड़ छोड़ आरा पल केरी ।
याते पावे नर्क थान तहँ त्रास घनेरी ॥
तातैं जो कुछ करन होय शुभ करतू अब ही ।
ऐसे सुन गुरु वाक्य स्याल चित चिन्तो तबही ॥७१॥
मेरे मन की बात अहो मुनि कैसे जानी ।
इम विचार मन शान्त होय तिष्ठो इह ज्ञानी ॥
जब याको लख शान्त चित्त गुरु एम कहाही ।
अहो स्यार तू और बरत में समरथ नाहीं ॥ ७२ ॥
पल ही है आहार योनि तैं ऐसी पाई ।
तातैं रजनी भुक्त छोड़ दे यह सुखदाई ॥
ऐसे बैन महान स्वच्छ जग के हितकारी ।
सुनके स्याल तुरन्त तबै मन इच्छा धारी ॥ ७३ ॥

दोहा

गुरु की तीन प्रदच्छिणा, दीनी भक्ति सु ठान ।
रात्रि भुक्त त्यागत भयो, धर के बहु सरधान ॥ ७४ ॥

सोरठा

पीछे यह पुनवान, मद्य मांस तज तो भयो ।
फिर इस सुधा लगान्न, तब सन्तोष जुत होय के ।७५।
धरे सु गुरु पद ध्यान, सूखे फल भक्षण करे ।
तप तें तन कृष ठान, तृषावन्त गयो वापिका ॥ ७६ ॥

चौपाई

सलिल हेत उतरो ता मांहि । अंधकार तहँ अधिक लखाहि।
भान अस्त हूवो इह जान । फिर बाहर आयो बुधिवान ।७७।

मारतंड लख के तिह घरी। उतरो पयकी इच्छा धरी॥
तहँ तम लख कर ऊपर आय। बहुरि सूर्य देखो सुखदाय ।७८।

दोहा

ऐसे आवत जात ते, अस्त भयो सो भान।
व्रत रक्षा के कारने, दृढ़ चित करो सुजान॥ ७९॥

सवैया तेईसा

रैन विषै सु भयो तृषातुर अग्नि समान जरे तन सारो।
तो पण शुद्ध रहो व्रत में गुरु नाम जजो परिणाम सु धारो॥
वह तज काय सु पुन्य वसाय भये तुम आय लहो सुख भारो॥
नाम कुबेर जु दत्त महा बड़ भाग हुवो यह तात तुम्हारो ।८०।

दोहा

अहो कुंवर सम्पति सहित, गुणियन को सिरताज।
धीर वीर लावन्य जुत, चर्म शरीरी राज॥ ८१॥
पुन्य उदै ऐसे भये, तुम प्रीतंकर आय।
एक बरत पालन थकी, यह सब सौंज लहाय॥ ८२॥

सोरठा

तातें भव्य उदार, कष्ट विषै रक्षा करो।
निज व्रत की सुख कार, यही जोग है जग विषै। ८३।

चौपाई

सुखदाता श्री मुनि के बैन। सुनके भविजन पायो चैन॥
श्री जिन भाषित धरम महान। तामें रक्त भये अधिकान। ८४।
तैसे ही प्रीतंकर येह। निज भव सुन नासो सन्देह॥
फिर चितमें वैराग उपाय। युग मुनिवरको बहु सिरनाय। ८५।
बरत महातम मन में धार। फिर कर आये निज आगार॥
यह संसार अथिर सब जोय। भोग भुयंगम सम अवलोय ।८६।

देह अपावन मलकर भरी । जैसे गागर है जो जरी ॥
इह संपति बिजली उनहार । मोह उपायन से तत्कार ॥८७॥
पुत्र मित्र तिय आदिक जेह । मो ते न्यारे निःसन्देह ॥
भय दाता इह ममता जाल । ताको नाश करूं तत्काल ।८८।
ऐसे करो बिचार विशेष । करूं जिनेन्द्र तनो अभिशेष ॥
मंगल दाता श्री जिन चंद । पूजूं तिनको जुत आनंद ॥८६॥
पीछे दीक्षा धारन करूं । करम कलंक सबै परिहरूं ।
इम विचार सब ही बिध करी । बहुत दान दीनों तिह घरी ।६०।
पुत्र प्रियंकर को निज लच्छ । सौंपत भये तबै वे दच्छ ॥
न्याय तत्व के जाननहार । संबोधो सबही परिबार ॥ ६१ ॥
तिनकी आज्ञा ले बड़ भाग । चलत भयो निज ग्रहको त्याग ॥
कछु एक बन्धू जनले लार । पहुंचो राज ग्रही पुर बार ॥६२॥
इन्द्रादिक करि है नित सेव । ऐसे वर्द्धमान जिन देव ॥
तिनकी भक्ति करी सिरनाथ । दीक्षा लीनी सुर शिव दाय ।६३।

कवित्त

इस अन्तर प्रीतंकर मुनिवर रतनत्रय शुध चित्त में भाय ।
नाना विधि के तप तिन कीने छीनकरी ए काय कषाय ॥
शुकल ध्यान बन्हींते जारे चार घाति या रिपु दुखदाय ।
केवल मारतंड परकाशो जातें लोकालोक लखाय ॥ ६४ ॥
इन्द्र बृन्द्र नागेन्द्र खगेश्वर चक्रवर्त हिमधर अरु भान ।
तिनकर पूजनीक चरनाम्बुज ऐसो पद पायो भगवान ॥
बचन सुधाते सब जग पोषो दूर करो आतप अज्ञान ।
शुभ मारग में भवि गण थापे फेर कियो निर्वाण पयान ६५

दोहा

अष्ट गुणन करयुत भये, अष्टम छितिमें जाय ।
सो प्रीतंकर ममतनी, शान्तिकरो अधिकाय ॥ ६६ ॥

अडिल्ल

ऐसे प्रीतंकर स्वामीको चरित्रजी, तीन जगत हितकार महा जो पवित्रजी। यह हम तुमको दाता ज्ञानतनो सही ॥ दीजो नितप्रति सार सरब सुखकी मही ॥ ९७ ॥

देखो इह गोमाय बिरष किंचित गहो, तजके दुठ परजाय आन मानुष भयो। फिर तप तप बड़भाग मोक्ष पदवी लही ॥ ताते भविजन जैन धरम धारो सही ॥ ९८ ॥

दोहा

जम्बुककी परजाय तज, भये प्रीतंकर आय।
रात्रि भुक्त त्यागन थकी, पायो सुख अथाय ॥९९॥

सोरठा

तातें भव्य सुजान, भोजन त्यागो रैन को।
जो चाहो कल्यान, नित चित धारो यह कथा १००

इति श्रीआराधनासार कथाकोषविषै रात्रिभोजनत्याग मे श्रीमत्प्रीतंकर स्वामी की कथा समाप्तम् नं० ११७



॥ श्रीवीतरागायनमः ॥

अथ श्री चारदान कथा प्रारम्भः

प्रथम आहार दान कथा

मंगलाचरण ॥ दोहा ॥

श्रीवृषभादि जिनेशजी, जगत गुरू शिव कन्त ।
तिन नमि पात्र सुदान की, कथा कहूं रसवन्त ॥१॥

गीता छन्द

श्रीमान जिनवरचन्द्रके आनन थकी उपजत भई ।
सोपरम पावन भारती मोहि ज्ञान दधि देओ सही ॥
अरु जे गुरू निरग्रंथ शिवदाता नमूं पद जासके ।
सम्यक्त दर्शन ज्ञान चारित हैं परिग्रह तास के ॥ २ ॥
तिनही कहो है दान औषध अभय शास्त्र अहारजी ।
सो तीन जगमें सार है, दीये लहे फल सारजी ॥
जिम शुद्ध भूमधि बटक बीज सुवोय तें बहु विध करे ।
तिमही सुपात्रनको दियो बहु दान सुखको विस्तरे ॥३॥

सवैया ॥ इकतीसा ॥

जैसे एक वापी को सलिल अनेक रूप देत रस न्यारे न्यारे कारनको पायके । केलमें कपूर होत नींबमें कटुक जान ईख माहिं मिष्ठ रस देखो चितलायके ॥ तैसे शुभ पात्रनको दियो जो अहार दान देतसुख अतुल सुकहै कौन गायके । वोही जो कुपात्रन को दियो कटू फल होत तातें जैन आश्रनको दीजे हरषायके ४

दोहा

एक सुपात्र विषे दियो, दान महा फल देय ।
और हजारन के दिये, कारज नाह सरेय ॥ ५ ॥

जैसे सुरतरु एकही, मन बंछित दातार।
और हजारों वृक्षते, कारज कौन निहार ॥ ६ ॥

चौपाई

सोइ पात्र हैं तीन प्रकार। उत्कृष्टे श्रीमुनिवर सार।
मध्यम श्रावक सम्यक्तवन्त। अव्रत सम्यक दृष्टी अन्त ॥७॥
येही जोग जान बड़ भाग। औरन को तजिये अनुराग।
इनके विषै दियो जो दान। निश्चयकर सुखदेय महान ॥८॥
अहो तासकी महिमा सोय। हमसेती किम बरनन होय।
पात्रदान फलते यह जीव। निरमल सुखसो लहे सदीव ॥९॥
शर्म नाम किसको है मीत्त। कीर्ति कान्त अरु रूप पुनीत।
निरमल तन अद्भुत सौभाग। पुन्यवान जिन मतमें राग १०
सुखतरुवरको बीज निहार। उच्च कुलमें लेवे अवतार।
सुवरन औ धनधान्य उपान। पुत्र पौत्र तिय भोग महान ११

दोहा

इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र पद, देवे येही दान।
तातें नितही सुमनजन, दीजे वित्त समान ॥ १२ ॥

पद्धड़ी

जे भक्ति सहित देवे सुदान। ते सज्जन जन संगत लहान।
दिनदिन कल्याण नवीन देत। क्रमकर वह शिवपुर राजलेत१३॥
श्री आदनाथ वत भव्य जान। दियो वज्रजंघके भवसुदान।
तातें नितप्रति चव विध अनूप। धरो त्यागविषै बुधहर्षरूप१४
जिन भव्यन देकर दान सार। फलपायो इस अवनी मझार।
तिननामसे कहनकोकोमहान। श्रीजिनवरचन्द्रबिना न जान१५
अरु पूरब आचारज सुरीत। तिन नाम कथित आये पुनीत।
अब अवसर पाय कहूं सुनाय। निज बुद्धि युक्तसुन चित्तलाय१६

श्री सेन और महा सेन जान। बर बृषभ सेन सोभाय मान।
बाराह लखो श्री कौंडरेस। ये भये प्रकट दाता विशेष॥ १७॥

उक्तञ्च आर्य छन्द।

श्रीषेणो बृषसेनः कौंडशः। सूकरश्च दृष्टान्ताः।
वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः ॥ १८ ॥

छप्पय।

श्रीयषेण आहार दान पात्रन को दीनो।
भेषज देकर बृषभ सेन मुन तन सुच कीनो॥
कौंडरेश ने शास्त्र दान दीनो चितलाई।
सूकरने दे अभैदान निज हित उपजाई॥
अब तिनही संक्षेप ते, कथा कहूं मैं गाय के।
क्रम करकेभव सुनलीजिये, मन बचकाय लगायके १९

कथारम्भ॥ चौपाई॥

पहिले ही श्री श्रेण नरिन्द। भुक्तदान दीनों गुण बन्द।
ताकर शान्त तने करतार। उपजे शांत नाथ अवतार॥ २०॥
भो स्वामिन सोलम तीर्थेश। जैवन्ते बरतो जगतेश।
तुमरो चरित जगत में सार। भुक्त मुक्त को है दातार॥ २१॥
सोई श्रेष्ठ चरित्र पवित्त। हम को शांत अर्थ हो नित्त।
कोड़ो सुख दाता यह कथा। धरो सुमन हिरदे सर्वथा॥ २२॥
सब दीपन मधि जम्बूद्वीप। मानों जन में लसत महीप।
ताके दक्षिण भाग मझार। भरत क्षेत्र है धनुपाकार॥ २३॥
श्री जिन भाषित धर्म पवित्र। ताकर पूरित है वो क्षेत्र।
तामधि मलहदेश अभिराम। नगर रतन संचय पुर नाम॥२४॥
तास विषै परजा रिछपाल। श्रीय श्रेण नामा नर पाल।
धीर बीर दाता अधिकाय। सब अरिनाशे बुद्धि पसाय॥ २५॥

दीरघ दर्शी किरिया वन्त। धर्म विषै चित धरे अत्यंत।
पुन्य उदय ते भोगत भोग। निज ग्रह में पचेन्द्री जोग ॥ २६॥

दोहा ॥

ता नृप के होती भई, जुग तिय रूप निधान।
सिंघ नंदिता नाम यक, आनन्दता सुजान ॥ २७ ॥
तिन दोनों के सुत भये, शशि रवि की उनहार।
इन्द्र उपेन्द्र सु नाम है, सूरवीर अधिकार ॥ २८ ॥
इत्यादिक परिवार जुत, श्रीय षेण महाराज।
पुन्य उदै निजधाम में, तिष्ठत सब सुख साज ॥ २९ ॥

काव्य।

तिसही नगरी विषै सात्य की विप्र बुद्धधर।
जंघा नामा नार सत्य भामा पत्रीवर॥
तैसे ही इक अचल ग्राम में विप्र रहत है।
धरनी जट तिस नाम वेद वेदाङ्ग सहित है ॥३०॥
ताके अग्निला नार पुत्रजुग सुन्दर प्यारे।
इन्द्र भूत और अगन भूत ये नाम सुधारे ॥
कपल नाम इक दासी सुत तिसके घर माही।
पूरब उदै पसाय बुद्धतीक्षण अधिकाही ॥ ३१ ॥

दोहा

नित प्रति दुज निज सुतन को, जबै भनावे बेद।
सुन कर दासी तनुज यह, उरधारे बिन खेद ॥ ३२ ॥
निज धीके परसादतें, पढ़ो बेद बेदांत।
पंडित ह्वै तिष्ठत भयो, धारे रूप अनांत ॥ ३३ ॥

सोरठा

करो जतन जनकोय, बुद्ध कर्म अनुसारणी।
ताते पण्डित होय, बिना सिखाये जग विषै ॥ ३४ ॥

पद्धडी ।

तब सबही दुज मन क्रोध ठान । धरनी जठते इम वच बखान ।
दासी सुतको विद्या समोह । दीनी अद्भुत नहिं जोग तोह ॥३५॥
ऐसे तिनके बच सुन तुरंत । मनमांही भै घरके अत्यंत ।
ताको ग्रहते दीनो निकास । तब कपल चलो ह्वै करे उदास ॥३६॥
पहुंचियो रतन पुरदुज सुभेष । तब सात्यक मोहत याहिपेख ।
बहु पण्डित लख निजधामलाय । सतभामा तनुजा दई बिबाह ।३७।
जब कपल सत्यभामा लहाय । राजादिकते बहु यान पाय ।
बहुवेदतनो करतो बखान । सुख से तिष्ठत आनंद ठान ॥ ३८ ॥

दोहा ।

इह विधतें बहु दिनगये, नार भई रतुवंत ।
हू चरित्र करने थकी, बांछा करी अत्यंत ॥ ३९ ॥
इहविधि सतभामा लखो, मन में कियो विचार ।
यहपापी किसको तनुज, शंसय इम चितधार ॥ ४०॥

सोरठा ॥

प्रीत रहित यह होय, तिष्ठी अपने धाम में ।
होनहार सो होय, यह बिचार करती थकी ॥ ४१ ॥

चौपाई ।

अब धरनी जट ब्राह्मन जोय। पाप उदय दारिदजुत होय ।
कपिल विभव सुनके अधिकार । आवत भयो तासके द्वार ॥ ४२ ॥
याको लखकर कपल तुरंत । चितमांही बहु रोस गहंत ।
बाहर सेती धर अनुराग । खड़ी होय ताके पगलाग ॥ ४३ ॥
ऊंचे विष्ठर पै बैठाय । सुश्रूषा कीनी बहुभाय ।
फिर पूछी मम भ्रात अरु मात । सुखसे हैं तुम भाषो तात ॥४४॥
इम कह लेकर ऊष्ण सुबार । याको न्हौन करायो सार ।
बहुरि करे जो चित अहलाद । ऐसो भुक्त दियो खीराद ॥४५॥

बहुत दिये वस्त्रादि मनोग। कहत भयो सुनि ये सबलोग।
यह दुज पण्डित मेरो तात। ऐसी कुश्चित भाषी बात ॥ ४६ ॥
तबवो दुज दारिद्रपसाय। याको सुत कहके बतलाय।
तातें दारिद को धिक्कार। काज अकाज गिने न लगार ॥४७॥
इह विधिबीतें कइ एक मास। तब यह सतभामा गुणरास।
धरनी जटको बहु धन दीन। बुलवाके एकान्त प्रवीन ॥ ४८ ॥
भक्ति सहित इम पूछीबात। सत्य कहो तुम याको तात।
याकी चेष्टा मलिन अपार। नहिंप्रतीत मम चित्त मझार ॥४९॥
ऐसे सुनकर दुज तिहघरी। घर जानेकी इच्छा धरी।
कपल प्रती धरके बहुरोष। और द्रव्य को पायो कोष ॥ ५० ॥
तासें सब बिरतांत बखान। झट निज ग्रह को कियो पयान।
इम सुन सतभामा दुखलई। पृथ्वी पति के सरने गई ॥ ५१ ॥

दोहा।

राजाने पुत्री करी, राखी अपने धाम।
कपल कुबुद्धी दुष्ट मति, कपट मूल लख ताम ॥५२॥
नर नायक चितरोष धर, स्याम करो तिस भाल।
खर चढ़ाय निज देशतें, काढ़ दियो तत्काल ॥ ५३ ॥
राजन को यह धर्म है, करे सृष्ट प्रतिपाल।
दुष्टन को निग्रह करे, नातरु होय कुचाल ॥ ५४ ॥

कवित्त

एक दिना नृप पुन्य जोगतें तप रूपी रतनन की खान।
जुग चारन मुनि आये नभते मानों दुज शशि और भान ॥
बर आदित्य गतहैं ऋषि नायक दूजे नाम अरिंजय जान।
तिन को देख उठो नर नायक पड़गाहे मन भक्ति सुठान ॥५५॥
सप्त गुणन जुतहर्ष सहित दियो स्वच्छ दान तिनको जिहबार।
पंचाचर्य भये अम्बर ते देवन कीनी जैजै कार ॥

अहो बात यह सत्य जगत में दानतनी महिमा अधिकार।
तातें क्या क्या शुभ न लहत हैं सबही सुलभतिस आगार॥५६॥

दोहा॥

अब कितने इक दिनन तक, श्रीय षेन नरराय।
पुन्य उदै सुख भोगतो, फिर त्यागी निजकाय॥

अडिल्ल।

खंड धातु की पूर्व मेर महान है। उत्तर कूर जहँ भोग भूम सुख थान है। तहँ उपजो बड़ भाग भोग भोगत घने। तीन पल्य की आयु कौन महिमा भने ॥ ५८ ॥

अहो कौन यह अचरज कारी बात है। साधों की संगति ते शिवपुरपात है। तातें संगत करो भले जन की सदा। दुष्टन को पर संग नकीजे भव कदा ॥ ५९ ॥

छन्द चाल।

अब नृपन की दोनों नारी। जो प्राणों ते अति प्यारी।
अरु सतभामा जो थाई। तीनों ने मीच लहाई ॥ ६० ॥
करके अनुमोदक भारी। लहो भोग भूम सुखकारी।
दश बिधि के तरु सुखदाई। ताको भोगे अधिकाई॥ ६१ ॥

उक्तंच श्लोक।

मद्यातोद्यविभूषाश्रग् ज्योति दीप ग्रहांगकः।
भोजनामत्र वस्त्रांगा दशधा कल्पपादपाः ॥ ६२ ॥

छन्द।

सोवो थानक दुत वंता। तहँ रोग शोक नहिं चिन्ता।
दारिद्र कभीनहिं आवे। और अल्प आयु नहिं पावे ॥ ६३॥
सब आपस में हितकारी। नहिंअरि को जहँ परचारी।
नहिं शीत उष्ण की बाधा। तहँ युद्ध तनो न उपाधा ॥ ६४ ॥

नहिं सेवक स्वामी कोई । सबही आरज तहँ लोई ।
जनमादि मरन परयंते । नाना बिधि सुख भोगन्ते ॥ ६५ ॥

दोहा ॥

दान तनें परभाव तें, उपजत हैं नर भाम ।
सरल चित्त को मल अधिक, हैं तिन के परनाम ॥
तहँ ते चय कर देव गत, पावत हैं बड़ भाग ।
यातें उत्तम पात्र को, दान करो युत राग ॥ ६७ ॥

चौपाई

सो अब श्रीयषेण चरयेह । पांचो अत्तन के सुख श्रेह ।
भोग सहित त्यागी निज काय । फिर ऊंचे ऊंचे पद पाय ६८॥
इसही भरत चेत्रके बीच । हस्तनागपुर सहित मरीच ।
तामें बिश्वसेन भूपार । ऐरा देवी सुन्दर नार ॥ ६९ ॥
तिनके पुत्र गये जगतेश । सोलम तीर्थंकर परमेश ।
चक्रवर्त पद पाय अनंग । बहुरि मोक्ष सुख लहो अभंग ॥७०॥

काव्य

देखो भव्य जो भुक्त देत हैं शुध मन करके ।
ते दोउ लोक मझार सर्म पावत अघ हरके ॥
याते भविजन दान देहु पात्रनके ताईं ।
अपनी शक्ति समान, जास फल सुर शिवदाई ॥७१॥

गीता छन्द

श्रीकुंद सुवंशमें बर मूल संघ विषै जये ।
निरमल रतन त्रियकर विभूषित मल्लभूषण गुरु भये।
तिन शिष्य जानों ब्रह्म नेमीदत्त ने भाषी कथा ॥
अब तिनोंके अनुसार लेकर कथनकीनों सर्वथा ॥७२॥

दोहा

दान सुपात्रनको दियो, श्रीषेण नर राय ।
ताकर तीर्थंकर भये; षोड़स में सुखदाय ॥ ७३ ॥
सो स्वामी सन्ताप मम, दूर करो तत्काल ।
शान्ति अर्थ हूजे प्रभू, यातैं नाऊं भाल ॥ ७४ ॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषय सुपात्राहार दानफल विषय श्रीषेण महाराजकी कथा समाप्तम्

औषधदानमें वृषभसेनकी कथा प्रा०

मंगलाचरण। काव्य ॥

बरनूं श्रीजिनचंद और सरवती जग माता ।
गुरु निग्रन्थ दयाल नमूं जेहैं जग त्राता ॥
बरनूं औषधि दान तनी, शुभ कथा अघारी ।
तिस दीरघ फल आय लहे जन जगत मझारी ॥१॥
बहुरि लहे चित स्वस्थ कुष्ट आदिक सब नासे ।
होय निरोग शरीर सदा आनन्द परकाशे ॥
पावें धन अरु धान्य सम्पदा बपु निरमल अति ।
बहुरि लहे शिव थान देय जो भेषज नितप्रति ॥२॥

दोहा

सो यह औषध दान शुच, दीजे पात्रन हेत ।
दया सहित अमटार के जो पावो सुख खेत ॥ ३ ॥
जिन जिन जीवन फल लहो, भेषज दान सुदेय ।
तिनकी महिमा प्रभु बिना, जगमें को बरनेय ॥४॥

पद्धडी

अब इसही सन्बंधके मझार। श्रीवृषसेनाको चरितसार ।
पूरब अनुसार कहूं बनाय। कल्याण हेत सुनो चित्त लाय ॥५॥

इस अन्तर येही भरत क्षेत्र। श्रीजिनके जन्म थकी पवेत्र।
तहँ कमल जुक्त सुन्दर विशेष। जनपद नामा है एक देश ६॥
कावेरी पत्तन तास मद्ध। नृप उग्रसेन नामा प्रसिद्ध।
सब विद्या मंडित अवनिपाल। परजा हितकारी सुगुणमाल ७॥
ताही नगरी में सेठ एक। तिस नाम धर्मपति जुत विवेक।
जिनचंद चरन राजीव जेह। षट पद सम तिनपै रमै एह ८॥
तिनके बड़ भागन शीलवान। धनश्री सेठानी श्रीसमान।
गुणरूप रतनकी धरनहार। पतिको प्यारी आनन्द कार ॥९॥

दोहा

तिनके पूरब पुन्यते, सुता भई दुतवान।
मानो उज्वल गेहमें कीरतही उपजान॥

सोरठा

लावन रूप अपार, नाम वृषभसेना धरो।
रत रंभादिक नार, तिस लखकें लज्जा धरें॥११॥
रूपवती तिस नाम, पाले धात्री प्रीत ते।
नित मंजन अभिराम, याहि करावे जतन ते ॥१२॥

गीता छन्द

इस वृषभसेनाके न्हवन पैते भरो एके गर्तही।
ता मध्य कूकर रोग पीडित आन नितप्रति परतही।
तातें विमलतन भयो जाको सर्व पीड़ा नसगई॥
इम देखकर तब धाय विस्मयवन्त चितमाही भई ॥१३॥
मनमें विचारो इह कुमारी पुन्यवन्त महान है।
इम न्हौनको जल रोग नाशक सुधाकी उनमान है।
तिसही सलिल की बूंद ले निज मातको याने दई।
द्वादश वरसतें अंधथी तिस आंजते चखु खुलगई॥१४॥

चौपाई

तबही रूपवती यह धाय जननीके चखु लख हरषाय ।
तिस स्थान तनों शुभ तोय । भेषजसम ताको अविलोय १५॥
अवनी में कीनों विख्यात । या प्रभावते सब दुख जात ॥
नेत्र कुक्ष सिर रोग नसन्त । कुष्ट जहर वृण सर्व हरन्त ॥१६॥
या अंतर इक दिन नर ईश । रण पिंगल नामा मंत्रीश ॥
ताको घन पिंगल नृप देश । भेजो जंमू जु देय विशेष ।१७।
जब यह पहुंचो जाय तुरंत । वाने जतन कियो इह भंत ॥
हालाहल सब कूप मझार । डरवायो ताने रिस धार । १८ ।
तब याके सब जन समुदाय । पीवत पै ज्वर अधिक लहाय ।
दुख्त मन है कर परधान । फिर कर आये निज स्थान ॥१९॥
रूपी बती धातृ जल जोग । लावतही सब भये निरोग ॥
जैसे श्री गुरु वचन प्रसाद । ततक्षण नासे मिथ्यावाद ॥२०॥
अब यह उग्रसेन नर पाल । क्रोध अनिल कर तन पर जाल ।
घन पिंगल राजाकी ओर । चढ़ चालो बहु सेना जोर ।२१।
तिस कूपनको पीवत बार । सब के जुर उपजी अधिकार ।
तब नरपति ह्वै चित्त उदास । फिर कर आयो निज आवास ।२२।

दोहा

रण पिंगल मंत्री कहो, सेठ सुता विरतन्त ।
सुन कर चित हर्षित भयो, उग्रसेन बहु भन्त ॥ २३ ॥
निज पीड़ा के नाशको, जल मांगो ता पास ।
सेठानी भै करतबै, सेठ प्रते इम भास ॥ २४ ॥

काव्य

हे स्वामिन इस सुता तनो मंजन भो पानी ।
क्या नृप शीश गझार अबै डारन बुध ठानी ॥

कहे सेठ सुन नार नृपति पूछे जो अबही।
सांच सांच कह देउं झूठ बोलूं नहिं कबही ॥ २५ ॥
अहो सन्त जन सत्य रूप जे बोलें बायक।
तिनके कबहू दोष नाहि उपजे दुखदायक ॥
इम दम्पति कर मंत्र सुता के न्हौन तनो पे।
भेजो धातृी हात गई सो नृपति पास ले ॥ २६ ॥
तिसी सलिल को लेय नृपति निज शीष लगाया।
परसत ही तत्काल भई तिस निरमल काया ॥
रूपवती ते सब वृतान्त पूछो नर नायक।
इस ने कन्या चरित कहो सब ही सुखदायक ॥ २७ ॥
ताही छिन नर रच सेठ को तुरत बुलायो।
धनपत सुनत प्रमान तबे राजा ढिग आयो ॥
कीनों बहु सन्मान कहो पुत्री निज दीजे।
कहो सेठ में देहुं काम जो इतने कीजे ॥ २८ ॥

सोरठा

स्वर्ग मोक्ष सुखदाय, अष्टानक पूजा भली।
पंचामृत भरवाय, जिन मंजन नित प्रति करो ॥ २९ ॥

दोहा

जे जन कारागार में, पक्षी पींजर मांहि।
इनको बेग छुडाइये, हे पृथ्वी पति नाह ॥ ३० ॥
तो अपनी तनुजा बिमल, रूप भाग दुत बान।
तुम को देहूं बेग ही, कुल दीपिका महान ॥ ३१ ॥

चौपाई

नृप तब इम बच किये प्रमान। फिर विवाह को उत्सव ठान।
परनी सेठ सुता अभिराम। नाम वृषभ सेना गुण धाम ॥ ३२ ॥

दीनो पट रानी पद सार । सुख से तिष्ठे निज आगार।
नृप ने सब कारज दिये त्याग। याही ते क्रीड़ा अनुराग ।३३।
अब यह वृष सेना धर्मज्ञ । करे सदा जिन न्हौन सुयज्ञ।
अरु निर्ग्रन्थ गुरुनको देत । दान बहु विध भक्ति समेत। ३४।
सदा शील पाले बड़भाग । धरमी जनतें धारत राग ॥
अहो धर्म वंतन की सेव । बहु फलदायक है स्वयमेव ॥३५॥
जैसे जगत पूज जिन धर्म । पालत तिष्ठे जुत शुभ कर्म ॥
इस अंतर काशीको राय । पृथ्वी चंद महा दुठ भाय । ३६ ॥
थो इनके बंदी ग्रह बीच । ताको नाहिं छोड़ो लख नीच।
अहो दुष्ट जे जीव अयान । कभी बंध ते नहीं छुटान । ३७।
नारायन दत्ता तिस नार । ताने मंत्र सुयेम विचार ॥
छुड़वावन को अपने कन्त। करत भई सार इह भन्त । ३८।

दोहा

वृष सेना का नाम तें, बांटे बहु विधि दान ।
विप्र आदि बहु जनन को, कर के बहु सन्मान । ३९ ।
दान लेयकर बहुत जन, इस पत्तन में आत ।
निज सुखते धात्री सुनी, दान तनी सब बात ॥ ४० ॥

चौपाई ।

रूपवती सुनने बहु भन्त । चित में कर के रोष अत्यन्त॥
कन्या से इम भाषी जाय । तें मम पूछे बिन केह भाय । ४१।
दान तनी शाला अधिकाय । कीनी बानारस के मांह।
कहे वृषभ सेना सुन मात । मैं नाहीं कीनी यह बात ॥४२॥
मेरो नाव लेय जन कोय । बांटत हैं चित हर्षित होय ।
ताकी खबर मंगावो बेग । जूं नाशे मन को उद्वेग । ४३ ।
रूपवती धात्री ने तबै । हलकारन प्रति पूछी सबै ।

उन भाषो सब दान वृतन्त । इन कन्या प्रति चयो तुरंत ॥४४॥
तबै वृषभ सेना सुन येह । पहुंची नृप पै हर्षित देह ।
शीघ्र छुड़ायो पृथ्वी चंद । जब तिन पायो बहु आनंद ॥४५॥

दोहा।

अब इस पृथ्वी चंद ने, याको पट लिखवाय।
तिस चरनन में सिर धरत, अपनो भावदिखाय ॥४६॥

पद्धड़ी।

पीछे वो पट लेकर रिसाल । इनको दिखलायो न्याय भाल ।
वृषभ सेना ते इम वच उचार । हे देवी तुम मम मान सार ॥४७॥
तुमरे परसाद मम जन्म येह । अब सुफल भयो हे विन संदेह ।
इमसुज नृप तिय संतोषपाय । राजाते बहु सनमान ध्याय ॥४८॥
याको आज्ञा दिलवाय दीन । घन पिंगल पै जावो प्रवीन ।
यह सुन के पृथ्वीचंद राय । पहुंचो निज नगरी मांहि जाय ॥ ४९॥
अब सुनी मेघ पिङ्गल नरेश । आवे काशीपति मम सुदेश ॥
वह जानत है मम सर्व भेद । ऐसे निश्चय कर धार खेद ॥ ५० ॥
नृप उग्रसेन के पास आय । हूवो चाकर निज शीष न्याय ।
जे हैं जन जग में पुन्यवान । तिन अरीहोत मित्रन समान ॥५१॥

दोहा।

इस अन्तर एक दिन विषै, उग्रसेन नरराय ।
यह विध परतिज्ञा करी, बहुविध मन हरषाय ॥ ५२ ॥

अडिल्ल।

जो आवे मम भेट तास मध ते कही । आधी घनपिंगल को देऊं गो सही । अर्ध भेट पटरानी यामें ते लहे । इह विध तें नृप बचन आप मुख ते कहे ॥ ५३ ॥

एक दिना मणिकम्बल युग आवत भये । एक एक तब

दोनों को नृप ने दिये। अहो वचनजे जगमें पंडित करत हैं।
ते घन मण कंचन में चित नहिं घरत हैं ॥ ५४ ॥

जोगी रासा

एक दिना घन पिंगल कीतिय रूपवती पै आई।
मणि कंचन ओढ़े सिर ऊपर तहां प्रमाद बसाई॥
पटरानी को वो मण कम्बल बदल गयो तिह बारी।
देखो कर्म तनी गत अद्भुत टरत नहीं है टारी ॥ ५५ ॥
अब यह घन पिंगल ऐके दिन नृपकी सभा मझारी।
आयो वो मण कम्बल वोढ़ें राय लखो तत्कारी॥
क्रोध अनिल कर तप्त भयो तन पट घृत जोग लहाई।
ऐसे लख कर यह घन पिंगल भाग भयो भै खाई ॥ ५६ ॥

चौपाई

अब यह उग्रसेन नरपाल। क्रोध युक्त कीने चखु लाल॥
सब शुध बुध तिस गई पलाय। सती वृषभसेना बुलवाय॥५७॥
तबही डारी वारध बीच। हेया हेय न जानी नीच॥
अही मूढ़ जनको धिक्कार। क्रोध प्रभाव तजे सुविचार॥५८॥
जब यह सती उदधि में परी। ऐसो विध परतिज्ञा करी॥
इस उपसर्ग थकी मैं बचूं। तौ व्रत का पद निश्चय रचूं॥५९॥
ताही छिन इस शील प्रभाय। जल देवी तहँ पहुंची आय॥
भक्ति सहित विष्ठर पै थाप। चंवर टार जै जै आलाप ॥ ६० ॥
अहो भव्य अचरज क्या एह। शील महा सुर शिव पद देह॥
अगन होत है सलिल सरूप। उदधि महा थल होय अनूप ॥ ६१ ॥
शत्रु होय निज मित्र महान। हालाहल ह्वै सुधा समान॥
सुयश सदा फैले चहुं ओर। पुन्य सम्पदा व्यापे जोर॥ ६२॥

तातें पाप हतन यह शील । पालो बुध जन करो न ढील ॥
श्री जिनेन्द्र ने इम उच्चरो । मन रूपी मरकट बस करो ।६३।

दोहा

नार वृषभ सेना तनो, ऐसे सुन विरतन्त ।
ताके ढिग जातो भयो, पश्चाताप करन्त ॥ ६४ ॥

सवैया इकतीसा

तबही वो सती सार मन में वैराग धार, गई ततकार वन मांहि मुनि पास जी । गुण धरनाम तास अवधि धर प्रकाश, तिन पद नम इम करी अरिदास जी ॥ सहो जग वंद दया-वारिध सुगुण वृन्द, किये कोन काज में ने सुख दुख रास जी । पूरब वृतन्त सब कहो कृपा धार अब, मूरनीक गेय जे ते रहे तुमे भाश जी ॥ ६५ ॥

दोहा

तब मुनि नायक इम कही, सुन पुत्री चित लाय ।
पहले भव इम देश में, तू दुज कन्या थाय ॥ ६६ ॥

बालमेघकुमार की देशी

नागश्री तुझ नाम थोरी, नृपके देवहुवार। देत सोहनी तू सदारी, येहीथा अधिकार, री पुत्री मिथ्या तू मतिलीन ॥६७॥

एक दिना मंदिर विषै जी, आये श्रीऋषिचन्द । मुनिदत नामा जगपती जी, तपमंडित गुणवृन्द ॥ सयानी सुनिये चित्त लगाय ॥ ६८ ॥

मंदिर के पड़कोटमें जी, बाय रहित लख गर्त । तामें संध्या के समयजी, आतम ध्यान सुकर्त । सयान तिष्ठ मौन सुधार ६९॥

हे पुत्री तैं रोस तेरी घर अज्ञान कुभाय ।कहत भई यहांते नगन, तू अबही बेग पलाय । ॥ रेजोगी आवेगो नरनाथ ७०

मैं पृथ्वी निरमल करूं रे, इहविधि बचन कठोर। तैं भाषे तौभी तजीना, श्रीगुरुने वह ठौर॥ सर्यांनी तिष्ठ मेरु समान ७१
फिरतैं चित न विवेक तेरी, क्रोधकरो अधिकार। सबही रेत बुहारकेंगी, मुनिके सिरपै डार॥ दियोते तब तिन समता कीन

दोहा

अहो जगत कर पूजजे, श्रीमुनि दीनदयाल।
तिनपै कूड़ो डारनो, जोग नहीं थो बाल॥ ७३॥

सोरठा

जगमें दुख दातार, मूढ़नकी कुश्चित क्रिया।
ताको है धिक्कार, आचारज ऐसे कहैं॥ ७४॥

चौपाई

इस अन्तर नृपहोत प्रभात। देव थान आयो हरषात।
गर्त माह मुनि स्वास प्रभाय। तृणको पुंज हलत लखराय ७५
तहां आय देखे ऋषिचन्द। शीघ्र निकासे जुत आनंद।
तब मुनिवर समताके गेह। तैं लखकें मन धरो सनेह॥७६॥
निन्दा अपनी तैं तत्कार। कीनी तीतही बारम्बार।
धर्म विषे बहुविधि सुचि धरी। मुनिकी निरमल काया करी ७७
पीड़ा शान्त अर्थ बड़भाग। औषध दान दियोजुत राग।
फिर कीनों बैयावृत सार। सब कलेशको मेटनहार॥ ७८॥
हे पुत्री तहँते तज प्रान। तू उपजी तिस पुन्य प्रमान।
धनपत सेठ धनश्री गेह। नाम वृषभसेना वृष नेह॥ ७९॥
हे बाले ते औषध दान। दियो विशेष चित्त हरषान।
ताकर सर्व औषधी ऋद्ध। तैं पाई यह जग परसिद्ध॥ ८०॥
हे मुग्धे मुनि सिर कतबार। तैं डारोथो बहु रिस धार।
तिस अघतें नृपकर चित बंक। अम्बुध डारी देह कलंक॥८१॥

दोहा

तातें नित प्रति कीजिये, साधु सेव मनलाय।
पीड़ा कबहि न दीजिये, जो सुख चाह अथाय ॥८२॥

पद्धड़ी

यह जग आताप हरन सुबैन। सुनके इन पायो परम चैन।
बैरागमाहिं चितधार स्वच्छ। धर ममतात्याग नृप आदिपुच्छ ८३
गणधर मुनिके चरणन मँझार बहु विधितें करके नमस्कार।
संसार दुष्ट नाशक प्रचंड। जिन दीक्षा तब लीनी अखंड ८४।
हो भव्य महा औषध सुदान। याने दीनों बहु भक्ति ठान।
तैसे तुमभी पात्रन महान। भेषजदीजे नित व्रत समान ॥८५॥
यह गणधर मुनि भाषो चरित्र। सो जगप्रसिद्ध अतिहीपवित्र।
ताको सुनिकर भव्य जीव जेह। जिन भाषित तपतें करो नेह ८६॥

दोहा

सती वृषभसेना महा, भई जगत परसिद्ध।
सो हमको मंगलकरो, दीजे बहु सुख ऋद्ध ॥ ८७ ॥
औषध दान तनी कथा, पूरन कीनी येह।
भव्य जीव बाचो सुनो, धरके बहु विधि नेह ॥८८॥

इति श्रीआराधनासारकथाकोष विषै औषधदानमें वृषभसेनाकी कथा समाप्तः

सुपात्रदानमें ज्ञानदानकी कथा प्रा०

मंगलाचरण ॥ गीता छन्द ॥

इस वारिधतें उधारनहार श्रीजिनदेवजी।
तिनके चरन अम्बुज नमतहूं ठानके बहु सेवजी।
और मान सब ताको जजूं जिनवदन तें उत्पन भई।
अज्ञान पटल विनाशनी अंजन शिलाका सम कही १

है मोह बीत ईजे नगन गुरु रतन त्रिय भूषित सदा।
तिन चरन श्रीके गेह सम तिनको नमतहूं है मुदा।
अब कथा शास्त्र सुदानकेरी सुनो भवि चितलायकं।
सब जगतको आनन्द दायक देत बोध बढ़ायके ॥ २ ॥

दोहा

सब जीवन के नेत्र सम, ज्ञान दान सुखकार।
पात्रनको नित दीजिये, या सम और न सार ॥३॥

चौपाई

इसही ज्ञाननतें परभाव। प्रानी निर्मल कीर्त लहाव।
भुक्त मुक्त पावे जो जीव। नाना विध सुखलहे अतीव ॥४॥
सोई सम्यक ज्ञान महान। श्री जिनेन्द्र कर भाषत जान॥
रहित विरोध धेरे जे चित्त। ते पावे कल्याण सु नित्त ॥ ५ ॥
ताको आराधों इह भन्त। दान मानकर पूज अत्यन्त ॥
कर प्रभावना बहु विध सार। पाठन पठन थकी अधिकार ॥ ६ ॥
ज्ञान प्रभावन हैं स्वाध्याय। पंच प्रकार जान चित लाय॥
बांचन पूछन अरु अनुप्रेश। आम नाय धर्मो उपदेश । ७।
बहुत कहनते कारज कौन। ज्ञान दान है सुख त्रय भौन ॥
ताने भवि जन केवल हेत। शास्त्र दान दो हिये सुचेत। ८।
इस ही दान तने परसाद। भये बहुत जन अकथा बाद।
तिनके नाम कथित को जोय। इस जग में समरथ नहिं कोय।९।
अब इसही प्रस्ताव मझार। कहूं कथा जिन श्रुत अनुसार।
नृप कोंडेश गयो यह दान। ताकर भये प्रसिद्ध महान। १०।

अडिल्ल

अब इस अंतर भरत चेत्र सुखदायजी। जैन धर्म कर अति पवित्रता पाय जी। तामें कुरमरि ग्राम अधिक सुन्दर लसे। गोविन्द नामा ग्वाल तास के मध बसे ॥ ११ ॥

एक दिना यह ग्वाल गयो बन में सही। तरु के कोटर मांह थकी पुस्तक लही। भक्ति सहित श्री पद्मनन्द मुनि को दई। कैसे हैं मुनि चंद सार सुख की मही। १२।

दोहा

पहिले इस ही ग्रंथ को, बड़े बड़े ऋषिराय।
पढ़ पढ़ परभावन विविध, करवाई अधिकाय ॥ १३ ॥
फिर पूजा करवाय के, तिसही थान मझार।
थापन कर के जगत गुरु, करत भये सुविहार ॥ १४ ॥

काव्य

तैसे ही श्री पद्मनंद मुनिवर विध ठानी।
पुस्तक कोटर मद्ध थाप कियो गमन सु ज्ञानी ॥
कैसे हैं मुनिराय पाप मइ पंक पखालन।
ज्ञान ध्यान कर युक्ति सकल अज्ञान मद गालन ।१५।
अब येह गोविन्द गोप बालपन तें चित देकर।
तिसी ग्रंथ की कराकरे पूजन बहु नुत कर ॥
कितने दिनमें काल ब्यालने गरसो याको।
प्रान हरन यमराज कहो भच्यो नहिं काको ॥ १६ ॥
करके मरो निदान पुन्यते उपजो जाई।
ग्रामकूटके पुत्र महा सुन्दर सुखदाई ॥ १७ ॥
एक दिना फिर पद्मनंद मुनिके पद भेटे।
जाती सुमरन ज्ञान पाय अघ संचित मेटे ॥
मुनिके चरन सरोज नमूं यह धर्म राग पद।
कीने निरमल भाव लई दीक्षा तिनके ढिग ॥ १८ ॥

दोहा

अब यह मुनि तन त्यागके, भयो राय कोंडेश।
अपने बलतें अराजिये, रवितें तेज विशेष ॥ १९ ॥

चौपाई

दुन करके वो दर्प समान । कान्त लई शशिकी उनमान ।
विभोयुक्त सुखतनो निवास । कीरति बहु दिखरही प्रकाश ।२०।
नाना विधिके भोग करन्त । परजा सुतवत पाले सन्त ।
जिन भाषित वृष चार प्रकार । करतो तिष्ठे निज आगार २१ ॥
ऐसे सुखसें काल वितीत । होत भयो इनको यह रीत ।
फिर कोई कारन नृप देख । भवते विरकत होय विशेष ॥२२॥
मनमें इह विधि कियो विचार । पराति यह संसार असार ।
भोग रोग सादृश दुखदाय । सम्पत चपलावत नसजाय ।२३॥
तनमलीन मलमूत्र जुगेह । अशुच अपावन नाशे येह ।
इह विधि वह बुधवन्त नरेश । मनमें कियो विचार विशेष २४
मन वच काय राजको त्याग । फिर निज अर्चाकर बड़ भाग ।
गुरुके पदपंकज सिरनाय । दोष रहित तप ग्रहन कराय २५॥

दोहा

पूरब पुन्य प्रभावतें, श्रुत के बल पद पाय ।
यामें अचरज कौन है, ज्ञान दान शिवदाय ॥ २६ ॥
जैसे यह ऋष ज्ञाननिधि, भये दान परभाय ।
तैसे तुमभी हितकरो दान देहु अधिकाय ॥ २७ ॥

छप्पय

जे भविजन प्रभु ज्ञानतनीं सेवा मन आने ।
कर कलषा अविशोक बहुरि पूजा विध ठाने ॥
स्तवन जपन विधि करे पठन पाठन अधिकाई ।
लिखन लिखावन पात्र दान सनमान कराई ॥
और करे प्रभावन अङ्ग जे भक्ति सहित भव है मुदा ।
हैं येही अङ्ग सम्यक्त के, कोड़ो सुखदाता सदा ॥ २८ ॥

सवैया तेईसा

ज्ञान पशाय लहैं धन धान्य सुसुन्दर मंगल अन्तिम पावे ।
ऊंच कुलीवर गोत्र पवित्र जु निर्मल ज्ञान रमा घर आवे ॥
दीरघ आयु लहैं सुखदायक सर्व मनोरथ सिद्ध लहावे ।
और कहे अब कौन भया इस दान तें मोक्ष अंकूर उगावे॥२६॥

दोहा

तातैं दोष रहित प्रभू, तिन जो कियो बखान ।
तिसको सम्भावन करो, जो पावे कल्यान ॥ ३० ॥
ज्ञान दान की कथा शुभ, मैंने भाषी एह ।
सो मुझको अरु भविनको, केवल लक्ष्मी देह ॥

कवित्त ।

शोभित श्री वर मूल संघ जो तामें गच्छ भारती जान ।
श्रीभट्टारक है मल भूषण रतन त्रियंकर दियत महान ॥
तिनके शिष्य ब्रह्म नेमीदत श्री जिनके अनुसार बखान ।
दान कथा यह भव्य जननको शान्तअर्थ हूजो अधिकान॥३२॥

इतिश्री आराधनासार कथा कोष विषै सुपात्रदान में ज्ञान दान कर कौंडेश श्रुत केवली भये तिनकी कथा समाप्तम् ॥

सुपात्रदान में अभयदान कथा प्रारम्भः

मङ्गलाचरण । दोहा ।

शोभा मण्डित जिन विमल, तिन पद नम सुखकार ।
अभय दान की कहत हूं, कथा सूत्र अनुसार ॥ १ ॥

कड़खा छन्द ।

वहुरि श्री शारदा माय को ध्याय के कहूं जासको भव्यजन जजत सारे
होउ कल्याण के अर्थ मोको अभैजासपरसाद ते सबै निहारे ।
शास्त्रवारिध महातासके पारको करन नवका भली तू उदारे ॥

जिन मुखोत्पन्न ते भई परगट सही अबे आकंठ तिष्ठो हमारे ॥ २ ॥

गीता छन्द

जे ब्रह्म कर शोभित श्रीगुरु मूल उत्तरगुण धरे।
तिन को जजूंहित धार के जे शान्ति बहु विधि की करें॥
तिनकी भगति निश्चयथकी सुखश्रेष्ठ मारग देत हैं।
हुबदधि विषमतेंपार करनें को यही बरसेतु हैं ॥ ३ ॥

दोहा।

ऐसे में गुण आसके, सुमरन कर अधिकाय।
अभै दान दृष्टान्त की, कथा कहूंहित दाय ॥ ४ ॥

चौपाई।

येही भरत क्षेत्र दुतिवन्त। धर्म कर्म कर परम निपन्त।
तामधि सोहत मालव देश। बहु शोभा कर लसत विशेष ।५।
धन कन करि मंडित है जेह। सम्पति को जानो शुभ गेह ॥
जग जनको लक्ष्मी दातार। वन उपवनकर शोभित सार॥ ६ ॥
सरिता बहे महारस भरी। भूभृत सो है मानो करी ॥
कमलन कर शुभ भरे तड़ाग। तिनकी षट पद लहत पराग। ७।
देवनको प्यारो अधिकाय। तहां रमत है नित प्रति आय॥
नर नारी तहँ अति दुतिवंत। पुन्य उदयते सुख विलसन्त। ८।
तिसही देश विषै अभिराम। ठांव ठांव शोभे जिन धाम॥
ग्राम ग्राम परवतके भाल। ऊंचे शिखर जु दिपै विशाल ॥ ९ ॥
तिनपै कलश महा दुतिवान। चाभी के चमके अधिकान॥
तापर धुजा महालहकंत। मनों बुलावत हैं विहसंत ॥ १० ॥
भव्य जननको दर्शन हेत। शुभ पथ दिखलावें वे केत ॥
जिन आगार लखत तत्कार। प्रानी पाप करें परिहार ॥ ११॥
अहो कौन बरने अधिकार। जामें मुनि नित करें विहार॥

रतन त्रिये भूषित तप गेह। शिवपुरमें धारत हैं नेह ॥ १२ ॥
तिसही देश विषै जिन धर्म। सुख दाता बरतत हैं पर्म ॥।
कैसो वृष सम्यक नग युक्ति। पूजा दान बरत संयुक्त । १३ ।
तिसही देश विषै जिन चंद। तिष्ठत हैं आनन्दके कंद ॥
दोष अष्टदस रहित दयाल। गणधर नायक जग रिछपाल ।१४।
अरु तहँ के जन सम्यकवंत। सो दरशन जानों इह भंत।
देवधर्म गुरुकी परतीत। सब तत्वन की जानत रीत ॥ १५ ॥
जिनवर जज्ञ करे चितलाय। स्वर्ग मोक्ष सुखको जो दाय।
भक्ति सहित पात्रनको दान। देवे नित प्रति बित्त समान ।१६।
शील बरत धारे उपवास। इत्यादिक वृष जो गुणरास।
ताको पाले पंडित संत। सोई सम्यक वन्त महन्त ॥ १७ ॥
ऐसी शोभा जुत वो देश। ता महिमा कह सके न शेष।
तामधि सोहै सम्पति धाम। सुंदर मट नामा एक ग्राम। १८।

दोहा

कुम्भ कार देवल रहे, तामधि बहु धनवान।
अरु धर्मिल नायक महा, कुश्चित तिसही ठान। १९।
इन दोनों ने सीर में, बनवायो इक गेह।
पथिक जनन को तास में, उतरावे कछु लेह ॥ २० ॥

पद्धड़ी।

इकदिन यह देवल जुतकुलाल। उस थानक में श्रीमुनि दयाल ॥
वृष हेत उतारो हरषवन्त। फिर चलो गयो कितही तुरन्त ॥२१॥
तब धर्मिल चित में धर कुभाय। इक परिब्राजक की बेगलाय।
श्री मुनिको तो दीनो निकार। ताको उतरायो तिस मझार ॥२२॥
है सत्य बात यह जगत बीच। जे पापी दुष्ट अयान नीच।
तिनको प्यारे लागे न सन्त। जिम रविलख घूंघे रोषवन्त ॥२३॥

अब इस थानकको तज मुनीश। इक तरु लख तिष्ठे जगतईश।
तनते निस्नेही सुगुणमाल। रवि शशि खग इन्द्र नमन्त भाल॥२४
बहु शीत ऊष्ण आदिक प्रचण्ड। सब सहे परीषह ध्यान मंडे॥
अब देवल तरुतल मुनि निहार। अरु रन तनों कारन विचार।२५।
तिस नायक पै है क्रोधवन्त। तासेती युद्ध कियो अत्यन्त।
इन रुद्र भावते मीच लीन। विंध्याचल पै उपजे मलीन।२६॥

दोहा—कुम्भकार सूकर भयो काया पाई पुष्ट।
नायक व्याघ्र तहां हुवो जन्तु हने यह दुष्ट॥ २७॥

चौपाई

तिस परवतकी गुफा मझार। जुग चारन मुनि करत विहार॥
नाम समाध गुप्त त्रिय गुप्त। तिष्ठे ध्यान धार जिन उक्त।२८।
कैसे हैं ऋषि चंद्र दयाल। धीर बीर तब जग रिछपाल॥
पृथ्वीतलको करत पवित्र। क्षमावन्त अति ही शुभ चित्त।२९।
अब वो सूकर तितही आय। देखत जाती सुमरन पाय॥
श्री जिनवरके वृत्त सुन सार। किंचित व्रत किये अङ्गीकार।३०।
अरु वो व्याघ्र दुष्ट बिकराल। मानुष गंध सूंघ तिस काल॥
मुनि सन्मुख निज आनन फाड़। आयो ततक्षण दुष्ट दहाड़।३१।
जब वो सूकर होय सचेत। मुनि रक्षा करने के हेत॥
गुफा तनो गोपुरके बार। तासों युद्ध कियो विकरार॥३२॥
रदन दशन अरु खगते सही। भयो युद्ध जो जाय न कही।
फिर दोनों तजके निज प्रान। गति पाई निज भाव समान ३३
सूकरतो निज पुन्य वसाय। प्रथम स्वर्ग में सुरपद पाय।
अणिमादि ऋद्धि लही अत्यन्त। तमनाशक तन अतिदुतिवन्त ३४
भागवन्त आवन जुत देव। लखके जन हरषे स्वयमेव।
सुन्दर पट भूषण धारन्त। कंठ विषै वरदाम दिपन्त॥ ३५॥
कल्पवृक्षकी दुति परिहरे। अवध ज्ञान चखु निरमल धरे।

दिव्य सौख्य देवांगन संग । नितप्रति भोगे भोग अभंग ॥३६॥
बहुत अमर आज्ञा सिर धरे । तिस महिमा किम बरननकरे ।
जिनवर चरन कमलको दास । पूजनकरे धार हुल्लास ॥३७॥
कृत्तम आकृत्तम जिन धाम । अरु श्रीजिन प्रतिमा अभिराम ।
अथवा तीर्थंकर साच्छात । तिनकोवन्दे पुलकित गात ॥ ३८ ॥
दुर्गति नाशक सिद्ध सुषेत । यात्रा ठाने हर्ष समेत ।
महामुनीकी भक्ति करन्त । सन्तन तें वातसल धारन्त ॥३९॥

दोहा—ऐसे सुख भोगत सदा, अभैदान परभाव ।
तिस महिमा जगके विषै को कवि कहै बनाय ॥४०॥

काव्य—ऐसे श्रीजिनकथित धर्म ताके प्रसाद कर ।
भव्य जीव सब थान विषै सुखलहे अतुलवर ॥४१॥
सो केहिविधि है धर्म जिनेश्वर अरचा करनी ।
पात्रनको अब दान व्रत किरिया अघहरनी ॥
तिथ औषध उपवास येही वृष हिरदे धारो ।
सो कल्याण निमित्त श्रीजिनने उच्चारो ॥ ४२ ॥

दोहा—अब वो पापी व्याघ्रजो, कुश्चित दुष्ट अज्ञान ।
मुनि भच्छण में भावकर, छोड़दिये निजप्रान ॥४३॥
तिसी पाप परभावतें, गयो नर्कके बीच ।
ताड़न मारन आदि बहु, सहित भयो वह नीच ॥४४॥

सोरठा—तातें भविजन जान पुन्य पाप को फल अफल ।
श्रीजिन वृष उर आन, सदा काल ताको भजो ४५॥

काव्य—श्रीसम यह शुभ कथा, जगत में हो प्रसिद्ध अति ।
श्रीजिनसूत्र मभ्कार कही गणनायकजी सत ॥
अभयदान संयुक्त, पात्रभेदनकर जानो ।
परम सुःख स्थान पापनाशक पहिचानो ॥ ४६ ॥

इति श्रीआराधनासार कथाकोष विषयसुपात्रअभैदानफल
वर्णनायांदेवशिवरसूकर कथा समाप्तम्

इति चारदानकथा समाप्तम्

श्रीवीतरागायनमः

अथ श्रीकरकुंडस्वामीकी कथा प्रा०



मंगलाचरण ॥ सोरठा ॥

जगतपूज परमेश, ताही नमकरके अबै ।
सुखदाता अतिवेश, कहूं कथा करकुंडकी ॥ १ ॥
पहिले भव इह राय, हुतो गोप आरज महा ।
अम्बुज एक चढ़ाय, श्रीजिन की पूजनकरी ॥ २ ॥
ताको चरित महान, पूर्वाचारज जिम कहो ।
तिम संक्षेप बखान, गुरु पदाब्ज नमके कहूं ।

चौपाई

भरतक्षेत्र में कुन्तल देश । तिनमें नगर तेरपुर वेश ।
तामें नील और महानील । जुगराजा भये परम सुशील ॥४॥
तहां सेठ बसुमित्र उदार । जिनपद सेवन अलि उनहार ।
ताकेवसूमती बर तिया । धर्म विषै जाने चित दिया ॥ ५ ॥
तिनके गेह ग्वाल धन दत्त । गोधन पाले हर्षित चित्त ॥
एक दिना बन में बड़ भाग । देखो अंबुज सहित तड़ाग ॥६॥
तिसमें इक राजीव अनूप । सहित पत्रकर शोभा रूप ॥
ग्रहन कियो ताने तिह घरी । अहि कन्या इक इम उच्चरी ।७।
रे रे ग्वाल मम कंज मनोग । तैं लीनी निज पुन्य संयोग ॥
तो सर्वोत्त कृष्ट परसिद्ध । तिनको दीजे लहे सु ऋद्ध ॥ ८ ॥
ऐसे नाग सुता के बैन । सुनके गोप लहो अति चैन ।
बारज ले पहुंचो हरषाय । जहां सेठ तिष्ठे सुखदाय ॥ ९ ॥

तिनते सब बिरतांत प्रकाश। सुनके सेठ गयो नृप पास॥
नमस्कार आमल तनों सब भेद। बनक प्रती जे किया निवेद ।१०।

दोहा

तब नरनायक बनक पति, संग लियो निज ग्वाल।
सहत कूट मंदिर बिषै, पहुंचे यह तत्काल ॥ ११ ॥
तहँ जगपति को नमन कर, फिर सुगुप्त मुनिचंद।
तिनको नम पूछत भये, हो स्वामी गुण वृन्द ॥ १२ ॥
दया उदधि धर्मज्ञ प्रभु, भाषो बच सुखदाय।
को सरवो उत्कृष्ट है, इस जगमें मुनिराय ॥ १३ ॥

चौपाई

तब ऋषि बच भाषे सुन नरिंद्र। जगपति हैं श्री अरिहंत चंद्र॥
रागादि दोष बर्जित महान। त्रियलोक नमत तिन पद सुआन १४
ते हैं सर्वो उत्कृष्ट राय। तिन सम दूजो कोइ ना लखाय।
ऐसे श्री ऋषि के बच्च सुनंत। राजादिक तीनों हर्ष वन्त ॥ १५ ।
श्री जिनवरके आगे सुजाय। इम कहत भये भूं सीस नाय॥
हे स्वामिनते आनंद कंद। तुम जै वन्ते बरतो जिनिंद। १६।
फिर ग्वाल कहे कर नमस्कार। हे जगपति लीजे कंज सार।
इम कह जिन पद आगे बढ़ाय। जब गमन कियो आनंद पाय १७

दोहा

जे आरज परबीन हैं, धारत सरल स्वभाय।
तिन के भोले कर्म हैं, पुन्य बन्ध अधिकाय ॥ १८ ॥

चौपाई।

इस अंतर अब कथा महान। और सुनों तुम आदर ठान॥
श्रावस्ती नगरीमें सन्त। सागरदत्त सेठ बुधवन्त ॥ १९ ॥
नाम नागदत्ता तिस भाम। सो पापन अति अघकी धाम।

सोमशर्म द्विजने आशक्त । दुराचार सेवे है रक्त ॥ २० ॥
अहा पापनी कुत्सित नार । कुल रूपी जो है आगार ।
ताको दीप शिखावत स्याम । मलिन करत हैं अघकी धाम ।२१।
तब बड़ भागी सेठ महान । निज नारी को चरित सुजान ॥
चित मांही धारो वैराग । सब गृह सम्पत दीनी त्याग ॥
भगवत भाषित दीक्षा धार । तपकर पहुंचो स्वर्ग मझार ॥
तहँ ते चयकर सहित मरीच । अंग देश चंपापुर बीच ॥ २३ ॥
बसूपाल नरपति बुधिवंत । भाम बसु माति रूप धरन्त ॥
तिनके सुत उपजो यह आय । नाम दन्त बाहन सुखदाय ।२४।
अब बसुपाल करत निज राज । सुखसे तिष्ठत है महाराज ।
तितने सोमशर्म द्विज जीव । भव बारिधतें रुलो अतीव ॥ २५ ॥
फेर कलिंग देशमें आय । पाई बसू तनी परजाय ॥
नाम नरमदा तिलक गयंद । होत भयो दीरघ जुत गंध ॥२६॥
ताकी बसू पाल नृप हेट । भेजो किसी रायने भेंट ॥
सो करिंद्र नरपति के गेह । तिष्ठ अंजन गिर सम एह ॥२७॥
अबै नागदत्ता वह नार । भ्रमत भई दीरघ संसार ।
क्रमतें ताम्र लिप्तपुर मांह । बसूदत्त इक बनक रहाह । २८ ।
ताकी तिया भई यह आय । नाम नागदत्ता जिस थाय ।
ताके तनुजा उपजी दोय । धनवति धनश्री संज्ञा जोय ।२९॥
नागानंद नगरी विख्यात । बनक पुत्र धनपाल रहात ।
याने विधि बिवाह की ठान । धनवत परनी रूपनिधान ॥३०॥
और बसत इक देश अनूप । कोशांबी नगरी शुभ रूप ।
बानक बसू मित्र तहँ कोय । ताने धनश्री परनी सोय ॥३१॥
धनश्री ताके संग पसाय । पुन्य भोग जिन धर्म लहाय ।
भई श्रावका यह बड़भाग । मिथ्या जहर दियो तिन त्याग ३२॥

एकदिना इसकी जो मात । या घर आई हर्षित गात ।
धनश्री पाहुनगत बहु करी । जननी लखके आनंद भरी ॥३३॥

दोहा

फिर मुनिवर ढिग लेगई, अम्बाको तत्कार ।
अणुव्रत याको तबै, दिलवाये सुखकार ॥ ३४ ॥
फेर नागदत्ता गई, बड़ी सुताके पास ।
ताने व्रत छुड़वाइयो, बंधक मत परकाश ॥ ३५ ॥

सोरठा

इह प्रकार त्रियकार, लघु पुत्रीने व्रत दियो ।
बड़ी सुता दुखकार, छुड़वावत तैसे भई ॥ ३६ ॥

चाल छन्द

फिरके इन चौथी बारी । जिन वृष धारो सुखकारी ।
तामें दृढ़मीच सुधारी । लिये लार पुन्य बट सारी ॥३७॥
कोशांवी नगरी मांही । वसुपाल नृपति सुखदाही ।
ताके तिय वसुमति नामा । तिनके तनुजा अघ धामा ३८॥
उपजी यह कुश्चित दिनमें । नृप शौच दियो जब मनमें ।
रखके मंजूषके माही । निज मुद्राधर तिस ठाहो ॥३९॥

दोहा

सरिताके परवाहमें, दीनी ताह बहाय ।
जमना गंगा जहँ मिली, तहँ पहुँची यह जाय ॥४०॥
नगर कुसुमपुरके तले, पदमद्रहके माह ।
कुसुम दत्त मालक लखी, लई मंजूष उठाह ॥ ४१ ॥

चौपाई

निज ग्रह लायो हर्षित गात । दई कुसुम माला तिस हात ।
तानें करके जतन अपार । याको पाली बहु हित धार ॥४२॥

पद्मावती धरो इस नाम । जोबनवन्त भई अभिराम ।
यक दिनको जन इसको देख । चितमें हर्षित होय विशेष४३॥
कही दन्तबाहन से जाय । यह सुन के मनमें हरषाय ।
याको जोबनवन्त बिहार । मालीप्रति इम बचन उचार ४४॥
कहो सांच यह काकी सुता । बहु गुणमंडित शोभा युता ।
तब वो कहतभयो नम माथ । है मंजूष पुत्री यह नाथ ॥४५॥
इम कह वो मंजूष मंगाय । दीनी नृपसुतको दिखलाय ।
किसी नृपतिकी तनुजा जान । ब्याह करलायो निजस्थान ४६॥
ताको भोगतजुत अहलाद । पूरब पुन्य उदय परसाद ।
इस अन्तर जो नृप वसुपाल । निज मस्तकपै लख सितबाल ४७।
जमकी फांसीवत तिस जान । चित बैराग विषै तिसठान ।
अपनो राज देय निज पुत्र । फिर जिन मंजन करो पवित्र ४८
बहुरि करी पूजा अधिकाय । फिर दीक्षा लीनी सुच भाय ।
महा विचक्षण कर तप घोर । स्वर्ग गये पायो सुखजोर॥४९॥
अबै दन्त बाहन बड़ भाग । राजकरे वृषमें धर राग ।
एकदिना पदमावत भाम । सयन करेथी अपने धाम ॥५०॥
स्वपनेमें गज आदि निहार । हर्षतवन्त भई अधिकार ।
तिनको फल पूछो पति पास । तब याने ऐसे बच भाष ॥५१॥
हस्ती देखो सुपने जोय । पुत्र प्रतापी तुमरे होय ॥
केहरिते हैं गज गामिनी । सुत उपजे गोच्छत पति धनी ।५२।
हे सावक नैनी सुन नार । मारतण्ड जो रैन मझार ॥
ताकर परजा जन राजीव । तिनें प्रफुल्लित करें अतीव ॥ ५३॥
ऐसे सुन पति के बच एह । बिकसत आनन तिष्ठी गेह ॥
अबै तेरपुर में वो ग्वाल । धनदत्त नामा बुद्धि रिसाल ॥ ५४ ॥
इक दिन कोई सहित तड़ाग । तामें तैरो जुत अनुराग ॥
तब सिवाल में उरझ तुरन्त । प्रान त्याग कीने पुनवन्त ॥ ५५ ॥

दोहा

तिय पदमावती कूख में, तिष्ठत भयो सो आय ।
अहो पुण्यते जगत में, कछु नहिं दुर्लभ थाय ॥ ५६ ॥

काव्य

ऐसे सेठ वसुमित्र ग्वाल को मृतक निहारो ।
ताको कर संस्कार फेर इम चित्त विचारो ॥
यह संसार असार कछू थिर नाह रहाई ।
इत्यादिक मन सोच करे वरभावन भाई ॥ ५७ ॥
सुव्रत मुनि पै जाय नयो तिन चर्न मंझारी ॥
बहुबिधि भक्ति सुठान लही दीक्षा हितकारी ।
नाना विधि तप उग्र उग्र कीने अधिकाई ।
पहुंचे नाक सुथान तहां वसु सिद्ध लहाई ॥ ५८ ॥
अब चम्पापुर बीच नार पदमावति जो है ॥
ताके चित्त मझार दोहलो इम उपजो है ॥ ५६ ॥
धरूं पुरुष को रूप नृपति पीछे बैठाऊं ।
इच्छा पूर्वक अबै नगर के बाहर जाऊं ॥
इह विधि मनकी बात नारकी नृपति जान सब ।
वाय बेग खग मित्र प्रते भाषी याने तब ॥ ६० ॥
ताने विद्युत सहित करो सब अघ आडम्बर ।
तबै नर्मदा तिलक तरी पै चढ़ी हर्ष धर ॥
निज डोहल अनुसार सबै किरिया बिस्तारी ।
अहो मनोरथ नारन को है अचरज कारी ॥ ६१ ॥

दोहा ।

कर्म उदै ते दुष्ट गज, अंकुश वश नहि होय ।
ले भागो अटवी विषै, जहां दीखे नहिं कोय ॥ ६२ ॥

सोरठा ।

तबै नृपति धी धार । तरु शाखा गुरु बचन वत ।
गहलूवों तत्काल, करी लेय तिय को भगो ॥ ६३ ॥

दोहा ।

फेर बृक्ष तें उतर के, निज नगरी गयो राय ।
अहो पुन्यते होत है, संकट महा सहाय ॥ ६४ ॥

छन्द चाल ।

तब राजा के घर मांहीं । जन हाहा कार कराहीं ।
हाहा पदमावति रानी । किम बृष्ट सहे दुख दानी ॥६५॥
अरु नृप बहु सोच करन्तो । तिष्ठेगृह में दुखवन्तो ।
तब जैन तत्व के ज्ञाता । ज़े पंडित थे विख्याता ॥६६ ॥
तिनने बहु बिधि समझायो । तब नृप कछु सोच घटायो ।
है सत्पुरुषन की बानी । मलियागिरते अधिकानी ॥ ६७॥
क्षण में आताप मिटावे । बहु बिध साता उपजावे ।
इस अन्तर गज मय मन्तो । बहु देशन भ्रमन करन्तो ॥ ६८॥
पहुंचो दक्षिण दिशि जाई । सर मधि पैठो दुखदाई ।
तबही जल देव्या माता । पदमावति को दे साता ॥ ६९ ॥
गज से तत्कार उतारी । तट बैठाई हितकारी ।
तब इक माली तहं आयो । ताने इम बचन सुनायो ॥ ७० ॥

दोहा ।

हे भगनी मम गृह चलो , कुछ बिलम्भ मत ठान ।
धर्म तनों में भ्रात तुझ, इम निश्चय उर आन ॥ ७१ ॥
मालकार के बचन सुन, बोली यह दुखवन्त ।
हे भ्रात तू कोन है, कहः अपनो विरतन्त ॥ ७२ ॥

सोरठा।

तब भट नामा सोय, ऐसे वच कहतो भयो।
मालकार मुझ जोय, इस कह गजपुर लाइयो ॥ ७३ ॥
भगनी कर घर राख, आप गयो कहिं काजको।
तिस तिय कटु वच भाख, काढ़ दई निज धाम ते ॥७४॥

चौपाई

तब पद्मावति चित दुखवन्त। गर्भ भार कर पीड़ावन्त ॥
गई मसाण भूमि में जबै। पुण्यवान सुत जायो तबै ॥ ७५ ॥
शुभ लक्षण धारी वो बाल। अहो कर्म की गति विकराल।
ताही छिन इक आय किरात। कहत भयो नमके सुन मात ॥७६ ॥
तू मेरी स्वामनि सुखदाय। तब पद्मावति एम कहाय ॥
अहो कौन तू है इह ठाम। तब तिन वच भाषे अभिराम॥७७॥
रूपाचल परवत के भाल। दक्षण श्रेणिक अधिक रिसाल।
तामें विद्युत प्रभु पुर जान। विद्युत प्रभु खगपति नृप मान॥७८॥
ताके विद्युत लेखा नार। बाल देव सुत मोह निहार।
इक दिन कंचन माला जेह। मेरी नारी सुन्दर देह ॥ ७९ ॥
ताके संग मैं गगन मझार। दक्षण दिशि में करत विहार।
रामगिरी पर्वत पै आन। मम विमान अटको दुखदान ॥ ८० ॥
तबै वीर भट्टारक देख। मैं उपसर्ग खुकरो विशेष ॥
तब देवी पदमावति तनो। आसन कंपित हूवो घनो ॥ ८१ ॥
कैसी है वो फणपति नार। जिन पदाब्ज की भ्रमरी सार।
आकर सब उपसर्ग निवार। मम विद्या छेदी तत्कार ॥ ८२ ॥
अहो जीव जे सम्यकवंत। साधुजनन को लख हर्षत ॥
तिनकी पीड़ा देत पलाय। मन वच तन धन सर्व लगाय॥८३॥
हे जननी जब मम मद गयो। रदन रहित हस्तीवत भयो।

पीछे मैं देवी के पास। हाथ जोड़ कीनी अरदास ॥ ८४ ॥
हे माता अज्ञान पसाय। साधू को उपसर्ग कराय।
हे अम्बे अब है संपुष्ट। मम विद्या दीजे तज रुष्ट ॥ ८५ ॥

दोहा।

तब माता पद्मावती, शान्त चित्त हषात।
कहत भई गजपुर निकट, है मसाण मैं दात ॥ ८६ ॥
तिस थानक बालक बिमल, उपजेगो गुण वन्त।
तिस की सेवा जतन ते, तू कीजो बहु भन्त ॥ ८७ ॥
तिस ही के बर राज में, तुझ विद्या है सिद्ध।
ऐसे कह निज थल गई, देवी जग पर सिद्ध ॥ ८८ ॥
जब ते सब रज्जु भेषधर, तिष्ठत हूं इह थान।
इम सुन पद्मावति तिया, चित में अति हरषान ॥ ८९ ॥

पद्धड़ी

तब कहत भई सुन ए खगेश। इस शशिकी रक्षाकर बिशेष।
इम कह कर ताके कर मझार। निज बालक सौंपो हर्ष धार ॥ ९० ॥
तब निध वत बालक ले तुरन्त। निज तिय-को सौंपो हर्ष वन्त।
सो कैसो है वह बाल चंद। शुभ लक्षण मण्डित जोत बृन्द ॥ ९१ ॥
इस करमें कन्डू चिन्ह जान। कर कुंड नाम राखो महान।
पै प्याकरबृद्ध किया खुशाल। यहगमनकरे जिम शिशु मराल ॥ ९२ ॥
अब देखो भविजन चित्तलाय। बृष तें दुख में सम्पत लहाय।
तातें जिन भाषित पुन्य सार। मन बच तन कीजे हर्ष धार ॥ ९३ ॥
सो पुन्य नाम काको प्रधान। जिन पुजन पात्रन करन दान।
व्रत मण्डित बहु उपवास युक्त। सुख दायक इह बृषजैनउक्त ॥ ९४ ॥

दोहा।

तापीछे पदमावती, पुन्य उदै अधि कार।
गंधारी शुभ क्षुल्लका, देखी तिस ही बार ॥ ९५ ॥

भक्ति सहित तिसको नई, कह अपनो विरतन्त ।
ताके संगजाती भई, जहँ मुनिवर तिष्ठन्त ॥ ९६ ॥

चौपाई

नाम समाध गुप्त हितकार । तिनपद नई सो बारम्बार ।
फिरयाने कीनी अरदास । हे स्वामिन हे बुद्धि निवास ॥९७॥
मो ऊपर प्रभु किरपाधार । जिनदीचा दीजे तत्कार ।
जब श्रीमुनिवर दयानिधान । पद्मावती प्रति बचनबखान ९८॥
हे पुत्री दीचा इस काल । तेरे उदै नहीं गुणमाल ।
पहिले तीनबार बृत सार । त्याग दिये कर अंगीकार ॥९९॥
बहुरि बृत्तधारे गुणजुता । ता फल भई नृपतिकी सुता ।
यह जो तैं दुखलहो विशेष । सो सब व्रतत्यागन फलदेख १००
अब वो कर्म शान्त तुझभयो । पुन्यवान सुत तेरे जयो ।
ताको राज बहुत विधि जोय । फिर वाके संग दीचा होय ॥१॥
ऐसे सुन वो नृपकी तिया । कीनो अपनो हर्षित हिया ।
मुनिको नमस्करके गुणरास । तिष्ठत भई चुल्लका पास ॥ २ ॥

दोहा

इस अन्तर उस बालको, बालदेव खगराय ।
सब विद्यामें अति निपुण, करतभयो हरषाय ॥ ३ ॥
एक दिना करकुंडजुत, खग खत गजपुर आय ।
भूम मसाण विषै तहां, लीलाजुत विचराय ॥ ४ ॥

अडिल्ल

जहां ज्ञानधारी ए भद्रमुनीशजी, तहँ तिष्ठ मुनिगण जुत वे जगदीश जी । जब किसही ऋषिने कारन इह विधि लखे काहू मृतक कपाल मुःख नेत्रन विषै ॥ ५ ॥

उपजे थे त्रियबाश देश गुरुते कही । हे स्वामिन यह कौतुक

है कैसो सही। तब श्री जैभद्राचारज तपनिध महा। सुनके तिसके बैन सुप्रति उत्तर कहा ॥ ६ ॥

दोहा

जो इस जगपुर नगरमें, होवे नृप गुणमंड।
यह तीनो है तासके अंकुश छत्र औ दंड ॥ ७ ॥

पद्धडी

ऐसे श्री मुनिके सुन सुबैन। इक दुजने पायो परम चैन।
त्रियबांस लिये जड़ते उखाड़। धन लोभ धरो हिरदे मंझार ॥ ८ ॥
तिस ब्राह्मण ते त्रिय बांस येह। कर कुंडलिये कछुद्रव्यदेह।
तब बलबाहन नामा नरेश। गजपुरको राजकरे विशेष।
सो कर्म जोगते पुत्रहीन। कितने इकदिनमें मीचलीन ॥ १० ॥
जब जे मंत्रीहैं बुद्धिवन्त। पट बंधकरी छोड़ो तुरन्त।
जब वो गजपति करतो विहार। करकुंड बाल लख हर्षधार।
कलसाभिषेक कर सिर चढ़ाय। ला नृपमंदिर विष्टर बिठाय ११

दोहा

तब सारे जन हर्षजुत, जै जै कर नम माथ।
गुण उज्जलकर कुंडको, जानो अपनो नाथ ॥ १२ ॥

सोरठा

देखो भवि चितलाय, पुन्य तरोवर यह फलो।
जिनवर यज्ञ पसाय, ग्वालतनो चर नृप भयो ॥ १३ ॥
ताही छिन सुखदाय, बालदेव खगको भई।
विद्या सिद्ध अधिकाय, पुन्य उदै आयो जबै ॥ १४ ॥

दोहा

तब पदमावति मायको, हर्षित होय खगेश।
नमकर पुत्र मिलायके, गयो सो अपने देश ॥ ५ ॥

तहँ करकुंड नरेश तब, अपनी भुजा पसाय।
सुखसे राज करत भयो, वैरिन मूल नसाय ॥ १६ ॥

चौपाई.

अबै दन्तवाहन इस तात। इन प्रताप की सुनकर बात।
भेजो दूत तासके पास। सो नमकर इम बचन प्रकाश ॥१७॥
भो स्वामिन हमरो जो नाथ। नाम दन्त वाहन विख्यात।
तुमरे प्रति भाषे महाराज। मम सेवक है कीजे राज ॥१८॥
जो इहविधि करहो नहिं राय। सब प्रभुत्व तुमरो नशजाय।
इम सुन दूत बचन करकुंड। उपजो क्रोध अनिल परचंड ॥१९॥
कहत भये रे रे चर दुष्ट। तो हनमारूं है कर रुष्ट।
जाहु जाहु इहँते तत्कार। निज स्वामी ते एम उचार ॥२०॥
रण आंगन ते बाकी सेव। बाननते करहूं बहु भेव।
होनहार होवे इस थान। सोई हम तुमको परमान ॥ २१ ॥
ऐसे कहकर बचनालाप। दूत विदा कीनों तब आप।
अपनी सेना सज चतुरंग। जबही कियो पयान अभंग ॥२२॥
चम्पापुर नगरी के बार। पहुंचो तहँ चम्पू सब डार।
काज प्राप्त होनेके हेत। भटजन निस दिन रहे सचेत ॥ २३॥
ऐसे सुन चम्पापुर राय। अपनी सेना सर्व सजाय।
लड़नेहत निकसो तत्कार। आये योधा सज हथियार ॥२४॥

दोहा—अब दोनो सेना बिषै, व्यूह रचे बहु भंत।
तब नारी पदमावती, आवत भई तुरंत ॥ २५ ॥
मिलकर निज भरतार सों, सब भाषो बिरतंत।
नृप सुन उतरो गजथकी, चित में अति हर्षंत ॥ २६ ॥
अपने सुत ते झटमिलो, उरतें लियो लगाय।
सुत ने भी निज तात लख, नमन कियो सिरनाय ॥ २७॥

काव्य— तब नरनायक चित्त विषै हरषो अधिकारी ।
बजबाये चवभेद सुबाजे आनन्द कारी ।
करके बहुउत्साह पुत्र को निजग्रह लायो ।
सुन के परिजन लोग चित्त में आनंद छायो ॥ २८॥
अब यह अति पुनवान प्रथम श्रीजिनको मज्जन ।
फेर करी शुभ यज्ञ क्रिया दो दुरत निकंदन ।
पात्र दान नित करत सदा इह भक्ति धारकर ।
तिष्ठे आनँद सहित सुःखसों पिता तने घर ॥ २६ ॥

चौपाई ।

इस अन्तर राजन की सुता । आठ सहस बहु गुणकर युता ॥
याको तात हर्ष चित धार । परनाई कर कुण्ड कुमार ॥ ३० ॥
फिर निज राजतनों सब भार । याको सौंप दियो तत्कार ।
आप नार पदमावति संग । तिष्ठे भोगत भोग अभंग ॥ ३१ ॥
अब यह श्री करकुण्ड नरिंद । जैनधर्म पाले गुणवृंद ॥
सुत समान परजा की रक्ष । करे सदा जिस पुण्य प्रतक्ष ॥३२॥
चिरलों राज कियो सुखरास । फिर मन्त्रिन कीनी अरदास ।
अहो देव हम तुमरे पास । हमरे वचन सुनो सुखरास ॥ ३३ ॥
चेरम पाण्डु चेर त्रिय राय । गर्ववंत तिष्ठे अधिकाय ॥
तिनको वश कीजे बुधिवंत । ऐसे सुनकर राय तुरंत ॥ ३४ ॥
उनको निकट बुलावन काज । भेजे दूत आप महाराज ।
दूत तने तिन बचनहि मान । गर्व धार नहिं कियो पयान ३५॥
ऐसे सुन नरे पति रिस भरो । तिनपै आप पयानो करो ।
वो भी सम्मुख आये धाय । युद्ध भयो सो कहो न जाय ॥३६॥
अपनो कटक भंग नृप देख । मन में क्रोधित भयो विशेष ।
तीनों नृपको गह तत्कार । फिर बिचार कीनों रिसधार ॥ ३७॥

दोहा—तिनके मुकटन के विषै, अपने पदकी घात।
करनेको करकुण्ड नृप, बेग उठाई लात ॥ ३८ ॥
तब तिनके मोलन विषै, देखे श्री जिनदेव।
जब मुखतें निंदा करी, पछतायो बह भेव ॥ ३९ ॥
काव्य—तव करकुण्ड नरिंद्र तिनों ने भाषे बायक।
क्या तुम जैनी भूप बैन कहिये सुखदायक ॥
तव वो तीनों रांय कहें सुनिये जग नामी।
निश्चय हसको जैनमति जानो हो स्वामी ॥ ४० ॥
यूं सुनके करकुंडराय मन में दख लीनो।
हायहाय मैं क्रोध अंध क्या कारज कीनो।
उनकी स्तुति ठान बहर बहु चमा कराई।
तिन जुत अपने देश बिषै चालो हरषाई ॥ ४१ ॥
पथ में करत पयान तरेपुर के ढिग आये।
सब सेना के तहां भूप डेरे करवाये।
तबै आय जुग भील नमन कर गिरा उचारी।
इस पुरतें जुग कोष जु दच्चिण दिशा मझारी ॥ ४२ ॥
भू भृत एक महान तासपैं सहस थम्भ जुत।
श्री जिनेन्द्र को लैन एक है गो सुन्दर अत ॥
तिस पर्वत के भाल एक बम्बी जु सुहावे।
तहां स्वेत गजराज सूंड में नित जल लावे ॥ ४३ ॥
दोहा—कंज सहित तिस थान की, देपरदच्चिण तीन
पूजा नित प्रति करत है, इस विध जान प्रवीन ॥ ४४ ॥

चौपाई।

इम सुनके कर कुंड नरेश। तिन को दीनो दान विशेष।
जैन भक्ति धरके अधिकाय। पहुंचो उस पर्वतपै जाय ॥ ४५ ॥

श्री जिनेन्द्रको देखो लैन। पूजन कीनी सुर शिव दैन।
फिर स्तुति भाषी अधिकार। कोड़ो सुख को जो दातार ।४६।
जे सम्यक्त दृष्टी जन साथ। वृष कारज में तजे प्रमाद।
तबही आयो स्वेत करिन्द। बम्बी पूजी जुत आनन्द ॥४७॥
देख नृपति मन कियो विचार। ह्यां कछु कारन है अधिकार।
ऐसे निश्चय करके अबै। सात्यक्त खुदवाई नृप तबै ॥ ४८ ॥
तामें लखी मंजूष अनूप। जतन थकी खुलवाई भूप।
ता माही श्रीजिनवरचंद। पार्श्वनाथ दुत धरे अमन्द ॥४६॥
तिनकी प्रतिमा मणिमइ सार। सर्वपाप की नाशन हार।
देखतही करकुंड नरिन्द। चिनमें अति धारो आनन्द ॥ ५० ॥
धर्मतनो चितवन नृप करो। अग्गलदेव नाम तिम धरो।
फिर तिस प्रतिमाके इक अंग। गांठ एक देखो निरभंग ५१॥
तबै सिलावट लियो बुलाय। तिनसों भेद कहो समझाय।
अहो गांठ इह लागत बुरी। याको दूरकरो इह घरी ॥५२॥
जबै सिलावट चरनन लाग। कहतभये सुनिये बड़भाग।
गांठ विषै जलको समुदाय। दूर करावो मत तुम राय ॥५३॥
अरु जो करवावोगे दूर। जल प्रवाह निकसै भरपूर।
ऐसी सुन हठजुत नरपाल। लैन छुड़ाई तिसही काल ॥ ५४॥
दोहा—तामें सलिल प्रवाह बहु, निकसो अति उमगाय।
राजादिक विह्वल भये, चितमें अति दुख पाय ॥५५॥
निकसनको तिस थानते, समरथ भयो न कोय।
जीवनको शंषय पड़ो, दुखीभये सब लोय ॥ ५६ ॥

कवित्त

तबै राय करकुंड हरषजुत जिनवर भक्ति हियेपरकास।
धर्म रागते डाभ सेजपै दो प्रकारको धर सन्यास ॥

तवही पुन्य उदैते तिसके नागदेवता युत हुल्लास ।
है प्रतच्छ बहु विनय युक्त नमि इहप्रकारके वच शुभसास ५७
अहो देव इस कालजोगते रतन मई प्रतिमा की कोय ।
रच्छा करनहार नहिं दीखे तातें मैं कीनों यह जोय ॥
यातें हठ नहिं कीजे नरपाते जलके दूरकरन को सोय ।
इम सुनके तज दाम सेजको उठत भयो यह हर्षितहोय ५८

दोहा—फिर नरपति कहतो भयो, लैन कगाई कौन ।
वस्त्री में जिन बिम्बकिन, पधरायो सुख भौन ॥५६॥

पद्धडी

ऐसी सुनकर तव यह कुमार । नृप प्रति बोलो यह हर्षधार ।
रूपाचलके उत्तर मझार । नभ तिलक नगर गुरुको भंडार ६०
तहँ अमित बेगसुसुवेगनाम । खगके जिनभक्ति सुपुन्य धाम ।
सो यह दोनों आरज महान । जिन यात्राको कीनों पयान ६१॥
आये इस आरज खंड माँह । एक मलय नामपरवत लखाय ।
तहँ श्रीजिनवर को यज्ञकीन । तिस भाल विषे भिरमें प्रवीन ६२
तहँ श्रीपारशको बिम्बसार । मणिमई लख कीनों नमस्कार ।
पधराये मंजूषा मझार । फिर उसही गिरपै खग विचार ॥६३॥
बहु जतन थकी रच्छा कराय । फिर चलेगये निजधाम राय ।
वे फिर आये इस थान बीच । मंजूष उखाड़ी जुत मरीच ।६४॥

दोहा—जलमें स्थापनकरी, सो नाहीं ठैरन्त ।
तब लग तेरसपुर गये, पूछे गुरु निज मन्त ॥ ६५ ॥
हे स्वामिन मंजूषिका, जलमें नहिं ठैराय ।
सो कारन प्रभु भाषिये, तब ऋषि एम कहाय ॥ ६६ ॥

सोरठा—भो खगेश सुनलोय, मंजूषा सुखकारनी ।
प्रकट लैन जो होय, तब तिष्ठैगी पै विषै ॥ ६७ ॥

होनहार इक बात, आदरते सुनिये अबै।
यह सुवेग खगनाथ, मरहै आर्तध्यानते ॥ ६८ ॥
होयं करी यह स्वेत, इसही पर्वत के विषै।
इस मजूषसे चेत, तिस पूजन करहै सदा ॥६९॥
नृप करकुंड उदार, आकरके इस लेनको।
तोड़ेंगे तत्कार, तब हस्ती सन्यास जुत ॥ ७० ॥
उपजेगो सुरथान, देवै महा बड़ भाग यह।
ऐसे वचन महान, मुनिवर के सुन खगपती ॥ ७१ ॥

चौपाई

फिर दोनों खगपति सिर नाय। श्रीमुनिते इम प्रश्नकराय।
भो स्वामिन को भव्य महान। लैनकरावैगो यह थान ॥७२॥
तबै ज्ञानके ऋषि भंडार। कहतभये विजियारध सार।
ताकी दक्षिणश्रेणी जान। रथनोपुर इक नगर प्रधान ॥ ७३ ॥
तहां नील महानील सुराय। वैरिन ते लड़ियो अधिकाय।
अरिकीनी तिन विद्या छेद। यहँ आवेंगे लह वहु खेद ७४॥
इस गिरवरके तिष्ठे भाल। लैन करावेंगे गुण माल।
फिर जिन पुन्यतने परभाव। विद्या सिद्धि होय अधिकाव ७५॥
जालेवैंगे अपनो राज। बहुरि करेंगे आतम काज।
तप कर पहुंचो नाक मझार। तहां भोग भोग अधिकार ॥७६॥
यह सम्बन्ध कहा मुनिचंद। अमित वेग पायो आनन्द।
दीक्षा ग्रहन करी तेह काल। तपकर ध्यान समाधि विशाल ७७
ब्रह्मोत्तर पहुंचे वड़भाग। भोगे सुख जिनमत चित पाग।
तब सुवेग जो छोटो भ्रात। आरततें तजकर निज गात ७८॥
हस्ती उपजो स्वेत शरीर। तब सुर आयो हसको वीर।
ताने वहु सम्बोधन कीन। जाती सुमरनं तबै गजलीन ७९॥

पुन्य उदै अणुव्रत महान । अहन कारिन्द करे हरपान ।
नितबम्बीकी पूजन करे । निष्ठे पुन्य चित्त अघहरे ॥ ८० ॥
दोहा—सब वृत्तान्त करकुंड ते, नागदेव इम भाष ।
खुदवाई बम्बी तुमें, तब गज गहो सन्यास ॥८१॥
अरु तुम इसही पुर विषै, ग्वालहुते महाराज ।
कंजथकी जिन पूजियो, ताफल पायो राज ॥ ८२ ॥
सोरठा—तातें जगमें सार, अहो सुबुद्धी कीजिये ।
जिन पूजन सुखकार, जातें सब संकट नसें ॥ ८३ ॥
इहविध वच हितकार, कहे नृपति करकुंडते ।
फिरवो नागकुमार, नमकर निज थानक गयो ॥८४॥
दोहा—अहो पुन्यते होत है, मित्र महा सुखदाय ।
तातें निज वृष कीजिये, जो चितमें श्रम चाह ॥८५॥

काव्य

पीछे नृप करकुंड तीसरे दिनके माही ।
उस गजको निज धर्म सुनायो बहु हितदाही ।
तब निरमलकर भाव प्राण छोड़े गजराई
सुरग बारमें देव भयो वसु ऋद्ध लहाई ॥ ८६ ॥
देखो पशुपरजाय देव पद छिनमें पावै ।
श्रीजिनधर्म पसाय सर्म क्या क्या न लहावै ।
तातें भवि जन जैनधर्म चित मे नित धारो ॥
येही सुर शिव देन करे अघको निरवारो ॥ ८७ ॥

चौपाई

तापीछे नरपति करकुड । जैनधर्म में निजचित मंड ।
अपनो अरु जननीको नाम । बालदेव जो खग अभिराम ८८॥
तीनों के नामनते सार । लैन करायो जुतही बार ।

महा विभून सहित तत्काल । परतिष्ठा कीनी गुणमाल ॥८६॥
फिर कितनेइक दिन में राय । मनमाहीं बैराग उपाय ॥
यह संसार देह अरु भोग । विनाशीक है इनको जोग ॥ ६० ॥
इम विचार कर अवनीकंत । सुत वसुपाल बुलाय तुरंत ॥
ताको राज देय बड़भाग । धर जिन दीक्षा में अनुराग ॥६१॥
पिता आदि चेरम नर नाथ । अरु पदमावति माता साथ ।
दीक्षा लीनी चित हरषाय । जोगधरो सब मोह नसाय ॥ ६२ ॥
भव अम्बुध को तारन हार । तप कीनो नाना परकार ।
फिर सन्यासधरो बुधवन्त । जिन चरनाम्बुज ध्यावत सन्त ॥ ६३ ॥
तज के तन लीनो अवतार । वारम स्वर्ग नाम सहश्रार ।
नाम दन्त वाहन को आद । तन तजके वे सबही साद ॥ ६४ ॥
यथा योग गये स्वर्ग मझार । निजनिज पुण्य तने अनुसार ।
देखो जिनवर यज्ञ प्रभाव । पुन्डरीक इक ग्वाल चढ़ाव ॥ ६५ ॥
ताफल ते उपजो कर कुंड । शिर सुरपद पायो गुण मंड ।
अरु जेभवि जन चित हरषाय । अष्ट द्रव्य अति उत्तम लाय ॥१६६॥
पूज श्रीजिन चंद महान । तिस फल को को करे बखान ।
सुरशिव लक्ष्मी ततक्षण बरे । ज्ञाना वर्ण आदि सब हरे ॥६७॥

दोहा

तातें श्री जिनवर तनी, पूजा करो मनोग ।
यह सुख दाता जग विषै, नासे तीनों रोग ॥ १६८ ॥

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषै श्री करकुंड महाराज की कथा समाप्तम् ।

श्रीजिनपाद पूजाफल कथा नं० १२३

मङ्गलाचरण। दोहा

शोभा मण्डित जिन सुरवि, जन पूजत श्रुत माय।
गुरु निग्रन्थन के चरन, पूजूं मन बच काय ॥ १ ॥
जिन पूजा फल जिन लह्यो, ताको करूं बखान।
सुनके नित भवि कीजिये, तज के मिथ्या वान ॥ २ ॥

पद्धड़ी।

श्री जुतवर श्री जिन चंद सार। तिनको पूजनसब पाप हार।
सुर शिव दाता एही महंत। श्रुतमें बरनो इम जगत कंत ॥ ३ ॥
जे भव्य सुबुद्धी है पवित्त। बृषहेत जिनेश्वर जजत नित्त।
तिन ही के निर्मल दर्श होत। वोही पावें जगमें उद्योत ॥ ४ ॥
अरु जे पापी निन्दा करंत। ते निंदनीक पद को लहंत।
बहु दुख दरिद्र तन रोगलीन। कुश्चित गति पावें ते मलीन ॥ ५ ॥
जे भव्य जीव कलशाभिशेष। श्रीजिनवर को ठाने बिशेष।
स्तुति अरु जपन करें उदार। जिनयात्रा परतिष्ठा अपार ॥ ६ ॥
करवावे श्री जिनके अगार। प्रतिमा बनवावें हर्ष धार।
इत्यादि प्रभावन करत जेह। जगमांहि सराहन जोग तेह ॥ ७ ॥

दोहा

इत्यादिक किरिया करत, भव्य हर्ष चित धार।
शिब दायक सम्यक दरश, ते पावें अधिकार ॥ ८ ॥

सवैया इकतीसा।

तातें इंद्र चंद्र रवि खग पति आदि सर्व, पूजें चरनारबिंद जाकें हरषायके। तेई भगवान देव पूजो भव्य वसु भेव, लहो सुख सम्पत जु पातक नसायके ॥ श्री जिन जज्ञ शुद्ध येही बच सों प्रतच्छ, बृषही को मूल कहो वेदन में गायके। तातें अरचा

समान पुण्य और नाह जान, दूजो और होय नाह जानो मन लायके ॥ ९ ॥

दोहा

भरतराय को आदि दे, और भव्य समुदाय।
जिन पजन फल पाइयो, सो को बरने गाय ॥१०॥

चौपाई।

देखो लाय कंज की कली। भेप जु जिन पूजन कर भली।
ता फलते उपजो सुरथान। ऋद्धि लही को करे बखान ॥ ११ ॥
जे जल आदिक द्रव्य अनूप। ताको पूजत तिहुं जगभूप॥
तिनकी महिमा बरनन करे। ऐसी को बुध बुध जन धरे ॥ १२॥
तास कथा सम्बन्ध मझार। स्वामी समुत भद्र उच्चार।
जिनवर पूजनको फल येह। तिन अनुसार कहूं में तेह १३॥

अस्य कथा

जम्बूदीप अनूपम वसे। मेरु सुदर्शन ता मधि लसे।
ताकी दक्षिण दिशिमें जान। भरतक्षेत्र क्षेत्रन परधान ॥१४॥
श्रीजिन तीर्थंकर जगचंद। तामध उपजत है गुण वृन्द।
ताकरके पवित्र अधिकार। तामें मागधदेश निहार ॥ १५ ॥
कैसो है वह देष मनोग। सार सम्पदा को वर जोग।
तहां के जन धन धान सुयुक्त। धर्मकर्म करके संयुक्त ॥१६॥
राजग्रही पुर तामें वसे। गुणी जननकर अद्भुत लसे।
भोग और उपभोग मनोग। तहां जन भोगत पुन्य संयोग १७॥
फिरकर सोहे नगर विशाल। तहां तिय शोभे अधिकरिसाल।
देवांगन सादृश दुतिवन्त। सम्यक दरशन ब्रत धारन्त ॥१८॥
नाक थान है ब्रतकर हीन। या पुरमें वृतवन्त प्रवीन।
तामें स्वर्गथान इन जीत। ताको लख-अरि धारत मीत १९॥

तहँ सुखकारन श्रीजिन धर्म वरततहै वसु जाम सुपर्म ।
जाको लख जग जन हर्षात । तिस शोभा किम वरणीजात ।२८।।

दोहा

तिस पुरमें श्रेणिक नृपति, अति पवित्र बुधिवन्त ।
चंचरीक जिनवर तनो, सम्यक दर्श धरन्त ।। २१ ।।
जिन प्रताप शीतल अधिक, फैलो इन्दु समान ।
सुनकर अरिगण चित्तमें, शान्तभये अधिकान ।।२२।।

गीता छन्द

सत्पुरुष अरु परजाजनन की करे नितप्रति पालना ।
तिस गेह में वर रूप मंडित सोहनी तिया चेलना ।
सो महामंडित भाग मंडित चतुर अति शोभा वरे ।
जिन भक्ति सम्यकव्रत भूषण सोई निज तनमें धरे।।२३।।
सब कला में परवीन सुंदर जैन बानी सम लसे ।
चव संग की वाछल धरे हिये सर्व अत्तन को कसे ।
ता नगर में मिथ्या मती एक नागदत वानक पती ।
तागेह भव दत्ता तिया है प्राण से प्यारी अती ।। २४ ।।

दोहा ।

माया मण्डित सेठ यह, मरो महा दुख पाय ।
निज ग्रह आंगन वापिका, तहां भेष उपजाय ।। २५ ।।
देखो उत्तम सेठ यह, माया पाप पसाय ।
मरके दादुर ऊपजो, पाई जलचर काय ।। २६ ।।

कवित्त ।

एक दिना याकी जो नारी पय लेने आई तेह थान ।
ताको देखतही यह मेंडक जाती सुमरन पायो ज्ञान ।।
ताके तनके ऊपर तबही चढ़न लगो चितमें हरषाय ।
तब ताने हटाय तिस दीनो बपु रोमांच भयो अधिकाय ।।२७।।

फिर भी ताही के तन ऊपर चढ़त भयो सो बारम्बार।
पूरब भव सनेह के कारन मन माहीं निज नार निहार॥
तब भवदत्ता एम विचारी यह कोई प्यारो अधिकार।
खोटी गत माहीं उपजो है पहिले भव कर पाप अपार॥२८॥

दोहा।

इम विचार करके गई, सुव्रत ऋषि के पास।
कारन पूछो नमन कर, तब गुरु ज्ञान निवास॥२०॥
कहत भये पुत्री सुनो, नागदत्त जो थाय।
तेरो पति मेंडक भयो, माया पाप वसाय॥२०॥

चाल मेघकुमार की देशी॥

ऐसे गुरुके बच सुने जी भवदधि तारनहार। सेठनी नमकर गई जी चित में हर्ष सुधार॥ सयानी मेंडक लियो है उठाय॥२१॥

अपने ग्रह में लाय के जी करत भई प्रतिपाल। दादुर भी हर्षित भयो जी तिष्ठे इसके नाल॥ रे भाई मोह महा दुखदाय२२

इस अन्तर श्रेणिक सों जी, वन पालक तहँ आय। श्रेणिक ते विनती करी जी सुनलीजे नर राय॥ सयाने मम विनती दे कान॥२३॥

गिरि विभारके भालपै जी, आये श्रीभगवान। इन्द्र चंद्र आदिक सबै जी, तिन पद नमें सुआन॥ भावजुत जग प्यारे महावीर॥२४॥

इम सुनके नरपति तबैजी, भूषण बसन उतार। वन पालक को सब दियेजी, हरषो चित्त अपार॥ सयानो खड़ो हुवो तत्कार॥२५॥

तिनही दिशिको जायके जी, सात पैंड नरनाथ नमस्कार

करतो भयो जी ह्वै कर पुलकित गात ॥ सयाने धर्म तनी रुचि धार ॥ ३६ ॥

आनन्द भेरी पुरविषै जी दिलवाई वड़भाग। निश्चलमन बंदन चलोजी चित मे घर अनुराग ॥ सयाने चमर दुरत अधिकार ॥ ३७ ॥

समोशर्न जिनराजको जी, देखतही हरषाय । ऐसे केकी घनं लखे जी दारिद्री निधि पाय ॥ रेभाई त्यों हरषो नरनाथ

सवैया इकतीसा ॥

जब नरनाथ जिन नाथकी निहार छबि, आनंद अपार भया कहो नहिं जात है। अष्ट द्रव्य सार लाय पूजे चरनारविन्द, फिर तिन थुत करी पुलकित गात है ॥ अहो भगवान सब जगमें तुम्हीं प्रधान, सदा जयवन्त और तुम्ही जगतात है। कर्म दारु नाशनको अनिल स्वरूप आप दुष्ट अग्नि टारिवे को मेघ विख्यात हैं ॥ ३८ ॥

सवैया तेईसा ॥

लोक अलोक प्रकाशनको प्रभु भान समान महा सुखदाई।
बैन मरीचनते भविकंज दिये बिकसाय तुमी जिनराई ॥
हे भगवान सदा जैवन्त तुम्हीं शिव कन्त सुशर्म लहाई।
जन्म जरा अरि मर्न महा जुर नाशनको तुम वैद सहाई ॥ ४० ॥

दोहा

गुणरूपी रतनन तनी, आकर हो तुम देव।
जग रक्षक जग तात तुम, जन पीहर जगदेव ॥ ४१ ॥

चौपाई

तीनलोक के भूषण सार। तुम विन कारन बंधु उदार।
हे प्रभु आपद वेल समान। तिस नाशनको अद्भुत भान ४२॥

हे जिन तुम पदपंकज पेख। जो सुख उपजे हिये विशेष।
सो सुख कोड़ो करत कलेश। सुपनेभी लावे नहिं लेश ॥४३॥
ताते जिनाधीश जगचंद। तुमरी भक्ति सदा सुखकंद।
जबलग जगको लहूं न छेव। तबतक ममहिय तिष्ठो देव ४४
इहविध स्तुत बारम्बार। श्रीजिनवरकी करके सार।
फिर गौतम आदिक ऋषिराज। तिन पद परसे धर्म जहाज ४५
फिर निज कोठे बैठो राय। बानी सुनी स्वर्ग शिवदाय।
अब भवदत्ता हर्ष समेत। गई सु जिन बन्दनके हेत ॥ ५६ ॥
अब नभमें सुन जै जै कार। अरु बाजनको शोर अपार।
जाती सुमरन पायो भेष। चितमें हर्षित होय विशेष ॥ ४७॥
मुख मेले इक पदम अनूप। पूजन चलो तिहूंजग भूप।
मनमाहीं धर मोद अतीव। पथमें जावेथो जलजीव ॥ ४८ ॥

दोहा

एक करीके पग तले, दबकर पाई मीच।
प्रभु पूजा अनुरागतें, उपजो सुरगण बीच ॥ ४९ ॥
प्रथम स्वर्ग सो धर्म में, ऋद्ध लही अधिकाय।
देखो सुर पदवी कहां, कहँ मेडक परजाय ॥ ५० ॥

सोरठा

जिन पूजन परसाद, कौन कौन सुख ना लहे।
सब प्रकार अहलाद, पावें जन या जगत में ॥ ५१ ॥

गीता छन्द

अन्तर मुहूरत मांहिं जो बनजुत भयो उत्पाततें।
बर रूप लावन धरे अद्भुत पूर्व पुन्य प्रसाद तें।
बहु भांति रतननकी रसमकर जटित तन सुंदर लसे॥
अरु दिव्य बस्त्राभरन धारत तासु द्युतितें तम नसे।

है सुमनकी वर दाम उरमें जुत पराग सुहावनी ।
इसे बहु सीस न्यावत नृत्यगान करें घनी ॥
ताही समय सुर अवधितें सब जानियो पूरव कथा ।
मैं भेष पूजन भाव सेती, लहो पद यह सुख अथा ५३

दोहा

तातें श्रीजिनवर तनी, पूजन करनी सार ।
इम विचारके मुकुट में, करो भेष आकार ॥ ५४ ॥
बहु बिभूति अमरन सहित, चलो चित्त हरषाय ।
समोशर्न श्रीवीरकी, ता माहीं सुर आय ॥ ५५ ॥

काव्य

श्रीजिनेन्द्र जगचन्द्र तने पद जो, सुखदाई ।
तिने देख सुर है प्रसन्न पूजे अधिकाई ॥
इह विधि भक्ति अपार देखकर श्रेणिक नरपति ।
प्रश्नकरो गणदेव प्रते चितमें है हरषत ॥ ५६ ॥
हे स्वामिन इस अमर मौल में दादुर लच्छन ।
किह कारन ते भयो कहो अब आप प्रतच्छन ॥
तुम संशय तम नाश करनको भानु समाने ।
ऐसे सुन इस वचन ऋषी तब येम बखाने ॥ ५७ ॥

दोहा

नागदत्त सेठ थो, माया ते तज प्रान ।
भयो भेष वापी विषै, फिर पायो इन ज्ञान ॥ ५८ ॥
श्रीजिनेन्द्र जगचंद की, पूजन करने काज ।
पंकज ले निज मुख विषै, आयोथो यह आज ५९॥
गेंद चर्न तल दबमरो, भयो स्वर्ग में देव ।
भेष चिन्ह जुत जिन तनी, करने आयो सेव ॥ ६० ॥

चौपाई ।

ऐसे बच श्रेणिक नृप आद । गुरु मुख ते सुन लहैं अहलाद ।
श्री जिन जच्च विषै चित पाग । तिस फलमें धारो अनुराग ॥६१॥
भो भविजन याते प्रभु सेव । कीजे सुच ह्वै कर बसु भेव ।
जिस प्रभाव तें धन अरु ध्यान । महा भाग सो भोग लहान ॥६२॥
राज सम्पदा सुत अरु मित्र । तियवर पावो गोतपवित्र ।
दीरघ आयु लहो अधिकाय । सब अघ नाशे वृष उपजाय॥६३॥
मन वंछित फल की दातार । मणिमाणक मुक्ता भंडार ।
मुक्ति बीज सम्यक सुखदाय । पावे जन जिन जच्च पसाय ॥६४॥
वरविद्या अरु शुभ चारित्र । स्वर्ग मोच्च यह देय पवित्र ।
तातें नित तज के परमाद । सुख दाता पूजन कर आद ॥६५॥

पद्धड़ी ।

फिरकर सोहे जिन यज्ञसार । सम्यक्त जु तरु सीचन सुवार ।
भव बोध दैन को मेघरूप । सब तामा तासम है अनूप ॥६६॥
श्री लावन को दूली समान । शिव मंदिर चढ़ने को शिवान ।
सबसुखकीआकर जानयेह । अरुअशुभ बृन्द नाशन करेय ॥६७॥
सो ऐसे प्रभु पूजो प्रवीन । जिन उत्सव में जो हर्ष लीन ।
मघवा तजके निज स्वर्गथान । आये करने जन्मा कल्यान ॥६८॥
जिन ले सुर गिरके भाल जाय । हाठक सिंहासन पै बैठाय ।
च्चीरोदधि कुण्डसमान कीन । घट लाये भरसुर हर्ष लीन॥६९॥
स्नान करावन हार इन्द्र । निरतन्त बहुत अपसरन बृन्द ॥
जिनकी कीरति गंधर्वगात । सो प्रभु पूजन लायक विख्यात७०
सोई भगवान जिनिंदचंद । सब भविजनको दो सुख अमंद ॥
वर जिनकी बानी जग विख्यात । भवजनकी रच्चा करोमात ७१

दोहा

कैसी सबना मात है, केकी वाहन युक्त।
पद्मासन धारी विमल, दिव्यरूप संयुक्त ॥ ७२ ॥
मिथ्या तिमिर विनाशिनी, रविकी रस्म समान।
भव्य कमल बिकसावनी शुभ गतिदेत महान ॥७३॥

सोरठा

देवादिक सेवन्त, जिस माताके चरन जुग।
ताको नम बहु भन्त, करूं ग्रन्थ पूरन अबै ॥७४॥

काव्य

शोभामंडित अवनि विषै श्रीमूल संघवर।
तामें तिलक समान भारती गच्छ सुसुन्दर॥
श्रीयुत ज्ञाननिधान कुंद कुंदा आचारज।
तिनके बंश विख्यात विषै प्रकटे मुनि आरज ॥७५॥
श्रीजिन आगम उदधि वृद्धको चन्द्र अखंडित।
गुणनिधि महिमा जोग चरन सेवें बहु पंडित।
ऐसे श्री मुनि प्रभा चन्द्र प्रगटे बड़ भागी।
सो जग में जयवन्त होंय निज आतम रागी ॥ ७६ ॥
श्री भट्टारक गुरू मल्ल भूषण सुखदाई।
सदा काल मम सुःख अर्थ बरतो अधिकाई॥
शोभा जुत जिनचन्द चरन बारिज के षट पद।
मल संघ के नाथ ज्ञान चारित दरसन हद ॥ ७७ ॥
विद्यानंद महान गुरू तिन पद सुन्दर अत।
सोई कंज समान तास विकसावन रविवत॥
सिंघनंद गुरु देह सदा सब जनको मङ्गल।
श्री जिन पद ए जीव विषै रागी हैं जिम अल ॥

चौपाई ।

भव बोधन त्रप रतन निधान । काम करी को सिंघ समान ।
सब पदार्थ के जानन हार । ध्यान लीन महिमा अधिकार ॥७९॥
अरु सबही जे सूर महन्त । पुन्य रूप पूंजी धारन्त ।
शास्त्र उदधि के पहुंचे पार । सो मुझको दो मङ्गल सार ॥८०॥
कैसे हैं गुरु उदधि गंभीर । सम्यक रतन धरे उरधीर ।
सतभंग मइ धरत तुरंत । ताकर मिथ्या मत यक अंग ॥८१॥
जड़ सेती तिन दियो वहाय । क्रोध जंतु कर रहित सुभाय ।
जिनवर बच हैं वर समान । ताकर पूरत हैं अधिकान ॥८२॥
भगवत रूप मयंक उद्योत । ताकरके नितबृद्ध सुहोत ।
याते अद्भत सिंध महान । मेरे गुरु हैं दयानिधान ॥ ८३ ॥

दोहा ।

ब्रह्मनेमी दत इम कहे, सम्यक दरशन ज्ञान ।
चारित तप आराधना, तिनको कियो बखान ॥ ८४ ॥
निरमल शुभदाता अतुल, पूरन कियो पुरान ।
सो भविजन को हजियो, शांति अर्थ अधिकान ॥८५॥

सोरठा ।

श्रीज़त कीरत क्रान्त, पुत्र पोत्र परिवार अति ।
बड़ो हर्ष को पांत, सम्यक तिन उर विस्तरो ॥८६॥

मङ्गल कारन छप्पय ।

मङ्गल श्री अरिहंत बहुर मङ्गल जिनबानी ।
मङ्गल गुरु निरग्रंथ सकल जगको सुखदानी ॥
मङ्गल वृत का शुद्ध और मङ्गल श्रावक गण ।
मङ्गल सिद्ध सु क्षेत्र धर्म मङ्गल दश लक्षण ॥
अरु सोलह कारन भावना, यह जग मङ्गल रूपजी ।
इस ग्रंथ अन्त कवि इम कहे, मङ्गल करो अनूपजी ।८७।

इति श्री आराधनासार कथा कोष विषय जिनपाद पूजा फल कथा समाप्तः ।

अथ ग्रन्थ बांचन वा सुनने वालों को आशीरवाद

काव्य ।

जे भविजन नित पढें प्रीतते मिष्ठ सुरन कर।
सबै अमंगल होत नाश व्यापे श्रीतिसघर ।
सुने जीव देकान करें श्रद्धा इस केरी ॥
ते बहु सम्पति लहें बहुरि नाशें बहु फेरी ॥ ८६ ॥

अथ ग्रन्थभाषा जहां हुवा ताकोवर्णान

दोहा ।

कारन भाषा ग्रन्थको, करनेको सुन मित्त ।
जेह थानक पूरन भयो, सुनलीजे दे चित्त ॥ १ ॥

चौपाई

असंख्यात दीयो दधि जान । तामध जम्बूदीप महान ।
जोजन लत्ततनो विस्तार । परध लत्त त्रय अधिक निहार ।२॥
तामें सप्तत्तेत्र दुतिवन्त । षष्ठ कुलाचल अति शोभन्त ।
जम्बू शालमली तरु दोय । जिन चेत्याले मंडित सोय ॥३॥
मध्य सुदर्शन मेरु दिपन्त । जैसे तनमें भाल लसंत।
पूरब पश्चिम लसे बिदेह । सदा शिलाके जन उपजेह ॥ ४ ॥
चौथो काल रहे नित तहां । ईत भीत व्यापे नहिं जहां ।
नहीं कुलंगीको परवेश । जिनमंदिर मंडत सब देश ॥ ५ ॥
सदा जगतपति करत बिहार। मुनगण श्रावक ब्रतका सार ।
भव्यनको उपदेशत तेह । इम शोभाजुत त्तेत्र बिदेह ॥ ६ ॥

दोहा

मेरुतनी दाक्षिण दिशा, और उतरमें जान ।
तीम तीन शुभ त्तेत्र हैं, तिन वरनन अधिकान ॥ ७ ॥

पद्धड़ी।

वरभोग भूम चव क्षेत्र बीच। मध्यम जघन्य हैं जुत मरीच।
है कर्म भूमजुग क्षेत्रथान। जहँ काल प्रवर्त्ते षट् प्रमान ॥८॥
ऐरावत उत्तर दिश मझार। शुभ भरत क्षेत्र दक्षिण निहार।
ता मध्य खंड हैं षट् प्रसिद्ध। रूपाचल सोहत स्वेत मद्ध ॥ ९ ॥
तहँ पांच म्लेच्छ जू खंड जोय। जहँ धर्म करम जाने न कोय।
एक आरज खंड दिये अनूप। सब जनमें जिम सोहे सुभूप ॥१०॥
है धरम तनो अतिही प्रचार। चव संग करत हैं नित बिहार।
जहँ वेद काल में धरम खान। उपजे थे त्रेसठ जन महान ॥११॥
ताकर पवित्र यह देश सार। तिनकी महिमा को कहन हार।
अब भी जहँ जिनवर धरम पर्म। पालत हैं श्रावक षट् सुकर्म ॥१२॥

दोहा।

तहां देश बहुलसत हैं, कहतन पावें पार।
सब के मध्य सहावनो, मध्य देश सुखकार ॥१३॥

चौपाई॥

कैसो सुन्दर देश दिपन्त। वन उपवन कर शोभावन्त।
ग्राम ग्राममें श्री जिनधाम। कूप तड़ाग लसें सबठाम ॥१४॥
जहँ जन उपजे बृष अनुसार। भोगत भोग बिविधि परकार।
तीन वर्ग साधत नितसोय। दान देत हैं हर्षित होय ॥१५॥
सरिता बहे जहां जलभरी। भूभृत सोहे मानों करी।
इत्यादिक शोभा संयुक्त। कहं लग बरने कवि निज उक्त ॥१६॥

दोहा

तिसी देशके मध्य में, इन्द्र प्रस्थ तिसनाम।
शोभै नगर सुहावनों, सब बिधि सुखको धाम ॥१७॥

चौपाई।

तिसही पुर के चारों ओर। सोहें उपवन चितके चोर।
नाना विधिके पाद पसार। तिन पै अलि ठानत पुंजार॥१८॥
पिक्क सारस सुक केकी आद। बोलत हैं बच जुत अहलाद।
ठाम ठाम जीरन के खेत। मालकार सींचत निज हेत॥१९॥
खेतन में साठन की बार। ताकर वन रहि शोभ उदार।
कमलन जुत बहुलसत तड़ाग। दिग बिहंग बोलत जुतराग॥२०॥
पुर ते पश्चिम दिशा मझार। बिंध्याचल शुभ लसे पहार।
पूरब में सरिता रसभरी। जमना नाम बहत है खरी॥ २१॥
ताके तट पै सुन्दर घाट। दुज गण भनत बेद को पाट।
पड़े नवाड़े ताके बीच। प्रेरे मांजी बहु विध खींच॥ २२॥
नवका तने सेत जहँ घने। मानो थल सम मारग बने।
तातें खेट कहावत येह। याकी शोभा किम बरनेह॥ २३॥
तिसी शहर के गोलाकार। लशे खातका जुत तुच्छबार।
कोट कंगूरन सहित उतंग। द्वादश गोपुर नाना रंग॥ २४॥
इत्यादिक रचना को धरे। तिस शोभा को कवि उच्चरे।
तिसी शहर के भीतर जान। लाल किला इक शोभावान॥२५॥
तामध तख्त विषै सुलतान। शाह बहादुर कला निधान।
राजकरे अतिही बड़ भाग। नव नरिन्द्र सेवे पदलाग॥ २६॥
ताके आगे लसत वजीर। श्री अंगरेज बहादुर धीर।
न्यायवान परधन नहिं हरें। इक छत राज अवनि पर करें॥२७॥
बहु देशन तें सारथ बाह। इस पुर में आवें उमगाय।
क्रय विक्री कर धन समुदाय। बहुत द्रव्य ले जांय कमाय॥२८॥

दोहा।

तामांही बहु बसत हैं, चार वरन के लोग॥
अपने अपने पुन्य तें, भोगत नाना भोग॥२९॥

चौपाई।

तहँ नारी गज गामनि सार। मंगल गावें बिविध प्रकार।
बाजे बाजत हैं बहुजाम। चित्र बिचित्र लशत जहँ धाम ॥३०॥
तिसी शहर के मध्य महान। श्री जिन मंदिर शोभावान।
तिन के शिखर लसतहैं श्वेत। तिन पै सुंदर लहकत केत ॥३१॥
मानो करवत झालो देह। भव्यन को बुलवावत तेह।
हाटक कलश लसत हैं येम। मानों मेरे चूलका जेम ॥ ३२ ॥
नाना बर्न तने चित्राम। तिन में बने महा अभिराम।
कहं जन्म कल्याणक तने। कहूं अमर गण निरतत घने ॥३३॥
श्री जिनचेत विराजत जोग। तिनकी अतिशयदिपतमनोग।
तहां भव्यजन पुलिकत गात। जिन मज्जन ठाने परभात ॥३४॥
बहुरि करे पूजन बड़ भाग। फेर पुरान सुनें जुत राग।
सामायक अन सन व्रत धरें। वित अनुसार दान बह करें ॥३५॥

दोहा।

सैली में सज्जन लसें, नाना गुण धारन्त।
सप्त क्षेत्र में द्रव्य ते, खरचत हैं बहु भंत ॥ ३६ ॥

पद्धडी

तिस सेली मांही सुगन चंद। दाता आदिक बहु सुगुन वृंद।
सुत संतलाल के बुद्धि वंत। श्रीजिनवर भक्ति हिये धरंत ॥३७॥
अरु मथुरादास जू नाम मान। तिन भ्राता सालिगराम जान।
जैजैमल पाले ब्रह्मचार। व्रत प्रोषध आदि करें अपार ॥३८॥
बहु क्षमावान स्नेहीखुलाल। कोडीमल बुद्धि धरें विशाल।
गोपालराय अति ही प्रवीन। नित शास्त्र पढें हैं हर्ष लीन ॥३९॥
जिन यज्ञ विषै जिस चित अत्यंत। तिननाम कानजीमल लसंत।
वर ज्ञानचंद अरु दीनदयाल। नेमीमल अरु चुन्नीजुलाल ॥४०॥

हैं नानकचंद खंडेलवाल। श्रीजिन गुण गावे अति रिसाल।
पद गावत हैं आनंदराम। गुलाबसिंह आदिक सुनाम ॥ ४१ ॥

दोहा

इत्यादिक सबही तहां, सज्जन हैं अभिराम।
अर्चा चर्चा करत हैं, कहँलौं वरनूं नाम ॥ ४२ ॥

काव्य

तामाहीं बुधवन्त महा पंडित वर जोहैं।
नाम गिरधारीलाल वचनतें जनको मोहैं ॥
देव वचनमें ग्रन्थ सदा वांचे अधिकारी।
भव्यनको उपदेश देत जिन बच अनुसारी ॥ ४३ ॥
तिनते ग्रन्थ लगाय लियो नेमीचंद जोहै।
ख्यात खंडेल सुवाल पाटनी गोत सुसोहै ॥
पंडितवर इँदराजतने सुत हैं हितकारी।
तिनसेती यह अर्थ लियो हम आनंद धारी ॥४४॥

दोहा।

तब हमरी इच्छा भई, कीजे चौपई बन्ध।
मन बच काया लगत हैं, होत पुन्यको बन्ध ॥ ४५ ॥

॥ अथ कविनाम वंश वर्णन ॥

दोहा

अग्रवाल बर वंश हैं काष्ठा संघी जान।
श्री लोहाचारज तनी, आमनाय परमान ॥ ४६ ॥
पुयष्क गण गछमापुरी, मित्तलसिंहल गोत।
मित्र जुगल मिलके कियो, ग्रन्थ यही जग पोत ४७॥

अडिल्ल

प्रथम नाम बखतावरमल सो जानिये। रतनलाल दूजेको नाम प्रमानिये॥ भ्राता रामप्रसाद तनो लघुहै सही। तुच्छ बुद्धितें करी ग्रन्थ रचना यही ॥ ४८ ॥

गीता छन्द

नहीं पढ़ोहूं कुछ व्याकरन और कछु छन्दभेद न मैं लहो ।
कोई तर्क ग्रन्थ नहीं लखो एक भक्ति बश वरनन कहो ॥
यह काल पंचम सरब दुखमें बुद्धि थोड़ीसी रही ।
याते सुभाषा ग्रन्थ कीनों समझ है सब जन सही ॥ ४९ ॥
वसु मास में यह ग्रन्थ पूरन करो मन हरषायतें ।
थिरता अलप अरु चित्त चंचल तासके परभावतें ॥
जो भूल अच्छर ह्रस्व दीरघ होय व्यंजन हीनजी ।
ताको सुधीजन शोध लीजो तुच्छ बुध मम चीन्हजी ।५०॥
जे हंससम सज्जन सुधीवे सदा गुण गहलेत हैं ।
दुरजन सरबमें दोष काढ़त सो भी गुणके हेत हैं ।
तातें न स्तुत उच्चरूं निंदा करूं नाहीं कदा ।
वेकाव्य उज्वल करत निसदिन मलिन बैठाने सदा ॥ ५१ ॥

दोहा

सम्वत विक्रम नृपति को वृष और ज्ञान मिलाय ।
नारायन लश्यातनी, संज्ञा सर्वे गिनाय ॥ ५२ ॥
ग्रीषमऋतु वैशाख पल, पच्छ जान अँधियार ।
सिद्ध जोग शुभ पंचमी वृश्चिक शशि गुरुबार ॥५३॥
तादिन पूरन ग्रन्थ यह कीनों बुद्धि समान ।
बक्ता श्रोता सबनके कीजो बहु कल्याण ॥ ५४ ॥
जैवन्तो निसदिन रहो, जैनधर्म सुखकंद ।
ताप्रसाद राजा प्रजा, पायो बहु आनंद ॥ ५५ ॥

इतिश्री आराधनासार कथा कोष ग्रन्थ समाप्तम्

———o———

❋ जैनग्रन्थ जो हमारे पास मिलते हैं ❋

हिन्दी भाषा के ग्रन्थ।

प्रद्युम्न चरित्र २॥।)
पुन्याश्रव कथाकोष २)
धर्म परीक्षा १)
छैढाला अर्थ सहित ।)
श्रीपाल चरित्र १॥)
पार्श्वपुराण १।)
बनारसी विलास १॥)
वृन्दावन विलास ॥।)
प्रवचनसार (अध्यात्मग्रंथ) १।)
भूधरजैनशतक (उपदेशी =)॥
सेठ सुदर्शन की कथा)॥।
पाडवपुराणवडा २॥।)
शीलकथा इटावेकी छपी ।)
शीलकथा ज्योतीप्रसाद कृत ≡)
दर्शनकथाबम्बईकीछपी -)
इटावेकी छपी ।)
दान कथा ≡)
निशभोजनत्याग कथा =)
निशभोजन कथा छोटी)॥
चारदान कथा ।)
विदेशों में जैनधर्म)॥
सुशीला उपन्यास (पं० गोपालदास बरैयाकृत १।)
चारदानकथा बड़ी ≡)

सुखानन्दमनोरमाना० ॥।)
दियातले अंधेरा =)
सदाचारी बालक =)
अंजनासुन्दरी नाटक ॥)
सुकुमालउपन्यास (जैनेन्द्र किशोर कृत) ।=)
सोमासती नाटक बाबू जैनेंद्रकिशोर कृत =)
पुरुषार्थ निवन्ध)॥।
व्याख्यानमाला चारभाग प्रतिभाग)॥
मासभक्षण निषेध -॥)
जैन शाखोचार)॥
निशिभोजनभंजनकथा)॥।
रक्षाबन्धन कथा ≡)
इतवार कथा वडी -)
जैन व्रत कथा ≡)
होलीकी कथा -)
जैन कथा संग्रह स्त्री रक्षा तथा इलाज सहित १)
जैन तीर्थयात्रा १)
मिथ्या प्रचार =)
प्रतिमाचालीसी)॥
सुआ बतीसी)।
हुक्का निषेध)।
करकुण्डस्वामीकीकथा =)

ज्ञान सूर्योदय नाटक खेलने योग्य नई तर्ज का ॥)
विचित्र उपन्यास (बुढापे का विवाह -)
जैन सुधा बिन्दु =)
मनोरमा उपन्यास जैनेंद्र किशोर कृत ॥)
मनमोहनीनाटक वचनका बाबू सूरजभानु कृत ।)
तत्वार्थ सूत्र वचनिका ।)
जैन सिद्धान्त दर्पण प० गोपालदास कृत १)
शिखरमहात्म्य वचनिका -)
समय तिमिर प्रदीप ॥।)
चौवीस ठाणाचर्चा (गुटका) ।-)
तत्वमाला (जैनतत्वों का स्वरूप ≡)
आराधनासारकथाकोष ३॥)
जम्बूस्वामी चरित्र ।=)
कर्म चरित्रसार =)
समाधिशतक =)
स्वानुभव दर्पनसार्थ ।)
शील कथा भारामल्ल कृत बम्बई की छपी ।-)
न्यायपरिभाषा -)॥
प्रातस्मर्ण मंगल)॥

पूजनकी पुस्तकें।

भाषापूजा संग्रह बम्बईका छपा ॥।)
,, इटावे का ।=)
,, जैनीलाल का बड़ा ॥=)
चौबीसी पाठ वृन्दावन जी कृत १)

नित्यनियम पूजा संस्कृत और भाषा ।)
भाषा मुन्शी नाथूराम की छपाई =)॥
तेरहद्वीपकापूजनपाठ २॥)

शत्रुंजयादिपूजा तथा दर्शनादि सजिल्द =)
दशलक्षण पूजा और अर्थ सहित प्राकृत जयमालायें ।)
सप्तर्षि पूजा)।
सम्मेदशिखर पूजाविधान महात्म्य सहित ।)

पाठशाला में पढ़ानेकी पुस्तक।

स्तोत्र पाठ आदि।

॥ जरूरी सूचना ॥

जिस ग्रन्थपर हमारे हस्ताक्षर अथवा मोहर न होगी वह चोरी का समझा जावेगा।

प्रकाशक